Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

6.2

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

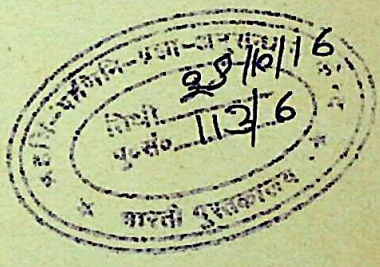

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

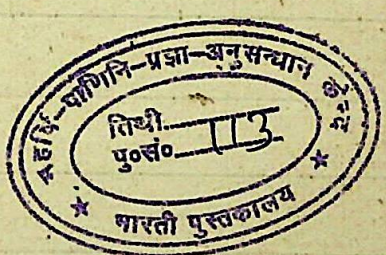

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ओ३म्

नवममण्डलम्

स्य

ऋग्वेदभाष्यम्

श्रीमदार्य्यमुनिना निर्मितम्

संस्कृतार्य्यभाषाभ्यां समन्वितम्

तृतीयखण्डात्मकम् ।

महर्षि-पाणिनि-प्रज्ञा-अनुसंधान
तिथी
पुस्तक० 113
भारती पुस्तकालय

काश्यां

चन्द्रप्रभायन्त्रालये मुद्रापयित्वा
प्रकाशितम् ।

संवत् १९७६

मूल्यं रूप्यकचतुष्टयम् ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ओ३म् ।

वेद-प्रस्तावना

मूल्य ४।-)

वैदिक काल ।

वेदों के आविर्भाव का समय आदि सृष्टि का समय था। उस समय कोई इतिहास नहीं था, कोई राजाविशेष न थे, और न कोई पुरुषविशेष उस समय में थे जिन के जीवनचरित्रों का वर्णन उस समय किया जाता। इसीलिये इस परमात्मज्ञान में गुणगुणी का वर्णन और उक्त गुणी पदार्थों का कर्मयोग में उपयोग और ईश्वरोपासन तथा ज्ञान विज्ञान का वर्णन चारों वेदों में है। अर्थात् ऋग्वेद में गुण और गुणी का वर्णन, और यजुर्वेद में उक्त पदार्थों को यज्ञादि कर्मों में लाकर, उन से लाभ उठाने का वर्णन, साम में ईश्वरोपासन और ईश्वर ज्ञान के प्रकार का वर्णन है। अथर्ववेद में ज्ञान और विज्ञान का विशेष रूप से वर्णन है। इस प्रकार चारों वेदों के चार विषय भिन्न भिन्न हैं। इस बात को "तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे। मं० १०, सू० ९०, ९। स्पष्ट करता है

इस मंत्र में चारों वेदों का वर्णन स्पष्ट रीति से आया है।

केवल यही मंत्र नहीं वेदों में बीसियों मंत्र ऐसे पाये जाते हैं, जिन में चारों वेदों का वर्णन स्पष्ट रुप से है। जो लोग ये कहते हैं कि ऋग्वेद सब से पहला है, अन्य सब वेद ऋग्वेद के आधार पर बनें है, उन का कथन सर्वथा निर्मूल है। कारण यह कि जिस प्रकार ऋग्वेद की स्वतन्त्र सत्ता है, इसी प्रकार अन्य वेदों की भी स्वतन्त्र सत्ता है। इस बात को सब ऋषि मुनियों ने माना है।

अस्तु !

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ऋषि मुनियों की क्या कथा, किन्तु आधुनिक सायणादि भाष्यकारों ने भी इसे सर्वतंत्रसिद्धान्त करके लिखा है, कि चारों वेद एक ही काल में प्रगट हुए हैं! इस के प्रमाण में सायणाचार्य ने "तस्माद्यज्ञात्,, यही मंत्र अपने ऋग्वेद के भाष्य की भूमिका में प्रमाण दिया है, कि चारों वेद एक ही समय में प्रगट हुए हैं।

मालूम होता है, कि सायणाचार्य ने यह विचार शतपथ ब्राह्मण से लिया है। शतपथ ब्राह्मण में स्पष्ट लिखा है, कि परमात्माने अनायास से श्वास के समान चारों वेदों को प्रगट किया। और इसी बात का प्रतिपादन व्याससूत्रों में, और शङ्करभाष्य में भी है। "शास्त्र योनित्वात्,, वेदान्त के इस तीसरे सूत्र में श्री स्वामी शङ्कराचार्यजी ने स्पष्ट लिखा है, कि ऋग्,यजु, साम और अथर्व इन चारों वेदों के प्रकाश का कर्त्ता एक मात्र ब्रह्म है, कोई जीव-विशेष नहीं।

प्रकृत यह है, कि वेदों में ऐसे नियमों का वर्णन है, जो सर्व देश और सर्वकाल में उपयुक्त हैं। वे नियम किसी देश-विशेष वा काल-विशेष का आश्रयण नहीं करते।

तात्पर्य यह है, कि वेदों के अर्थ यौगिक हैं। अर्वाचीन ग्रन्थों के समान योगरूढ वा रुढि नहीं।

अर्थात् व्युत्पत्ति से जो अर्थ निकलते हैं, वेही वेदों के मुख्य अर्थ हैं। व्युत्पत्ति को छोड़ कर ऐतिहासिक ग्रन्थों के समान वेद रूढ़ार्थ में प्रवृत्त नहीं होते। जिन लोगों ने यौगिक अर्थ को छोड़ कर वेदों में नामों को लेकर पूर्व-सिद्ध अर्थ का प्रतिपादन किया है, उन्होंने अत्यन्त भूल की है। उदाहरणके लिये देखो—

'न सायकस्य चिकिते जनासो लोधं नयन्ति पशुमन्यमाना
ना वाजिनं वाजिनाहासयन्ति न गर्दभं पुरोऽश्वान्नयन्ति ऋ० मं० ३-सू० ५४, मं० २३

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इस मंत्र से सायणाचार्य ने विश्वामित्र और वसिष्ठ का इतिहास निकाला है, कि एक समय में विश्वामित्र को वशिष्ठ के चेले बांध कर ले चले। तब विश्वामित्र ने उनको यह कहा, कि तुम मेरे मंत्र वेता होने के प्रभाव को नहीं जानते। मेरे साथ तुह्मारे गुरु वशिष्ठ की ऐसी तुलना है, जैसी गर्दभ और अश्व की होती है। इस प्रकार राग द्वेष के भाव विषयक इस मंत्र को लगाया है। वास्तव में इस मंत्र के ये अर्थ थे, कि (जनासः) हे मनुष्यो! तुम लोग (सायकस्य) शस्त्रवेत्ता शूरवीर के महत्व को नहीं जानते। जो युद्ध में पर-पक्ष का नाश करे उसका नाम यहां सायक है। इस प्रकार इस मंत्र के अर्थ करने से यह मंत्र राजधर्म का बोधक है, किसी पुरुष विशेष का बोधक नहीं। इसी प्रकार जिन जिन मंत्रों से सायणाचार्य ने इतिहास निकाला है वे सब मंत्र यौगिकार्थ से पुरुषों के गुणों का वर्णन करते हैं। अथवा अनादिसिद्ध ईश्वर के प्रतिपादक हैं, किसी आधुनिक पुरुष के नहीं। इस बात की सिद्धि में पुष्ट प्रमाण पुरुष सूक्त है। जिस प्रकार पुरुष सूक्त में अनादिसिद्ध परमात्मपुरुष का वर्णन है, इसी प्रकार अनादिकाल से सिद्ध पुरुष, प्रकृति और जीव, का वर्णन वेदों में पाया जाता है। और जो देव, दस्यु, विद्वान्, अविद्वान् इत्यादि पुरुषों का वर्णन वेद में पाया जाता है, वह भी प्रवाह रूप से अनादिसिद्ध पुरुषों का है। उस सर्ग के व्यक्ति विशेषापन्न पुरुषों का नहीं। तात्पर्य यह है, कि "सूर्याचन्द्रमसौधातायथापूर्वमकल्पयत्" ऋ० मं० १० सू० १९१-मं० ३। इस मंत्र में जिस प्रकार अनादिकाल से सूर्यचन्द्रमादि पदार्थों का आविर्भाव तिरोभाव, पाया जाता है, इसी प्रकार अनादि काल से सब प्रकार के पुरुषों का, जो आविर्भाव, तिरोभाव है, उन्हीं का वर्णन वेदों में है, अन्य किसी व्यक्ति विशेष का नहीं।

व्यक्ति विशेष का वर्णन हो भी कैसे सक्ता था? जब उस समय में, कोई व्यक्ति विशेष था ही नहीं, तो वर्णन कैसा? पूर्वोक्त मंत्रों में जो विश्वामित्र और वशिष्ठ का वर्णन कहा जाता है, वह इस युक्ति से भी नितान्त निस्सार है, कि वेद

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विश्वामित्र, वशिष्ठ और रामचन्द्र के समय में नहीं हुए। किन्तु रामचन्द्र के समय से लाखों वर्ष पहले वेद हुए हैं।

जिनके मत में लाखों वर्ष पहले नहीं, वे भी सहस्रों वर्षों का परित्याग कदापि नहीं कर सकते। वह इस प्रकार कि वैदिक समय सहस्रों वर्ष तक संसार में रहा। जब लोग वेदोक्त ईश्वर और वेदोक्त पूजापाठ और वेदोक्त आचार, अनाचार को मानते थे। इसके अनन्तर ब्राह्मण ग्रन्थों के निर्माण का समय आया। यह समय भी रामचन्द्र जी से बहुत पहले था। इसका प्रभाव भी संसार में सहस्रों वर्ष रहा। बहुत क्या, ब्राह्मणों के समय तक रामचन्द्र जी के होने का प्रमाण नहीं पाया जाता इस लिये ऐतरेय, शतपथ, साम और गोपथ इन चारों ब्राह्मणों में रामचन्द्र की कथा नहीं।

जो यह कहा जाता है, कि याज्ञवल्क्य और जनक का सम्वाद शतपथ के अन्तिम काण्ड में पाया जाता है, फिर कैसे कहा जाता है, कि ब्राह्मणों के समय रामचन्द्र न थे। क्यों कि रामचन्द्र और जनक का सम्बन्ध वाल्मीकीय रामायण में स्पष्ट है। इसका उत्तर यह है, कि जिस जनक का वर्णन "बृहदारण्यकोपनिषद्" वा "शतपथ" के अन्तिम काण्ड में है, वह जनक, रामचन्द्र जी का सम्बन्धी न था। किन्तु वह जनक और था। और रामचन्द्र जी के समय का जनक और था। यह एक ऐसी ही भ्रान्ति जनक कथा है, जैसा कि "छान्दोग्य" में "कृष्णाय देवकीपुत्राय" यह कथा है। छान्दोग्य में जो देवकी पुत्र कृष्ण लिखा है, वह और था, और वह कृष्ण घोर ऋषि का शिष्य था। इस बात को हम अन्यत्र भी विशेष रूप से लिख आये हैं, इसलिये यहां लिखने की आवश्यकता नहीं।

तात्पर्य यह है, कि समान नामों के होने से अथवा यों कहो कि पूर्वकाल के नाम नूतन काल में रख देने के कारण ऐसी भ्रान्ति हो जाती है। वस्तुतः ब्राह्मण ग्रन्थ प्रतिपादितजनक, वाल्मीकीय रामायणवाला जनक न था।

यदि यह वही जनक था, तो रामचन्द्र की कथा भी ब्राह्मण ग्रन्थों में आनी चाहिये थी।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हमारे विचार में उक्त प्रकार के वाक्य, ब्राह्मण ग्रन्थ और उपनिषदों में आ जाने का कारण यह भी हो सकता है, कि नवीन बातों को प्राचीन सिद्ध करने वालों का भाव सदैव से यह रहा है, कि वे प्राचीन ग्रन्थों में भी नवीन काल निर्मित वाक्य मिलादिया करते हैं। और इसके लिये पुष्ट प्रमाण यह है, कि वाल्मीकीयरामायण, मनुस्मृति, महाभारतादि ग्रन्थों में, सैकड़ों बातें नवीन समय की मिलाई गई हैं, जो हस्त लिखित प्राचीन पुस्तकों में नहीं मिलतीं अस्तु।

प्रकृत यह है, कि वेदों में इतिहास न था, किन्तु नवीन समय के सायणादि भाष्यकारों ने इतिहास प्रधान भाष्य करके वेदों में इतिहास भर दिया। यदि कोई कहे, कि वेदों में भी नवीन वाक्य मिलाये जा सक्ते थे, फिर नवीन समय को प्राचीन सिद्ध करने वालों ने उनमें मिलावट क्यों नहीं की? इसका उत्तर यह है, कि वेद इस पूज्यबुद्धि से देखे जाते थे, कि लोग उनको कण्ठ-करते थे। उनकी संख्या को निर्द्धारित करते थे, उनके पदों तक को निर्द्धारित करते थे, फिर उनमें मिलावट कैसे हो सकती थी।

मुख्य हेतु यह है, कि वेदों की भाषा ऐसी ब्रह्मवर्चस्विनी और ओजस्विनी है, जिसमें नवीन वाक्य मिला कर, उसी रंगत में ला देना कठिन ही न था, किन्तु असम्भव था।

इस बात की सिद्धि के लिये पुष्ट प्रमाण यह है, कि चारों वेदों में पुरुष सूक्त है। और उसकी भाषा चारों वेदों के साथ मिलती है, अंशमात्र भी भेद नहीं।

जो लोग यह कहते हैं, कि प्राचीन आर्यों में वर्णव्यवस्था न थी, और वर्णव्यवस्था का यह पुरुषसूक्त किसीने पीछे से मिलाया है, उन को यह समझ-लेना चाहिये कि यदि कोई मिलाता, तो एक वेद में मिलाता, चारों में कैसे क्योंकि प्राचीन आर्य तो चारों को ही कण्ठ करते चले आये हैं, फिर क्या किसी को भी यह न सूझी, कि यह पीछे का मिला हुआ पाठ है।

बहुत क्या, वेद ईश्वरीय हैं, ईश्वरीय वस्तु में कोई मनुष्य मिलावट कर ही नहीं सकता।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मुख्य विचारणीय बात यह है, कि वैदिक समय में, अर्थात् वेदों के आविर्भाव और प्रचार काल में, आर्यों का धर्म क्या था ? और वे लोग किसकी पूजा करते थे ? इस प्रश्न का विचार करना यहां अत्यावश्यक है इस विषय की विवेचना में हम ऋग्वेद की भूमिका में यह लिख आए हैं कि वैदिक समय के आर्य्य लोग पूजनीय केवल एक परमात्मा की ही पूजा करते थे। जिसका वर्णन "स्वधयातदेकम्" मं १० सू० १२९-मं० २ इत्यादि वाक्यों में स्पष्ट है और "हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम" ऋ० मं० १०। सू० १२१।मं० १ इस मंत्र में इस चराचर ब्रह्माण्ड का पति एकमात्र परमात्मा ही माना है। फिर कैसे कहा जा सकता है, कि वैदिक समय में नाना देव थे। और नाना देवों की ही आर्य लोग उपासना करते थे। परमात्मा के एकत्व को समर्थन करने वाला एक मात्र यही मंत्र नहीं, किन्तु परमात्मा के एकत्व के बोधक वेद में सहस्रों मंत्र पाये जाते हैं। जैसे कि,—

"यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम"।
ऋ० ८।७।३।३

य एक इद्विदयते वसु मर्ताय दाशुषे–१।६।६।७

योदेवानां नामधा एक एव तं सम्प्रश्नं भुवना यन्त्यन्या
ऋ० ८।३।१७।२।

"तमिदं निगतं सहः स एष एक एक वृदेक एव"
अथ०–१३–४।४।१९

एकं सद्विप्रा बहुधा वदंत्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः
ऋ. २।३।२२।४६

तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय
यजु०-३१-१८

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न ते विष्णो जायमानो न जातः ऋ० मं० ७-सू० ०९९-२

इत्यादि सहस्रों मंत्र वेद में परमात्मा के एकत्व को बोधन करते हैं, वे सब विस्तार के भय से यहां उद्धृत नहीं किये जाते ।

उक्त मंत्रों के देखने से प्रतीत होता है, कि वैदिक समय में सूर्यचन्द्रमादिकों का निर्माण कर्ता एक मात्र निराकार परमात्मा ही माना जाता था । नाना देव नहीं ।

जो लोग यह कहते हैं, कि वैदिक समय में नाना देवों की उपासना थी, वे देव शब्द के सत्यार्थ न जाननें से भ्रान्ति में पड़ते हैं । तात्पर्य यह है, कि देव शब्द दिव्य गुण वाली वस्तु को भी कहता है, और सूर्य चन्द्रादि प्रकाश मान पदार्थों का भी वाचक है, और विद्वान तथा विदुषी स्त्रियों को भी कहता है । इस हेतु से अव्युत्पन्न लोगों को वेदों में नाना देव की भ्रान्ति हो गई ।

वास्तव में वेद में ईश्वर रूप से अभिमत नाना देव नहीं । किन्तु इस संसार का निर्माता और विधाता एकमात्र परमात्म देव ही माना गया है । इसी अभिप्राय से कहा है, कि "**एषो हि देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः**" यजु० ३२-४। सम्पूर्ण दिशाओं में परिपूर्ण एक देव परमात्मा ही है। कोई अन्य नहीं। इसी भाव को उपनिषत्कार ऋषियोंने इस प्रकार लिया है, कि "**एकोदेवः सर्वभूतेषु-गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा**" श्वे०६-११ एक मात्र परमात्म देव ही सबभूतों में व्यापक और सब भूतों का अन्तरात्मा है । इसी भाव से "**सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्**"

इत्यादि मंत्रो में सूर्यचन्द्रादिका का निर्माता परमात्मा कथन किया गया है । इस प्रकार वैदिक समय में लोग, एक मात्र परमात्मा को उपास्य देव और जगत्कर्त्ता मानते थे ।

जो लोग यह कहते हैं, कि परमात्मा को यदि कर्त्ता माना जाय तो वह आनन्द स्वरूप नहीं रह सकता, उन से यह पूछना चाहिये कि, तुम जब कोइ शुभ काम करते हो, तो क्या तुम आनन्द का अनुभव करते हो या दुःख का ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

और जो यह कहा जाता है, कि सर्व व्यापक में क्रिया नहीं होती, क्योंकि कोई जगह उस से खाली नहीं, जिसमें वह चलकर जाय। पूर्वोक्त कुतर्क करने-वाले लोगोंने क्रिया, कर्म, वा गति के तात्पर्य को नहीं समझा। क्रिया के अर्थ स्वभावभूत बलरूपशक्ति के भी हैं। अथवा ज्ञानके भी हैं। और ऐसी शक्ति सर्व व्यापक परमात्मा में हो सकती है। इसका बाधक कोई तर्क नहीं।

अन्य युक्ति यह है, कि जब (आकाश) ईथर आदि सापेक्ष विभु पदार्थ गतिशील हैं, अर्थात् कई एक गुणों की अभिव्यक्ति के कारण हैं, फिर कैसे कहा जा सकता है, कि निराकार विभु में गति नहीं होती।

वास्तव में बात यह है, कि अल्प शक्ति वाले जड़ पदार्थों के विषम दृष्टान्तों से लोगों को यह भ्रान्ति हो गई है, कि सर्वत्र भरे हुए पदार्थ में क्रिया नहीं होती। उनसे यह पूछना चाहिये, कि तुम एक शुद्ध काँच पात्र में जल वा दूध भरलो और इतना भरो, कि उस पात्र का कोई अंश भी उससे खाली न रहे। फिर उसको ज़ोर से हिलाओ तो क्या गति प्रतीत नहीं होती। यदि यह कहा जाय कि वह एकदेशी है, इस लिये गति होती है, तो उत्तर यह है, कि परिपूर्ण होने में तो वह एकदेशी नहीं।

वास्तव में यदि देखा जाय, तो जड़ पदार्थों में तो बाहर से गति का आधान किया जाता है। जो स्वयं गतिशील है, उसकी गति का बाधक कौन?

सर्व व्यापक में गति नहीं होती?

आनन्द स्वरूप यदि कर्त्ता माना जाय तो वह निरानन्द हो जाता है?

और प्रलयादि भावों का कर्ता ईश्वर न्यायकारी और अहंता सिद्ध नहीं होता इत्यादि कुतर्क "**बौद्धईज़म**" वा "**जैनईज़म**" के संपर्क से उत्पन्न हुए हैं।

वास्तव में वैदिक फिलास्फी में इनका गन्ध भी नहीं। इसी अभिप्राय से वेद में लिखा है, कि "**तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके। तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः**" यजुः ४०।५। वह चलता भी है, नहीं भी चलता है। दूर भी है निकट भी है। अर्थात् संसार को-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उत्पन्न करने में गतिशील हैं, और एक स्थान को त्याग कर स्थानान्तर में जाने के लिये एक रस और कूटस्थ नित्य हैं। सर्वव्यापक होने से दूर और निकट आदि धर्मों से रहित है।

ये सब भाव परमात्मा में अविरुद्ध हैं। अस्तु।

बहुत क्या, जिस प्रकार का परमात्मवाद स्फुटरीति से वेद में पाया जाता है, वैसा अन्य किसी भी धर्माभिमानी की पुस्तक में नहीं। और जैसा परमात्मा का एकत्व वेद में है, ऐसा अन्य किसी ग्रन्थ में नहीं।

प्रमाण के लिये देखो—

"अनेजदेकम्" यजु० ४०।४। "तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः" यजु० ४०।७। इत्यादि मंत्रों में परमात्मा का एकत्व और निराकारत्व स्पष्ट रीति से वर्णन किया गया है।

जिस प्रकार सर्वोपरि उपासनीयदेव का महत्व वेद में पाया जाता है, इसी प्रकार अन्य भी उत्तमोत्तम भाव वेद में पाये जाते हैं। अर्थात् वैदिक समय में दास भाव न था। और इसी लिये वेदमें दासत्वादि धर्म थे जाति न थी। अर्थात् जो एकमात्र सेवाधर्म करता था वह दास था। और वही यदि स्वामी के धर्म करता था तो स्वामी बन जाता था। और दासत्व जाति मान कर किसी का क्रय विक्रय नहीं किया जाता था। बहुत क्या, मनुष्यमात्र का समानाधिकार था। इसी लिये मनुष्यों के गुण-प्रयुक्त मनुष्यों में न्यूनाधिकभाव था। इसी का नाम गुण-कर्मानुसारिणी वर्ण-व्यवस्था है।

वैदिक पद्धति के अनुसार वैदिक समय में दम्पतीभाव भी वैदिक था। अर्थात् एक स्त्री का एक पति, और पति की एक ही पत्नी होती थी। वैदिक समय में कोई पुरुष भी ऐसा नहीं हुआ, जिसके अनेक विवाह हुए हों। वैदिक समय का लक्ष्य गृहस्थ-धर्म का देव-ऋण, पितृ-ऋण और ऋषि-ऋण इन तीनों ऋणों से उऋण होना था। आधुनिक समय के समान विषय, भोग वा दास दासी बना कर ऐश्वर्यशाली होना वैदिक-समय में लक्ष्य न था।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परस्पर प्रेम-भाव के मंत्र वेद में बहुत आते हैं, जैसा कि "**दृ ꣳ ते दृह मामित्रस्य माचक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्**" यजु० अ० ३६ मं० १८। इत्यादि मंत्रों में मैत्रीभाव का उपदेश स्पष्ट रीति से किया है।

और जहां कहीं दस्युदमन वा दुष्टदमन के उपदेश पाये जाते हैं, वे संसार-की मर्यादा को स्थिर करने के लिये हैं। द्वेषाग्नि को प्रदीप्त करने के लिये नहीं। अधिक क्या अहिंसा ही सार्वभौमव्रत समझा जाता था।

दार्शनिक बातें, कि जीवात्मा का नित्यत्व, पुनर्जन्म, बन्ध और मोक्ष इत्यादि भाव वेद में स्पष्ट रीति से पाये जाते हैं, जैसा कि "**योयमजोभाग-स्तपसा तं तपस्व**" अन्त्येष्टि संस्कार में ये कथन किया गया है, कि जो इस शरीर में जीवरूप अविनाशी वस्तु है, उसको तपस्वी बना कर, तुम परलोक का यात्री बनाओ। यह प्रार्थना ईश्वर से की गई है। "**एवं मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्**" इत्यादि वाक्यों में अमृतरूप मुक्ति का स्पष्ट रूप से वर्णन है।

इसी प्रकार वैदिकसमय की मर्यादा थी। जिस का वर्णन वेदभाष्य में विस्तारपूर्वक किया गया है। यह मर्यादा आर्यों में लाखों वर्षों तक रही। इसी का नाम वैदिक समय है।

ब्राह्मण काल।

कुछ काल पाकर ऋषियों ने वेदों के व्याख्यान ब्राह्मण ग्रन्थों का निर्माण किया।

ऐतिरेय, शतपथ, सामविधान और गोपथ ये वेदों के चार ब्राह्मण हैं। इन में आलङ्कारिक रीति से वैदिक विषयों पर विस्तार पूर्वक व्याख्या है। देवासुर-संग्राम, प्राणविद्या, ब्रह्मविद्या, नीतिविद्या, धनुर्विद्या इत्यादि बहुत सी विद्याओं का वर्णन ब्राह्मण ग्रन्थों में है। इस समय वेदविद्या को ऋषियों ने दो भागों में विभक्त कर दिया अर्थात् एक आरण्यक और दूसरा उपनिषद्। अभ्युदय की देने वाली विद्या का नाम आरण्यक, अर्थात् कर्मकाण्ड की विद्या के नाम से कहा जाता था। और केवल निश्रेयस को देने वाली विद्या का नाम

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उपनिषद् था। इसी लिये उपनिषद् के ये अर्थ किये जाते थे कि, "**उपनिषीदति ब्रह्मसामीप्यं यया सोपनिषद्**" जिससे अवश्यमेव ब्रह्म की प्राप्ति हो उसका नाम उपनिषद् हुआ। ब्राह्मण ग्रन्थों के समय में वेदों के आलङ्कारिक भावों पर लोग बहुत झुक गये थे। वा यों कहो, कि उससमय एकमात्र यज्ञकर्म की ही प्रधानता समझी जाती थी। इसलिये उस से अरुचि उत्पन्न हो कर ज्ञान काण्ड का प्राबल्य होने लगा॥

उपनिषत्-काल।

इस समय में उपनिषदों का निर्माण हुआ। इस उपनिषत्समय में ब्रह्मवाद की इतनी प्रधानता हुई, कि "**सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति शान्त उपासीत**" छां० ३।१४।१–५॥ इत्यादि वाक्यों द्वारा एकमात्र ब्रह्म की ही उपासना होने लगी। छान्दोग्य, और वृहदारण्यक बड़े बड़े उपनिषदों का निर्माण इसी समय में हुआ। यद्यपि इस समय का निर्द्धारण करना कठिन है, तथापि यह बलपूर्वक कहा जा सकता है, कि यह समय "बुद्ध" से सहस्रों वर्ष प्रथम था। जिस प्रकार वाल्मीकीयरामायण में गङ्गासङ्गम, प्रयाग का, और महाभारत में गंगाद्वार ब्रह्मकुण्ड हरिद्वार का, नाम प्रसिद्ध था, इसी प्रकार उपनिषदों के समय में, **वाराणसी** का नाम **काशी** प्रसिद्ध था। मालूम होता है, कि उस समय विद्यारूपी प्रकाश का प्रधानक्षेत्र यही था। इस लिये बड़े २ गूढ़-तत्त्व और रहस्यों का निर्णय इसी स्थान में किया जाता था। इस स्थान का निर्माण वाल्मीकीयरामायण से अर्वाचीनकाल में और महाभारत से प्राचीनकाल में हुआ है।

यद्यपि इसके निर्माणकाल का ठीक २ पता लगाना कठिन है, तथापि यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है, कि **तक्षशिला** और **सारनाथादि** स्थान, जो किसी समय में बौद्धों के मुख्य क्षेत्र बन गये थे, इनका निर्माण काशी से बहुत पीछे हुआ है। इस विषय के लिये पुष्ट प्रमाण यह है, कि अजात शत्रु काशी के एक राजा ने **दृप्तबालाकी** नामक ब्राह्मण से यह पूछा कि "मुझे ब्रह्म बतलाओ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इसके उत्तर में ब्राह्मण ने यह कहा, कि "ब्रह्म ते ब्रवाणि" मैं तुम्हें ब्रह्म का उपदेश करूंगा।

तब ब्राह्मण ने उसे सूर्य को ब्रह्म बतलाया। राजा ने सूर्य के ब्रह्म होने का खण्डन किया। फिर उसने चाँद को ब्रह्म बतलाया। राजा ने उसका भी खण्डन किया। इस प्रकार जिन जिन भौतिक पदार्थों को वह ब्रह्म बतलाता गया, राजा उनका खण्डन करता गया। अन्त में ब्राह्मण ने सिर नीचा कर लिया; तब अजातशत्रु राजाने, उसे निराकार ब्रह्म का उपदेश किया। यह कथा बृहदारण्यक के अ० २ में अति प्रसिद्ध है। इससे सार यह निकला, कि बृहदारण्यक उपनिषद् के निर्माण काल में काशी ब्रह्मविद्या का मुख्य स्थान था। उस समय काशी में एकमात्र ब्रह्म का उपासन होता था। जो कोई भी भूल कर प्रतीक में ब्रह्मबुद्धि करता था, उसको बालाकी ब्राह्मण के समान अपना सिर नीचा करना पड़ता था।

तात्पर्य यह है, कि ब्राह्मण ग्रन्थों की आलङ्कारिक कथाओं से जो सूर्य-चन्द्रादिकों में ब्रह्मबुद्धि भ्रम से उत्पन्न होने लगी थी, उसको औपनिषद समय ने सर्वथा दबा दिया।

यहां यह बतला देना भी अप्रासङ्गिक नहीं, कि प्रतीकोपासन और मूर्तिपूजन में अत्यंत भेद है। प्रतीकोपासन के अर्थ किसी ज्योतिष्मान् पदार्थ में ब्रह्मबुद्धि करने के हैं। और मूर्तिपूजा किसी मूर्तपदार्थ को ब्रह्म समझ कर पूजा करने के हैं। अस्तु, कुछ हो, वैदिक-धर्मानुयायी लोगों के लिये ये दोनों मार्ग हेय हैं, उपादेय नहीं।

इसी अभिप्राय से व्याससूत्र में इसका निषेध किया गया है, कि "न प्रतीके नहि सः" ४।१।४ कि प्रतीक में ब्रह्मबुद्धि नहीं करनी चाहिये, क्योंकि प्रतीक ब्रह्म नहीं।

कई एक लोग उक्त विषय में यह भी आशङ्का किया करते हैं, कि ब्रह्म शब्दका वाच्य जो वैदिक-समय में देव विशेष था वा स्तोत्र अथवा अन्नादि-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थों को जो ब्रह्म शब्द कहता था उसको उपनिषद् के कर्ता ऋषियों ने जगज्जन्मादि हेतु ब्रह्म बना लिया।

यह कथन सर्वथा युक्तिशून्य और मिथ्या है; वेद में भी मुख्यतया ब्रह्म शब्द ईश्वर के अर्थों में ही आता था, जैसे कि "**तदेवशुक्रंतद्ब्रह्म**" यजुः० ३२। १। "**तस्मै ज्यंष्ठायब्रह्मणे नमः**" अथर्व० १०।८।४।१।

डाक्टर विलसनादि यूरोपियन्स वा सर रमेशचन्द्र दत्तादि लेखकों के लेख पढ़कर कई एक पंडितों के भी यही विचार हो जाते हैं कि ब्रह्म शब्द ऋग्वेद में ईश्वर के अर्थ में नहीं आता इसका उत्तर यह है, कि "**ब्रह्म गामश्वं जनयन्त ओषधीर्वनस्पतीन्पृथिवीं पर्वताँ अपः**" मं० १०। सू० ६५ म० ११ ब्रह्म ने पृथिवी, पर्वत, बनस्पति, गौ अश्वादि सब वस्तुओं को उत्पन्न किया एवं "**ब्रह्मणा व वृधाना**" मं० १। सू० ९३। मं० ६। में ब्रह्म शब्द ईश्वर के अर्थ में आया है।

तत्व यह है कि उपनिषदों के बनाने वालों ने ब्रह्म नाम वेद से लिया है। उन्होने स्वयं कल्पना करके ब्रह्मवाद नहीं चलाया।

औपनिषद समय में प्रतीकोपसना का बल पूर्वक खण्डन किया गया। जहां कहीं "**मनो ब्रह्मेत्युपासीत**" छा० ३।१८।१ "**आदित्यो ब्रह्मेत्यादेशः**" छा० ३।१९।१ इत्यादि वाक्यों में प्रतीकोपासना का कथन है, वह पूर्वपक्ष की रीति से है। सिद्धान्त पक्ष सर्वत्र उपनिषदों में यही है, कि "**तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते**" के० १।५ "**विरजं ब्रह्म निष्कलं**" मुं० २।२।९ "**सत्यंज्ञानमनन्तंब्रह्म**,, तै० २।१ "**अद्वैतंब्रह्म**,, छा० ३।१२।७ "**विज्ञानमानन्दं ब्रह्म**,, बृ० ३।९।२८ "**विज्ञानं सर्वे देवा ब्रह्म ज्येष्ठमुपासते**,, तै० २।५ "**सवायमात्माब्रह्मविज्ञानमयः**,, बृ० ४।४।५ बहुत क्या इत्यादि ब्रह्मोपासना के बोधक सहस्रों वाक्य उपनिषदों में पाये जाते हैं। उक्त ब्रह्मज्ञानरूपी वारिवाहिनी जान्हवीतट पर उस समय **काशी** नगरी का निर्माण हुआ था। काशी शब्द

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सब से पूर्व ऋ० मं. ३ सू. ३० मं. ५ में इस प्रकार आया है, "**मघवन् काशिरित्ते**" हे ऐश्वर्य युक्त! (**काशिः**) आप की न्याय नियम युक्त दीप्ति ग्रहण करने योग्य है। यद्यपि यहां "**काशी**" ह्रस्व इकारान्त है, और उपनिषदों तथा ब्राह्मणों में दीर्घ ईकारान्त है, तथापि वेद, ब्राह्मण, तथा उपनिषदों में "**काशी**" प्रकाशिका का नाम है। इस ब्रह्मवर्चस्वी ज्योति के अभिप्राय से इस नगर का नाम काशी रक्खा गया। मालूम होता है, कि उस समय वैदिकज्ञान के सागर और उपनिषत् तत्व के वेत्ता ब्रह्मर्षि लोग इस नगर में निवास करते थे। उस समय में इस बालाकी ब्राह्मण ने काशी के अजातशत्रु राजा से यह कहा कि मैं तुम्हें ब्रह्म बतलाऊंगा।

इसबात का विवेचन करना अत्यन्त कठिन है, कि किस काल में इस काशी नगरी का निर्माण हुआ। तथापि यह अनायासपूर्वक कहा जा सकता है, कि वाल्मीकीयरामायण के समय यह नगर नहीं बना था। इस लिये उसमें इसका कोई वर्णन नहीं। महाभारत के समय में इसका वर्णन स्पष्ट है, जैसा कि "**काशीराजश्चवीर्यवान्**" अस्तु।

मुख्य प्रसङ्ग यह है, कि उपनिषदों के समय में यह स्थान भारतवर्ष में ज्ञानका प्रसिद्ध क्षेत्र था। उपनिषदों के समय के सहस्रों वर्ष उपरान्त जब न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, पूर्वमीमांसा, उत्तरमीमांसा इन छयों दर्शनों, का निर्माण, हुआ तब भी इस नगर की प्रधानता रही। उक्त छओं दर्शनोंका निर्माण उपनिषत् और महाभारत के बीच के समय में हुआ है। हेतु इस का यह है, कि "**ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः**" महाभारत के इस वाक्य ने इस बात को स्पष्ट कर दिया, कि "**ब्रह्मसूत्र**" जिनका नाम "**व्याससूत्र**" वा "**वेदान्तसूत्र**" भी है, वे महाभारत से पूर्व बन चुके थे। और इन सूत्रों में न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग इत्यादि सूत्रों का वर्णन भलीभांति आता है। इससे स्पष्ट सिद्ध है, कि "**दर्शन**" महाभारत से पूर्व हैं।

इस प्रसङ्ग में यह भी अनुमान किया जा सकता है, कि बौद्ध-धर्म के आविर्भावकर्ता बुद्धदेव महाभारत से लगभग अढ़ाई हज़ार वर्ष पीछे हुए।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यद्यपि बौद्धदर्शन का वर्णन महाभारत में भी कहीं कहीं पाया जाता है, तथापि महाभारत का बुद्ध से पीछे होना सम्भव प्रतीत नहीं होता। और बौद्ध-दर्शन का महाभारत में वर्णन आने का अन्य हेतु है। वह यह है, कि महाभारत समय २ पर बढ़ता रहा है। और इसका पुष्ट प्रमाण अब भी हस्त लिखित पुस्तकों से मिल सकता है। पूर्वोत्तरनिर्णय करने से यह बात भलीभांति स्पष्ट हो जाती है, कि जिस समय बुद्ध देव हुए हैं, नतो उस समय भारतवर्ष में कर्म-योगी और ज्ञानयोगियों का प्राधान्य था, और न उस समय क्षात्रधर्म के उद्दीपक उद्योग की प्रधानता थी। किन्तु इससे अत्यन्त विपरीत आलस्य, मद, मत्सर, ईर्षा, द्वेष, हिंसाधर्मप्रधान वाममार्ग की प्रधानता थी। उसी समय में वेदों के हिंसा प्राधान्य और वाम मार्ग की प्रधानता सूचक अनन्त प्रकार के टीका टिप्पण हो रहे थे। औपनिषद ज्ञान की उच्चपताका जो काशी नगर में सहस्रों वर्षों से फहरा रही थी, वह भी समय के प्रभाव से, वा यों कहो कि भारत-संग्रामाग्नि ने उसे भी भस्मीभूत कर दिया था। इसी कारण बुद्ध देव उत्पन्न हुए। इनके समय में दर्शन और उपनिषदों का विशेष प्रचार न था। और संस्कृत भाषा का प्रचार भी बहुत हीनावस्था को प्राप्त हो गया था। इसी कारण बुद्ध के समय में संस्कृत संदर्भों का निर्माण नहीं हुआ। बुद्धदेव ने केवल निवृत्ति-मार्गप्रधान निर्वाण का उपदेश किया। जिसमें अभ्युदय वा उद्योग का गन्ध भी न था।

यद्यपि बुद्धधर्म के उपदेश वैदिक अभ्युदयशाली मंत्रों के आशय से रहित थे, और उनमें उपनिषदों के और दर्शनों के उत्तमोत्तम भाव भी न थे, तथापि उन उपदेशों का प्रचार बहुत जोर से हुआ। कारण यह कि उस समय हिंसा और अनाचार के भाव को दूर करने वाले सदुपदेशक की अत्यन्त आवश्यकता थी। इसी कारण सर्वसाधारण में उनके उपदेश फैल गये।

यहां कई एक लोग यह कहते हैं, कि बुद्ध के समय में आर्यों के दर्शनों का निर्माण नहीं हुआ था। और वे हेतु यह देते हैं कि दर्शनों में बौद्धमतका खण्डन पाया जाता है, इसका उत्तर यह है, कि दर्शनों के सूत्रों में कहीं भी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बुद्ध और बुद्धधर्म का निर्देश करके खण्डन नहीं किया गया। और कीया भी कैसे जाता। जब कि महाभारत के वाक्य से यह सिद्ध कर चुके कि दर्शन महाभारत से पूर्व बन चुके हैं। और यदि बुद्ध महाभारत से पहिले होता तो उसका वर्णन गीता का कर्ता अवश्य करता। क्योंकि जिसके मत में "**यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेववा। तत्तदेवावगच्छत्वं ममतेजोंऽशभवम्**" ॥

जो जो विभूति वाली वस्तु है वह सब मेरे ही तेज से उत्पन्न हुई है। तो क्या जहां "**सिद्धानांकपिलोमुनिः**" का वर्णन है, वहां बुद्ध का वर्णन न आता। इससे स्पष्ट सिद्ध है कि जो कपिल सांख्य शास्त्र का निर्माता है, वह बुद्ध से बहुत पहिले हो चुका है।

जो कई एक इतिहास लेखक यह लिखते हैं, कि बुद्ध "कपिलवस्तु" में उत्पन्न हुआ और यह कपिल सांख्यदर्शनकार कपिल के नाम से प्रसिद्ध था, और कपिल के आश्रम में बुद्ध के पूर्वज भी जाकर एक समय रहे थे, यह कथा पूर्वोक्त युक्तियों से सांख्यशास्त्रकर्ता कपिल को सिद्ध नहीं करती। किन्तु किसी और कपिल का वर्णन करती है। अस्तु कुछ हो।

मुख्य प्रसङ्ग यह है, कि बुद्ध ने अपने समय में संयमी बनकर शम-दमादि भावों का प्रचार किया। और उस समय के कर्मकाण्डी और वेदाभिमानियों को अत्यन्त नीचा दिखलाया। महात्मा बुद्ध का ईसामसीह से ४७८ वर्ष पूर्व अन्तिम समय था। इनके अनन्तर इनके धर्म का इतना प्रधान्य बढ़ा, कि मगध देश ही नहीं, किन्तु सम्पूर्ण भारतवर्ष में बौद्धों का प्राबल्य हो गया। जिसको आर्यावर्त कहा जाता है, उस सीमा से पार होकर भी मालाकन्द, अफ़गानिस्तान, केटा-बुलोचिस्तान इत्यादि अनेक स्थान इनके पादाक्रान्त हो गये। उस समय जड़ जलस्थलों की तो कथा ही क्या किन्तु मीमांसाशास्त्र के भाष्यकर्ता शवर स्वामी और वार्तिक के कर्ता कुमारिल भट्टादि धुरन्धर पण्डितों पर भी इनका आतङ्क जम गया। इसी प्रवाह में पड़े हुए एक स्थान में कुमारिल भट्ट यह कहते हैं, कि—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

"कुम्भकाराद्यधिष्ठानं घटादौ यदि चेष्यते।
नेश्वराधिष्ठितत्वंस्यादस्ति चेत्साध्यहीनता"॥

घटादि कार्यों के दृष्टान्त से जो ईश्वर की सिद्धि की जाती है, वह ठीक नहीं, क्योंकि घटका कर्ता जो कुलाल है, पहले वही ईश्वर नहीं, अर्थात् जन्ममरणादि-धर्म वाला मनुष्य है। इस प्रकार यह दृष्टान्त साध्य से हीन है।

बहुत क्या, उस समय जितने विद्वान् हुए, वे बौद्ध-धर्म के सम्पर्करूपी गंध से निर्गन्ध नहीं थे। इसी प्रकार पूर्वमीमांसा के भाष्य-कर्ता शवरस्वामीने कहीं भी ईश्वर का उल्लेख नहीं किया। यह समय वह था, जिस समय में उसी मगध देश में जिसमें बुद्ध देव हुए, वर्द्धमान महावीर नामक तीर्थङ्कर जैनों का अन्तिम तीर्थङ्कर था। इस समय न्यायशास्त्र के वेत्ता नैयायिकों ने "आत्मतत्वविवेक" इत्यादि कईएक, ईश्वरसाधक ग्रन्थों का निर्माण किया। अस्तु—

इस खण्डन मण्डन के घोर संग्राम में कई एक राजा महाराजा बौद्धधर्मानुयायी हो गये। इसका प्रभाव यहां तक हुआ, कि वैदिक लोगों के काशीनगर के महत्व को कम करने के लिये, उन्होंने काशीनगर से सात मील की दूरी पर सारनाथ को बसाया। इस नगर के बनाने का उनका तात्पर्य यह था, कि काशी-नगर के महत्व को घटाकर, अपना महत्व बढ़ायें। जान्हवी तट को त्यागकर सात मील सारनाथ बनाने का, उनका यह भी तात्पर्य था, कि गङ्गा का कोई महत्व नहीं। और न वे वैदिकों के समान सायं प्रातः संध्या वन्दन करते थे, जो गङ्गा-तट की शरण लेते। कुछ हो, सारनाथ का महत्व ऐसा बढ़ा, कि बौद्धों के प्रभाव ने प्राचीन काशी को दबा दिया। इसके कारण कई एक थे।

(१) उस समय ब्राह्मण लोग वेदों के अभ्यास को छोड़ बैठे थे।

(२) जो उनमें से थोड़े से वेदाभ्यास करते भी थे, वे ब्राह्मण ग्रन्थों के अलङ्कारों को न समझ कर मिथ्या कथा-कहानियों में पड़ गये थे।

(३) बहुत से उनमें से ऐसे थे, जो वेदों में अश्लीलवाद, पशुयज्ञ,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

और वाममार्ग के बोधक अर्थ निकाल, वेदों के महत्व को घटाते थे। इन बातों-के कारण बौद्धों का महत्व और भी बढ़ गया।

उस समय में जहां कहीं शास्त्रार्थ होता था, उस समय के वैदिक-धर्मियों-के मन्तव्यानुसार, वे वेदों में अश्लीलता, वाममार्ग और पशुयज्ञ दिखला कर बौद्ध लोग उनको जीत लिया करते थे। अधिक क्या, उसी समय के रचित ये वाक्य हैं, कि—"**त्रयोवेदस्यकर्तारो धूर्तभाण्डनिशाचराः**" अर्थात् वेदों को धूर्त, भाण्ड और राक्षसों ने बनाया है। क्योंकि उनमें लज्जाजनक बातें, यज्ञ-में पशुओं को मारना और वाममार्ग की बातें पायी जातीं हैं। इस शस्त्र से भारत के धर्म-युद्ध-क्षेत्र में बौद्धों ने विजय पाया। और आर्यों का पराजय हुआ। इसका यहांतक भयङ्कर परिणाम हुआ, कि अजातशत्रु राजा, और अशोकादि बड़े बड़े राजा बौद्ध धर्मानुयायी बन गये।

कई एक ग्रन्थकारों का मत है, कि तक्षशिला का विश्वविद्यालय भी इसी समय बना। पर यह बात हमारे विचार में सर्वथा निर्मूल है। हेतु इसके निम्न लिखित हैं—

(१) पाणिनीय सूत्रों में तक्षशिला का वर्णन है। और भगवान् पाणिनि बुद्ध से बहुत पहिले हुए।

(२) भगवान् पतञ्जलि भाष्यकार ने बौद्धधर्म का कहीं भी नाम नहीं लिया।

(३) उक्त ग्रन्थकारों ने पाली प्राकृतभाषा की चर्चा कहीं नहीं की, जो बौद्धों की प्रधान भाषा थी। इससे यह प्रतीत होता है, कि तक्षशिला पहिले वैदिक-धर्मानुयायी आर्यों का था। पीछे बौद्धों के अधिकार में आया।

अस्तु कुछ हो, यह कथान्तर है। मुख्यप्रसङ्ग यह है, कि **प्राचीन काशी** और **तक्षशिला** तथा **सारनाथ** इत्यादि स्थान जिनमें बौद्धधर्म का प्रभाव हुआ। उनमें बौद्धों की प्रतिमाओं से पृथक् कोई प्रतिमा नहीं पाई जाती। इससे स्पष्ट सिद्ध होता है, कि वैदिक-धर्मानुयायी आर्य प्रतिमापूजन-प्रिय न थे। कई एक लोग यह कहते हैं, कि "**मूर्नौघनः**" ३।३।७७। "**जीविकार्थे-चापण्ये**"

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

५।३।९९। इन पाणिनीय सूत्रों से तथा "**प्रतिमानाञ्चभेदकः**" इत्यादि मनु-वाक्यों से सिद्ध है कि प्रतिमापूजन पहले आर्य्यों में भी था।

इसका उत्तर यह है कि "**मूर्तौघनः**" ३।३।७७ अष्टाध्यायी के इस सूत्र से तो यही सिद्ध किया है कि (हन्ति) को (अप्) और घन आदेश होकर अभ्रघनादि प्रयोग सिद्ध होते हैं। जिनसे मूर्त पदार्थ का कठिन्य पाया जाता है। तो क्या प्राचीन आर्य्य पृथिव्यादि पदार्थों में मूर्तत्व धर्म्म नहीं मानते-थे? इससे प्रतिमा-पूजन की सिद्धि कैसे?।

जो "**जीविकार्थे चापण्ये**" ५।३।९९। इस सूत्र से प्रतिमा-पूजन सिद्ध किया जाता है, वह ठीक नहीं, क्योंकि यह सूत्र यह सिद्ध करता है, कि व्यास, वशिष्ठादि ऋषि महर्षियों की जो प्रतिकृतियें बनाई जाँय, वे यदि बेंचने के अभिप्राय से बनाई जाँय, तो उनसे कन् प्रत्यय कालुक न हो।

और यहां यह स्मरण रखने योग्य बात है, कि इससे पूर्व सूत्र, "**लुम्मनुष्ये**" ५।३।९८ इसमें मनुष्य शब्द स्पष्ट पड़ा है। जिसकी अनुवृति "**जीविकार्थे चापण्ये**" ५।३।९९। इस सूत्र में आती है। इससे यह स्पष्ट सिद्ध हो जाता है, कि ये प्रतिकृतियें मनुष्यों की ही बनाई जातीं थीं ईश्वर की नहीं।

और भाष्यकार ने तो इस के उदाहरणों से यह भी स्पष्ट कर दिया, कि उनके समय में रामचन्द्र और कृष्णादिकों की प्रतिमायें न थी।

और जो भाष्यकार ने देव शब्द यहां लिखा है, उसका तात्पर्य विद्वानों-की प्रतिमाओं से है। क्योंकि प्रतिमा साधारण मनुष्यों की नहीं बनाई जाती। दिव्यगुणसम्पन्न पुरुषों की ही बनाई जातीं हैं। कुछ क्यों न हो, इत्यादि उदा-हरणों से यह स्पष्ट सिद्ध हो जाता है, कि प्राचीन आर्यों में प्रतिकृति बनाने की विद्या थी। पर वे कभी ईश्वर की वा किसी मनुष्य को ईश्वर के स्थानापन्न मानकर उसकी प्रतिमा नहीं बनाया करते थे। और ना हीं उनके वेदादिधर्म ग्रन्थ ऐसा करने की उनको आज्ञा देते थे।

और "**प्रतिमानां च भेदकः**" इस मनु-वाक्य से जो प्रतिमा सिद्ध की जाती है, यह सर्वथा साहस मात्र है। क्योंकि यह वाक्य राजधर्मप्रकरण-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

का है। इसमें सीमा-विभाग के लिये जो चिन्ह बनाए जाते थे वा तौल-नाप के लिये जो सेर-पसेरी आदिकों के चिन्ह थे, उनको न्यूनाधिक करने वालों के लिये यहां दण्ड लिखा है।

बहुत क्या बुद्ध से पहले प्रतिमा बना कर पूजने की प्रथा आर्यावर्त में न थी। इसका पुष्ट प्रमाण यह है, कि मगध-देश व ब्रह्मर्षि-देश अथवा गोनर्द-देश जिसमें पाणिनि वा पतञ्जलि का उद्भव हुआ। इन देशों में प्राचीन भग्न-देवालयों में जितनी प्रतिमायें मिलती हैं, वे सब बौद्ध सम्प्रदायी लोगों की हैं। वैदिक-धर्मानुयायी आर्यों की एक प्रतिमा भी आज तक नहीं मिली, जो ईश्वर वा ईश्वर-स्थानापन्न किसी देव विशेष की हो।

इससे स्पष्ट सिद्ध हुआ, कि प्रतिमा पूजन बौद्धों से चला है। वह इस-प्रकार कि, जब बौद्धों का पूर्ण ऐश्वर्य आर्यावर्त में हो गया, और वे बुद्धदेव की प्रतिमा बनाकर उसको पूज्य समझ कर रखने लगे, और इस प्रकार उनका बुद्ध की मृत्यु के बाद भी अधिक संगठन हो गया, तो वैदिक-धर्मानुयायी आर्यनेताओं ने भी यह सोचा, कि हमको अपने संगठन की कोई न कोई आधार शिला रखनी चाहिये। इस अभिप्राय से उनमें उस समय ऐसे पुरुष उत्पन्न होने लगे, जो बुद्धदेव के मुकाबले अपने देवी-देवताओं को रखते थे। और न केवल देवी-देवताओं को ही पूजनीय बनाते थे, किन्तु उनके गुण-कीर्तन के पुराण भी नये नये निर्माण करते थे। इस समय में पहले पहल वैष्णव पुराणों की रचना हुई। इनका कारण यह था, कि जिन पशु-यज्ञों की निन्दा करके बुद्ध वा बौद्ध धर्मानुयायी लोगों ने इनको हानि पहुंचाई थी, उन दोषों का मार्जन करना भी अभीष्ट था। इसी प्रकार शनैः शनैः और पुराण भी बन गये। और इन्होंने भी बुद्ध के समान पूजनीय अपनी देवी-देवताओं को बना लिया। अर्थात् वैष्णवों ने विष्णु को चतुर्भुज कल्पना करके विष्णु को विशेष देव बना लिया। और शैवों ने शिव को सर्वोपरि मानकर उसे अपनी भावनाके अनुकूल आकार देकर, अपना देव-विशेष मान लिया। इस प्रकार भारत

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वर्षमें शान्तदेव, रुद्रदेव, भैरवदेव इत्यादि नानादेवताओं के पूजन का एक भीषण-युग प्रारम्भ हो गया।

इसमें सन्देह नहीं, कि इनकी नई रचनाओं ने और नई प्रतिमाओं ने बौद्धों को तो अन्तर्ध्यान के स्थान में अन्तर्द्धान कर दिया।

पर इन के नाना देववाद ने इनमें फूटका बीज बो दिया। जो भविष्यमें बृहद्रूप को धारण करता हुआ, भारत के अभ्युदय का विनाशक हुआ।

कई एक लोग उक्त देव-पूजा विषय में यह कहते हैं, कि रुद्र-देवादिकों-की पूजा वेद के आधार पर ही चलाई गई। रुद्र नाम वेद में वज्र वा विजली का है। और वह (वृषभ) मेघ की सवारी करती है। अर्थात् बादलों-में चमकती और कड़कती है। इस रीति से रुद्र का वाहन (वृषभ) बैल माना गया है। वास्तव में यह भूतल का चार पैर वाला बैल नहीं।

इस का उत्तर यह है, कि यदि इस सूक्ष्म फिलासफी को दृष्टिगत रख कर शिवलिङ्गादिकों की पूजा भारत में चलाई जाती, तो फिर दूसरे दोनों देवों के वाहन की भी कोई न कोई सङ्गति अवश्य होती। अर्थात् ब्रह्मा का वाहन हंस और विष्णु का वाहन गरुड़, इन का क्या तात्पर्य? इस प्रश्न के करने पर वे कल्पक लोग, जो आज कल नई नई कल्पनाओं से पौराणिक-धर्म्म का मण्डन करते हैं, वे सर्वथा चुप हो जाते हैं। क्योंकि वास्तव में रुद्रादि देवों की मूर्तियें बना कर पूजने की कोई फिलासफी न थी। किन्तु केवल बौद्धधर्म को उन्हीं के शस्त्रों से पराजय करना ही अभीष्ट था। हाँ इतना अवश्य हुआ, कि विष्णुसूक्तों को पढ़ कर साकार विष्णु-देवता की कल्पना की। और रुद्रसूक्तों को पढ़ कर साकार रुद्रदेव की कल्पना की। पर इन कल्पनाओं में निरुक्त वा निघण्टु कोई आधार न था।

जिन लोगों का कथन यह है कि (रुद्र) देवता मेघस्थ विद्युत् प्रायः पर्वतों पर वर्षता और गर्जता है, इसी आधार पर (शिव-लिङ्ग) पाषाणमय-शिव पर जल चढ़ाया जाता है। उनसे यदि यह पूछा जाय, कि फिर विल्वपत्र-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तथा विष्णु के प्रतिनिधि शालग्राम पर तुलसी क्यों चढ़ाई जाती है। तो उन की वैदिक-फिलासफी इस विषय में तनिक भी सहारा नहीं देती।

सच तो यह है, कि उस समय की कल्पनाओं का वेद से कोई सम्बन्ध न था। हाँ केवल ब्राह्मण-ग्रन्थों के अलङ्कारों का अन्यथा उपयोग अवश्य किया गया। जैसे कि प्राणविद्या और इन्द्रियों के अलङ्कार से देवासुर-सङ्ग्राम और आध्यात्मिक-ज्ञानयज्ञ से घोड़े की बलिदान वाला अश्वमेध और इन्द्रियों की दुष्ट वृत्तियों के हवन करने से, गोमेध में गौ आदि पूज्य-पशुओं का वध सिद्ध किया गया।

उक्त विषय का पुष्ट प्रमाण हमारे पास यह है, कि मद्रास में एक गार्ग्यायण सूत्र छपा है। जिसमें आध्यात्मिक अश्वमेधादि-यज्ञों का वर्णन है। यह ग्रन्थ सर पी. सी. चटरजी के गृह पर कलकत्ता में मैंने स्वयं देखा है। इस प्रकार जो ज्ञान-काण्ड-प्रधान ब्राह्मण-ग्रन्थों के अलंकार थे, उनको अन्यथा करके पुराणों में वर्णन किया गया। जिससे वैदिकधर्म्म से उलट कर आर्य्यों का प्राचीन-धर्म्म पुराणों के आकार में आगया। इसी समय इस **काशी** की नींव पड़ी। जिसमें अब विश्वेश्वरनाथ और विश्वनाथादि शिवलिङ्गों की प्रतिमायें हैं।

यहां यह बतला देना भी अत्यन्तोपयोगी है, कि पहली **काशी** जो उपनिषदों के समय की थी, वह इस स्थान में न थी किन्तु राजघाट-स्टेशन से उत्तर पूर्व की कोण में वरुणा और गंगा के संगम पर थी। कई इतिहासवेत्ता कहते हैं, कि इससे भी उत्तर सारनाथ और वरुणा नदी के बीच में थी। पर इसमें कोई सन्देह नहीं, कि यहां न थी। काशीखण्ड में उक्त बात के मण्डन का यह प्रमाण है, कि इसके प्रमाण से आदि केशव का मन्दिर "**आदौ पादोदके तीर्थे विद्धिमामादिकेशवम्। अग्निबिन्दोमहाप्राज्ञ भक्तानां मुक्तिदायकम्॥ काशीखण्ड-अ० ६१-श्लोक ४**। इस में आदिकेशव को ही सब से प्राचीन ठहराया है। इस से यह भी स्पष्ट हो जाता है, कि उस समय सङ्गम को सब से श्रेष्ठ समझा जाता था, इस लिये यह आदिकेशव का मन्दिर ठीक ठीक वरुणा और गङ्गा के सङ्गम पर है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यहां यह भी स्पष्ट कर देना उचित प्रतीत होता है, कि बुद्ध के पहले यह विष्णु को निराकार वा अव्यक्त मानते थे। प्रमाण के लिये देखो "**अपियो-भगवानीशोमनोवाचामगोचरः। स मादृशैरल्पधीभिः कथं स्तुत्यो-वचःपरः**"। **का.खं. अ० ६०-श्लो० २८**। इत्यादि श्लोकों में विष्णु को इन्द्रियागोचर मान कर भी बुद्ध देव की प्रतिमा की नक़ल आदिकेशव की मूर्त्ति बनाई गई। इसके प्रमाण में आदिकेशव का मन्दिर अब तक साक्षी-भूत खड़ा हुआ है। मालूम होता है, कि बुद्ध की तुलना का देवता पहले बुद्ध समय के पौराणिक आचार्य्योंने (केशव) विष्णु को रक्खा। यह नाम वेद में केशयुक्त पुरुष के लिये भी आया है। परन्तु पौराणिक-संस्कृत में मुख्यतया यह नाम विष्णु का है।

मुख्य प्रसङ्ग यह है, कि आधुनिक पौराणिक-धर्म का केन्द्र यह **काशी**-नगर बौद्धधर्म्म के मुकाबले पर बसाया गया। इतने अंश में तो उस समय के आर्य्यों ने अच्छा काम किया, कि जो उस समय में काव्य, नाटक, पुराणादि, लिखकर उन्होंने विकट-समय में संस्कृत की अत्यन्त उन्नति की। परन्तु आर्य्य-जाति का जीवन वेद उस समय रसातल को पहुँच गया। कुछ तो बुद्ध भगवान् और उनके अनुयायी पहले से ही वेदों के प्रतिकूल थे। दूसरे उस समय के पण्डितों ने वेदाभ्यास करना सर्वथा त्याग दिया था—

उस समय की पाठ्य-प्रणाली में केवल साहित्य, व्याकरण, और पुराण ही थे।

उस समय वेदों की अवनतिका मुख्य कारण, वेदों के अश्लील अर्थ और प्राकृत अर्थ भी थे। अर्थात् उस समय के पण्डित वेदों के बहुत बुरे बुरे अर्थ किया करते थे, और इस का कारण वाममार्ग की लहर थी। उन में से कुछ अर्थ हम यहां उद्धृत करते हैं।

अन्वस्य स्थूरं ददृशे पुरस्तादनस्थ ऊरुरवरम्बमाणः। शश्वती नार्यभिचक्ष्याह सुभद्रमर्य्य भोजनं बिभर्षि। ऋ.मं.८।सू. १।मं. ३४।

इस मन्त्र के सायणाचार्य्य यह अर्थ करते हैं, कि एक राजा नपुंसक-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हो गया था। उस की स्त्री उस के पुंस्त्व को वर्णन करती हुई, कहती है, कि तुम्हारा पुंस्त्व अब स्थूलतादिधर्म्मों से युक्त है। यहां अत्यन्त लज्जाकर अर्थ करके वेदों का महत्त्व घटाया है। वास्तव में इसका अर्थ यह है, कि प्रकृतिरूपी नारी मानो ईश्वरकी विभूति को वर्णन करती है, कि (अर्य) हे परमात्मन्! आपने सुन्दर विराटरूप इस भोग को धारण किया है। जो (अनस्थ) अनित्य है अर्थात् एकरस नहीं। और आप की अपेक्षा से स्थूल है।

अनस्थ के अर्थ अश्वत्थ के समान प्रवाहरूपसे नित्य के ही हैं। वह इस प्रकार तिष्ठतीति स्थः न स्थः अस्थः और न अस्थः अनस्थः। इस प्रकार अनस्थ शब्द प्रवाहरूप से नित्य को कहता है। जिस के अर्थ सायणाचार्य्य ने बिना हड्डी के करके, मनुष्य के गुप्त इन्द्रियों के किये। इस प्रकार वेदों में अश्लीलता कूट कूट कर भरी गई। जिस का अधिक विस्तार करना यहां लेख को नीरस करता है— अधिक क्या उस समय में जहां वेद में हरिश्चन्द्र शब्द मिला उस से हरिश्चन्द्र की कथा और उस के सर्वस्वदान को सिद्ध किया जाता था। एवं, "शवा-मधित्वचि" का अर्थ बैल के चमडे पर सोम कूटना किया जाता था। जिस के अर्थ वास्तव में इन्द्रियों के अधिष्ठाता मन् के थे। और हरिश्चन्द्र के अर्थ ब्रह्मवर्चस्वी अर्थात् ब्रह्मतेज वाले विद्वान् के थे। यहां (हरिः) इस शब्द को चन्द्र के परे होने से सुट् का आगम हुआ है। बहुत क्या इस घोर अनर्थ के प्रवाह में कोई उस समय का विद्वान् खड़ा नहीं हो सकता था। यहां तक कि कुमारिलभट्ट ने भी अपने लिये और ही रास्ता निकाला। कुमारिलभट्ट उस समय के सर्वोपरि विद्वान् थे। पर वे भी वेदों का नाम लेकर ही उनपर अपने आत्मा का बलिदान किया करते थे। अर्थात् कतिपय वैदिक-सूक्तों पर भाष्य करके उन के महत्व को बोधन करने का साहस नहीं रखते थे। हां इतना उपकार उन्होंने आर्य्य-जाति पर अवश्य किया, कि संस्कृत-मीमांसा-दर्शन के मूल को दृढ़ करने वाले, उन्होंने कई एक ग्रन्थों का निर्म्माण किया, जिन में से कुमारिल का वार्तिक अति प्रसिद्ध है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इस ग्रन्थ में कुमारिलभट्ट ने, प्रत्यक्षादि छः प्रमाणों की सङ्गति ऐसी रखी है, जिस का परित्याग इन के प्रति पक्षी वेदान्ती भी नहीं कर सके, अर्थात् वेदान्त ग्रन्थों में भी प्रमाणों का निरूपण इसी भांति किया जाता है।

आधुनिक वेदान्तियों को इनका प्रतिपक्षी वा प्रतिद्वन्द्वी इस अभिप्राय से कहा गया है कि—

स्वयं च शुद्धरूपत्वादसत्वाच्चान्यवस्तुनः।
स्वप्नादिवदविद्यायाः प्रवृत्तिस्तस्याः किं कृता॥

इत्यादि कारिकायों में कुमारिलभट्ट ने अविद्यावादी वेदान्तियों का अत्यन्त बल पूर्वक खण्डन किया है, इस से यह भी स्पष्ट हो गया कि इस अविद्यावाद के वेदान्त के कर्त्ता केवल श्री स्वामीशङ्कराचार्य्यजी ही नहीं किन्तु क्षणिक-विज्ञानवाद के समान यह अविद्यावाद अर्थात् अविद्या देवी के वशीभूत होकर ब्रह्म से जीव बन जाना भी शङ्कराचार्य्य से प्रथम था। जिस का विशेष प्रचार स्वामीशङ्कराचार्य्य जी ने किया।

यह भी दैवकी विचित्र घटना है कि जिस समय बौद्ध धर्म्म का प्राबल्य-हुआ उसी समय कुमारिलभट्ट और स्वामीशङ्कराचार्य्य जैसे विद्वान् उत्पन्न हो गए। जिनके दार्शनिक ज्ञान विज्ञान के चक्षु अत्यन्त विशाल थे।

यद्यपि ये पूर्वोक्त विद्वान् बौद्ध धर्म्म के साम्हने वेदों को खड़ा नहीं कर सकते थे। तथापि दार्शनिक विद्या से वैदिक धर्म्म को पुनरुज्जीवित करने में इन्होंने अत्यन्त यत्न किया। वह यत्न यहां तक था कि कुमारिल भट्ट ने तो अपने आपको वेद-पथ पर भस्मीभूत कर दिया अर्थात् प्रयागराज के झूसी-नामक स्थान में कुमारिलभट्ट ने चिता जलाकर अपने शरीरका प्रायश्चित्त कर दिया इसके कारण लोग कई एक बतलाते हैं। कोई कहता है, कि बौद्धों से विद्या पढ़कर कुमारिल को बौद्धों का साम्हना करना पड़ा। इसलिये कुमारिल-भट्टने अपने शरीर को स्वयं जला देना उचित समझा। कोई कहता है, कि वे समय के प्रभाव से स्वयं भी आधे बौद्ध हो गए थे। इस बात से उनके हृदय

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

में अत्यन्त ग्लानि हुई। कुछ हो, इसमें सन्देह नहीं कि उनके इस दारुण प्रायश्चित्त का कोई भयङ्कर ही कारण था।

हमारे विचार में तो यही कारण ठहरता है, कि वैदिक धर्म्मानुयायी होकर जो उन्होंने अपने बनाए हुए वार्त्तिक ग्रन्थ में ईश्वर का खण्डन किया। वही भयङ्कर पाप उनको सताता था इसी लिये उन्होंने अपने शरीर का उक्त प्रायश्चित्त किया।

यह भी जन श्रुति है कि जलते समय स्वामीशङ्कराचार्य्यजी ने उनसे बहुत कहा पर उन्होंने अपने शरीर के प्रायश्चित्त द्वारा ही अपना उद्धार समझा।

उनके बाद श्रीस्वामीशङ्कराचार्य्यजीने यह काम किया कि पाञ्चोंस्कन्ध जो संसार के हेतु बौद्धों ने माने थे, उनका अपने भाष्यों में बलपूर्वक खण्डन किया।

वे स्कन्ध यह थे १ रूपस्कन्ध। २ विज्ञानस्कन्ध। ३ वेदनास्कन्ध। ४ संज्ञास्कन्ध। ५ संस्कारस्कन्ध।

इनमें से विज्ञानस्कन्ध अन्य चारोंका हेतु है। तात्पर्य्य यह है कि (प्रकृति) मैटर में ही बौद्ध लोग दो प्रकार के समुदाय मानते थे (एकचित्त) अर्थात् चेतन दूसरा संज्ञा, संस्कार, वेदना, रुप, यह चार स्कन्ध जड़ रूप संघात हैं; इन दोनों प्रकार के (स्कन्ध) अर्थात् (वृक्ष के) स्थूल डाल के समान इस समुदाय का नाम ही वृक्ष है—

जिस प्रकार स्कन्धादि शाखायों को छोड़कर वृक्ष कोई अन्य वस्तु नहीं एवं पाञ्चों स्कन्धों को छोड़कर आत्मा कोई अन्य वस्तु नहीं। यही सिद्धान्त बुद्धभगवान् और उनके शिष्य बौद्धों का था, बुद्ध के सम्प्रादायी लोगों का नाम बौद्ध है।

इस सिद्धान्त का खण्डन व्यास दर्शन के सूत्र १८ दूसरे अध्याय के दूसरे पाद में है यहां यह आशंका अवश्यमेव उत्पन्न होती है कि जब दर्शनों के समय में बुद्ध और उनके सिद्धान्त थे ही नहीं तो वेदान्त दर्शन में इसका वर्णन कैसे आ गया ?

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इसका उत्तर यह है किप्रकृति रूप मैटर में शक्ति मानकर सृष्टि की रचना मानने वाले कुछ लोग प्रथम भी हो चुके हैं। जिनका खण्डन उपनिषदों में भी है"**न वा अरेऽहं मोहं ब्रवीम्यविनाशी वारेऽयमात्माऽनुच्छित्तिधर्मा** बृ० ४।५।१४ इत्यादि वाक्यों में पाया जाता है। मालूम होता है कि बुद्ध भी इसी बीज को लेकर उठा यह कथन कल्पित नहीं किन्तु बुद्ध के जीवन चरित्र में यह स्पष्ट है कि आषाढ़ की पूर्णिमा को जो बुद्ध को बोधी ज्ञान हुआ उसमें बुद्ध ने उक्त पाञ्चोंस्कन्धों को विचारकर यह निश्चय किया कि उक्त पाञ्चोंस्कन्धों से भिन्न संसार में कोई वस्तु नहीं।

इसी का नाम बुद्धदर्शन में दिव्यज्ञानचक्षुदर्शन विद्या था।

और निर्बीज और सबीज समाधि का नाम धरकर जो आजकल के बुद्ध जीवन के रचयितायों ने बुद्ध के धर्म्म को परिष्कृत किया है वह बुद्ध के आशय से सर्वथा विरुद्ध है। क्योंकि बुद्धदेव जन्मजन्मान्तर को नहीं मानते थे उस समय के जैनों से भी उनका यही प्रभेद था।

योग शास्त्र तो, **तदाद्रष्टुःस्वरूपेऽवस्थानम्**" इत्यादि सूत्रों में चेतन की पृथक सत्ता स्वीकार स्पष्ट रीति से करता है। इतना ही नहीं किन्तु **समाधि सिद्धिरीश्वरप्रणिधानात**" इत्यादि सूत्रों में ईश्वर का स्पष्ट रीति से स्वीकार करता है और बुद्ध के मत में ईश्वर का स्वीकार नहीं इतने बड़े भेद को कौन छिपा सकता है॥

इस लेख से हम बुद्धदेव की लघुता सिद्ध नहीं करते किन्तु वास्तव में बुद्धदर्शन का प्रकाश करना हम अपना धर्म्म समझते हैं जो जो बुद्धदर्शन की प्रतीकें शङ्करभाष्य वा अन्य ग्रन्थों में मिलती हैं वे बुद्ध को वैदिक धर्म्मानुयायी सिद्ध नहीं करतीं॥

जो कई एक लोग आजकल बुद्ध देव को ईश्वरवादी सिद्ध करने की चेष्टा करते हैं वेभी उन के ईश्वरवादी होने में कोई पुष्ट प्रमाण नहीं दे सकते। और ना ही उन के इस प्रकार के कोई लेख मिलते हैं। जिन से उन के ईश्वरवादी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

होने की सिद्धि की जा सके, पालीभाषा में भी जो ग्रन्थ पाये जाते हैं उन में बुद्ध के ईश्वरवादी होने में कोई प्रमाण नहीं।

अन्य युक्ति यह है कि जो संस्कृत साहित्य बुद्ध के अनन्तर बना है उस में सर्वत्र बुद्ध को अनीश्वरवादी माना है, शङ्करभाष्य तथा रामानुजभाष्य में तो यह बात अत्यन्त प्रसिद्ध है कि बुद्ध अनीश्वर वादी थे।

रामानुजभाष्य में तो यहां तक लिखा है कि **इत्युक्तं वेदान्तवादच्छद्म छन्नबौद्धनिराकरणे**" यह बात हम वेदान्त वाद की आड़ लेकर जो छिपा हुआ बौद्ध है, उस के खण्डन के विषय में कह आये हैं। इसी प्रकार रामानुजभाष्य, शङ्करभाष्य और कई एक दर्शनों के टीकाओं में बुद्ध की फलासफी का वर्णन है वहां सर्वत्र बुद्ध के दर्शन की चार शाखायें बतलाई गई हैं वे यह हैं, सौत्रान्तिक, वैभाषिक, योगाचार, और माध्यमिक इन चारों में कुछ २ मत भेद है पर अनीश्वरवादि चारों समान हैं।

बहुत क्या श्रीमद्भागवत में भी जहां बुद्ध को अवतार तक लिखा गया है वहां भी वेदमतविरोधी स्पष्ट रीति से भागवतकारने माना है। इत्यादि प्रमाणों से स्पष्ट सिद्ध है, कि बुद्ध का दर्शन और बुद्ध के सम्प्रदायी लोग जो भारतवर्ष में लंकातक और अन्यत्र काबुल कांधारादि देशों में फैले हुए थे उन के समय में वेदों का ह्रास हुआ जिस को आर्य लोग अब तक स्थापित नहीं कर सके।

यद्यपि महीधर, उवट, सायण, इत्यादि कई एक भाष्यकारों ने वेदार्थ के प्रचार की चेष्टा की पर वह यथावत् प्रचलित न हो सकी, इसके कई एक कारण पहले हम निरूपण कर आए हैं।

मुख्य कारण यही था कि वेदार्थ की अपूर्वता को उक्त भाष्यकार नहीं बतला सके और तो क्या वेदान्त और मीमांसा के भाष्यकार लोग जिस शैली पर भाष्य करते हैं अर्थात् **१ उपक्रमोपसंहार २ अभ्यास ३ अपूर्वता ४ फल ५ अर्थवाद ६ उपपत्ति** इन ६ प्रकार के लिङ्गों से भी वेद के भाष्य

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कारों ने काम नहीं लिया, अपने २ सम्प्रदाय की ओर प्रत्येक भाष्यकार वेदार्थ-को खेंचने का परिश्रम करता रहा इस का पुष्ट प्रमाण यह है कि जो वेदमन्त्र स्वामीशङ्कराचार्य के भाष्य में आये हैं उनके अर्थ अद्वैतवाद के किये गये हैं और जो मन्त्र रामानुज के भाष्य में आये हैं उनके अर्थ विशिष्टाद्वैत वाद के किये गये हैं। इस प्रकार वेदार्थ की कोई स्थिरता नहीं रखी गई।

बहुत से लोगों को यह भ्रान्ति है कि उवट, महीधर, सायण, ये बहुत प्राचीन हैं पर ये मालूम रहे कि ये तीनों भाष्यकार स्वामी शङ्कराचार्य के पीछे हुए हैं स्वामी शङ्कराचार्य को हुए लग भग २२०० बाईस सौ वर्ष के करीब २ हुआ है और सायणाचार्य उस समय हुए हैं कि जब गोल-कुण्डा में ब्राह्मणीशासन था। और महीधर, उवट तो सायण से भी कुछ अर्वाचीन हैं।

इन तीनों के लेखों से भी यह गन्ध स्पष्ट आता है कि यह शङ्कराचार्य से पीछे हुए हैं क्योंकि ये लोग स्वामी शङ्कराचार्य्य के मायावाद को अनेक स्थानों में उद्धृत करते हैं। अर्थात् जीव, ब्रह्म की एकता में स्वामीशङ्कराचार्य्य के मत को ही उपादेय मानते हैं। इस प्रकार इनकी नवीनता स्पष्ट है।

इस प्रस्ताव से सार यह निकला कि वेदों से कोई रसिक भाव ये लोग नहीं निकाल सके। जिससे वेदों को सरस मान कर लोग पुराणों की ओर न झुकते। और कल्पित कथाओं को छोड़कर सत्य की ओर आ जाते।

यहां कई एक लोग यह सन्देह भी बहुधा प्रकट किया करते हैं, कि वेदों में मन की स्थिरता का या अध्यात्मिक वाद का चित्तापकर्षक कोई भाव नहीं पाया जाता, जिससे मनुष्य का आध्यात्मिक आनन्द बढ़े वा आत्मरति उत्पन्न हो।

इसका उत्तर यह है, कि "**तन्मेमनः शिवसङ्कल्पमस्तु**" यजु०। ३४ १। इस वाक्य का इस प्रकरण में छः बार अभ्यास है, कि मेरा मन शुद्ध संकल्प वाला हो। क्या यह अभ्यास "**चञ्चलंहिमनःकृष्णप्रमाथीबलवद् दृढं**," इस वाक्य के उत्तर-भूत "**अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते**"

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कि वह अभ्यास तथा वैराग्य द्वारा स्थिर हो सकता हैं, अन्यथा कदापि नहीं। इस वाक्य के अर्थ से न्यून है ?

यहां हम वेदाभ्यासोदासीनमनस्कों से यह पूछते हैं, कि क्या उक्त-वाक्य का अभ्यास अर्थात् "**तन्मेमनः शिवसंकल्पमस्तु**" इसका अभ्यास गीता के अभ्यास या वैराग्य से कम है ?

यहां तत्त्व के जिज्ञासुओं को इस बात का भी स्मरण रखना चाहिये, कि अभ्यास भी दो प्रकार का होता है। एक साधार दूसरा निराधार। अर्थात् एक जगज्जन्मादिजननी के आगे सिर झुकाकर अभ्यास किया जाता है। दूसरा अपने ही आपका अभ्यास है। वेद उस अभ्यास का वर्णन करते हैं। जिसका परमाधार पराशक्ती है। जिसके विषय में उपनिषद् वाक्य यह कहते हैं, कि "**परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च**।"

अर्थ—उस परब्रह्म की शक्ति अनन्त प्रकार की है। स्वाभाविक—ज्ञान, स्वाभाविक—क्रिया, और स्वाभाविक—बल एकमात्र उसी परब्रह्म में पाया जाता है, अन्य किसी वस्तु में नहीं। इस परब्रह्म के अभ्यास का प्रकार जैसा वेद में पाया जाता है, ऐसा अन्य किसी ग्रन्थ में नहीं।

वेद-मार्ग से उद्विग्न मन वाले बहुधा यह कहा करते हैं, कि जिस प्रकार का आध्यात्मिक-ज्ञान सर्वात्मवाद अर्थात् ध्यानावस्था में एकमात्र ब्रह्म-सत्ता का ही भान हो, किसी अन्य वस्तु का नहीं; इस प्रकार का वर्णन वेद में नहीं।

इस का उत्तर यह है, कि "**ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतं ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्म कर्म्मसमाधिना**" गीता, अर्थ—आध्मात्मिक-योगी जब ब्रह्म-निष्ठ हो जाता है, तो उसे बाह्य अग्नि-होत्रादि कर्म्मों में भी एकमात्र ब्रह्म की ही सत्ता प्रतीत होती है। यहां तक कि, अग्नि, स्रुवा, हविः, अर्पण, इत्यादि पदार्थों में वह एकमात्र ब्रह्म की सत्ता को ही अनुभव करता है। अन्य तुच्छ सत्तायें उस के आध्यात्मिक दिव्यचक्षुओं से तिरस्कृत हो जाती हैं।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गीता का यह भाव भी अथर्व-वेद से लिया गया है। वहां मन्त्र का पाठ इस प्रकार है—"ब्रह्मणाग्नी वावृधानौ ब्रह्मवृद्धौ ब्रह्माहुतौ ब्रह्मेद्धावग्नी ईजाते रोहितस्य स्वर्विदः" ॥ अ० १३। ५०२। ४९। इस प्रमाण से स्पष्ट रीति से सिद्ध हो जाता है, कि वेद ही आध्यात्मिक विद्या की खान है।

वेद में मनस्पति-परमात्मा से चित्त-वृत्ति-निरोध के लिये प्रार्थना पाई जाती है। जैसे कि—अपेहि मनस्पतेऽप क्राम परश्चर। परो निर्ऋत्या आ चक्ष्व बहुधा जीवतो मनः। ऋ० मं० १०। सू० १६४। मं०१। हे मन के स्वामिन् परमात्मन्! हम को पाप-पिशाच से छुड़ाकर मेरा मन ब्रह्म-वर्चस्वी होकर आप को उपलब्ध करने के लिये तैयार हो।

अधिक क्या मेरे लिये सर्वत्र भद्र ही भद्र हो जैसे कि—"भद्रं वै वरं वृणते भद्रं युञ्जन्ति दक्षिणम्। भद्रं वैवस्वते चक्षुर्बहुधा जीवतो मनः॥ ऋ० मं० १०।सू० १६४।मं० २॥

मेरे चक्षु सदैव प्रकाश का अनुभव करें। अर्थात् मेरा ज्ञान सदैव वृद्धि को प्राप्त हो। और सर्वत्र मेरा मन भद्र ही भद्र देखे। इसी का नाम मानस-योग है। इसी से "योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः" यो१।१ चित्त वृत्ति-निरोध रूपी योग की फिलासफी निकली है। अधिक क्या जिस को बौद्ध वा बुद्ध देव अर्हत् अर्थात योग्य परमहंस कहते थे। वह ऋग्वेद के मं० १। सू.९४ म.१ इससे लिया गया है। इसी प्रकार निर्वाण पद "निर्वाण मोहा जितसंगदोषाः" गीता के इस श्लोक से लिया गया है। कई एक लोग यहां यह भी आशङ्का करते हैं, कि यदि वेदानुयायी आर्यों के पास निर्वाण पहले ही था, तो उन्होंने उस से लाभ क्यों नहीं उठाया? इस का उत्तर यह है, कि आर्य्य लोग निर्वाण को बुद्ध के समान नहीं मानते थे। अथवा-यों कहो, कि उन के मत में शून्यवाद के साथ मिला हुआ निर्वाण न था। किन्तु वे लोग केवल ब्रह्मनिर्वाण को मानते थे। ब्रह्मनिर्वाण, मुक्ति, अमृतपद ये सब पर्याय शब्द हैं। इस लिये मुक्ति का वाचक निर्वाण शब्द गीतादि ग्रन्थों में है। जो यह कहते हैं, कि गीता में भी निर्वाण शब्द बुद्ध से लिया गया है, वे अत्य-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न्त भूल करते हैं। क्योंकि गीता बुद्ध से लगभग अढ़ाई हजार वर्ष पहले का ग्रन्थ है। प्रमाण इस विषय में यह है, कि गीता के समय में काशी का नाम बनारस न था। किन्तु केवल काशी था, जैसा कि "काशीराजश्च वीर्य्यवान्, काश्यश्च महारथः इत्यादि। और पाणिनि जो लगभग एक सहस्र वर्ष गीता से पीछे हुआ है, उस में भी वाराणसी शब्द नहीं। किन्तु तत्पश्चात् महाभाष्यकार पतञ्जलि मुनि ने अनेक स्थानों पर वाराणसी शब्द का प्रयोग किया है। तात्पर्य्य यह है, कि बुद्ध और महर्षि पतञ्जलि के समय में काशी का नाम वाराणसी भी पड़ गया था। कारण इसका यह कि, उस समय के लोग जल, स्थल में तीर्थ बुद्धि करने लग पड़े थे। इस लिये उन्होंने इस के अर्थ यह किये कि—पवित्र जल वाले स्थान का नाम वाराणसी है। कई लोग वरणा— असी इन दोनों क्षुद्र सरितों के मध्यवर्ती होने से इसका नाम वाराणसी सिद्ध करते हैं। अस्तु यह संस्कृतज्ञों की व्युत्पत्ति से सिद्ध नहीं होता। किन्तु अपभ्रंश की रीति से बनारस को अवश्यमेव स्पष्ट कर देता है। मुख्य प्रसङ्ग यह है, कि इस प्रकार इतिहास की आलोचना करने से बुद्धदेव और उनका निर्वाण पद सर्वथा नया ठहरता है। जो महाभाष्यकार पतञ्जलि से बहुत पीछे का है। यद्यपि पतञ्जलि का समय निश्चितरूप से नहीं कहा जा सकता, और न उनका निवास-स्थान ठीक ठीक बतलाया जा सकता है, कि भगवान् महाभाष्यकार जो योगशास्त्र के भी कर्ता कहे जाते हैं, वे किस काल और किस देश में हुए हैं, तथापि यह अवश्यमेव कहा जा सकता है, कि वे तक्षशिला यूनीवर्सिटी के छात्र थे और भारत के पश्चिमोत्तरीय कोण के निवासी थे। इन्होंने जो आर्य्यावर्त की सीमा बतलाई है, वह उक्त बात को भलीभाति सिद्ध करती है। जैसे कि, आचकालकवनात्—अर्थात् कालेबाग से पूर्व और हिमाचल तथा विन्ध्याचल के मध्यवर्ती देश का नाम आर्य्यावर्त है। (कालक वन) जिसका नाम आज कल कालेबाग है, वह सिन्धु नदी के उस पार है। अर्थात् अब उसकी गणना अफ़गानिस्तान में की जाती है। इस प्रकार का सिन्धु-तट का गहरा ज्ञान होने से अनुमान किया जाता है, कि पतञ्जलि भी पाणिनि मुनि के आस पास के रहने-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वाले थे। यह हम पूर्व भी सूचना मात्र से सूचित कर आये हैं, कि महर्षि-पाणिनि सिन्धुनदी के पार उस प्रदेश के रहने वाले थे, जिस देश में सिन्धु को अटक नाम से कहते हैं। अर्थात् खैराबाद और नुशहरा-छावनी से उत्तर की ओर **शालातुर** ग्राम है। इस विषय में जो प्रोफेसर भण्डारकर ने यह लिखा है, कि पातञ्जलमहाभाष्य में कृष्ण का नाम आया है। इससे पतञ्जलिमुनि ईसा से दो शताब्दी प्रथम का ही सिद्ध होता है। अधिक नहीं। इसका उत्तर यह है, कि कृष्णनाम तो वेद, उपनिषद्, महाभारत इत्यादि अनेक ग्रन्थों में आया है। ईसा की प्रथम शताब्दी ही नहीं किन्तु बुद्ध से सहस्रों वर्ष पहले जिन ग्रन्थों को यूरोपियनस्कालर मानते हैं। उनमें भी कृष्ण का नाम है, फिर पतञ्जलिमुनि के बुद्ध से पीछे होने का सिद्धान्त कैसे स्थिर हो सकता है? अन्य प्रबल युक्ति इस विषय में यह है, कि '**जनिकर्तुः प्रकृतिः**' अ० १।४।३० अष्टाध्यायी के इस सूत्र पर भाष्यकार ने उपादान-कारण और निमित्त-कारण पर विस्तृत भाष्य किया है। जिससे स्पष्ट सिद्ध होता है, कि उस समय जगत् का निमित्त-कारण ईश्वर माना जाता था। इससे अधिक प्रबलतर्क यह है, कि भगवान् पतञ्जलि ने योग-सूत्रों को बनाया है। जिनमें प्रकृति को इस संसार का उपादान-कारण माना है। और ईश्वर को निमित्त-कारण। इस लिये इस शास्त्र का नाम सेश्वर सांख्य है॥

तात्पर्य्य यह है, कि ऐसे गूढ़-दार्शनिक-भावों को लिखते हुए, उक्त महर्षि क्या कहीं भी बुद्ध का वर्णन न करता? जो प्रोफेसर भण्डारकर के अनुसार तीनसौ वा चारसौ, वर्ष पतञ्जलि से पहले ठहरता है। और जिसका प्रभाव ईसा से दोसौ वा तीनसौ, शताब्दी पहिले **तक्षशिला** पर पड़ चुका था। इससे स्पष्ट-सिद्ध है, कि महाभाष्यकारपतञ्जलि ईसा से बहुत पहले हुआ है।

इस विषय में प्रोफेसर मैक्समूलर साहब यह कहते हैं, कि संसार भर में सबसे बढ़कर व्याकरण की उन्नति यूनानी और हिन्दुओं ने की। परन्तु यूनानी भी इनके आगे तुच्छ हैं। सम्पूर्ण संसार भर में सब से बड़ा व्याकरण का पण्डित पाणिनि, भारत के उत्तरीय कोण में हुआ है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

और उक्त प्रोफेसर मैक्समूलर उनको कात्यायन ऋषि का समकालीन बतलाते हैं। और इनका समय ईसा से चार सौ वर्ष प्रथम निश्चित करते हैं। पर डाक्टर गोल्डस्टकर पाणिनि का समय ईसा से एक हजार वर्ष पहिले बतलाते हैं। अस्तु॥

इन विदेशीय लेखकों के अनुसार भी पाणिनिमुनि को हुए तीन सहस्र वर्ष के लगभग हो चुके। प्रकृत यह है, कि उस समय **तक्षशिला** जो अब बौद्धोंका प्रधान क्षेत्र रावलपिण्डी के पास निकला है, जिसमें **सारनाथ** के समान एक विस्तृत म्यूजियम अर्थात् अद्भुत आलय है। वह आर्य्यों के हाथ में था। और आर्य्य-धर्म के ग्रन्थों की शिक्षा ही उस विश्वविद्यालय में दी जाती थी। पाणिनीयसूत्र और महाभाष्य के पढ़ने से मालूम होता है, कि उस समय में भी वेदों का अध्यन अध्यापन बहुत कम था। और इस तीन सहस्र वर्ष के अनन्तर जो लहरें वेदार्थ को विलुप्त करने के लिये इस भारत-सागर में उठती रही हैं, वे भी बहुदर्शी पुरुषों से अज्ञात नहीं। पाणिनि से लगभग पांच सौ वर्ष पीछे बौद्ध-धर्म की एक ऐसी प्रबल लहर उठी, जिसमें वेदों के पठन पाठन का रहा सहा नाम भी जाता रहा। और उनके प्रधान-विद्यालयों के स्थान में बौद्ध-धर्म के देवालय बन गये।

इस लहर को मिटाने के लिये जो उस समय के आर्य्यों ने उद्योग किया उसको संक्षिप्तरीति से हम पूर्व में वर्णन कर आये हैं, कि बुद्ध-शस्त्र से ही उस समय की आर्य्य-जाति ने बुद्ध-धर्म का मर्दन किया। अर्थात् जैसे बौद्ध-धर्म्मी लोगों ने अपना आदर्श देव एक बुद्ध-देव को बना लिया। एवं आर्य्यों ने भी उसी प्रकार अपने ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन तीन देवों को आदर्श बनाया।

पौराणिक काल।

विष्णु-सूक्त विष्णु के ऐश्वर्य्य को वर्णन करने वाले बहुत स्पष्ट हैं, इस लिये सब से पहला आदि देव विष्णु बनाया गया। इस विषय में काशी-खण्ड के निम्न लिखित प्रमाण हैं "गुरुत्वेन तदाकल्प्य विश्वस्थानादिकेशवम्।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तत्रोपतिष्ठतेऽद्यापि उत्तरेणादिकेशवात्" । ७२ । "अतः स केशवादित्यः काश्यां भक्तमनोनुदः । समर्चितः सदा देयान् मनसो वाञ्छितं फलम् । ७३ । केशवादित्यमाराध्य वाराणस्यां नरोत्तमः । परमं ज्ञानमाप्नोति येन निर्वाणभाग्भवेत् । ७४ काशी खं. उ. अ. ५१ । यहां यह भी समझ लेना चाहिये, कि विष्णु का केशव नाम पौराणिक है ॥

इसी प्रकार शिव वा रुद्र का नाम तो वैदिक रख लिया गया । पर रचना उसके स्वरूप की उस समय की कल्पना से की गई । बहुत क्या, कई एक कल्पित कथायें, बनाकर नीलकण्ठ जहां विराट् वा शूरवीर का वर्णन करता था, उसे समुद्रमथन की कथा का रूपक देकर शान्तस्वरूपशिव को विषभक्षीरुद्ररूप बना लिया । प्रमाण के लिये देखो, काशी खं० । उत्तरार्द्ध० अ ६३ ।

नमः शिवाय शान्ताय सर्वज्ञाय शुभात्मने ।
जगदानन्दकन्दाय परमानन्दहेतवे ॥३२॥
अरूपाय स्वरूपाय नानारूपधरायच ॥३३॥

इन श्लोकों में शिव के नाम से लिये हुए बुद्ध देव के मुकाबले में कल्पना किये हुए देव का **श्रीकंठायनमस्तुभ्यं विषकण्ठायते नमः**, इत्यादि वाक्यों में उसी देव को विषकण्ठ कहकर विषभक्षीरूप से वर्णन किया । आगे जाकर यह भी लिखा है कि, "**व्यालयज्ञयोपवीताय व्यालभूषण धारिणे**" ॥ ३८ ॥ तुम सांप का यज्ञोपवीत धारण किये हुए हो, और यही तुम्हारा भूषण है । यहां कई एक लोग यह कहते हैं कि रुद्र नाम विद्युत् का है, वह एक प्रकार की अग्नि है, अग्नि का स्वभाव जलने का है इसी कारण लोग शिव की मूर्ति अर्थात् शिवलिंग पर जल चढ़ाते हैं, कि अग्नि देव शान्त रहे । और इस की पूजा चलने का यह बीज बतलाया जाता है, कि जब बिजुली आकाश से गिरती है, तो वह लंबे आकार को धारण कर लेती है इसलिये शिव की मूर्ति लम्बे आकार की और बिना हाथ पांव की बनाई जाती है

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इत्यादि मिथ्या-कल्पनाओं के कल्पक वे लोग हैं, जो प्रत्येक बात में अपनी भावना से फिलासफी ढूँढ़ा करते हैं। भला यदि यह भी मान लिया जाय कि रुद्र की अग्नि को ठण्डा करने के लिये जल चढ़ाया जाता है, तो फिर विल्वपत्र क्यों चढ़ाया जाता है। और वे लोग यह भी कहते हैं, कि जो महादेव की पार्थिव पूजा की जाती है, वह इस भाव से है, कि रुद्ररूप=अग्नि, पृथिवी का भी देवता है। इसलिये इस रुद्र की लोग मट्टी की मूर्ति बनाकर पूजा करते हैं। यह सब कल्पनायें निराधार हैं॥

वास्तव में तत्त्व यह है, कि बौद्ध धर्म्म को रोकने के लिये वा यों कहो कि बौद्धों के समान एक आदर्श देव बनाने के लिये पौराणिकसमय के लोगों ने ऐसी प्रथा चलादी। मैं इस बात के निर्णय के लिये स्वयं सारनाथ में गया वहां के (Archaeological) आर्क्योलाजिकल के अनुसन्धान कर्ताओं से यह मालूम हुआ कि इस स्थान में ईसा की पहली शताब्दी तक की बौद्ध प्रतिमायें मिलती हैं और जो पौराणिक प्रतिमायें मिलीं हैं वे सब आठवीं शताब्दि के इधर की हैं। प्रमाण के लिये सारनाथ में एक त्र्यम्बक महादेव की मूर्ति है वह ईसा की आठवीं शताब्दी की है। इससे स्पष्ट सिद्ध है, कि पौराणिक-प्रतिमायें बुद्ध देव के बाद की हैं।

एवं ब्रह्मा भी एक देव कल्पना कर लिया गया, जो वेद में विद्वान् वा पूर्णब्रह्म के अर्थ में आता है। अन्य विष्णु आदि देवों के समान उस की मूर्तियें न पूजी जाने में विविध प्रकार की कथायें हैं। जिन का यहां वैदिक-भाव में कोई उपयोग नहीं। केवल इतना कह देना पर्य्याप्त होगा कि **तमेव ऋषिं तमु ब्रह्माणमाहु ऋ० मं. १० सू. १०७ मं. ७। यं कामये तंतमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम् ऋ० मं० १०। सू० १२५। मं० ५।** इत्यादि मंत्रों से ब्रह्मा ऋषि पदवी काही था अर्थात् वेद, विष्णु और शिव के समान इसके ऐश्वर्य्य को निरूपण नहीं करता स्यात इसी वैदिक भावने इसे केवल ब्राह्मण और ब्रह्मवेत्ता ही रक्खा। अस्तु—

और जो यह कहा जाता है कि ब्रह्मा नाम वायु का है इस लिये यह

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चतुर्मुख बनाया गया क्यों कि वायु चारों ओर बहता है यह कल्पना सर्वथा मिथ्या है। वेद और वेद के प्राचीन निरणायकग्रन्थों में ब्रह्मानाम वायु का कहीं भी नहीं। प्रकृत यह है कि आदिदेव विष्णु और उसमे दूसरे दर्जे का ब्रह्मा, तीसरा शिव इन्ही का नाम त्रिदेव है।

मुख्य प्रसङ्ग यह है कि बुद्ध की प्रतिमायें बनने के अनन्तर हिन्दुओं ने भी इनकी प्रतिमाओं का निर्माण कर लिया और स्थान स्थान पर शिवालये और मन्दिर बनने प्रारम्भ हो गये यह प्रथा यहां तक बढ़ी कि इस की पूर्ति के लिये सहस्रों स्तोत्र और कथा कथानक नये बन गये। पुराणों की कथायें तो ऐसी सहस्रमुख हो कर फैली कि प्रत्येकपुराण में एक ही प्रकार की कथायें बहुधा पाई जाती हैं, और जो यह कहा जाता है कि महादेव की गौरी स्त्री होना भी वेद से निकाला गया है इस लिये त्रिदेव कल्पना वैदिक मन्तव्य है इस का उत्तर यह है कि जिस प्रकार केनोपनिषद् में हेमवती नाम आया है वह हिमालय की पुत्री सिद्ध नहीं करता और छांदोग्य उपनिषद् में कृष्ण नाम आया है वह महाभारत के कृष्ण को सिद्ध नहीं करता वेद में अर्जुन शब्द आया है वह पाण्डव अर्जुन को सिद्ध नहीं करता एवं **"गौरीर्मिमाय सलिलानि तक्षत्येक पदी द्विपदी सा चतुष्पदी" ऋ. मं० १। सू० १६४ मं० ४१** यहां गौरी दीप्तिमती विद्यावती सामान्य स्त्री के नाम में आया है।

ऐसे ऐसे शब्दों को ढूँढ़ भाल कर जो पुरुष रुद्रादि कल्पित देवों के स्त्री पुत्रों को सिद्ध वेद के सहारे से करते हैं वेद को दूषित करते हैं। और वे लोग यह भी कहते हैं कि विद्युत् गौरवर्ण की होती है और वह रुद्रदेव वज्र की चमक होने से उस की शक्तिरूप से स्त्री स्थानीय है। इसी हेतु से उन्होंने गौरी को रुद्र की अर्धाङ्गिनी माना है। इसी प्रकार एक अलङ्कार से अन्य कल्पित अलङ्कारों को सिद्ध करते हुये कई एक यहां तक बढ़ जाते हैं कि त्रिशूल रुद्र के साथ इस वास्ते रक्खा है कि (रुद्र) बिजुली को त्रिधातु का रोकता है इत्यादि कल्पनायें भी रुद्रादि देवों के विषय में की जाती हैं। यदि इसी प्रकार नाम आजाने से मिथ्या निकालना हो तो **"सोमोगौरी**

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अधिश्रित:" इस वाक्य से (सोमनाथ) शिव की स्त्री गौरी सिद्ध हो सक्ती है। इस प्रवाह में पड़कर लोगों ने पौराणिक कथायें बना दीं। यह प्रवाह केवल पुराणों तक ही नहीं रहा किन्तु महाभारत में और रामायण में भी ऐसे ऐसे प्रक्षिप्त-स्थल मिला दिये गये जिस से यह पता चलना कठिन हो गया कि यह किस समय के ग्रन्थ हैं।

तात्पर्य यह है कि जैसे वाल्मीकीयरामायण में विशिष्ट, विश्वामित्र, नारद थे, उसी प्रकार महाभारत में भी विश्वामित्रादिकों की कथाएं और नारदादिकों के उपदेश ज्योंके त्यों मिला दिये गये।

यहां तक ही यह अवस्था अर्थात् प्रवाह समाप्त नहीं हुआ किन्तु मनु-स्मृति आदि प्राचीन ग्रन्थों की भी यही दशा की गई, जिन मनुस्मृति के श्लोकों को वाल्मीकि ऋषि प्रमाण कोटि में रखते थे वे अब मनु में नहीं पाए जाते। इस सत्यानृतका निर्णय तो प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकों के सञ्चय करने से अब भी हो सकता है। हमने एक प्रमाणिकपुरुष से सुना है कि एक लाय बरेरी ऐसी मिली है जिस में प्राचीन समय की मनुस्मृति है अर्थात् उसमें ३००) सौ श्लोक नहीं पाए जाते जो किसी समय नए मिलाए गए हैं, जिनसे मनुके ग्रन्थ की प्राचीनता नहीं रहती अस्तु इसका उत्तर केवल कण्ठोक्ति से देना निष्फल है, हम ऐसे यत्न में है कि इन प्राचीन पुस्तकों को उपलब्ध करके मुद्रित करादें। यहां एक यह आशङ्का उत्पन्न होती है कि समय पर जब अन्य पुस्तकों मे लोग प्रक्षिप्तअंश को डाल कर अपना मन्तव्य पूरा करते रहे तो वेदोपनिषद् ब्राह्मग्रन्थ इनमें हस्ताक्षेप करके प्रक्षेप क्यों न किया? इसका उत्तर यह है कि वेद में प्रक्षेप करना तो सर्वथा असम्भव था क्योंकि उसकी भाषा की बनावट ऐसी है कि जिस में लौकिक भाषा मिल ही नहीं सकती और न उसमें प्रक्षेप से कोई प्रयोजन सिद्ध होता था क्योंकि उसमें किसी मनुष्य का इतिहास ही न था। प्रमाण के लिये देखो **आदिसर्ग** वाल्मीकियरामायण वा **आदिपर्व** महाभारत इन दोनों में प्रक्षेप स्फुट है अर्थात् रामको अवतार सिद्ध करने वाले जो श्लोक इस में मिलते हैं वह सब पीछे के हैं, अस्तु।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इस प्रक्षिप्त कथा से यहां प्रसङ्ग बढ़कर वेदार्थ बहुत दूर पड़ जाता है मुख्य प्रसङ्ग यह है कि इस प्रक्षिप्त बादकी दूसरी लहर ने भी वेदों को छिपा दिया क्योंकि लोग बुद्ध के स्थान किसी अन्य आर्य्यपुरुष को रखना चाहते थे इसी प्रवाह में राम कृष्णादि मर्य्यादापुरुषोत्तम पुरुष अवतार बन गए अर्थात् साक्षात् ईश्वर का रूप मान कर लोग उनकी पूजा करने लगे।

इसका सबसे प्रबलप्रमाण यह है कि पाणिनीयसूत्र जो लगभग तीन-सहस् वर्ष के हैं उनमें कहीं रामकृष्ण की मूर्त्ति वा अवतार का नाम नहीं।

इसी प्रकार महाभाष्य में भी कहीं इनकी मूर्त्ति वा अवतार का नाम नहीं और तो क्या दशावतार वा चौबीस अवतार की कथा, जो पुस्तक बुद्ध देव से प्रथम बने हुए हैं उनमें कहीं नहीं।

इस से भी पुष्ट प्रमाण यह है कि आर्य्यों का मुख्य विद्यालय **तक्षशिला** जिसका हम ऊपर वर्णन कर आए हैं उसमें **विष्णु** वा **शिव** तथा **राम कृष्णादि** कों की आज तक एक भी प्रतिमा नहीं मिली, मिलती भी कैसे जब यह प्रतिमा पूजा **युग** ही बुद्ध देव के अनन्तर चला तो पहले कैसे मिले।

इस से हमारा यह तात्पर्य्य नहीं कि प्रतिमा निर्म्माण की विद्या प्राचीन आर्य्यों में न थी, अथवा बीर पुरुषों वा यज्ञ के पात्रों की वे प्रतिमायें न बनाते थे किन्तु तात्पर्य्य यह है कि ईश्वर का अवतार वा ईश्वर की प्रतिमा बनाकर वैदिक लोग नहीं पूजते थे। उनके लिये वेद भगवान् के प्रभावशालीमन्त्र प्रतिमायोंका काम देते थे। और बीरता रससे भरे हुए बेदोंके सूक्त उनको तेजस्वी और ओजस्वी बनाते थे। वे बुद्ध के सामान निराधार निर्बाण को नहीं ढूँढ़ते थे किन्तु निरविधिक ईश्वर के ऐश्वर्य्य में निमग्न हो कर सच्चे निर्बाण पद को उपलब्ध किया करते थे और ईश्वर से इस निम्न लिखित उपदेश की प्रार्थना करके महाबोधी विज्ञान को प्राप्त होकर आप्त पुरुष बना करते थे वह उपदेश यह है कि।

पवस्वसोम देववीतये बृषेन्द्रस्य हार्दि सोम धानमाविश।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पुरा नो बाधाद्दुरितादि पारय क्षेत्रविद्धिदिश आहा विपृच्छते

ऋ० मं० ९-सू ७०-मं० ९

हे प्रमात्मन् आप हमारे हृदय में निवास कीजिये और दुःखों की बाधा से प्रथम ही आप हमें सन्मार्ग का उपदेश करें। जिस प्रकार सन्मार्ग का उपदेष्टापुरुष सन्मार्ग का उपदेश करता है इस प्रकार आप हमें सन्मार्ग बतला कर और सच्चे रास्ते में चलाकर पवित्र कीजिये।

एवं (**अतप्ततनूर्नतदामोअश्नुते**) इस वाक्य में बलपूर्वक यह कथन किया है अतपस्वी पुरुष जिसने तप से अपने आप को पकाया नहीं अर्थात् कच्चा है वह उस परमात्मपुरुष के अमृतपद को कदापि लाभ नहीं कर सकता। इस प्रकार तप और विज्ञान की खान वीरता और धीरता का धाम जो एकमात्र वेद था वह आर्य्यजाति ने सर्वथा अपने दिल से भुला दिया। जो अन्न सब अकिञ्चनों को भिक्षा देकर प्राणप्रदान करता था वह आर्य्यधर्म्म अपने इस प्राचीन वेदरूपी कोश को भूल कर स्वयं भिक्षू बन बैठा। यहां तक कि बुद्ध धर्म का अनुकरण करके भिक्षु-मंडल इस देश में इतना बढ़ा कि वैदिक ऐश्वर्य्य इस देश में स्वप्नस्थानीय हो गया अर्थात् जहां **जीवेम शरदःशतम् पश्येम शरदःशतम्, यजु० ३६।२४**। कि मैं सौ वर्ष तक जीऊं और सौ वर्ष तक परमात्मा की इस विशाल विश्व को देखूं और उसके पवित्र यशका श्रमण करूं इत्यादि वेद भगवान् के मनोहर उपदेश भुलाकर लोगों ने जीना भी एक भार ही समझ लिया सब कोई दीपशिखा के अस्त होने के समान आत्मनाश रूप निर्वाण को अपने जीवन का लक्ष्य समझने लगा। इसी की नकल हमारे वैदिक सन्यासियोंने भी की यह प्रथा यहां तक बढ़ी कि बन, पर्वत, सब सन्यासियों के झुण्डों से व्याकुल हो गये। इस प्रवाहमें तीसरी लहर नवीन वेदान्त की उठ हो गई जिसने वेदार्थ को और भी छिपा दिया अर्थात् (**तत्र वेदा अवेदा** (**न वेदा न यज्ञा न तीर्थं भुवन्ति**) इत्यादि स्तोत्र बना कर वेदों के ऐश्वर्य को मिटादेने की अत्यन्त चेष्ठा की गई।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संसार को स्वप्न समझने वालों के भाव को पूर्ण करने के लिये परमात्मने चौथा युग इनके वेदार्थ-को विनाश करनेवाला वह काल उत्पन्न किया जिसमें वेद और वेदाङ्गों के सहस्रों ग्रन्थ अवैदिकाग्नि के स्थालीपाकस्थानीय बन कर-भस्मीभूत हो गये, इस अवस्था में परमात्मा को अभीष्ट था, कि कोई सत्कर्म्मी-मर्य्यादापुरुषोत्तम उत्पन्नहोकर वेदार्थ का उद्धार करके भारत में फिर प्राचीन-समय की झलक को दिखाये। वा यों कहो कि वेदरूपी सूर्य्य के प्रभामण्डल-से इन सब तुच्छदीप्तियों को तिरस्कृतकरके एकमात्र वैदिकप्रकाश को सर्वत्र प्रदीप्त करे।

उस मर्य्यादापुरुषोत्तम का नाम महर्षिदयानन्द सरस्वती था। इन्होंने अपने समय में वेदार्थ का इस बल से प्रचार किया-जो इन से प्रथम कुमारिलभट्ट के सिवाय आज तक अन्य किसी ने नहीं किया। यद्यपि कुमारिलभट्ट और शङ्कराचार्य्य पौराणिक समय के युवावस्था के प्रभाव में हुए, तथापि इन में वैदिकरक्षा के प्रवाह अत्यन्त वेग से लहरें मारते थे। इसी अभिप्राय से श्री स्वामी शङ्कराचार्य्य जी एकस्थान में यह लिखते हैं कि, "वेदस्य हि स्वार्थे निरपेक्षं प्रामाण्यं पुरुष वचसान्तु मूलान्तरापेक्षं रवेरिव रूपविषये॥ शं० भा० स्मृ० पा०। एक-मात्र वेद का प्रमाण ही स्वतः प्रमाण माना जा सकता है। अन्य सब पुस्तक-परतः प्रमाण हैं। इस अर्थके ग्रन्थन से सब लोग भलीभांति जानसकते हैं, कि स्वामी शङ्कराचार्य्यजी की वेदोंपर कैसी अटल श्रद्धा थी। इसी प्रकार कुमारिलभट्ट एक स्थान पर यह लिखते हैं कि, "एवं ये युक्तिभिः प्राहुस्तेषां दुर्लभमुत्तरमन्वेष्यो व्यवहारोयमनादिर्वेदवादिभिः" वेदवादियों को अनादि-काल से वेद का व्यवहार मानना चाहिये। अर्थात् "सूर्य्याचन्द्रमसौ-धाता यथा पूर्वमकल्पयत्। ऋ० मं० १०। सू० १९०॥ इत्यादि मंत्रों में जो प्रवाहरूपसे सृष्टि की रचना मानी है, उसमें कोईदोष नहीं आता। इस प्रकार उक्त दोनोंमहापुरुषों ने पौराणिकसमय में भी वैदिकधर्म्मकी जड़ वेदको पक्का किया। यद्यपि कुमारिल और शङ्कराचार्य्यादि वैदिक-धर्म्म के मण्डनकर्ताओं

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

के प्रभाव से हिन्दूसमय में भी वेद आर्य्याजाति में परमप्रमाण माना जाता रहा, तथापि उस समय में जो वेदों पर यह दोष लगाये जाते थे, कि वेद नानादेवताओं की पूजा बतलाते हैं, उन में पशुयज्ञ है तथा पुरुषमेधयज्ञ भी है। इसी प्रकार दास भाव और दासी भाव की शिक्षा वेद देते हैं, तथा शूद्रजाति को वेद कीट पतंग के समान मानते हैं। वेदों के पठन पाठनका केवल ब्राह्मण को ही अधिकार है अन्य को नहीं, इत्यादि सहस्रोंकलङ्क जो वेदों पर लगाये जाते थे, इन का समुचित उत्तर देनेवाला कोई भी न था। इस न्यूनता को पूर्ण करनेवाला आर्य्यधर्म्म का उद्धारक अचार्य्य महर्षि स्वामी दयानन्द ही उत्पन्न हुआ।

मेरे हिन्दूधर्म्मानुयायीभाई यद्यपि महर्षि श्री स्वामी दयानन्दसरस्वती को इतना गौरव देने को उद्यत न होंगे जितना मेरे हृदय में है तथापि इस बात को सभी मुक्तकण्ठ से कहेंगे कि कुमारिलभट्ट और शङ्कराचार्य्य के अनन्तर आर्य्यधर्म्म का रक्षक एक ही पुरुष उत्पन्न हुआ। जिसका नाम महर्षि स्वामी दयानन्दसरस्वती था। जिनके प्रभाव से बिखड़ी हुई हिन्दूजाति अर्थात् नाना प्रकार के देवीदेवताओं मठ और शमशानों को मानने वाली हिन्दूजाति आज वेद रूपी झण्डे के तले आकर अपने आप को वैदिक मानने के लिये उद्यत है।

इस एकत्व के उत्पन्न करने से स्वामी दयानन्द का यश आज इस बीसवीं शताब्दी में नभोमण्डल के बृहत्पत्र पर अङ्कित हो गया, जिसको किसी समय की प्रबल से प्रबल लहर भी मिटा वा हटा नहीं सकती।

इसी प्रबलभाव ने मेरे उत्साह को उत्तेजित किया जो मैं वेदों की उत्तमता को अपनी परमपूजनीय हिन्दूजातिरूपीदेवी के नैवेद्य चढ़ाने को उद्यत हुआ। मेरे विचार में वेदों में कोई इतिहास नहीं। और न वेदों में दास-दासी-विक्रय। शुनःशेपादि-सूक्तों में नरमेध का विधान है। यह कलङ्क मिथ्यार्थ करके वेदों पर लगाए गए हैं। जैसा कि "हरिश्चन्द्रोमरुद्गणः। ऋ० मं० ९। सू० ६६। मं० २६ इस वाक्य से राजाहरिश्चन्द्र की सिद्धी की अवेदज्ञपुरुषों को शङ्का हो जाती है। और सोमोगौरीअधिश्रितः, इस से शिव की स्त्री गौरी की आशङ्का

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जाती है। वास्तवमें सर्वानन्दप्रद विद्वानों के समूह का नाम यहां "हरिश्चन्द्रो मरुद्गणः" है, इसी प्रकार अन्य आक्षेप भी सर्वथा निर्मूल हैं।

इन सब बातों का उल्लेख हमने अपने भाष्य के स्थान २ पर किया है। और जो अनेकस्थानों में सायणादि भाष्यकारोंने अन्यथाभाष्य करके वेदों के महत्त्वको घटाया है, ऐसे स्थलों को हमने विस्तारपूर्वक लिखकर निर्दोष किया है।

यदि कोई यह आशङ्का करे कि सायण, महीधरादि भाष्यकारों को अप्रमाण कोटि में ठहरा कर तुम्हारा भाष्य प्रामाणिक कैसे?

इसका उत्तर यह है, कि सायण, महीधरादि भाष्यकार उस समय में हुए हैं, जिस समय में तन्त्रग्रन्थ बने हैं। जिन से हिन्दूधर्म्मका रहा सहा रूप भी विकृत हो गया। उक्त विषय में प्रमाण यह है, कि सन् ११७४ इसवी उड़ीसा में जगन्नाथपुरी का मन्दिर बना, यह बात मन्दिर पर अङ्कित है कि अमुक समय में यह मन्दिर बना उस समय भारत में सर्वत्र तान्त्रिक अश्लीलता का राज्य था उसी समय में उक्त भाष्यकने इस विषय में यह भी प्रमाण है कि सपर्य्यगाच्छुक्रमकाय मव्रणम् यजु० ४०।८ इस मंत्र के भाष्य में महीधरने जीव के सूक्ष्म, स्थूल और लिङ्गशरीर, इन तीनों शरीरोंका वर्णन किया है। और तीनों शरीरों का वर्ण वेदान्त के बहुत नवीनग्रन्थों में पाया जाता है अर्थात् १३ वीं वा १४ वीं शताब्दी से प्रथम के ग्रन्थों में यह नहीं मिलता इस से अनुमान किया, जा सकता है, कि महीधर, सायण से भी नवीन काल में हुए हैं। और सायणाचार्य्य इन से तो कुछ प्राचीन पाये जाते हैं। परन्तु मं० १० । सू० १२९ के भाष्यमें सायणाचार्य्यने शुक्तिरजत का दृष्टान्त देकर, इस जगत् को मिथ्या सिद्ध किया है। और ब्रह्म के अनिर्वचनीय होने के दोष को हटाकर माया को अनिर्वचनीय माना है। इस से स्पष्टसिद्ध है, कि यह भी नवीन समय था। अनुमान के पीछे चलने की क्या आवश्यकता जब सायणाचार्य्य स्वयं राजा-बुक्क को महेश्वर का अवतार सिद्ध करते हैं कि—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यस्यनिःश्वासितं वेदा यो वेदेभ्योऽखिलंजगत्
निर्ममे तमहं वन्दे विद्यातीर्थ महेश्वरम् ।
यत्कटाक्षेण तद्रूपं दधद्बुक्कमहीपतिः
आदिशन्माधवाचार्य्यं वेदार्थस्य प्रकाशने ॥

मैं उस महेश्वर की वन्दना करता हूं, जिस के श्वास प्रश्वास स्थानीय वेद हैं। और उसी महादेव के रूप को धारण करके मुझ सायणाचार्य्य को राजाबुक्क ने कहा, कि तुम वेदार्थ-प्रकाशनामक टीका वेदों पर लिखो यह राजाबुक्क १४ वीं शताब्दी में गोलकुण्डे में हुआ है जो किसी समय विजयनगर की प्रधान राजधानी थी। इस प्रकार सायणाचार्य्य को हुए आज लगभग छः सौ वर्ष हुए और महीधर अपनी भूमिका में यह लिखते हैं, कि मैंने अपनाभाष्य सायण और उवट को देख के बनाया इस प्रकार यह सायण से भी नवीन है। अस्तु कुछ हो इस कथा से हमारा तात्पर्य यह है, कि सायणाचार्य्य भी तान्त्रिक समय और पौराणिकसमय की गन्ध से निर्गन्ध न था इस लेख से सायणाचार्य्य के पाण्डित्यका तिरस्कार करना हमारा प्रयोजन नहीं। हमारे विचार में सायणाचार्य्य ने वेदप्रकाश बनाकर वेदमार्गको सर्वसाधारण के लिये सुगम कर दिया। परन्तु यदि सायणाचार्य्य वीररस-प्रधान सूक्तों को क्षुद्र-देवों की जड़सोमस्तुति में न लगाते तो आज एक ईश्वरीय साहित्य मनुष्यमात्र की शान्ति और धीरवीरतादि धर्म्मोंका कोश बनकर प्राचीन आर्य्य-धर्म्मावलम्बी-हिन्दूजातिको अभ्युदयशाली अवश्य बनाता अस्तु, मुख्यप्रसङ्ग यह है, कि जब तन्त्रग्रन्थोंका निर्माण हुआ है, उसी समय में सायण हुए इसी कारण सायण महीधरादि टीकाकारों ने वेद में इतिहास और नाना प्रकार के अर्थवाद और अश्लीलता वेदों में भर दिये अतः इनकी तान्त्रिक-प्रथा वैदिक प्रथा के अनुकूल नहीं। इस प्रस्तावना से हमारा-तात्पर्य्य सायण और महीधर की प्रभुता के घटाने का नहीं। और न हिन्दूधर्म्म की एक विराटरूप से बनी हुई संगतिको शिथिल करने का है।

हमारे विचारमें बुद्धके बादके हिन्दुओंने अत्यन्त प्रशंसनीय काम किया

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जो वैदिक धर्म्मके झण्डेके तले न केवल शिखासूत्रधारियोंको किया, किन्तु प्रत्येक-हिन्दूमताभिमानीको अपनी ओर खैंच लिया।

परन्तु इतना अवश्य कहना पड़ता है, कि पौराणिक समयके प्रभावने वेद और उपनिषदोंको बहुत दबा दिया। और उस प्राचीन काशी के औपनिषद-नाद को सर्वथा मिटा दिया। जिसका हम पहिले वर्णन कर आये हैं। इस स्थानमें पुनः इस बातका स्फुट कर देना अत्यन्तोपयोगी प्रतीत होता है कि उस समय के हिन्दुओंने जहां कहीं भी कोई मठ वा मण्डप, कूप वा तड़ाग पाया उसका नाम उसीके आकार पर रखकर उसे अपने शिवार्चनके भावमें ले लिया। उदाहरणके लिये देखो काशीमें मीरघाट और लाहौरी टोलेके मध्यमें एक धर्मकूप-स्थान है। अनुसन्धान करनेसे यह प्रतीत होता है, कि यह स्थान पहिले बौद्धों का था। प्रमाण यह है, कि इस कूपके किनारे पर जो स्थान बनाये गये उनकी गहरीनींव खोदने पर बौद्धोंकी प्रतिमायें निकलीं। इस बातकी साक्षी बाबू माधो-प्रसादजी देते हैं, कि हमारे स्थानोंके तलेसे बौद्ध-प्रतिमायें निकलीं।

अब यहां यह विचार करनेकी बात है, कि पौराणिक-धर्मके अनन्तर फिर किसी बौद्धने अपने मन्दिर बनाकर अपनी प्रतिमायें यहां रख दीं यह कथन सर्वथा असम्भव है। क्योंकि इस बातको सब इतिहास वेत्ता जानते हैं, कि इस नई काशी-में कभी भी बौद्धों का प्रभाव नहीं हुआ। अन्य युक्ति यह है, कि जब पुराणोंमें बौद्धधर्म का स्फुट रीतिसे वर्णन है, फिर पौराणिक-काल बुद्धसे पहिले कैसे रक्खा जा सकता है अस्तु।

इस स्थानका नाम बौद्धोंके समयमें धर्मकूप वा निर्वाण-मण्डप भी था। इसका प्रमाण यह है, कि "निर्वाणमण्डपं नाम तत्स्थानं जगतीतले" काशी खण्ड, उत्तरार्द्ध अ० ७९। श्लो० ९६ में यह कथन किया है, कि यह स्थान निर्वाणमण्डप के नामसे प्रसिद्ध था। मालूम होता है, कि यह बहुत ऊँचा स्थान था। और इस पर मण्डप बना कर बौद्धोंने इसका नाम निर्वाण-मण्डप रक्खा। और इसके साथ जो कूप बनाया उसका नाम धर्मकूप रक्खा

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जिसको उनकी भाषा में धर्म्मकूप भी कहा जाता था। जब निःश्रेयस वादी आर्य का प्रभाव बढ़ गया तब इसका नाम धर्मेश्वर-महादेव हो गया। इसकी कथा काशी खण्ड उत्तरार्द्धके ७९ के अध्यायमें विस्तारपूर्वक है। जिसमें धर्म=यमके साथ सम्बन्ध मिला कर इस स्थानको परमपूज्य और सनातनकालका सिद्ध किया है, जैसे कि "अनेकानीह पीठानि सन्ति काश्यां पदेपदे परं धर्मेश पीठस्य काचिच्छक्तिरनुत्तमा" काशी खण्ड, उत्तरार्द्ध ७९ श्लो० ७। यद्यपि काशी में अनेक स्थान हैं, परन्तु धर्मेश की शक्ति सर्वोपरि है। और इसके निर्वाण स्थानमें निःश्रेयसको परम धाम माना। जिसप्रकार बौद्धोंके बाह्य-देववादको मिटा कर, अपने देवालय बनाना उस समयके हिन्दुओंका परमकर्त्तव्य था इस प्रकार बौद्धोंके निर्वाणको मिटा कर निःश्रेयस धाम अर्थात् कल्याणका धाम बनाना भी इनका परमकर्त्तव्य था। इसी अभिप्रायसे "नैःश्रेयस्याश्रयोधाम तद्याम्यां मण्डपोस्तिमे" का० ख० उ० अ० ७९ श्लो० ५४ में यह कथन किया है कि निःश्रेयसका परमधाम दक्षिण दिशामें यह मेरा मण्डप है। इससे यह भी प्रतीत होता है, कि उस समयकी नईकाशी भी इस स्थानसे पूर्वोत्तरके कोणमें राजघाटके आस पास थी। इसी लिये इस मण्डप को यामी-दक्षिण दिशामें कथन किया है।

मण्डप शब्द हमारे अभिप्राय को यहां बहुत स्पष्ट करता है कि मण्डप नाम सभास्थान का है। जो निर्वाणमण्डप निर्वाणके विचार करनेवाली सभा का नाम बौद्धों का था उसको इन्होने निःश्रेयस मण्डप बना लिया। इसीप्रकार ज्ञानवापी आदि अन्य स्थलोंकी भी विशेष व्याख्या है जो अनुपयुक्त समझ कर यहां छोड़दी गयी। सार यह कि इस धर्मेश वा धर्मेश्वर को वेदोपनिषदों के सिद्धान्तके साथ मिलानेके लिये उस समय के पण्डितों ने यह सोचा, कि जबतक परब्रह्मको कोई आकार न दिया जाय तबतक धर्मेश्वर साकार कैसे बने? इस लिये उन्होंने ऐसे श्लोकों की रचना की, कि "यमसर्वगतस्यापि प्रासादोयं परास्पदम्। परंब्रह्म यदाम्नातं परमोपनिषद्विरा॥ अमूर्ततदहंमूर्तो भूयो भक्तकृपावशात्। काशीखण्ड उत्तरार्द्ध अ० ७९ श्लोक ५३। जिसको उपनिषद्

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

की वाणी सर्वगत और अमूर्त कथन करती है, वहीं मैं भक्तों पर कृपा करनेके लिये मूर्तरूपको धारण करता हूं। अस्तु कुछ भी हो इस स्थानमें उपनिषदोंकी-वाणीको भुलाकर उस उपनिषद् नादको सर्वथा भुला दिया, जो प्राचीनकाशी-के मन्दिरों में इस प्रकार दिव्यध्वनि कर रहा था कि–"यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति। यत्प्रयन्त्यभि संविशन्ति तद्विजिज्ञासस्व तद्ब्रह्म" तै० ३।१। "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" छां० ३।१४।१। ब्रह्मैवेदं विश्वम्" मु० २।२।११। "सत्यं ह्येव ब्रह्म" बृ० ५।४।१। "ब्रह्मवादिनो हि प्रवदन्ति नित्यम् श्वे० ३।२१। तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः" अथ० १०।८।४।१ "सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म" तै० २।१। प्रज्ञानं ब्रह्म" ऐ० ३।१। विज्ञानमानन्दं ब्रह्म" बृ० ३।९।१८। तपसा चीयते ब्रह्म मु० १।१।८। ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति" मु० ३।२।९ हिरण्यमय परे कोशे विरजं ब्रह्म निष्कलम्" मु० २।९। यदा-पश्यः पश्यते रुक्मवर्णं कर्तारमीशं पुरुषं ब्रह्मयोनिम् मु० ३।१।३। ब्रह्मविदां वरिष्ठः" मु० ३।१।४। स वेदैतत्परमं ब्रह्मधाम" मु० ३।२।१। "क्रियावन्तः श्रोत्रिया ब्रह्मनिष्ठाः" मु० ३।२।१०। "ब्रह्मिष्ठोऽसीति तस्मात्तेऽहं ब्रवीमि" प्र० ३।२। "ब्रह्मविदाप्नोति परम्" तै० ब्र० १। "तदेव ब्रह्मत्वंविद्धि नेदं-यदिदमुपासते" के० १।४। आनन्दं ब्रह्मणोविद्वान् न बिभेति कदाचन" तै० २।४। स वा एष महानज आत्माऽजरोऽमरोऽमृतोऽभयोब्रह्म" बृ० ४।४।२५।

उक्त ब्रह्मनाद के स्थान में आज पौराणिक-साहित्य की ही श्रुति श्रोत्रिय ब्रह्मनेष्टपद को पादाक्रान्त कर रही है। इस अवस्था में आर्य्यजाति का यह कर्तव्य है, कि वह अपने वेदरूप आत्मा और औपनिषद ज्ञानरूप मन को समा-हित करें। क्योंकि जिस पुरुष के आत्मा और मन सावधान नहीं वह मनस्वी और ब्रह्मवर्चस्वी तथा तेजस्वी कदापि नहीं बन सकता।

इसी अभिप्राय से कृष्णजी यह कहते हैं, कि "इन्द्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मिचेतना" कि सब इन्द्रियों में मैं मनरूप शक्ति हूं। और मृतकवस्तु अर्थात् जड़वस्तुओं में मैं चेतनाशक्ति हूं। उक्त मन और चेतनाशक्ति यदि

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आर्य्यजाति में डालना चाहते हो, तो उपनिषद् ज्ञानरूपीमन और वेदरूपआत्म इस आर्य्यजाति को प्रदान करो। क्योंकि इस बात को विदेशी और भिन्नधर्म्मा लम्बी विद्वान् भी शोकग्रस्त होकर अनुभव करते हैं, कि जो हिन्दुसमाज आ प्राचीन-धर्म्म से नितान्त हट गया है, और उसने अपने वीरता प्रधान वैदिकसू के स्थान में लीलाप्रधान कथाओं को मुख्य रक्खा है, वही इनके समाज अत्यन्त हानि का कारण हुआ। इस अवस्था में प्राचीन-वैदिक धर्म्म को वेदों सच्चे अर्थ करके पुनरुज्जीवित करना हमारा परमधर्म्म है। यहां हम आर्य जाति का प्रतिनिधि हिन्दूशब्द मानकर यह कहते हैं कि, यद्यपि हिन्दूजाति जातित्व के शरीर को पौराणिक-धर्म्म ने बौद्ध-धर्म्म को पराजितकरके परिछ तथा गूढ़जत्रु और सुडौल बना दिया, जैसा कि हम पहले भी वर्णन कर आए हैं तथापि वेदरूपी आत्मा और उपनिषद् ज्ञानरूपमनको संस्कृत करना आर्य्यमा का परम कर्त्तव्य है। इस अभिप्राय से वैदिक-समय से लेकर आज तक संक्षिप्त धार्म्मिक इतिहास लिखकर इस प्रस्तावना में वैदिक-साहित्य का साहा किया गया। किसी और अभिप्राय से नहीं।

इस विषय का विशेष वर्णन हम दशममण्डल की भूमिका में करेंगे।

सोमेश्वरो जगद्योनिर्नवमेऽस्मिन् निरूपितः।
मुनिना वैदिकं तत्त्वं दशमे व्याकरिष्यते ॥१॥

* इति श्रीमदार्य्यमुनिनोपनिबद्धा वेदप्रस्तावना समाप्ता *

संवत् १९७६ चैत्रशुक्ला दशमी,
काशी।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ओ३म्

ऋग्वेदभाष्यकी विषयसूची ।

पृ०	पंक्ति	विषय
२	९	परमात्माके सोमादि अनन्तनामों का वर्णन ।
६	१३	उषाके अलङ्कार से शुद्धि का वर्णन ।
१३	५	परमात्माके गुणकर्म स्वभावोंका वर्णन ।
१४	५	परमात्माके निराकार रूपका वर्णन ।
१७	१२	वेदोंमें विधिवादका वर्णन ।
२३	१६	ऐश्वर्यके पात्रों का वर्णन ।
२९	४	निःश्रेयस का वर्णन ।
३४	१५	सोम नामक परमात्माके जगदुत्पादक होनेका वर्णन ।
४४	१	इन्द्रके विशेषार्थ का वर्णन ।
४६	१२	ज्ञान यज्ञका वर्णन ।
५३	१८	परमात्माके विभूति योग का वर्णन ।
५५	१८	ब्रह्मशब्दके अनेकार्थवाची होने का वर्णन ।
६२	१५	परमात्माकी सर्वव्यापकताका वर्णन ।
७३	१५	परमात्माकी विभूतिरूप जीव और प्रकृति का वर्णन ।
७८	१६	अज्ञान की शत्रुता का वर्णन ।
८२	१३	कर्मयोगीके कर्तव्यका वर्णन ।
८५	१९	उषाकालके ऐश्वर्य का वर्णन ।
९०	५	उपासनाके प्रकार का वर्णन ।
९९	२२	सोमोगौरी अधिश्रितः के वैदिक अर्थोंका वर्णन ।
०९	२०	वैदिकधर्म की प्रवृत्ति की प्रार्थना का वर्णन ।
२७	१५	सात्विकभाव का वर्णन ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पृ०	पंक्ति	विषय
१३४	१५	परमात्मनिष्ठ विश्वास का वर्णन ।
१४२	२	परमात्मा की विभूतियों का वर्णन ।
१५२	९	सृष्टि की उत्पत्ति का वर्णन ।
१६८	१४	दिव्यज्योतियों की शीघ्रगतियों का वर्णन और उनकी दुर्गमता में वेद का प्रमाण ।
१७१	७	अनाचारी और दुष्टों के दण्डदाता परमात्मा के रुद्र रूप का वर्ण
१७९	९	मन वाणी तथा शरीर की शुद्धि का वर्णन ।
१८४	१०	पाप के त्याग का उपाय ।
१८७	१	मुक्तिधाम का वर्णन ।
१८९	९	प्रार्थना के फल का विचार ।
१९९	३	परमात्मा के साक्षात्कार के लिये संयम योगका वर्णन ।
२०९	३	परमात्मा का सूर्यादिकों के प्रकाशिकरूप से वर्णन ।
२२०	१८	शूरवीर के गुणों का वर्णन ।
२२६	१	उपासना के भेदों का वर्णन ।
२३१	११	ब्रह्मानन्द का वर्णन ।
२४०	१८	श्रवण मननादि साधनों का वर्णन ।
२६१	४	वेदके अन्यथा अर्थ करने वाले भाष्यकारों का खण्डन ।
२९१	१९	परमात्माके न्याय का निरूपण ।
३२१	१६	सदुपदेशके महत्व का वर्णन ।
३३९	२१	सदाचार का वर्णन ।
३४२	१६	परमात्मा के विभुत्व का वर्णन ।
३७९	२०	सेनापति और प्रजाके सम्बन्ध का वर्णन ।
४२६	११	परमात्माके स्वतः प्रकाशत्व का वर्णन ।
४४२	१०	ध्यानयोग का वर्णन ।
४७४	१६	परमात्मा के सर्वाधिकरणत्वका वर्णन ।
४८०	९	परमात्मा के सख्यभाव का वर्णन ।
४८५	८	अज्ञान की निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्तिका वर्णन ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पृ०	पंक्ति	विषय
४८९	१०	प्राणायाम का वर्णन ।
४९१	१७	कर्मयोग और ज्ञानयोग द्वारा सदाचार का वर्णन ।
५०९	१७	परमात्मा से पवित्रता लाभ करने का उपाय ।
५१४	१६	ईश्वर उपासकों के सद्गुणों का वर्णन ।
५२८	१४	शान्तिभाव से परमात्मा के नियमानुकूल चलने का उपदेश ।
५२९	१६	निष्काम यज्ञोंका वर्णन ।
५३७	८	प्रकृति रूपी कारण का वर्णन ।
५४५	८	इस तनू को ब्राह्मी अर्थात् ब्रह्मसम्बन्धिनी बनाने का उपदेश ।
५५३	१५	ज्ञान तथा कर्मेन्द्रियों के संशोधन का प्रकार ।
५६०	१६	परमात्मा की उपासना का प्रकार ।
५६२	३	कर्मयोग के फल का निरूपण ।
५६५	८	कर्मयोगी के उद्योग का वर्णन ।
५६८	१	अव्याहतगति विषयक प्रार्थना का वर्णन ।
५७९	१६	सत्य की रक्षा का वर्णन ।
५८०	३	कर्म्मयोगी की दृढ़ता का वर्णन ।
५८२	२	अभ्युदय को लाभ करने वाले पुरुषों के लक्षण ।
५८५	१८	सन्मार्ग की प्राप्ति के साधक यज्ञों का वर्णन ।
५८८	१०	नानाप्रकार के ऐश्वर्य्यों का वर्णन ।
५९०	३	देवताभाव का फल अभ्युदय और दैत्यभाव का फलदण्ड ।
५९१	६	सात्विक भाववाले अन्तःकरण का वर्णन ।
५९६	१५	अन्तःकरण की स्वच्छता का वर्णन ।
५९८	१८	परमात्मा विषयक अटल विश्वास और उसके साधक वेदोपनिषद् वाक्यों का निरूपण ।
५९९	१०	ब्रह्मशब्द के अर्थपर विचार ।
६००	१	लौकिक दृष्टि से वेदार्थ करनेवाले भाष्यकारों का खण्डन और वेद से वेदार्थ करने का प्रदर्शन ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ओ३म्

अथ नवमं मण्डलम् ।

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ।
यद्भद्रं तन्न आसुव ॥ यजु० ३० । ३ ।

दयानन्दः समाख्यातो, यस्यान्ते च सरस्वती ।
एतन्नामान्वितः स्वामी, दयानन्दः सरस्वती ॥ १ ॥
सेतुर्लोकव्यवस्थाया, नौरासीद्वेदवारिधेः ।
वेदस्य स्थापना तेन, ह्यकारि भूतले पुनः ॥ २ ॥
एकषष्ठितमे सूक्ते, नवमे मण्डले तथा ।
द्वितीयमन्त्रं सम्प्राप्य, तद्भाष्यमन्ततां गतम् ॥ ३ ॥
इत्यालोच्य प्रखिन्नेन, मयाऽऽर्य्यमुनिनाऽधुना ।
शेषं विधास्यते भाष्यं, स्वामिमार्गानुगामिना ॥ ४ ॥
न्यायवैशेषिकाद्यं वै शास्त्रषट्कं पुरा किल ।
व्याख्यातं मुनिना येन भाष्यं तेनैव तन्यते ॥ ५ ॥

अथाऽस्मिन्मण्डले सौम्यस्वभावस्य परमात्मनो गुणा वर्ण्यन्ते:—
अब इस मण्डल में सौम्यस्वभाव परमात्मा के गुणों का वर्णन करते हैं:—

अथ दशर्चस्य प्रथमस्य सूक्तस्य—

॥१॥ १—१० मधुच्छन्दा ऋषिः । पवमानः सोमो देवता ।
छन्दः—१, २, ६ गायत्री । ३, ७—१० निचृद् गायत्री । ४, ५ विराड् गायत्री ।
षड्जः स्वरः ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोम धारया ।
इन्द्राय पातवे सुतः ॥ १ ॥

स्वादिष्ठया । मदिष्ठया । पवस्व । सोम । धारया । इन्द्राय । पातवे । सुतः ॥ १ ॥

पदार्थः—(सोम) हे सौम्यस्वभाव परमात्मन्! (स्वादिष्ठया) आनन्दवर्द्धकेन (मदिष्ठया) आह्लादजनकेन (धारया) स्वभावेन नः (पवस्व) पवित्रान् कुरु यः (इन्द्राय) ऐश्वर्य्यस्य (पातवे) वर्द्धनाय (सुतः) प्रसिद्धः ॥

पदार्थ—(सोम) हे सौम्यस्वभाव परमात्मन्, (स्वादिष्ठया) आनन्द के बढ़ाने वाले (मादिष्ठया धारया) आह्लाद के वर्द्धक स्वभाव से आप हमें (पवस्व) पवित्र करें जो स्वभाव, आप का (इन्द्राय) ऐश्वर्य्य के (पातवे) बढ़ाने के लिये (सुतः) प्रसिद्ध है ॥

भावार्थ—यों तो परमात्मा के अपहतपाप्मादि अनन्त गुण हैं, पर शान्त स्वभाव परमात्मा के शान्ति के देनेवाले सौम्य स्वभावादि ही हैं, परमात्मा के सौम्यस्वभाव के धारण करने से पुरुष शान्तिसम्पन्न हो जाता है। फिर उसको अपने स्वरूप में एक प्रकार का आनन्द प्रतीत होने लगता है। जिससे एक प्रकार का हर्ष उत्पन्न होता है। मद यहां हर्ष का नाम है किसी मादक द्रव्य का नहीं। कई एक टीकाकारों ने इस मण्डल को मदकारक सोम द्रव्य में लगाया है वह भूल की है क्योंकि इस मण्डल में परमात्मा के गुण, कर्म्म, स्वभावों का वर्णन है किसी द्रव्य विशेष का नहीं ॥१॥

रक्षोहा विश्वचर्षणिरभि योनिमयोहतम् ।
द्रुणा सधस्थमासदत् ॥ २ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रक्षःऽहा । विश्वऽचर्षणिः । अभि । योनिम् । अयःऽहतम् । द्रुणा । सधऽस्थम् । आ । असदत् ॥ २ ॥

पदार्थः—हे परमात्मन्, भवान् (रक्षोहा) रक्षसां हन्ता, (विश्वचर्षणिः) समस्तस्य जगतो द्रष्टा, (अभियोनिम्) सर्वस्योत्पत्तिस्थानम् (अयोऽहतम्) शस्त्रास्त्रैरच्छेद्यः, (द्रुणा) गतिशीलः (सधस्थम्) मध्यस्थरूपेण सर्वत्र (आसदत्) स्थिरश्च अस्ति ॥

पदार्थ—हे परमात्मन्, आप (रक्षोहा) राक्षसों के हनन करनेवाले हो, (विश्वचर्षणिः) सम्पूर्ण विश्वके द्रष्टा हो, (अभियोनिम्) सबके उत्पत्तिस्थान हो, (अयोऽहतम) किसी शस्त्र अस्त्र से छेदन नहीं किये जाते (द्रुणा) गतिशील और (सधस्थं) मध्यस्थरुपसे सर्वत्र (आसदत्) स्थिर हो।

भावार्थ—हे परमात्मन्! आप सर्वत्र परिपूर्ण और विश्व के द्रष्टा हो तथा पापकारी हिंसक राक्षसों के हन्ता हो. आप हमारे हृदय में आकर विराजमान हों ॥२॥

वरिवोधातमो भव मंहिष्ठो वृत्रहन्तमः ।
पर्षि राधो मघोनाम् ॥ ३ ॥

वरिवःऽधातमः । भव । मंहिष्ठः । वृत्रहन्ऽतमः । पर्षि । राधः । मघोनाम् ॥ ३ ॥

पदार्थः—हे परमात्मन्, त्वं (वरिवोधातमः) समस्तधनानां दाता (भव) भव, वरिव इति धननामसु पाठितम् निघण्टौ ॥२।१०॥ (मंहिष्ठः) सर्वोपरिदाता भव (वृत्रहन्तमः) निखिलाज्ञानानां

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नाशको भव किंच (मघोनाम्) सर्वैश्वर्य्यपूरकं (राधः) धनम् (पर्षि) अस्मभ्यं देहि ॥

पदार्थ—(वरिवोधातमः) हे परमात्मन् ! आप सम्पूर्ण धनों के देने वाले (भव) हो वरिव इति धननामसु पठितम्, नि २।१० (मंहिष्ठः) सर्वोपरिदाता हो (वृत्रहन्तमः) सब प्रकार के अज्ञानों के नाशक हो (मघोनाम्) सब प्रकार के ऐश्वर्य्यों के पूर्ण करनेवाले हो (राधः) धनों को (पर्षि) हमको दें ।

भावार्थ—परमात्मा से सब ऐश्वर्य्यों की प्राप्ति होती है, और परमात्माही अज्ञान से बचाकर मनुष्य को सन्मार्ग में लेजाता है, इसलिये सर्वोपरि देव परमात्मा से ऐश्वर्य्य की प्रार्थना करनी चाहिये ॥३॥

अभ्यर्ष महानां देवानां वीतिमन्धसा ।
अभि वाजमुत श्रवः ॥ ४ ॥

अभि । अर्ष । महानाम् । देवानाम् । वीतिम् । अन्धसा । अभि । वाजम् । उत । श्रवः ॥ ४ ॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! त्वम् (महानां) महताम् (देवानाम्) विदुषाम् (वीतिम्) पदवीम् प्रापयितासि (अन्धसा) धनादिश्वर्य्येण (अभि, वाजम्) सर्वविधं बलं (अभ्यर्ष) देहि (उत) अथच (श्रवः) अन्नादिकं प्रापय ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (महानां) बड़े (देवानाम्) विद्वानों के (वीतिम्) पदवी को प्राप्त कराने वाले हैं और (अन्धसा) धनादि ऐश्वर्य्य से (अभि, वाजं) सब प्रकार के बल को (अभ्यर्ष) प्राप्त करायें (उत) और (श्रवः) अन्नादि ऐश्वर्य्य को प्राप्त करायें ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा की कृपा से मनुष्य देवपदवी को प्राप्त होता है, और परमात्मा की कृपा से सब प्रकार का बल मिलता है, इसलिये मनुष्य को चाहिये की वह एकमात्र परमात्मा की शरण को प्राप्त हो ॥४॥

त्वामच्छा चरामसि तदिदर्थं दिवेदिवे ।
इन्दो त्वे न आशसः ॥ ५ ॥ १६ ॥

त्वाम् । अच्छ । चरामसि । तत् । इत् । अर्थम् । दिवेऽ-दिवे । इन्दो इति । त्वे इति । नः । आऽशसः ॥ ५ ॥

पदार्थः—(इन्दो) हे परमात्मन् ! (त्वां) भवन्तं (अच्छ) अक्लेशेन (चरामसि) वयं प्राप्नुयाम किंच (दिवे, दिवे) प्रतिदिनं (तत्, त्वे अर्थं) त्वदर्थम् (इत्) एव (नः) अस्माकं जीवनं स्यात् इत्येव (आशसः) प्रार्थनाः सन्ति ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे परमात्मन् ! (त्वां) तुमको (अच्छ) भली भांति (चरामसि) हम लोग प्राप्त हों और (दिवेदिवे) प्रतिदिन हे परमात्मन् ! (तत्, त्वेअर्थं) आपके लिये (इत्) ही (नः) हमारा जीवन हो यही (नः) हमारी (आशसः) प्रार्थना है ।

भावार्थ—जो पुरुष प्रतिदिन निष्काम कर्म्म करते हुए अपने जीवनको व्यतीत करते हैं, और ईश्वर से भिन्न किसी अन्य देव की उपासना नहीं करते वे परमात्मस्वरुपको प्राप्त होते हैं ॥५॥१६॥

अथ रूपकालङ्कारेण श्रद्धां सूर्य्यस्य पुत्रीरूपेण वर्णयति ।

अब रूपकालङ्कार से श्रद्धा को सूर्य्य की पुत्रीरूप से वर्णन करते हैं :-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पुनाति ते परिस्रुतं सोमं सूर्यस्य दुहिता ।
वारेण शश्वता तना ॥ ६ ॥

पुनाति । ते । परिऽस्रुतम् । सोमम् । सूर्यस्य । दुहिता ।
वारेण । शश्वता । तना ॥ ६ ॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (ते) तव (परिस्रुतं) सर्वत्र विस्तृतप्रभावं (सोमं) सौम्यस्वभावं (सूर्य्यस्य, दुहिता) सूर्य्यस्य पुत्री (पुनाति) पवित्रयति (वारेण) बाल्यादारभ्य (शश्वता) निरन्तरं (तना) शरीरेण पुनाति ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (ते) तुम्हारे (परिस्रुतं) जिसका सर्वत्र प्रभाव फैल रहा है ऐसे (सोमं) सौम्यस्वभाव को (सूर्य्यस्य, दुहिता) सूर्य्य की पुत्री (पुनाति) पवित्र करती है, और (वारेण) बाल्यपन से (शश्वता) निरन्तर (तना) शरीर से पवित्र करती है ।

भावार्थ—जो पुरुष श्रद्धाद्वारा ईश्वर को प्राप्त होता है वह मानों प्रकाश की पुत्रीद्वारा अपने सौम्यस्वभाव को बनाता है । जिस प्रकार सूर्य्य की पुत्री उषा मनुष्यों के हृदय में आह्लाद उत्पन्न करती है इसी प्रकार जिन मनुष्यों के हृदय में श्रद्धा देवी का निवास है वे लोग उषा देवी के समान सब के आह्लादजनक सौम्यस्वभाव को उत्पन्न करते हैं ।

कई एक लोग इसके ये अर्थ करते हैं कि सूर्य्य की पुत्री कोई व्यक्तिविशेष श्रद्धा थी यह अर्थ वेद के आशय से सर्वथा विरुद्ध है, क्योंकि उसका सौम्यस्वभाव के साथ क्या सम्बन्ध ? यहां स्वभाव के साथ उसी श्रद्धा देवी का सम्बन्ध है जो मनुष्य के शील को उत्तम बनाती है ॥६॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तमीमण्वीः समर्य आ गृभ्णन्ति योषणो दश।
स्वसारः पार्ये दिवि ॥ ७॥

तम्। ईं। अण्वीः। सऽमर्ये। आ। गृभ्णन्ति। योषणः। दश। स्वसारः। पार्ये। दिवि ॥ ७॥

पदार्थः—(तं) तं पुरुषं (समर्ये) ज्ञानयज्ञे (आ, गृभ्णन्ति) सुष्ठु गृह्णन्ति (दश) दशसंख्याकाः (स्वसारः) स्वयंगतिशीलाः (योषणः) वृत्तयो याः (अण्वीः) अतिसूक्ष्माः सन्ति। (पार्ये, दिवि) प्रकाशरूपे ज्ञानभावे दश धर्मस्वरूपाणि तं प्राप्नुवन्ति ॥

पदार्थ—(तं) उस पुरुष को (समर्ये) ज्ञानयज्ञ में (आ) भली प्रकार (गृभ्णन्ति) ग्रहण करती हैं (दश) दश संख्यावाली (स्वसारः) स्वयंगतिशील (योषणः) वृत्तियें जो (अण्वीः) अति सूक्ष्म हैं (पार्ये, दिवि) प्रकाशरुप ज्ञान के भाव में दश धर्म्म के स्वरुप उसे आकर प्राप्त होते हैं ॥

भावार्थ—जो पुरुष श्रद्धा के भावों से युक्त होता है उसे धृति, क्षमा, दम, स्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धी, विद्या, सत्य, और अक्रोध, ये धर्म्म के दश रूप आकर प्राप्त होते हैं। तात्पर्य्य यह है कि वेद, शास्त्र और ईश्वर पर श्रद्धा रखने वाले पुरुष को ही धार्मिक भाव आकर प्राप्त होते हैं अन्य को नहीं ॥७॥

तमीं हिन्वन्त्यग्रुवो धमन्ति बाकुरं दृतिम्।
त्रिधातुवारणं मधु ॥ ८॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तम् । ईं । हिन्वन्ति । अग्रुवः । धर्मन्ति । बाकुरम् ।
दृतिम् । त्रिऽधातु । वारणम् । मधु ॥ ८ ॥

पदार्थः—(तं) तं पुरुषं (अग्रुवः) उग्रगतयः (हिन्वन्ति) प्रेरयन्ति किंच (बाकुरं) भासमानं (दृतिं) शरीरं स पुरुषः (धमन्ति) प्राप्नोति यत्र (त्रिधातु) प्रकारत्रयेण (वारणं) अपरेषां वारकं (मधु) मधुमयं शरीरं संगच्छते ॥

पदार्थ—(तं) उस पुरुष को (अग्रुवः) उग्रगतियें (हिन्वन्ति) प्रेरणा करती हैं और (बाकुरं) भासमान (दृतिं) शरीर को वह पुरुष प्राप्त होता है जिसमें (त्रिधातु) तीन प्रकार से (वारणं) दूसरों का वारण करने वाला (मधु) मधुमय शरीर मिलता है ।

भावार्थ—जो पुरुष श्रद्धा के भाव रखने वाले होते हैं, उनके सूक्ष्म, स्थूल और कारण तीनों प्रकार के शरीर दृढ़ और शत्रुओं के वारण करने वाले होते हैं । अर्थात् शारीरिक, आत्मिक, और सामाजिक तीनों प्रकार के बल उन पुरुषों को आकर प्राप्त होते हैं जो श्रद्धा का भाव रखते हैं ॥८॥

अभी३मम॑घ्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् ।
सोममिन्द्राय पातवे ॥ ९ ॥

अभि । इमम् । अघ्न्याः । उत । श्रीणन्ति । धेनवः ।
शिशुम् । सोमम् । इन्द्राय । पातवे ॥ ९ ॥

पदार्थः—(इमं) अमुं (सोमं) सौम्यस्वभावं श्रद्धालुं पुरुषं (शिशुं) शैशव एव (अभि) सर्वप्रकारेण (अघ्न्याः)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अहिंसनीयाः (धेनवः) गावः (श्रीणन्ति) तर्पयन्ति (इन्द्राय) ऐश्वर्य्यं (पातवे) वर्द्धयितुम् (उत) अथवा उक्तश्रद्धालुं पुरुषं अहिंसनीयाः वाचः ऐश्वर्य्यप्राप्तये संस्कृतं कुर्वन्ति ॥

पदार्थ—(इमं) उस (सोमं) सौम्यस्वभाव वाले श्रद्धालु पुरुष को (शिशुं) कुमारावस्था में ही (अभि) सब प्रकार से (अघ्न्याः) अहिंसनीय (धेनवः) गौवें (श्रीणन्ति) तृप्त करती हैं (इन्द्राय) ऐश्वर्य्य की (पातवे) वृद्धि के लिये । (उत) अथवा उक्त श्रद्धालु पुरुष को अहिंसनीय वाणियें ऐश्वर्य्य की प्राप्ति के लिये संस्कृत करती हैं (वाचं धेनुमुपासीत) शतप०

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि जो पुरुष श्रद्धा के भाव वाले हैं उनको गौ आदि ऐश्वर्य्य और सदुपदेशरूपी पवित्र वाणियें उनकी रक्षा के लिये सदा उद्यत रहती हैं । इस मन्त्र में गौ को (अघ्न्या) = अहिंसनीय माना गया है; इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि गोमेध आदि यज्ञों के अर्थ किसी हिंसाप्रधान यज्ञ के नहीं किन्तु गावः इन्द्रियाणि, मेध्यन्ते यस्मिन् स गोमेधः, जिसमें ज्ञानयज्ञद्वारा इन्द्रियें पवित्र की जायँ उसका नाम गोमेध है । इसी प्रकार अश्वमेध, नरमेध, आदि यज्ञ भी ज्ञानप्रधान यज्ञों के ही बोधक हैं, हिंसारूप यज्ञों के बोधक नहीं ॥९॥

अस्येदिन्द्रो मदेष्वा विश्वा वृत्राणि जिघ्नते ।
शूरो मघा च मंहते ॥ १० ॥ १७ ॥

अस्य । इत् । इन्द्रः । मदेषु । आ । विश्वा । वृत्राणि । जिघ्नते । शूरः । मघा । च । मंहते ॥ १० ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(इन्द्रः) विज्ञानी पुरुषः (अस्येत्) अनेनैव भावेन (विश्वा) सर्वाणि (वृत्राणि) अज्ञानानि (आ, जिघ्नते) नाशयति (च) किंच अनेनैव श्रद्धाभावेन (शूरः) वीरपुरुषः (मदे) स्वकीयवीर्य्यमदे दृप्तः (मघा) ऐश्वर्य्यं (मंहते) प्राप्नोति ॥

पदार्थ—(इन्द्रः) विज्ञानी पुरुष (अस्येत्) इसी भाव से (विश्वा) सम्पूर्ण (वृत्राणि) अज्ञानों को (जिघ्नते) नाशकरता है (च) और इसी श्रद्धा के भाव से (शूरः) शूरवीर (मदेषु) अपनी वीरता के मदमें मस्त होकर (मघा) ऐश्वर्य्यों को (मंहते) प्राप्त होता है ।

भावार्थ—श्रद्धा के भाव से ही विज्ञानी पुरुष अज्ञानरूपी शत्रुओं का नाश करता है और श्रद्धा के भाव से ही वीर पुरुष युद्ध में शत्रुओं को जीतता है, श्रद्धा के भाव से ही ऐश्वर्य्य को प्राप्त होता है ॥१०॥

इति प्रथमं सूक्तं सप्तदशो वर्गश्च समाप्तः ।

पहला सूक्त, और सत्रहवां वर्ग समाप्त हुआ ॥

अथ सौम्यस्वभावयुक्तं परमात्मानं वर्णयति ।

अब सौम्यस्वभावयुक्त परमात्मा का वर्णन करते हैं ।

अथ दशर्चस्य द्वितीयस्य सूक्तस्य—

१–१० मेधातिथिर्ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः—१, ४, ६ निचृद्गायत्री । २, ३, ५, ७–९ गायत्री । १० विराड् गायत्री । षड्जः स्वरः ॥

पवस्व देववीरति पवित्रं सोम रंह्या ।
इन्द्रमिन्दो वृषा विश ॥ १ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पवस्व। देवऽवीः। अति। पवित्रम्। सोम। रंह्या।
इन्द्रम्। इन्दो इति। वृषा। आ। विश॥ १॥

पदार्थः—(सोम) हे सौम्यस्वभावयुक्त! (देववीः) दिव्यगुणयुक्त परमात्मन्! त्वं (पवस्व) अस्मान् पवित्रान् कुरु किंच (इन्दो) हे ऐश्वर्य्ययुक्त परमात्मन्! भवान् (इन्द्रं) ऐश्वर्य्यं प्रापयतु तथा (वृषा) हे आनन्दवर्षुक! त्वं (रंह्या) वेगेन (विश) अस्मद्धृदयं विश (पवित्रं) पवित्रान् कुरु तथा (अति) अवश्यं रक्ष॥

पदार्थ—(सोम) हे सौम्यस्वभाव! और (देववीः) दिव्यगुणयुक्त परमात्मन्! आप (पवस्व) हमें पवित्र करें और (इन्दो) हे ऐश्वर्य्ययुक्त परमात्मन्! आप (रंह्या) शीघ्र ही (विश) हमारे हृदय में प्रवेश करें और (पवित्रं) पवित्र तथा (अति) अवश्य रक्षा करें।

भावार्थ—परमात्मा की कृपा से ही पवित्रता प्राप्त होती है और परमात्मा की कृपा से ही पुरुष सब प्रकार के ऐश्वर्य्य से सम्पन्न होता है। जिस पुरुष के मन में परमात्मदेव का आविर्भाव होता है वह सौम्यस्वभावयुक्त होकर कल्याण को प्राप्त होता है॥ १॥

आ वच्यस्व महि प्सरो वृषेन्दो द्युम्नवत्तमः।
आ योनिं धर्णसिः सदः॥ २॥

आ। वच्यस्व। महि। प्सरः। वृषा। इन्दो इति। द्युम्नवत्ऽतमः। आ। योनिम्। धर्णसिः। सदः॥ २॥

पदार्थः—(वृषा, इन्दो) हे सर्वमनोरथपूरक! (द्युम्न-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वत्तमः) यशास्विन् (महि) महन् परमात्मन्, त्वं मह्यं (आ) व्यापकं (प्सरः) ज्ञानं (वच्यस्व) उपदिश यतो भवान् (सदः) सद्विज्ञानं (योनिं) संसारस्य कारणभूतां प्रकृतिं च (आ) सर्वत्र (धर्णसिः) धृतवानस्ति ॥

पदार्थ--(वृषेन्दो) हे सब कामनाओं के पूर्ण करने वाले (द्युम्नवत्तमः) यशस्वी (महि) महान् परमात्मन् ! आप हमें (आ) सर्वव्यापी (प्सरः) ज्ञान का (वच्यस्व) उपदेश करें क्योंकि आप (सदः) सद्विज्ञान को (योनिं) संसार के कारणभूत प्रकृति को (आ) सब ओर से (धर्णसिः) धारण किये हुए हैं ॥

भावार्थ--परमात्मा कोटानकोटिब्रह्माण्डों का आधार है, उसी के शासन में द्युलोक, भूलोक, स्वर्लोक इत्यादि लोकलोकान्तर परिभ्रमण करते हैं, वही इस चराचर ब्रह्माण्ड का आधार है। मनुष्य को उसी परमात्मा की उपासना करनी चाहिये ॥ २ ॥

अधुक्षत प्रियं मधु धारा सुतस्य वेधसः ।
अपो वसिष्ट सुक्रतुः ॥ ३ ॥

अधुक्षत । प्रियम् । मधु । धारा । सुतस्य । वेधसः । अपः । वसिष्ट । सुऽक्रतुः ॥ ३ ॥

पदार्थः--स परमात्मा (अपः) स्वकीयगुणकर्म्मस्वभावैः (वसिष्ट) सर्वान् वशे करोति सः (सुक्रतुः) सत्कर्म्मास्ति (सुतस्य, वेधसः) इष्टस्य पदार्थस्य दाता च (मधु, धारा) अमृतवर्षैः (प्रियं) प्रियवस्तुभिश्च (अधुक्षत) परिपूर्णं करोति ॥

पदार्थ--वह परमात्मा (अपः) अपने गुण, कर्म्म, स्वभाव से

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(वसिष्ठ) सब को अपने वशीभूत कर रहा है वह (सुकृतुः) सत्कर्म्मों वाला है (सुतस्य, वेधसः) अभिलाषित पदार्थों का देने वाला है और (मधु, धारा) अमृत की वृष्टिओं से और (प्रियं) प्रिय वस्तुओं से (अधुक्षत) परिपूर्ण करने वाला है ।

भावार्थ—परमात्मा के गुण, कर्म्म, स्वभाव ऐसे हैं कि जिस से एकमात्र परमात्मा ही सुकर्म्मा कहा जा सकता है, अर्थात् परमात्मा के ज्ञानादि गुण और सृष्टि के रचनादि कर्म्म तथा अचल, नित्य, ध्रुवादि स्वभाव सदा एक रस हैं इसी अभिप्राय से उपनिषदों में यह कथन किया है कि "न तस्य कार्य्यं करणञ्च विद्यते न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते । परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च ॥" श्वे० ६।८॥ न उस से मट्टी के घट के समान कोई कार्य्य उत्पन्न होता है और न वह मट्टी के समान अन्य किसी पदार्थ का कारण है किन्तु वह अपनी स्वाभाविक शक्तियों से इस संसार की रचना करता हुआ सर्वकर्ता और सर्वनियन्ता कहलाता है ॥ ३ ॥

महान्तं त्वा महीरन्वापो अर्षन्ति सिन्धवः ।
यद्गोभिर्वासयिष्यसे ॥ ४ ॥

महान्तम् । त्वा । महीः । अनु । आपः । अर्षन्ति । सिन्धवः । यत् । गोभिः । वासयिष्यसे ॥ ४ ॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (महान्तं) सर्वतोमहान्तं (त्वा) भवन्तं (महीः) पृथिवी (आपः) जलं तथा (सिन्धवः) स्यन्दनशीलाः पदार्थाः (अर्षन्ति) आश्रयन्ति (यत्) यतस्त्वं (गोभिः) स्वशक्तिभिः सर्वं (वासयिष्यसे) नियमयसि ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (महान्तं) सब से बड़े (त्वा) तुमको (महीः) पृथिवी और (आपः) जल तथा (सिन्धवः) स्यन्दनशील सब पदार्थ (अर्षति) आश्रय किये हुए हैं (यत्) क्योंकि तुम (गोभिः) अपनी शक्तियों से सब का (वासयिष्यसे) नियमन करते हो ॥

भावार्थ—परमात्मा की शक्ति में पृथिवी, जल, वायु इत्यादि सम्पूर्ण तत्व तथा लोक लोकान्तर परिभ्रमण करते हैं। उसी महतोभूत के आश्रित होकर यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ठहरा हुआ है। इसका वर्णन, "एतस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेवैतद् यदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदः" "एतस्य वाक्षरस्यप्रशासने गार्गि सूर्य्याचन्द्रमसौ विधृतौ तिष्ठतः" "भयादस्याग्निस्तपति भयात्तपति सूर्य्यः भयादिन्द्रश्च वायुश्च मृत्युर्धावति पञ्चमः" इत्यादि प्रमाणों द्वारा जिसका ब्राह्मण और उपनिषदों में वर्णन किया गया है उसी पूर्ण पुरुष का वर्णन इस मन्त्र में है। मालूम होता है कि पूर्वोक्त प्रमाण जो परमात्मा को सर्वाधार वर्णन करते हैं वे इसी मन्त्र के आधार पर हैं ॥ ४ ॥

समुद्रो अप्सु मामृजे विष्टम्भो धरुणो दिवः ।
सोमः पवित्रे अस्मयुः ॥ ५ ॥ १८ ॥

समुद्रः । अप्सु । ममृजे । विष्टम्भः । धरुणः । दिवः ।
सोमः । पवित्रे । अस्मऽयुः ॥ ५ ॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! त्वं (समुद्रः) समुद्ररूपोऽसि "सम्यग् द्रवन्त्यापो यस्मात्स समुद्रः=यस्य शक्त्या जलादिपदार्थजातानि सूक्ष्मतां यान्ति तस्य नाम समुद्रः" एव परमात्मा समुद्रः किंच यः (अप्सु) सूक्ष्मभावेषु (ममृजे) शुद्धसत्तया विराजते तथा यः (विष्टंभः) सर्वस्तम्भनः (दिवः) द्युलोकस्य

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(धरुणः) धर्ता (सोमः) सौम्यः (अस्मयुः) सर्वप्रियोऽस्ति सः (पवित्रे) सर्वशुभकार्य्येषु पूज्यः ॥

पदार्थ--हे परमात्मन्! आप (समुद्रः) समुद्ररूप हैं "सम्यग् द्रवन्ति आपो यस्मात्स समुद्रः "जिस की शक्ति से जलादि सब पदार्थ सूक्ष्म भाव को प्राप्त हो जाते हैं उसका नाम समुद्र है इस प्रकार परमात्मा का नाम समुद्र है और (अप्सु) सूक्ष्म पदार्थों में (ममृजे) जो अपनी शुद्ध सत्ता से विराज मान है तथा जो सब का (विष्टम्भः) थाम्भने वाला (दिवः) द्युलोक का (धरुणः) धारण करने वाला (सोमः) सौम्यस्वभाव, और (अस्मयुः) सर्वप्रिय है वही परमात्मा (पवित्रे) सम्पूर्ण शुभ काम में पूजनीय है।

भावार्थ--परमात्मा सबको प्यार करता है, वह सर्वाधिकरण सर्वाश्रय तथा सर्व नियन्ता है ॥ ५ ॥ १८ ॥

अचिक्रदद्वृषा हरिर्महान्मित्रो न दर्शतः ।
सं सूर्येण रोचते ॥ ६ ॥

अचिक्रदत् । वृषा । हरिः । महान् । मित्रः । न । दर्शतः । सम् । सूर्येण । रोचते ॥ ६ ॥

पदार्थः--(हरिः) दुष्टदमनः, सर्वेषां (मित्रः, न) मित्रसदृशः, (दर्शतः) सन्मार्गप्रदर्शकः (सं) सम्यक्प्रकारेण (सूर्य्येण) स्वविज्ञानेन (रोचते) प्रकाशमानो भवति (वृषा) सर्वकामप्रदः स परमात्मा (अचिक्रदत्) सर्वान् स्वाभिमुख-माह्वयति ॥

पदार्थ--(हरिः) दुष्टों के दलन करने वाला और सबका (मित्र)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मित्र के (न) समान (दर्शतः) सन्मार्ग दिखलाने वाला और (सं) भली प्रकार (सूर्य्येण) अपने विज्ञान से (रोचते) प्रकाश मान हो रहा है (वृषा) सर्वकामप्रद वह परमात्मा (अचिक्रदत्) सब को अपनी ओर बुला रहा है॥

भावार्थ—वह परमात्मा जो आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक तापरूपी शत्रुओं का नाश करने वाला, मित्र की तरह सब प्राणिओं का सन्मार्गप्रदर्शक तथा आत्मज्ञानद्वारा सब के हृदय में प्रकाशित है उसी के आह्वानरूप वेदवाणियें हैं और वही परमात्मा सब कामनाओं का पूर्ण करने वाला है, इस लिये उसी एकमात्र परमात्मा की शरण में सबको जाना उचित है॥ ६॥

गिरस्त इन्द ओजसा मर्मृज्यन्ते अपस्युवः।
याभिर्मदाय शुम्भसे॥ ७॥

गिरः। ते। इन्दो इति। ओजसा। मर्मृज्यन्ते। अपस्युवः। याभिः। मदाय। शुंभसे॥ ७॥

पदार्थः—(इन्दो) हे परमैश्वर्य्यप्रद परमात्मन्! (ते) तव (ओजसा) प्रतापेन (अपस्युवः) कर्मबोधिकाः (गिरः) वाचः (मर्मृज्यन्ते) लोकान् पवित्रयन्ति (याभिः) याभिः त्वं (मदाय) आनन्दातुं (शुम्भसे) विराजसे॥

पदार्थ—(इन्दो) हे परमैश्वर्य्यप्रद परमात्मन्! (ते) आप के (ओजसा) प्रताप से (अपस्युवः) कर्म्मबोधक (गिरः) वाणियें (मर्मृज्यंते) लोगों को शुद्ध करती हैं (याभिः) जिन के द्वारा आप (मदाय) आनन्द प्रदान के लिये (शुम्भसे) विराजमान हैं।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा अपने कर्म्मबोधक वेदवाक्यों से सदैव पुरुषों को सत्कर्म्मों में उद्बोधन करता है, जिस से वे ब्रह्मानन्दोपभोग के भागी बनें जैसा कि अन्यत्र भी वेदवाक्यों में वर्णन किया है "क्रतो स्मर क्लिबे स्मरकृत ए स्मर यजु० ४०।१५।" "कुर्वन्नेवेह कर्म्माणि जिजीविषेच्छत ए समाः यजु० ४०।२। " इत्यादि वाक्यों में कर्म्मयोग का वर्णन भली भांति पाया जाता है उसी कर्म्मयोग का वर्णन इस मन्त्र में है। उपनिषदों में इसको इस प्रकार वर्णन किया है "उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्यवरान्निबोधत क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत् कवयो वदन्ति कठ० ३।१४। =" उठो जागो अपने कर्त्तव्यों को समझ कर अपना आचरण करो तथा अन्य लोगों को कर्त्तव्यपरायण बनाओ यह भाव उपनिषत्कार ऋषिओं ने भी उक्त वेद मन्त्रों से लिया है।

कई एक लोग यह कहते हैं कि वेदों में विधिवाद नहीं अर्थात् ऐसा करो, ऐसा न करो इस प्रकार विधि तथा निषेध के बोधक वेदवाक्य नहीं मिलते। उनको स्मरण रखना चाहिये कि जब वेद ने गिराओं का विशेषण " अपस्युवः " यह कर्मों का उद्बोधक दिया फिर विधिवाद अर्थात् अनुज्ञा में क्या न्यूनता रह जाती है। विधि, विधान, अनुज्ञा, आज्ञा यह सब एकार्थवाची शब्द हैं। इस प्रकार वेदों ने शुभ कर्म्मों के करने का विधान सर्वत्र किया है। एवं निषेध के बोधक भी सहस्रशः वेदवाक्य पाए जाते हैं जैसा कि "मा शिश्नदेवा अपि गुर्ऋतं नः ऋग् ७।२१।५=" मूर्त्यादि चिह्नों के पुजारी मेरी सच्चाई को नहीं पाते। एवं "नन-मूर्ध्वन्न तिर्य्यञ्च न मध्यपरिजग्रभत् यजु. ३२।१। " परमात्मा को किसी स्थान में कोई बन्द नहीं कर सकता। इत्यादि अनेक मन्त्र निषेधबोधक पाए जाते हैं। इस प्रकार वेद का विधि, निषेध द्वारा हित का शासक होना ही इसकी अपूर्वता है ॥७॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तं त्वा मदाय घृष्वय उ लोककृत्नुमीमहे ।
तव प्रशस्तयो महीः ॥ ८ ॥

तम् । त्वा । मदाय । घृष्वये । ऊँ इति । लोककृत्नुम् ।
ईमहे । तव । प्रऽशस्तयः । महीः ॥ ८ ॥

पदार्थः—हे परमेश्वर ! (तं) प्रसिद्धं (त्वा) भवन्तं (ईमहे) वयं प्राप्नुयाम यो भवान् (लोककृत्नु) सम्पूर्णसंसारस्य रचयितास्ति स त्वं (मदाय) आनन्दाय (उ) किंच (घृष्वये) दुःखनिवृत्यै प्राप्तो भव (तव) भवतः (प्रशस्तयः) स्तुतयः (महीः) पृथ्वीमात्रे लभ्यन्ते ॥

पदार्थ—हे परमेश्वर ! (तं) उस (त्वा) तुझको (ईमहे) हम प्राप्त हों जो तू (लोककृत्नु) सम्पूर्ण संसार का रचने वाला है । (मदाय) आनन्द की प्राप्ति (उ) और (घृष्वये) दुःखों की निवृत्ति के लिये प्राप्त हो (तव) तुम्हारी (प्रशस्तयः) स्तुतियें (महीः) पृथिवी भर में पाई जाती हैं ।

भावार्थ—हे परमात्मन् ! आप का स्तवन प्रत्येक वस्तु कर रही है, और आप सम्पूर्ण संसार के उत्पत्ति, स्थिति, संहार करने वाले हैं । आपकी प्राप्ति से सम्पूर्ण अज्ञानों की निवृत्ति होती है इस लिये हम आप को प्राप्त होते हैं ॥८॥

अस्मभ्यमिन्दविन्द्रयुर्मध्वः पवस्व धारया ।
पर्जन्यो वृष्टिमाँ इव ॥ ९ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अस्मभ्यम् । इन्दो इति । इन्द्रऽयुः । मध्वः । पवस्व ।
धारया । पर्जन्यः । वृष्टिमान्ऽइव ॥ ९ ॥

पदार्थः—(इन्दो) हे ऐश्वर्य्ययुक्त (इन्द्रयुः) सर्वव्यापक परमात्मन् ! (मध्वः) आनन्दस्य (धारया) वृष्ट्या (वृष्टिमान्) वर्षुकः (पर्जन्यः) मेघः (इव) यथा भवान् (अस्मभ्यं) अस्मान् (पवस्व) पुनातु ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे परमैश्वर्य्ययुक्त और (इन्द्रयुः) सर्वव्यापक परमात्मन् ! (मध्वः) आनन्द की (धारया) वृष्टि से (वृष्टिमान्) वर्षा करने वाले (पर्जन्यः) मेघ के (इव) समान आप (अस्मभ्यं) हमको (पवस्व) पवित्र करें ।

भावार्थ—जिस प्रकार मेघ अपनी वृष्टि से भूमि का सिञ्चन कर देता है, उसी प्रकार हे परमात्मन् ! आप अपनी आनन्दरूप वृष्टि से हमको पवित्र तथा सिक्त करें ॥९॥

गोषा इन्दो नृषा असि अश्वसा वाजसा उत ।
आत्मा यज्ञस्य पूर्व्यः ॥ १० ॥ १९ ॥

गोऽसाः । इन्दो इति । नृऽसाः । असि । अश्वऽसाः ।
वाजसाः । उत । आत्मा । यज्ञस्य । पूर्व्यः ॥ १० ॥

पदार्थः—(इन्दो) हे परमैश्वर्य्ययुक्त परमात्मन् ! भवान् (यज्ञस्य) समस्तस्य यज्ञस्य (पूर्व्यः) आदिकारणमस्ति । भवान् अस्मभ्यम् (गोषाः) गवां (अश्वसाः) अश्वानां (वा-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जसाः) अन्नानां (नृषाः) मनुष्याणां (उत) किंच (आत्मा) आत्मबलस्य दाता (असि) असि ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे ऐश्वर्य्ययुक्त परमात्मन् ! आप (यज्ञस्य) सम्पूर्णयज्ञों के (पूर्व्यः) आदि कारण हैं । आप हमको (गोषाः) गायें (अश्वसाः) घोड़े (वाजसाः) अन्न (नृषाः) मनुष्य (उत) और (आत्मा) आत्मिक बल इन सब वस्तुओं के देने वाले (असि) हो ।

भावार्थ—हे परमात्मन् ! आपकी कृपा से अभ्युदय और निःश्रेयस दोनों फलों की प्राप्ति होती है जिन पर आप कृपालु होते हैं, उनको हृष्ट पुष्ट गौ और बलीवर्द तथा उत्तमोत्तम घोड़े एवं नाना प्रकार की सेनायें इत्यादि अभ्युदय के सब साधन देते हैं । और जिन पर आपकी कृपा होती है उन्हीं को आत्मिक बल देकर यम नियमों द्वारा संयमी बनाकर निःश्रेयस प्रदान करते हैं ॥१०॥१९॥

द्वितीयं सूक्तमेकोनविंशो वर्गश्चसमाप्तः ।

दूसरा सूक्त और उन्नीसवां वर्ग समाप्त हुआ ॥

अथ दशर्चस्य तृतीयस्य सूक्तस्य—

१–१० शुनःशेप ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः–
१, २ विराड् गायत्री । ३, ५, ७, १० गायत्री ।
४, ६, ८, ९ निचृद् गायत्री । षड्जः स्वरः ॥

अथ पूर्वोक्तस्य परमात्मदेवस्य गुणा निर्दिश्यन्ते ।

अब पूर्वोक्त परमात्मदेव के गुणों का कथन करते हैं ।

एष देवो अमर्त्यः पर्णवीरिव दीयति ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अभि द्रोणान्यासदम् ॥ १ ॥

एषः । देवः । अमर्त्यः । पर्णवीःऽइव । दीयति । अभि । द्रोणानि । आऽसदम् ॥ १ ॥

पदार्थः—(एष, देवः) पूर्ववर्णितः परमात्मा (अमर्त्यः) अविनाशी अस्ति । सः (आसदम्) सर्वं व्याप्तुं (अभि, द्रोणानि) प्रतिब्रह्माण्डं (पर्णवीः) विद्युत् (इव) यथा (दीयति) प्राप्तः ॥

पदार्थ—(एषः देवः) जिस परमात्म-देव का पूर्व वर्णन किया गया वह (अमर्त्यः) अविनाशी है (आसदम्) सर्वत्र व्याप्त होने के लिये वह परमात्मा (अभि, द्रोणानि) प्रत्येक ब्रह्माण्ड को (पर्णवीः) विद्युत् शक्ति के (इव) समान (दीयति) प्राप्त है ॥

भावार्थ—दीव्यतीतिदेवः=जो सबको प्रकाश करे उसको देव कहते हैं सर्वप्रकाशक देव अनादिसिद्ध और अविनाशी है, उसकी गति प्रत्येक ब्रह्माण्ड में है वही परमात्मा इस संसार की उत्पत्ति, स्थिति, संहार का करने वाला है उसी की उपासना सबको करनी चाहिये ॥१॥

एष देवो विपा कृतोऽति ह्वरांसि धावति ।
पवमानो अदाभ्यः ॥ २ ॥

एषः । देवः । विपा । कृतः । अति । ह्वरांसि । धावति । पवमानः । अदाभ्यः ॥ २ ॥

पदार्थः—(एष, देवः) अयं पूर्ववर्णितः परमात्मा देवः (विपा) मेधाविभिर्विद्विद्भिः विप इति मेधाविनामसु पठितम्

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निघ० ३ । १५ ॥ (अति) विस्तरेण (कृतः) वर्णितः (अदाभ्यः) उपासितः (पवमानः) पवित्रो देवः सः (हरांसि) उपासकहृदये (धावति) प्राप्नोति ॥

पदार्थ—(एषः देवः) यह पूर्वोक्त देव (विपा) मेधावी विद्वानों ने (अति) विस्तार से (कृतः) वर्णन किया है "विप इति मेधाविनामसु पठितं" नि० ३।१५। (अदाभ्यः) उपासना किया हुआ (पवमानः) यह पवित्र देव (हरांसि) उपासकों के हृदय में (धावति) प्राप्त होता है॥

भावार्थ—जिस परमात्मा का विद्वान् लोग वर्णन करते हैं वा उपासना करने से उपासकों के हृदय में आविर्भाव को प्राप्त होता है ॥२॥

एष देवो विपन्युभिः पवमान ऋतायुभिः ।
हरिर्वाजाय मृज्यते ॥ ३ ॥

एषः । देवः । विपन्युऽभिः । पवमानः । ऋतयुऽभिः । हरिः । वाजाय । मृज्यते ॥ ३ ॥

पदार्थः—(एष, देवः) पूर्वोक्तो देवः (विपन्युभिः, ऋतयुभिः) सत्यवचनैर्विद्वद्भिः (पवमानः) पवित्रतया वर्णितः (हरिः) सर्वदुःखहारकः परमात्मा (वाजाय) ज्ञानयज्ञाय (मृज्यते) उपास्यते ॥

पदार्थ—(एष देवः) यह पूर्वोक्तदेव (विपन्युभिः, ऋतायुभिः) सत्यवक्ताविद्वानों द्वारा (पवमानः) पवित्र वर्णन किया गया है (हरिः) यह सब दुःखों का दूर करने वाला परमात्मदेव (वाजाय) ज्ञानयज्ञ के लिये (मृज्यते) उपास्य रक्खा जाता है ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—जिस पूर्णपुरुष को विद्वान् लोग इन्द्रियागोचर कथन करते हैं वही पूर्ण पुरुष ज्ञानयज्ञद्वारा ज्ञानियों के ज्ञानगम्य होकर उपास्य भाव को प्राप्त होता है ॥ ३ ॥

एष विश्वानि वार्या शूरो यन्निव सत्वभिः ।
पवमानः सिषासति ॥ ४ ॥

एषः । विश्वानि । वार्या । शूरः । यन्ऽइव । सत्वऽभिः ।
पवमानः । सिसासति ॥ ४ ॥

पदार्थः—(एषः) पूर्वोक्तो देवः (विश्वानि) सर्वाणि (वार्या) धनानि (सिषासति) विभजति । (इव) यथा (शूरः) वीरः (सत्वभिः) आत्मपराक्रमैः (यन्) आक्रामन् सर्वमसत्यमपाकरोति ॥

पदार्थ—(एषः) यह पूर्वोक्तदेव (विश्वानि) सम्पूर्ण (वार्या) धनों का (सिषासति) विभाग करता है । (इव) जिस प्रकार (शूरः) शूरवीर (सत्वभिः) अपने पराक्रमों से (यन्) आक्रमण करता हुआ सच झूठ का निपटारा कर देता है ।

भावार्थ—परमात्मदेव अपने ऐश्वर्य्यों का विभाग पात्र अपात्र समझ कर करता है । जिस को वह अपने ऐश्वर्य्य का पात्र समझता है उसको ऐश्वर्य्य देता है और जिसको अपात्र समझता है उससे ऐश्वर्य्य हर लेता है, जिस प्रकार पात्र अपनी बनावट और अपने गुण, कर्म्म, स्वभाव से उपादेय वस्तु का पात्र बनता है उसी प्रकार पुरुष भी अपने गुण, कर्म्म, स्वभाव से पात्रता को प्राप्त होता है, वा यों कहो कि पूर्वकृतप्रारब्ध कर्म्मों से वह उपादेय वस्तु को प्राप्त होने योग्य बनता है ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जो लोग निष्कर्म्म मन्दभागी और आलसी हैं वे सदैव ईश्वर के ऐश्वर्य्य से वञ्चित रहते हैं। इसी लिये उनको अपात्र कहा है। उक्त मन्त्र में शूरवीर का दृष्टांत इस अभिप्राय से दिया है कि जिस प्रकार शूरवीर के निपटारा करने के बाद किसी को अतोष तथा नन्नुनच करने का अवकाश नहीं मिलता उसी प्रकार परमात्मा के निपटारा करने पर फिर किसी को झगड़े अथवा नन्नुनच करने का अवकाश नहीं रहता ॥४॥

एष देवो रथर्यति पवमानो दशस्यति ।
आविष्कृणोति वग्वनुम् ॥ ५ ॥ २० ॥

एषः । देवः । रथर्यति । पवमानः । दशस्यति । आविः । कृणोति । वग्वनुम् ॥ ५ ॥

पदार्थः—(एष, देवः) अयं देवः परमात्मा (पवमानः) सर्वं पुनानः (रथर्यति) सर्वस्य शुभं काङ्क्षति (दशस्यति) मनोवाञ्छितं प्रापयति च तथा (वग्वनुं) सत्यम् (आविष्कृणोति) प्रकटयति ॥

पदार्थ—(एष, देवः) यह परमात्मदेव (पवमानः) सबको पवित्र करता हुआ (रथर्यति) सदा सबका शुभ चाहता है और (दशस्यति) मनो वाञ्छित फलों की प्राप्ति कराता है तथा (वग्वनुं) सत्य को (आविष्कृणोति) प्रकट करता ।

भावार्थ—वही परमात्मा सबके लिये पवित्रता का धाम है। सब लोग आत्मिक, शारीरिक, तथा सामाजिक पवित्रताएँ उसी से प्राप्त करते हैं, इस लिये वही परमदेव एकमात्र उपासनीय है ॥५॥२०॥

एष विप्रैरभिष्टुतोऽपो देव वि गाहते ।
दधद्रत्नानि दाशुषे ॥ ६ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एषः। विप्रैः। अभिऽस्तुतः। अपः। देवः। वि। गाहते। दधत्। रत्नानि। दाशुषे॥ ६॥

पदार्थः—(एषः) अयं परमात्मा (विप्रैः) मेधाविभिः (अभिष्टुतः) वर्णितः (अपोदेवः) कर्मणामध्यक्षः (विगाहते) समस्तस्य जगतः सृष्टिस्थितिलयकर्ता (दाशुषे) यजमानाय (रत्नानि) विविधं धनं (दधत्) दद्यात्॥

पदार्थ—(एषः) यह परमात्मा (विप्रैः) मेधावी लोगों के द्वारा (अभिष्टुतः) वर्णन किया गया है "विप्र इति मेधावि नामसु पठितम्" निरु० ३।१९।१५ (अपो, देवः) कर्मों का अध्यक्ष है (विगाहते) सम्पूर्ण संसार की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय करने वाला है (दाशुषे) यजमानों को (रत्नानि) नाना प्रकार के धन (दधत्) देय।

भावार्थ—विद्वान् लोग जिस परमात्मा का नाना प्रकार से वर्णन करते हैं वही इन्द्रियागोचर और एकमात्रज्ञानगम्य परमात्मा सर्वाधार, सर्वकर्त्ता, अजर, अमर, और कूटस्थनित्य है इसी की उपासना सब को करनी चाहिये॥६॥

एष दिवं वि धावति तिरो रजांसि धारया।
पवमानः कनिक्रदत्॥ ७॥

एषः। दिवम्। वि। धावति। तिरः। रजांसि। धारया। पवमानः। कनिक्रदत्॥ ७॥

पदार्थः—(एषः) उक्तः परमात्मा (दिवं) द्युलोकं (वि) नानाप्रकारेण (रजांसि) परमाणुपुञ्जस्य (धारया) प्रबलवेगेन

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(तिरोधावति) आच्छादयति (पवमानः) सर्वेषां पविता परमात्मा (कनिक्रदत्) स्वीयप्रबलगत्या सर्वत्र गर्जति ॥

पदार्थ—(एषः) उक्त परमात्मा (दिवं) द्युलोक को (वि) नानाप्रकार से (रजांसि) परमाणुपुञ्ज के (धारया) प्रबल वेगों से (तिरो, वि. धावति) ढक देता है (पवमानः) सबको पवित्र करने वाला परमात्मा (कनिक्रदत्) अपनी प्रबलगति से सर्वत्र गर्ज रहा है।

भावार्थ—परमात्मा नाना प्रकार के परमाणुओं से द्युलोकादि लोक लोकान्तरों को आच्छादन करता है और अपनी सत्तासे सर्वत्र विराजमान हुआ सब को शुभ मार्ग की ओर बुलारहा है ॥७॥

एष दिवं व्यासरत्तिरो रजांस्यस्पृतः ।
पवमानः स्वध्वरः ॥ ८ ॥

एषः । दिवम् । वि । आ । असरत् । तिरः । रजांसि ।
अस्पृतः । पवमानः । सुऽअध्वरः ॥ ८ ॥

पदार्थः—(एषः) स परमात्मा (दिवं) द्युलोकं (व्यासरत्) प्राप्तोऽस्ति (रजांसि) परमाणुषु लोकलोकान्तरम् (तिरः) आच्छाद्य (अस्पृतः) अविनाशिभावेन (पवमानः) पवित्रतया (स्वध्वरः) अहिंसकत्वेन च विराजते ॥

पदार्थ—(एषः) वही परमात्मा (दिवं) द्युलोक को (व्यासरत्) प्राप्त है (रजांसि) परमाणु में लोक लोकान्तरों को (तिरः) आच्छादन करके (अस्पृतः) अविनाशी भाव से (पवमानः) पवित्र और (स्वध्वरः) अहिंसकरूप से विराजमान है ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—वह नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्तस्वभाव परमात्मा सर्वत्र विराजमान है, और उसी की सत्ता से सब लोक लोकान्तर परिभ्रमण करते हैं ॥८॥

एष प्रत्नेन जन्मना देवो देवेभ्यः सुतः।
हरिः पवित्रे अर्षति ॥ ९ ॥

एषः। प्रत्नेन। जन्मना। देवः। देवेभ्यः। सुतः। हरिः। पवित्रे। अर्षति ॥ ९ ॥

पदार्थः—(एषः) अयं परमात्मा (देवः) (प्रत्नेन) अनादिकालेन (जन्मना) आविर्भावेन (देवेभ्यः) विद्वद्भ्यः (सुतः) सुप्रसिद्धः (हरिः) सर्वदुःखविनाशकः (पवित्रे) मनुष्यस्य पवित्रहृदये (अर्षति) प्रकटति ॥

पदार्थ—(एषः, देवः) यह परमात्मा (प्रत्नेन) अनादि काल से "प्रत्नमिति पुराणनामसु पठितम्" निरु० ३।२०।२७ (जन्मना) आविर्भाव से (देवः) उक्तदेव (देवेभ्यः) विद्वानों के लिये (सुतः) सुप्रसिद्ध (हरिः) सब दुःखों का हरने वाला (पवित्रे) मनुष्य के पवित्र हृदय में (अर्षति) प्रकट होता है ॥

भावार्थ—जो लोग अपने अन्तःकरण को पवित्र करते हैं और परमात्मा के निष्पापादि भावों को धारण करते हैं उनके हृदय में परमात्मा आकर प्रकट होता है ॥

जो मन्त्र में जन्म शब्द आया है इसके अर्थ जन्मधारण के नहीं किन्तु, जनी-प्रादुर्भावे धातु से मनिन् प्रत्यय करने से जन्म शब्द सिद्ध होता है जिसके अर्थ आविर्भाव के हैं, किसी उत्पत्ति विशेष के नहीं। इसी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आभिप्राय से मन्त्र में प्रत्न शब्द को विशेषण देकर जन्म का वर्णन किया है, जिसके अर्थ अनादि सिद्ध आविर्भाव के हैं न कि उत्पत्ति के।

तात्पर्य यह है कि वह अनादि सिद्ध परमात्मा निष्पाप आत्माओं में प्रकट होता है ॥९॥

एष उ स्य पुरुव्रतो जज्ञानो जनयन्निषः ।
धारया पवते सुतः ॥ १० ॥ २१ ॥

एषः । ऊँ इति । स्यः । पुरुव्रतः । जज्ञानः । जनयन् । इषः । धारया । पवते । सुतः ॥ १० ॥

पदार्थः—(एषस्यः) सोऽयं परमात्मा (पुरुव्रतः) अनन्तकर्मा (जज्ञानः) सर्वत्र प्रसिद्धः (इषः) सर्वं लोकलोकान्तरं (जनयन्) उत्पादयन् (सुतः) स्वसत्तया विराजमानः (धारया) स्वपीयूषवर्षेण (पवते) सर्वं पवित्रयति

पदार्थ—(स्यः) वह पूर्वोक्त परमात्मा (पुरुव्रतः अनन्तकर्मा है (जज्ञानः) सर्वत्र प्रसिद्ध (इषः) सम्पूर्ण लोक लोकान्तरों को (जनयन्) उत्पन्न करता हुआ (सुतः) स्वसत्ता से विराजमान (एषः) यही (धारया) अपनी सुधामयी दृष्टि की धाराओं से (पवते) सबको पवित्र करता है।

भावार्थ—जो परमात्मा अनन्तकर्म्मा है वही अपनी शक्ति से सब लोक लोकान्तरों को उत्पन्न करता है और वही अपनी पवित्रता से सबको पवित्र करता है।

अनन्तकर्म्मा, यहां परमात्मा को उसकी अनन्त शक्तियों के अभिप्राय

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

से वर्णन किया है किसी शारीरिक कर्म के अभिप्राय से नहीं ॥१०॥२१॥

तृतीयं सूक्तमेकविंशे वर्गश्च समाप्तः ॥

तीसरा सुक्त और इक्कीसवां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथाभ्युदयाय विजयाय आत्मसुखाय च निःश्रेयसं वर्ण्यते ।

अब उक्त परमात्मा से अभ्युदय के लिये विजय, और आत्मसुख के लिये निःश्रेयस की प्रार्थना वर्णन करते हैं ।

अथ दशर्चस्य चतुर्थस्य सूक्तस्य—

१—१० हिरण्यस्तूप ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः—
१, ३, ४, १० गायत्री । २, ५, ८, ९ निचृद् गायत्री ।
६, ७ विराड् गायत्री । षड्जः स्वरः ॥

सना च सोम जेषि च पवमान महि श्रवः ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ १ ॥

सन । च । सोम । जेषि । च । पवमान । महि । श्रवः ।
अथ । नः । वस्यसः । कृधि ॥ १ ॥

पदार्थः—(सोम) हे सौम्यस्वभावयुक्त परमात्मन् ! (महि, श्रवः) सर्वतो दातृतमः (च) तथाच (पवमान) पवित्र त्वं (जेषि) पापिनो जय (च) किंच सदा (नः) अस्मभ्यं (वस्यसः, कृधि) कल्याणं देहि (सन) नो भज ॥

पदार्थ—(सोम) हे सौम्यस्वभाव परमात्मन् ! (महिश्रवः)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सर्वोपरिदाता तथा (च) और (पवमान) पवित्र (जेषि) पापियों का का नाश करो (च) किंतु सदा के लिये (नः) हमको (वस्यसस्कृधि) कल्याण देयँ (सन) हमारी रक्षा करें ।

भावार्थ—परमात्मा, अभ्युदय और निःश्रेयस दोनों के दाता हैं । जिन लोगों को अधिकारी समझते हैं उनको अभ्युदय, नाना प्रकार के ऐश्वर्य्य प्रदान करते हैं, और जिसको मोक्ष का अधिकारी समझते हैं उसको मोक्ष सुख प्रदान करते हैं ।

जो मन्त्र में, जेषि, यह शब्द है इसके अर्थ परमात्मा की जीत को बोधन नहीं करते किन्तु तदनुयायियों की जीत को बोधन करते हैं। क्योंकि परमात्मा तो सदा ही विजयी हैं। वस्तुतः न उसका कोई शत्रु और न उसका कोई मित्र है। जो सत्कर्म्मी पुरुष हैं वे ही उसके मित्र कहे जाते हैं और जो असत्कर्म्मी हैं उन्हीं में शत्रुभाव आरोपित किया जाता है। वास्तव में यह दोनों भाव मनुष्यकल्पित हैं। ईश्वर सदा सब के लिये समदर्शी है ॥१॥

सना ज्योतिः सना स्वर्विश्वा च सोम सौभगा ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ २ ॥

सन । ज्योतिः । सन । स्वः । विश्वा । च । सोम । सौभगा । अथ । नः । वस्यसः । कृधि ॥ २ ॥

पदार्थः—(सोम) हे सौम्यस्वभावयुक्त परमात्मन् ! (सन, ज्योतिः) सदा ज्योतीरूपंदेहि (च) अथच (सन, स्वः) सदा सुखंदेहि (विश्वा) सर्वं (सौभगा) सौभाग्यदातृ वस्तु देहि (अथ) किंच (नः) अस्मभ्यं (वस्यसस्कृधि) मुक्तिं देहि ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(सोम) हे सौम्यस्वभाव परमात्मन्! (सन, ज्योतिः) सदा ज्योतिःस्वरूप हो (च) और (सन, स्वः) सदा सुखस्वरूप हो (विश्वा) सम्पूर्ण (सौभगा) सौभाग्यदायक वस्तुयें आप हमको दें (अथ) और (नः) हमको (वस्यसस्कृधि) मुक्ति सुख दें।

भावार्थ—परमात्मा नित्य शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वभाव है उसी की कृपा से नाना विधि के सौभाग्य मिलते हैं और मोक्ष सुख मिलता है॥२॥

सना दक्षमुत क्रतुमप सोममृधो जहि ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ ३ ॥

सन । दक्षम् । उत । क्रतुम् । अप । सोम । मृधः । जहि ।
अथ । नः । वस्यसः । कृधि ॥ ३ ॥

पदार्थः—(सोम) हे सौम्यस्वभाव परमात्मन्! (क्रतुं) अस्मच्छुभकर्माणि (सन) रक्षतु (अथ) किंच (मृधः) पापकर्म्माणि (अप, जहि) अस्मत्तोऽपनय (उत) अथ (दक्षं) सुनीतिं (वस्यसः) मुक्तिं (कृधि) कुरु ॥

पदार्थ—(सोम) हे सौम्यस्वभाव परमात्मन्! (क्रतुम्) हमारे शुभ कर्म्मों की आप (सन) रक्षा करें (अथ) और (मृधः) पाप कर्म्मों को (अप, जहि) हमसे दूर करें (उत) और (दक्षम्) सुनीति और (वस्यसः) मुक्ति सदा (कृधि) करो।

भावार्थ—जो पुरुष शुद्धभाव से परमात्मपरायण होते हैं परमात्मा उनके पापकर्म्मों को हरलेता है और नाना प्रकार के चातुर्य्य उनको प्रदान करता है॥३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पवीतारः पुनीतन सोममिन्द्राय पातवे ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ ४ ॥

पवितारः । पुनीतन । सोमम् । इन्द्राय । पातवे । अथ । नः । वस्यसः । कृधि ॥ ४ ॥

पदार्थः—(पवीतारः) हे विद्वांसः, यूयं (इन्द्राय, पातवे) ऐश्वर्य्याधिकारिणे पुरुषाय (सोमं) सौम्यस्वभावं परमात्मानं (पुनीतन) वर्णयत (अथ) अथेदं प्रार्थयध्वं यत् (नः) अस्मान् स परमात्मा (वस्यसः,कृधि) मोक्षानन्दभाजः करोतु ॥

पदार्थ—(पवीतारः) हे विद्वान् लोगो ! तुम (इन्द्राय, पातवे) ऐश्वर्य्याधिकारी पुरुष के लिये (सोमं) सौम्यस्वभाव वाले परमात्मा का (पुनीतन) वर्णन करो (अथ) और यह प्रार्थना करो कि (नः) हमको वह परमात्मा (वस्यसस्कृधि) मोक्ष सुख का भागी बनाएं ।

भावार्थ—विद्वान् लोग जब किसी पुरुष को दीक्षित करें तब शान्त्यादिगुणसम्पन्न परमात्मा का सब से प्रथम उपदेश करें । तदनन्तर अभ्युदय और निःश्रेयस का विस्तृत उपदेश करके इस सांसारिक यात्रा में दक्ष बनाएं ॥४॥

त्वं सूर्ये न आ भज तव क्रत्वा तवोतिभिः ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ ५ ॥ २२ ॥

त्वम् । सूर्ये । नः । आ । भज । तव । क्रत्वा । तव । ऊतिऽभिः । अथ । नः । वस्यसः । कृधि ॥ ५ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (त्वम्) भवान् (नः) अस्मभ्यं (सूर्ये) ज्ञानं प्रदातुम् (आभज) आगत्य तिष्ठतु (क्रत्वा) यज्ञेन (अथ, तव, ऊतिभिः) अथ च स्वीयरक्षाभिः (नः) अस्मान् (वस्यसः, कृधि) सुखिनः करोतु ॥

पदार्थ—हे परमात्मन्! (त्वं) तुम (नः) हमको (सूर्य्ये) ज्ञान-प्रदान के लिये (आभज) आकर प्राप्त हो। (क्रत्वा) यज्ञों द्वारा (अथ तव, ऊतिभिः) और अपनी रक्षाद्वारा (नः) हमको (वस्यसस्कृधि) सुखी बनाएँ ॥

भावार्थ—हे परमात्मन्! आप ज्ञान और कर्मद्वारा हमारी सर्वदा रक्षा करें और ऐहिक, तथा पारलौकिक सुख से हमको सदैव सम्पन्न करें ॥ ९ ॥ २२ ॥

तव क्रत्वा तवोतिभिर्ज्योक्पश्येम सूर्यम् ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ ६ ॥

तव । क्रत्वा । तव । ऊतिऽभिः । ज्योक् । पश्येम । सूर्यम् ।
अथ । नः । वस्यसः । कृधि ॥ ६ ॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (तव, क्रत्वा) वयं तव ज्ञान-योगद्वारेण (तव, ऊतिभिः) कर्मयोगद्वारेण च (ज्योक्) शश्वत् (सूर्यम्) भवतः प्रकाशरूपम् (पश्येम) अनुभवेम (अथ) अथच (नः) अस्माकम् (वस्यसः) कल्याणम् (कृधि) कुरु ।

पदार्थ—हे परमात्मन्! हम (तव, क्रत्वा) आपके कर्मयोग (तवोतिभिः) और ज्ञानयोगद्वारा सदैव (सूर्य्ये) आपके प्रकाशस्वरूप

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

को (ज्योक्) निरन्तर (पश्येम) अनुभव करें (अथ) और (नः) हमारे (वस्यसः) कल्याण को (कृधि) करिये ।

भावार्थ—ज्ञानयोगी तथा कर्मयोगी पुरुष अपने आत्मभूत सामर्थ्य से परमात्मा के स्वरूप का अनुभव करके सदैव आनन्द का लाभ करते हैं ॥ ६ ॥

अभ्यर्ष स्वायुध सोम द्विबर्हसं रयिम् ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ ७ ॥

अभि । अर्ष । सुऽआयुध । सोम । द्विऽबर्हसम् । रयिम् । अथ । नः । वस्यसः । कृधि ॥ ७ ॥

पदार्थः—(सोम) हे जगदुत्पादक परमात्मन् ! भवान् (रयिम्) ऐश्वर्यं (अभ्यर्ष) अस्मभ्यं प्रयच्छ, यदैश्वर्यम् (द्विबर्हसम्) द्यावापृथिव्योर्मध्ये सर्वोत्कृष्टमस्ति (स्वायुध) भवान् सर्वविधाज्ञानस्य नाशकः अतएव (नः) अस्माकमपि अज्ञानं नाशय (वस्यसः कृधि) आनन्दं च विधेहि ॥

पदार्थ—(सोम) " सूते चराचरं जगदिति सोमः परमात्मा = जो चराचर जगत् को उत्पन्न करे उसका नाम यहां सोम है " हे जगदुत्पादक परमात्मन्! आप (रयिं) हमको ऐश्वर्य्य (अभ्यर्ष) प्रदान करें जो ऐश्वर्य्य (द्विबर्हसं) द्युलोक और पृथिवी लोक के मध्य में सर्वोपरि है (स्वायुध) आप सब प्रकार से अज्ञान के दूर करने वाले हैं, इस लिये (नः) हमारे अज्ञान का नाश करके हमको (वस्यसस्कृधि) आनन्दप्रदान करें ॥

भावार्थ—स्वप्रकाश परमात्मा अज्ञान को निवृत्त करके सदैव सुखका प्रकाश करता है ॥ ७ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अभ्यर्षानपच्युतो रयिं समत्सु सासहिः।
अथा नो वस्यसस्कृधि॥ ८॥

अभि। अर्ष। अनपऽच्युतः। रयिम्। समत्ऽसु। ससहिः।
अथ। नः। वस्यसः। कृधि॥ ८॥

पदार्थः—(अनपच्युतः) स कूटस्थनित्यः परमात्मा (रयिम्) स्वभक्तेभ्य ऐश्वर्यम् (अभ्यर्ष) प्रयच्छति (अथ) अथान्यत् (समत्सु) संग्रामेषु (सासहिः) अन्यायिनः शत्रून् पराजित्य स्वभक्तेभ्यः (वस्यसस्कृधि) श्रेयः प्रददाति॥

पदार्थ—(अनपच्युतः) वह कूटस्थनित्य परमात्मा (रयिम्, अभ्यर्ष) अपने भक्तों को ऐश्वर्य्यप्रदान करता है (अथ) और (समत्सु) संग्रामों में (सासहिः) अन्यायकारी शत्रुओं को पराजित करके अपने भक्तों को (वस्यसस्कृधि) सुखप्रदान करता है।

भावार्थ—जो लोग न्यायशील हैं उनको परमात्मा विजयी बनाता है और अन्यायकारी दुरात्माओं का सदैव दमन करता है॥८॥

त्वां यज्ञैरवीवृधन्पवमान विधर्मणि।
अथा नो वस्यसस्कृधि॥ ९॥

त्वां। यज्ञैः। अवीवृधन्। पवमान। विऽधर्मणि। अथ।
नः। वस्यसः। कृधि॥ ९॥

पदार्थः—(पवमान) हे सर्वस्य पवित्रकर्त्तः परमात्मन्! (त्वाम्) भवन्तम् (यज्ञैः) उपासनादिभिः (अवीवृधन्) उपा-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्वेन स्थापयन्ति (विधर्माणि) पापीयविषयेभ्योरक्षतु नः (अथ) अथ च (वस्यसः, कृधि) आनन्दभाजः करोतु भवान् ॥

पदार्थ—(पवमान) हे सब को पवित्र करने वाले परमात्मन् ! (त्वां) आप को (यज्ञैः) उपासनादि यज्ञों द्वारा (अवीवृधन्) उपास्य बनाते हैं (विधर्माणि) पापीय विषयों से आप हमारी रक्षा करें (अथ) और (वस्यसः कृधि) आनन्द के भागी बनायें ॥ ९ ॥

रयिं नश्चित्रमश्विनमिन्दो विश्वायुमा भर ।
अथा नो वस्यसस्कृधि ॥ १० ॥ २३ ॥

रयिम् । नः । चित्रम् । अश्विनम् । इन्दो इति । विश्वऽआयुम् । आ । भर । अथ । नः । वस्यसः । कृधि ॥ १० ॥

पदार्थः—(इन्दो) हे सर्वैश्वर्यसम्पन्न भगवन् ! (नः) अस्मान् (चित्रम्) अनेकविधम् (अश्विनम्) सर्वव्याप्यैश्वर्यं सम्पाद्य समर्द्धयतु (अथ) तथा च (विश्वम्, आयुम्) सर्वविधमायुः (रयिम्) धनं च सम्पाद्य समर्द्धयतु ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे सर्वैश्वर्यसम्पन्न परमात्मन् ! (नः) हमको (चित्रम्) नाना प्रकार के (अश्विनम्) सर्वत्र व्याप्त होने वाले ऐश्वर्यों से सम्पन्न करें (अथ) और (विश्वम्, आयुम्) सब प्रकार की आयु से (रयिम्) धन से भर पूर करें ॥

भावार्थ—परमात्मा सत्कर्मों द्वारा जिन पुरुषों को ऐश्वर्य के पात्र समझता है उनको सब ऐश्वर्यों से और ज्ञानादि गुणों से परिपूर्ण करता है ॥१०॥

चतुर्थं सूक्तं त्रयोविंशो वर्गश्च समाप्तः ।
चौथा सूक्त और तेईसवां वर्ग समाप्त हुआ ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एकादशर्चस्यपञ्चमसूक्तस्य १—११ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः ॥ आग्नेयो देवता ॥ छन्दः— १, २, ४-६ गायत्री । ३, ७ निचृद् गायत्री । ८ निचृदनुष्टुप् । ९, १० । अनुष्टुप् । ११ विराडनुष्टुप् ॥ स्वरः १-७ षड्जः । ८-११ गान्धारः ॥

सं.—अथ परमात्मनः स्वतः प्रकाशत्वं वर्ण्यते ।

सं.—अब परमात्मा की स्वतः प्रकाशता का वर्णन करते हैं ।

समिद्धो विश्वतस्पतिः पवमानो विराजति ।
प्रीणन्वृषा कनिक्रदत् ॥ १ ॥

समऽइद्धः । विश्वतः । पतिः । पवमानः । वि । राजति । प्रीणन् । वृषा । कनिक्रदत् ॥ १ ॥

पदार्थः—(समिद्धः) योहि सर्वत्र प्रकाशकः (विश्वतस्पतिः) यश्च सर्वथा पतिरस्ति (पवमानः) पावयिता सः (विराजति) सर्वत्र द्योतते विभूत्या प्रकाशते (प्रीणन्) सएवेश्वरः सर्वजनेषु तृप्तिमुत्पादयन् (वृषा) सर्वकामान् वर्षुकः (कनिक्रदत्) स्वविचित्रभावैरुपदिशन् नः पुनातु ॥

पदार्थ—(समिद्धः) जो सर्वत्र प्रकाशमान है (विश्वतस्पतिः) सब प्रकार से जो स्वामी है (पवमानः) पवित्र करने वाला परमात्मा (विराजति) सर्वत्र विराजमान हो रहा है (प्रीणन्) वह सब को आनन्द देता हुआ (वृषा) सब कामनाओं का पूरक (कनिक्रदत्) अपने विचित्र भावों से उपदेश करता हुआ हम को पवित्र करे ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—इस संसार में परमात्मा ही केवल ऐसा पदार्थ है जो स्वसत्ता से विराजमान है अर्थात् जो परसत्ता की सहायता नहीं चाहता अन्य प्रकृति तथा जीव परमात्मसत्ता के अधीन होकर रहते हैं इसी अभिप्राय से परमात्मा को यहाँ समिद्ध कहा गया है अर्थात् स्वप्रकाशरूपता से वर्णन किया गया है ॥१॥

तनूनपात्पवमानः शृङ्गे शिशानो अर्षति ।
अन्तरिक्षेण रारजत् ॥ २ ॥

तनूऽनपात् । पवमानः । शृङ्गे इति । शिशानः । अर्षति । अन्तरिक्षेण । रारजत् ॥ २ ॥

पदार्थः—(तनूनपात्) सर्वशरीराणामधिकरणरूपेण धारकः (पवमानः) सर्वेषां पावयिताऽस्ति (शृङ्गे, शिशानः) योहि कूटस्थनित्योऽस्ति तथा (अर्षति) सर्वं व्याप्य तिष्ठति (अन्तरिक्षेण, रारजत्) यश्च द्यावापृथिव्योरधिकरणरूपेण विराजते स नः पुनातु ॥

पदार्थ—(तनूनपात्) तनूं न पातयतीति तनूनपात् अर्थात् जो सब शरीरों को अधिकरण रूप से धारण करे उसका नाम यहाँ तनूनपात् है वह परमात्मा (पवमानः) सब को पवित्र करने वाला है (शृङ्गे, शिशानः) जो कूटस्थनित्य है और (अर्षति) सर्वत्र व्याप्त है और (अन्तरिक्षेण, रारजत्) जो द्युलोक और पृथिवीलोक के अधिकरण रूप से विराजमान हो रहा है वह परमात्मा हमको पवित्र करे

भावार्थ—इस मन्त्र में परमात्मा को क्षेत्रज्ञरूप से वर्णन किया गया है अर्थात् प्रकृति तथा प्रकृति के कार्य पदार्थों में परमात्मा कूटस्थ रूपता से विराजमान है इस भाव को उपनिषदों में यों वर्णन किया है कि

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

"यः पृथिव्यां तिष्ठन् पृथिव्यामन्तरो यं पृथिवी न वेद यस्य पृथिवी शरीरम्" बृ. ३।७।१ जो परमात्मा पृथिवी में रहता है और पृथिवी जिसको नहीं जानती तथा पृथिवी उसका शरीर और वह शरीरी रूप से वर्तमान है शरीर के अर्थ यहाँ शीर्यते इति शरीरम् जो शीर्णता अर्थात् नाश को प्राप्त हो उसको शरीर कहते हैं, परमात्मा जीव के समान शरीर शरीरी भाव को धारण नहीं करता किन्तु साक्षी रूप से सर्व शरीरों में विद्यमान है भोक्ता रूप से नहीं इसी अभिप्राय से "सम्भोगप्राप्तिरितिचेन्न वैशेष्यात्" १।२।८, ब्रह्मसूत्र में यह वर्णन किया है कि परमात्मा भोक्ता नहीं क्यों कि वह सब शरीरों में विशेष रूप से व्यापक है और गीता में 'क्षेत्रज्ञमपि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषुभारत' इस श्लोक में इस भाव को भली भाँति वर्णन किया है कि सब क्षेत्ररूपी शरीरों में क्षेत्रज्ञ परमात्मा है मालूम होता है कि गीता उपनिषद् तथा ब्रह्मसूत्रों में यह भाव इत्यादि पूर्वोक्त मन्त्रों से आया है ॥२॥

ईळेन्यः पवमानो रयिर्विराजति द्युमान् ।
मधोर्धाराभिरोजसा ॥ ३ ॥

ईळेन्यः । पवमानः । रयिः । वि । राजति । द्युमान् ।
मधोः । धाराभिः । ओजसा ॥ ३ ॥

पदार्थः—(ईळेन्यः) उपासनीयः परमात्मा (पवमानः) शुद्धरूपः (रयिः) सर्वविधसुखप्रदः (मधोर्धाराभिः) आनन्दवृष्टिभिः तथा (ओजसा) प्रतापेन च (विराजति) उत्कर्षप्राप्नोति सच (द्युमान्) ज्योतिःस्वरूपोऽस्ति ॥

पदार्थ—(ईळेन्यः) उपासनीय परमात्मा (पवमानः) जो शुद्धस्वरूप है (रयिः) "राति सुखमिति रयिः=जो सब प्रकार के सुखों

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

को देने वाला है" वह (मधोर्धाराभिः) आनन्द की वृष्टि से तथा (ओजसा) प्रभावशाली प्रताप से (विराजति) विराजमान है और वह परमात्मा (द्युमान्) प्रकाशस्वरूप है।

भावार्थ—उपासक को चाहिये कि वह उपास्यदेव की उपासना करे जो स्वप्रकाश और सबको पवित्र करने वाला तथा आनन्द की वृष्टि से सबको आनन्दित करता है वही धारणाध्यानादि योगवृत्तियों से साक्षात् करने योग्य है ॥३॥

बर्हिः प्राचीनमोजसा पवमानः स्तृणन्हरिः ।
देवेषु देव ईयते ॥ ४ ॥

बर्हिः । प्राचीनम् । ओजसा । पवमानः । स्तृणन् । हरिः ।
देवेषु । देवः । ईयते ॥ ४ ॥

पदार्थः—(बर्हिः) सर्वोत्कृष्टः परमात्मा (ओजसा) स्वतेजसा सर्वम् (पवमानः) पुनानः (प्राचीनम्) प्रवाह रूपेण संसारम् (स्तृणन्) कार्यरूपेण विपरिणमयन् (हरिः) अन्ते स्वस्मिन् अन्तर्भावयति (देवेषु) सर्वदिव्यवस्तुषु (देवः) सर्वाधिकद्योतमानः सएव ध्यानेन (ईयते) साक्षात्क्रियते ॥

पदार्थ—(बर्हिः) "बृंहतीति बर्हिः = सब से बड़ा" परमात्मा जो (ओजसा) अपने प्रकाश से सबको (पवमानः) पवित्र करता है और (प्राचीनम्) प्रवाह रूप से अनादि संसार को (स्तृणन्) कार्यरूप करता हुआ (हरिः) अन्त में "हरतीति हरिः" अपने में लय कर लेता है (देवेषु) सब दिव्य वस्तुओं में (देवः) "दीव्यतीति देवः = जो सर्वोपरि दीप्तिमान् है वह ध्यान द्वारा (ईयते) साक्षात्कार किया जाता है

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—वह देव जो सब दिव्य वस्तुओं में दिव्य स्वरूप है वही एक मात्र उपासनीय है अन्य नहीं। इस देव शब्द की व्याख्या "एषो देवः प्रदिशोनु सर्वा" यजु० ३२ । ४ ॥ इस वेद वाक्य में स्पष्ट रीति से पायी जाती है और "एको देवः सर्वभूतेषु गूढः" श्वे०-६।११। इत्यादि उपनिषद्वाक्यों में इसी देव का वर्णन पाया जाता है। इसी देवका इस मन्त्र में जगत् की उत्पत्ति, स्थिति तथा प्रलय का एकमात्र हेतु कथन किया है। ज्ञात होता है कि "यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति तद् विजिज्ञासस्व तद् ब्रह्म" तै०-३।१। इत्यादि वाक्यों में जगत् की उत्पत्ति, स्थिति तथा प्रलय का हेतु जो ब्रह्म को माना गया है वह इसी वेदमन्त्र के आधार पर है। केवल भेद इतना है कि उपनिषद्वाक्यों में ब्रह्म शब्द है यहां बर्हि शब्द है ब्रह्म और बर्हिः दोनों एकार्थवाची शब्द हैं। क्योंकि दोनों "बृहि वृद्धौ" इस धातु से सिद्ध होते हैं।

जिन लोगों ने बर्हिः के माने कुशासन और हरिः के माने यहां हरे रङ्गवाले सोम के किये हैं उन्हों ने अत्यन्त भूल की है। क्योंकि उपक्रम उपसंहार में यहां परमात्मा का वर्णन है और परमात्मवाची शब्द ही इस मण्डल में अधिकता से पाये जाते हैं ॥४॥

उदार्तौर्जिहते बृहद्द्वारो देवीर्हिरण्ययीः ।
पवमानेन सुष्टुताः ॥ ५ ॥ २४ ॥

उत् । आर्तैः । जिहते । बृहत् । द्वारः । देवीः । हिरण्ययीः । पवमानेन सुऽस्तुताः ॥ ५ ॥

पदार्थः—(देवीः, हिरण्ययीः) प्रकृतेर्दिव्यशक्तयः धनाद्यैश्वर्यदात्र्यः (पवमानेन) पूजार्हपरमात्मना सह (सुष्टुताः)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उपवर्णिताः (बृहद्द्वारः) ऐश्वर्यमूलानि भवन्ति (आतैः) तद्वि-ज्ञानेन विज्ञानिनः दिग्भिः (उद्, जिहते) सर्वत्र व्याप्नुवन्ति ॥

पदार्थ—(देवीः, हिरण्ययीः) प्रकृति की दिव्य शक्तियें जो धनादि ऐश्वर्यों के देने वाली हैं वह (पवमानेन) पूज्य परमात्मा के साथ (सुष्टुताः) वर्णन की हुयीं (बृहद्द्वारः) ऐश्वर्य का मूल होती हैं और (आतैः) उनके विज्ञान से विज्ञानी लोग दिशाओं द्वारा (उद् जिहते) सर्वत्र फैल जाते हैं ॥

भावार्थ—जो लोग प्रकृति पुरुष की विद्या को जानते हैं कि परमात्मा निमित्त कारण और प्रकृति संसार का उपादान कारण है अर्थात् प्रकृति में ही नाना प्रकार की विद्याओं के बीज भरे पड़े हैं उस के तत्त्व ज्ञान से वे लोग सब दिशाओं में फैल सकते हैं तात्पर्य यह है कि अभ्युदय तथा निःश्रेयस दोनों के विज्ञान से होते हैं एक के विज्ञान से नहीं ॥५॥१४॥

अथ परमात्मन उपासनार्थमुषःकालस्य महत्त्वं वर्णयतिः—

अब पूर्वोक्त परमात्मा की उपासनार्थ उषःकाल का महत्व कथन करते हैं।

सुशिल्पे बृहती मही पवमानो वृषण्यति ।
नक्तोषासा न दर्शते ॥ ६ ॥

सुऽशिल्पे इति सुऽशिल्पे । बृहती इति । मही इति । पवमानः । वृषण्यति । नक्तोषसा । न । दर्शते इति ॥६॥

पदार्थः—(नक्तोषासा) रात्रिरुषःकालश्च (दर्शते) ईशोपासनाहौस्तः (सुशिल्पे) सुष्ठु कलाकौशलादिविद्यासाध-नाहौ चस्तः (बृहती) महान्तौ (मही) पूज्यौ सफलनीयौ

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चस्तः अत्र च (पवमानः) उपास्यमानः परमात्मा (वृषण्यति) सर्वान्कामान्ददाति अभक्तांश्च (न) न ददाति ॥

पदार्थ—(नक्तोषासा) रात्रि और उषःकाल (दर्शते) परमात्मा की उपासना करने योग्य हैं (सुशिल्पे) और सुन्दर २ कला कौशलादि विद्याओं के अनुसन्धान करने योग्य हैं (बृहती) बड़े और (मही) पूज्य अर्थात् सफल करने योग्य हैं इनकालों में (पवमानः) उपास्यमान परमात्मा (वृषण्यति) सब कामनाओं को देता है और जो इस प्रकार के उपासक नहीं उनकी कामनाओं को (न) नहीं पूर्ण करता।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि उष काल अपने स्वाभाविक धर्म से ऐसा उत्तम है कि ऐसा अन्य कोई काल नहीं, इसमें मनुष्य की ईश्वरोपासना की ओर स्वाभाविक रुचि होती है इस लिये इस ब्रह्म मुहूर्त का वर्णन वेदों में बहुधा आता है इसी भाव को लेकर मनुआदि ग्रन्थों में ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत, इत्यादि कहा है कि ब्रह्म मुहूर्त में उठे और परमात्मा का चिन्तन करे ॥६॥

उभा देवा नृचक्षसा होतारा दैव्या हुवे ।
पवमान इन्द्रो वृषा ॥ ७ ॥

उभा । देवा । नृऽचक्षसा । होतारा । दैव्या । हुवे ।
पवमानः । इन्द्रः । वृषा ॥ ७ ॥

पदार्थः—(इन्द्रः) अन्नाद्यैश्वर्यस्य दाता परमेश्वरः (वृषा) सर्वकामप्रदः (पवमानः) यः सर्वस्य पवित्रकारकः तम् (उभा) उभौ (देवा) दिव्यशक्तिशालिनौ ज्ञानयोगकर्मयोगौ (नृचक्षसा) ईश्वरप्रत्यक्षकारकौ (होतारा) अद्भुतसामर्थ्यप्रदौ (दैव्या) यौच दिव्यशक्तिसम्पन्नौ स्तः ताभ्यामहम् (हुवे) ईश्वरं साक्षात्करोमि ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(इन्द्रः) इरामन्नाद्यैश्वर्यं ददातीतीन्द्रः परमात्मा जो इरा अन्नादि ऐश्वर्यों को देय उस का नाम इन्द्र है और (वृषा) वा इन्द्ररूप परमात्मा वर्षतीतिवृषा जो सब कामनाओं को देने वाला है (पवमानः) सब को पवित्र करने वाला है उस परमात्मा को (उभा) दोनों (देवा) दिव्य शक्तियों वाले जो कर्म योग और ज्ञानयोग हैं (नृचक्षसा) और ईश्वर के साक्षात् कराने वाले (होतारा) अपूर्व सामर्थ्य देने वाले ज्ञान तथा कर्म द्वारा (दैव्या) जो दिव्य शक्ति सम्पन्न हैं उनसे मैं (हुवे) परमात्मा का साक्षात्कार करता हूं ॥

भावार्थ—ज्ञानयोगी और कर्मयोगी पुरुष जैसा परमात्मा का साक्षात्कार कर सकता है इस प्रकार अन्य कोई भी नहीं कर सकता क्योंकि कर्म द्वारा मनुष्य शक्ति बढ़ा कर ईश्वर की दया का पात्र बनता है और ज्ञान द्वारा उसका साक्षात्कार करता है इसी अभिप्राय से "नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो नमेधया न बहुना श्रुतेन यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुते तनुंस्वाम्" कठ. २। २३ ॥ अर्थात् बहुत पढ़ने पढ़ाने से परमात्मा का साक्षात्कार नहीं होता किन्तु जब पुरुष सत्कर्मी बनकर अपने आप को ईश्वर के ज्ञान का पात्र बनाता है तो वह उसको लाभ करता है। पात्र से तात्पर्य यहां अधिकारी का है और वह अधिकार ज्ञान तथा कर्म दोनों से उत्पन्न होता है केवल ज्ञान से नहीं इसका नाम समसमुच्चय है अर्थात् ज्ञान योग तथा कर्मयोग दोनों साधनों से सम्पन्न होने पर जिज्ञासु परमात्मा को लाभ करता है अन्यथा नहीं।

जिन लोगों ने क्रमसमुच्चय मान कर केवल ज्ञान की ही मुख्यता सिद्ध की है उन के मत में वेद का कोई प्रमाण ऐसा नहीं मिलता जो कर्म से ज्ञान को बड़ा व मुख्य सिद्ध करे क्योंकि "कुर्वन्नेवेह कर्माणि" यजुः ४०-२ इत्यादि मन्त्रों में कर्म का वर्णन यावदायुष कर्तव्यत्वेन वर्णन किया है और जो "तमेव विदित्वाति मृत्युमेति" यजुः ३१।१८।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इस प्रमाण को देकर कर्म की मुख्यता का खण्डन करते हैं सो ठीक नहीं क्यों कि इस में भी विदित्वा और एति ये दोनों क्रिया हैं अर्थात् उसको जान कर प्राप्त होते हैं ये भी दोनों क्रिया हैं इससे सिद्ध है कि जानना भी एक प्रकार की क्रिया ही है इस लिये ज्ञायतेऽनेनेति ज्ञानम् ऐसी व्युत्पत्ति करने पर ज्ञान भी एक कर्म की विशेष अवस्था ही सिद्ध होता है कुछ भिन्न वस्तु नहीं इसी अभिप्राय से "न तस्य कार्यं करणं च विद्यते न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते । परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च" श्वे.६।८। इत्यादि उपनिषद् वाक्यों में क्रिया की प्रधानता पाई जाती है क्योंकि "ज्ञानबलाभ्यां सहिता क्रिया ज्ञानबलक्रिया" अर्थात् ज्ञान और बल के सहित जो क्रिया उसका नाम ज्ञान बल क्रिया है और व्याकरण का सामान्य नियम ये पाया जाता है कि अप्रधान में तृतीया होती है और ज्ञान बल में तृतीया है इस लिये क्रिया से उक्त वाक्य में कर्म की प्रधानता पाई जाती है। अथवा यों कहो कि "एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति" सांख्य योग अर्थात् ज्ञानयोग और कर्म योग दोनों सूक्ष्म विचार करने में एक ही हैं अर्थात् अवबोधात्मक कर्म का नाम ज्ञान है और केवल अनुष्ठानात्मक कर्म का नाम कर्म है और जो मुक्ति का साक्षात् साधन अवबोधात्मक कर्म है इस लिये वहाँ भी ज्ञान कर्म का समुच्चय है अर्थात् मिलाप है दोनों मिल कर ही मुक्ति के साधन हैं एक नहीं ॥७॥

भारती पवमानस्य सरस्वतीळा मही ।
इमं नो यज्ञमागमन्तिस्रो देवीः सुपेशसः ॥ ८ ॥

भारती । पवमानस्य । सरस्वती । इला । मही । इमम् । नः । यज्ञम् । आ । गमन् । तिस्रः । देवीः । सुऽपेशसः ॥८॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(भारती) ईश्वरविषयकबुद्धिः (सरस्वती विज्ञानबुद्धिः इला, मही) सर्वपूज्या बुद्धिः (तिस्रः) इमास्तिस्रोऽपि (सुपेशसः, देवीः) सुस्वरूपा देव्यः (पवमानस्य अखिलजनशोधकस्येश्वरस्य (इमम्, यज्ञम्) एतंयज्ञमभि (नः अस्मभ्यम् (आगमन्) आगत्य प्राप्नुयुः ॥

पदार्थ—(भारती) विभर्त्तीति भरतस्तस्येयं भारती=ईश्वरविषयिणी बुद्धि (सरस्वती) सरोविद्यतेऽस्या इति सरस्वती विविधज्ञानविषयिणी बुद्धि और (इळा, मही) सर्वपूज्या बुद्धि (तिस्रः,) ये तीनों प्रकार की (सुपेशसः, देवीः) सुन्दरं बुद्धियें (पवमानस्य) सब को पवित्र करने वाले परमात्मा के (इमं, यज्ञम्) इस ज्ञानरूपी यज्ञ में (नः) हमको (आगमन्) प्राप्त हों ॥

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि हे पुरुषो ! तुम ज्ञान यज्ञ में विद्या प्राप्ति के लिये प्रार्थना करो । इसी अभिप्राय से उक्त मन्त्र में विद्याविधायक भारती, सरस्वती और इला ये नाम आये हैं। भारती, सरस्वती और विद्या ये एकार्थवाची शब्द हैं । इस प्रकार परमात्माने विद्यावृद्धि के लिये जीवों की प्रार्थना द्वारा उपदेश किया है। जैसा कि " धियोयोनः प्रचोदयात् " इस वेदमन्त्र में विद्या वृद्धि का उपदेश है ऐसा ही उक्तमन्त्र में विद्या वृद्धि के लिये उपदेश है ॥८॥

त्वष्टा॑रमग्र॒जां गो॒पां पु॑रो॒यावा॑न॒मा हु॑वे ।
इन्दु॒रिन्द्रो॑ वृषा॒ हरिः॒ पव॑मानः प्र॒जाप॑तिः ॥ ९ ॥

त्वष्टा॑रम् । अ॒ग्र॒ऽजाम् । गो॒पाम् । पु॒रः॒ऽयावा॑नम् । आ । हु॒वे॒ । इन्दुः॑ । इन्द्रः॑ । वृषा॑ । हरिः॑ । पव॑मानः । प्र॒जाऽप॑तिः ॥९॥

पदार्थः—(त्वष्टारम्) प्रलयकाले परमाणुरूपेण सृष्टेः

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कर्तारम् (अग्रजाम्) सर्वेषामादिभूतम् (गोपाम्) सर्वेषां रक्षतारम् (पुरोयावानम्) सर्वाग्रणीदेवम् (आहुवे) वयमुपास्यत्वेन मन्येमहि सएव (इन्दुः) प्रेम्णा सर्वेषां क्लेदयिता (इन्द्रः) ऐश्वर्यवान् (वृषा) सर्वकामान् वर्षुकः (हरिः) दुःखानांहर्ता (पवमानः) पवित्रात्मा (प्रजापतिः) अखिलजनरक्षकश्चास्ति ॥

पदार्थ—(त्वष्टारम्) त्वक्षतीति त्वष्टा = जो इस सृष्टि को प्रलय काल में परमाणुरूप कर देता है उसका नाम त्वष्टा है (अग्रजाम्) अग्रेजाता अग्रजा = जो सब से प्रथम हो अर्थात् सबका आदिमूल कारण हो उसका नाम अग्रजा है (गोपाम्) गोपायतीति गोपाः = जो सर्वरक्षक हो उसका नाम यहां गोपा है (पुरोयावानम्) जो सर्वाग्रणी है उस देव को (आहुवे) हम उपास्य समझें वही देव (इन्दुः) सबको प्रेमभाव से आर्द्र करने वाला (इन्द्रः) परमैश्वर्यवाला (वृषा) सब कामनाओं की वर्षा करने वाला (हरिः) और सब दुःखों को हर लेने वाला (पवमानः) पवित्रात्मा और (प्रजापतिः) सब प्रजा का पालन करने वाला है ।

भावार्थ—इस मन्त्र में परमात्मा ने सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलयकर्ता पुरुष विशेष का इस ज्ञान यज्ञ में उपास्य रूप से निर्देश किया है और त्वष्टादि द्वितीयान्त इस लिये हैं कि उपासनात्मक क्रिया के ये सब कर्म हैं अर्थात् इनकी उपासना उक्त यज्ञ में की जाती है ॥९॥

अथोक्तज्ञानयज्ञ उपासनीयस्य परमात्मनो गुणा वर्ण्यन्तेः—

अब उक्त यज्ञ में उपासनीय परमात्मा के गुण कथन करते हैं:—

वनस्पतिं पवमानमध्वा समङ्ग्धि धारया ।
सहस्रवल्शं हरितं भ्राजमानं हिरण्ययम् ॥ १० ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वनस्पतिम् । पवमानम् । मध्वा । समङ्धि । धारया ।
सहस्रवल्शम् । हरितम् । भ्राजमानम् । हिरण्ययम् ॥१०॥

पदार्थः—(पवमान) हे सर्वस्य पावयितः परमात्मन् भवान् (मध्वा, धारया) सुष्ठुवर्षेण (वनस्पतिम्) इमं वनस्पतिम् (समङ्ग्धि) सिञ्चतु कथम्भूतम् (सहस्रवल्शम्) अनन्तशाखम् (हरितम्) हरितवर्णम् (भ्राजमानम्) देदीप्यमानम् (हिरण्ययम्) भास्वरम् तं सिञ्चतु ॥

पदार्थ—(पवमान) हे सबको पवित्र करने वाले परमात्मन् आप (मध्वा, धारया) सुवृष्टि से (वनस्पतिम्) इस वनस्पति को (समङ्ग्धि) सींचें जो वनस्पति (सहस्रवल्शं) अनन्त प्रकार की (हरितं) हरे रङ्गवाली है, (भ्राजमानं) नाना प्रकार से देदीप्यमान और (हिरण्ययं) सुन्दर ज्योति वाली है ॥

भावार्थ—परमात्मा से प्रार्थना है कि वह चराचर ब्रह्माण्ड वनस्पति को सिञ्चन करे । इस स्वभावोक्ति अलङ्कार द्वारा परमात्मा वृष्टिकर्तृत्व भावका निरूपण किया है । इसी प्रकार अन्यत्र भी वेदमन्त्र में "कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः" अथ० ३ । ६ । २७ । ५ इत्यादि स्थलों में वनस्पतिको परमात्मा के ग्रीवास्थानी वर्णन किया है इसी प्रकार वनस्पति को विराट्स्वरूप की शोभा वर्णन करते हुए ईश से स्वभावसिद्ध प्रार्थना है ॥१०॥

विश्वे देवाः स्वाहाकृतिं पवमानस्या गत ।
वायुर्बृहस्पतिः सूर्योऽग्निरिन्द्रः सजोषसः ॥११॥ २५॥

विश्वे । देवाः । स्वाहाऽकृतिम् । पवमानस्य । आ । गत ।
वायुः । बृहस्पतिः । सूर्यः । अग्निः । इन्द्रः । सऽजोषसः ॥११॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(पवमानस्य) सर्वपूज्यपरमात्मनः (स्वाहाकृतिम्) सुवाचम् (वायुः) सर्वविधविद्याज्ञः (बृहस्पतिः) सुवक्ता (सूर्यः) दार्शनिकतत्त्वप्रकाशकः (अग्निः) प्रतिभाशाली (इन्द्रः) विद्यात्मकैश्वर्यवान् (विश्वे, देवाः) इमे सर्वे विद्वांसः (सजोषसः) मिथः सखायः (आगत) अस्मिन् ज्ञानयज्ञे आगच्छन्तु ॥

पदार्थ—(पवमानस्य) सर्वपूज्य परमात्मा की (स्वाहाकृतिं) सुन्दरवाणी को (वायुः) सर्व विद्याओं में गति वाला (बृहस्पतिः) सुन्दर वक्ता (सूर्य्यः) दार्शनिक तत्त्वों का प्रकाशक (अग्निः) प्रतिभा शाली (इन्द्रः) विद्यारूपी ऐश्वर्य्यवाला (विश्वे, देवाः) ये सब विद्वान् (सजोषसः) परस्पर प्रेमभाव रखने वाले (आगत) इस ज्ञान रूपी यज्ञ में आकर उपस्थित हों ।

भावार्थ—इस सूक्त के उपसंहार में विद्वानों की सङ्गति कथन की है कि उक्तगुणसम्पन्न विद्वान् लोग ज्ञानयज्ञ में आकर विविधप्रकार के ज्ञानों को उपलब्ध करें । तात्पर्य्य यह है कि इस मन्त्र में ज्ञानयज्ञ को सर्वोपरि वर्णन किया है । वस्तुतः ज्ञानयज्ञ सर्वोपरि है । इसी अभिप्राय से गीता में कहा है कि "श्रेयान् द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परन्तप !" हे शत्रुतापक अर्जुन ! द्रव्यमय यज्ञों से ज्ञानयज्ञ श्रेष्ठ है ॥११॥

इति पञ्चमं सूक्तं पञ्चविंशो वर्गश्च समाप्तः ॥

५वां सूक्त और २५ वां वर्ग समाप्त हुआ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ नवर्चस्य षष्ठसूक्तस्य—

१-९ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः-१, २, ७ निचृद् गायत्री । ३-६, ९ गायत्री । ८ विराड् गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मनः सकाशाद्बलमाह्लादश्च प्रार्थ्यते:—

अब परमात्मा से बल और आह्लाद की प्रार्थना की जाती है :—

मन्द्रया सोम धारया वृषा पवस्व देवयुः ।
अव्यो वारेष्वस्मयुः ॥ १ ॥

मन्द्रया । सोम । धारया । वृषा । पवस्व । देवऽयुः ।
अव्यः । वारेषु । अस्मऽयुः ॥ १ ॥

पदार्थः—(सोम) हे शान्त्यादिगुणसम्पन्न परमात्मन् भवान् (मन्द्रया) आह्लादिकया (धारया) वृष्ट्या (पवस्व) अस्मान्पुनातु यतोभवान् (वृषा) सर्वकामनाप्रदः (देवयुः) देवप्रियः (वारेषु, अव्यः) पृथ्व्यादिविविधलोकेषु व्यापकश्चास्ति भवान् (अस्मयुः) अस्मान्सदेच्छन् प्रीणातु ॥

पदार्थ—(सोम) हे शान्त्यादिगुणसम्पन्न परमात्मन् ! आप (मन्द्रया) आह्लाद करने वाली (धारया) वृष्टि से (पवस्व) हमको पवित्र करें क्योंकि आप (वृषा) सब कामनाओं के देने वाले हैं। (देवयुः) देवताओं के प्रिय हैं और (वारेषु, अव्यः) पृथिव्यादि लोक लोकान्तरों में व्यापक हैं आप (अस्मयुः) हमको प्राप्त होकर आनन्दित करें।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा इस ब्रह्माण्ड में सर्वत्र विराजमान है। दैवीसम्पत्तिवाले लोग उसको पा सकते हैं। इस अभिप्राय से परमात्मा को इस मन्त्र में देवप्रिय कथन किया गया है। वस्तुतः परमात्मा न किसी का प्रिय और न किसी का द्वेषी है ॥१॥

अभि त्यं मद्यं मदामिन्दविन्द्र इति क्षर।
अभि वाजिनो अर्वतः ॥२॥

अभि। त्यम्। मद्यम्। मदम्। इन्दो इति। इन्द्रः। इति। क्षर। अभि। वाजिनः। अर्वतः ॥२॥

पदार्थः—(इन्दो) हे प्रेममय! परमात्मन्! भवान् (त्यं, मदं, मद्यम्) तमाह्लादजनकं प्रेममयं मद्यम् (अभिक्षर) वर्षतु यः (अभि, वाजिनः) अखिलबलकारकवस्तुषु मदर्हः (अर्वतः) यश्चैश्वर्येण सर्वत्रव्याप्तिं कारयति ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे प्रेममय (इन्द्र) परमात्मन्, आप (त्यं, मदं, मद्यम्) उस आह्लाद जनक अपने प्रेममय मद की (अभि क्षर) वृष्टि करें जो (अभि, वाजिनः) सब बलकारक वस्तुओं में से हमारे योग्य है (अर्वतः) और जो ऐश्वर्य द्वारा सर्वत्र व्याप्त करानेवाला है ॥

भावार्थ—इस मन्त्र में सर्वोपरि हर्षजनक परमात्मा के प्रेम की प्रार्थना की गयी है ॥२॥

अभि त्यं पूर्व्यं मदं सुवानो अर्ष पवित्र आ।
अभि वाजमुत श्रवः ॥३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अभि । त्यम् । पूर्व्यम् । मदम् । सुवानः । अर्ष । पवित्रे । आ । अभि । वाजम् । उत । श्रवः ॥३॥

पदार्थः—भवान् (त्यम्, पूर्व्यम्, मदम्) तं नित्यानन्दम् (सुवानः) उत्पादयति येन जनः शश्वत्प्रीयते अतो भवान् (अभि, वाजम्) सर्वविधबलम् (उत) तथा (श्रवः) कीर्तिम् (अर्ष) मह्यम्प्रयच्छ ॥

पदार्थ—(पवित्र) हे सबको पावन करने वाले परमात्मन्! आप (त्यं, पूर्व्यं, मदं) उस नित्यानन्द को (सुवानः) प्रदान करने वाले हैं जिससे मनुष्य सदैव के लिये आनन्दलाभ करता है इसलिये आप (अभि, वाजं) सब प्रकार का बल (उत) और (श्रवः) ऐश्वर्य हमको (अर्ष) प्रदान करें ॥३॥

अनु द्रप्सास इन्दव आपो न प्रवतासरन् ।
पुनाना इन्द्रमाशत ॥४॥

अनु । द्रप्सासः । इन्दवः । आपः । न । प्रऽवता । असरन् । पुनानाः । इन्द्रम् । आशत ॥४॥

पदार्थः—(द्रप्सासः) गमनशील ईश्वरः (इन्दवः) ऐश्वर्यसम्पन्नः (अनु) सर्वत्र अश्नुते (प्रवता, आपः, न) स्यन्दमानं जलमिव (असरन्) सरति स एव (पुनानाः) लोकं शोधयन् (इन्द्रम्) ऐश्वर्यम् (आशत्) ददाति ।

पदार्थ—(द्रप्सासः) गतिशील परमात्मा (इन्दवः) ऐश्वर्यसम्पन्न (अनु) सर्वत्र व्याप्त हो रहा है (प्रवता, आपः, न) बहते हुए जल

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

के समान (असरन्) गति करता है । उक्त परमात्मा (पुनानाः) पवित्र करता हुआ (इन्द्रं) ऐश्वर्य्य को (आशत) देता है ।

भावार्थ—जिस प्रकार सर्वत्र बहते हुए जल इस पृथिवी को नाना प्रकार के लतागुल्मादिकों से सुशोभित करते हैं इसी प्रकार परमात्मा अपनी व्यापकता से प्रत्येक प्राणों में आह्लाद उत्पन्न करता है ॥४॥

यमत्यमिव वाजिनं मृजन्ति योषणो दश ।
वने क्रीळन्तमत्यविम् ॥५॥२६॥

यम् । अत्यम्ऽइव । वाजिनम् । मृजन्ति । योषणः । दश । वने । क्रीलन्तम् । अतिऽअविम् ॥५॥२६॥

पदार्थः—(यम्, अत्यम्) यं सर्वगं परमात्मानम् (योषणः, दश) दश प्रकृतयः (वाजिनम्, इव) जीवात्मानमिव (मृजन्ति) शोधयन्ति स जीवात्मा योहि (वने) शरीररूपेवने (क्रीलन्ति) विहरति तथा च (अत्यविम्) इन्द्रियग्रामात्परोस्ति ॥

पदार्थ—(यं) जिस (अत्यं) सर्वव्यापक परमात्मा को (योषणः, दश) दश प्रकार की प्रकृतियें (वाजिनम्, इव) जीवात्मा के समान (मृजन्ति) शोभायुक्त करती हैं वह जीवात्मा जो (वने) शरीर रूपी वन में (कीळन्ति) कीड़ा कर रहा है और (अत्यविम्) इन्द्रियसंघात से परे है ।

भावार्थ—जिस प्रकार पांच ज्ञानेन्द्रिय और पांच कर्मेन्द्रिय ये दशो मिल कर जीवात्मा की महिमा को बढ़ाते हैं इसी प्रकार पांच सूक्ष्म भूत और स्थूलभूत ये दोनों प्रकृतियें मिल कर परमात्मा के महत्व को वर्णन करते हैं कई एक लोगों ने दश के अर्थ यहां दश उँगुलियें दी हैं उनके मत में सोम रस दश उँगुलियों से लपेट कर खाया जाता है इस

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लिये दश से उन्हों ने दश उँगलियें ली हैं पहले तो ये बात अन्यथा कि सोमरस उँगुलियों से खाया जाता है क्योंकि सोमरस पीने की चीज है खाने की नहीं, अन्य युक्ति ये है कि इस मण्डल के प्रथम सूक्त मं० ७ में गृभ्णन्ति योषणा दश ये पाठ आया है जिस से दश इन्द्रियों का ग्रहण किया गया है उँगुलियों का नहीं ॥५॥२६॥

तं गोभिर्वृषणं रसं मदाय देववीतये ।
सुतं भराय सं सृज ॥६॥

तम् । गोभिः । वृषणम् । रसम् । मदाय । देववीतये ।
सुतम् । भराय । सं । सृज ॥६॥

पदार्थः—(तम्) पूर्वोक्तं परमात्मानम् (वृषणम्) कामपूरकं (मदाय) आह्लादाय (रसम्) रसरूपम् (देववीतये) ऐश्वर्यमुत्पादयितुम् (भराय) धारयितुम् (सुतम्) स्वतः सिद्धं (संसृज) ध्यानविषयीकुरुत ॥

पदार्थ—(तम्) उक्त परमात्मा को (वृषणम्) जो कामनाओं का देने वाला है (मदाय) आह्लाद के लिये (रसम्) रस रूप है (देववीतये) ऐश्वर्य उत्पन्न करने के लिये (भराय) धारण करने के लिये (सुतम्) स्वतः सिद्ध उस परमात्मा को (संसृज) ध्यान का विषय बनाओ ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि हे जीव तू सर्वोपरि ब्रह्मानन्द के देने वाले ब्रह्म को एकमात्र लक्ष्य बनाकर उस के साथ तू अपनी चित्तवृतियों का योग कर इसका नाम आध्यात्मिक योग है रसके अर्थ यहां ब्रह्म के हैं किसी रस विशेष के नहीं क्योंकि "रसो वै सः रसं ह्येवायं लब्ध्वा आनन्दी भवति" तै० २ । ७ ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अर्थात् वह ब्रह्म आनन्द स्वरूप है और उसके आनन्द को लाभ करके जीव आनन्दित होता है ॥६॥

देवो देवाय धार्येन्द्राय पवते सुतः ।
पयो यदस्य पीपयत् ॥७॥

देवः । देवाय । धार्या । इन्द्राय । पवते । सुतः । पयः । यत् । अस्य । पीपयत् ॥७॥

पदार्थः—(देवः) प्रकाशस्वरूपः परमात्मा (देवाय) दिव्यशक्तये (इन्द्राय) ऐश्वर्यवते जिज्ञासवे (धारया) आनन्द वृष्ट्या (पवते) पवित्रीकरणं धारयति (सुतः) आनन्दस्याविर्भावकः सोऽस्ति (यत्) यतः (अस्य) इमं जिज्ञासुम् (पयः) पानार्हमानन्दं (पीपयत्) पाययति अत आविर्भावक आनन्दस्यास्ति ॥

पदार्थ—(देवः) दीव्यतीति देवः प्रकाशस्वरूप परमात्मा (देवाय) दिव्यशक्तिधारी (इन्द्राय) परमऐश्वर्य वाले जिज्ञासु के लिये (धारया) आनन्द की वृष्टि से (पवते) पवित्र करता है (सुतः) आनन्दों का आविर्भाव करने वाला है (यत्) जो (अस्य) इस पूर्वोक्त जिज्ञासु को (पयः) पानार्ह आनन्द को (पीपयत्) पिलाता है इसलिये वह आनन्दों का आविर्भाव करने वाला है ॥

भावार्थ—परमात्मा ही सब आनन्दों का आविर्भाव करनेवाला है । वह जिन पुरुषों को ब्रह्मानन्द का पात्र समझता है उनको आनन्द प्रदान करता है, यहां देव शब्द के अर्थ परमात्मा और दूसरे देव शब्द के अर्थ जिज्ञासु के—"स्याच्चैकस्य ब्रह्मशब्दवत्" ब्र० सू० २ । ३ । ५ । इस सूत्र से ब्रह्मशब्द के समान हैं अर्थात् "तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तपो ब्रह्मेति" तै० ३। २। इस वाक्य में पहले ब्रह्म शब्द के अर्थ ईश्वर के हैं, दूसरे ब्रह्मशब्द के अर्थ तप के हैं, जिस प्रकार इसमें एक ही स्थान में दो अर्थ हो जाते हैं उसी प्रकार उक्त मन्त्र में देव शब्द के दो अर्थ करने में कोई दोष नहीं ॥ ७ ॥

आत्मा यज्ञस्य रंह्या सुष्वाणः पवते सुतः ।
प्रत्नं नि पाति काव्यम् ॥८॥

आत्मा । यज्ञस्य । रंह्या । सुस्वानः । पवते । सुतः । प्रत्नम् । नि । पाति । काव्यम् ॥८॥

पदार्थः—पूर्वोक्तः परमात्मा (यज्ञस्य, आत्मा) यज्ञस्य आत्माऽस्ति (सुष्वाणः) सर्वस्य प्रेरकः तथा (सुतः) आनन्दस्य आविर्भावयिता (रंह्या) सर्वत्रगत्या (पवते) पुनाति, स एवं (प्रत्नं, काव्यम्) प्राचीनं काव्यम् (निपाति) निरन्तं रक्षति ॥

पदार्थ—पूर्वोक्त परमात्मा (यज्ञस्य, आत्मा) यज्ञ का आत्मा है (सुष्वाणः) सर्वप्रेरक और (सुतः) आनन्द का आविर्भावक (रंह्या) सर्वत्र गति रूप से (पवते) पवित्र करता है वही परमात्मा (प्रत्नं, काव्यम्) प्राचीन काव्य की (निपाति) रक्षा करता है ॥

भावार्थ—परमात्मा सब यज्ञों का आत्मा है अर्थात् ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, ध्यानयज्ञ, ज्ञानयज्ञ इत्यादि कोई यज्ञ भी उसकी सत्ता के विना नहीं हो सकता इसी अभिप्राय से ब्रह्मज्ञान की कई एक पुस्तकों में परमात्मा को अधियज्ञ रूप से वर्णन किया है, जो इस मन्त्र में काव्य शब्द आया है वह 'कवते इति कविः' इस व्युत्पत्ति से ज्ञानी का अभिधायक है और 'कवेः कर्म काव्यम्' इस प्रकार सर्वज्ञ परमात्मा की रचना रू

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वेद का नाम यहां काव्य है किसी आधुनिक काव्य का नहीं, तात्पर्य यह है कि वह अपने ज्ञानरूपी, वेद-काव्य द्वारा उपदेश करके सृष्टि की रक्षा करता है ॥ ८ ॥

एवा पुनान इन्द्रयुर्मदं मदिष्ठ वीतये ।
गुहा चिद्दधिषे गिरः ॥९॥२७॥

एव । पुनानः । इन्द्रऽयुः । मदम् । मदिष्ठ । वीतये । गुहा । चित् । दधिषे । गिरः ॥ ९ ॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (गुहा) भवान् स्वज्ञानमय्यां गुहायां (गिरः) वेदवाचः (दधिषे) धारयति (चित्) यतः (इन्द्रयुः) भवान् ऐश्वर्यमभिलाषुकः अतः (वीतये) ऐश्वर्याय ताभिः (मदं, मदिष्ठ) आनन्दं वर्द्धयतु ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (गुहा) आपने अपनी ज्ञानरूपी गुहा में (गिरः) वेदरूपी वाणियों को (दधिषे) धारण किया है (चित्) क्योंकि (इन्द्रयुः) आप ऐश्वर्य के चाहनेवाले हैं इसलिये (वीतये) ऐश्वर्य के लिये (मदं, मदिष्ठ) उनके द्वारा हमारे आनन्द को बढ़ाइये ॥

भावार्थ—परमात्मा के ज्ञान में वेद सदैव रहते हैं आदि सृष्टि में परमात्मा लोकोपकार के लिये उनका आविर्भाव करता है इसी अभिप्राय से यहां काव्य अर्थात् वेद को प्रत्न अर्थात् सनातन विशेषण दिया है वेदों के नित्य मानने का भी यही प्रकार है अर्थात् प्रत्येक सर्ग के आदि में परमात्मा अपने ज्ञानरूप वेदों का आविर्भाव करता है और प्रलय काल में परमात्मा के ज्ञानरूप से वेद विराजमान रहते हैं ॥९॥

इति षष्ठं सूक्तं सप्तविंशतितमो वर्गश्च समाप्तः ॥

छठा सूक्त और सत्ताईसवां वर्ग समाप्त हुआ ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ नवर्चस्य सप्तमस्य सूक्तस्य—

१–९ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः—१, ३, ५–९ गायत्री । २ निचृद्गायत्री । ४ विराड्गायत्री । षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मनो विविधगुणाकरत्वं वर्ण्यते—

अब परमात्मा को अनेक धर्मों का आधार कथन करते हैं:—

असृग्रमिन्दवः पथा धर्मन्नृतस्य सुश्रियः ।
विदाना अस्य योजनम् ॥१॥

असृग्रम् । इन्दवः । पथा । धर्मन् । ऋतस्य । सुऽश्रियः । विदानाः । अस्य । योजनम् ॥१॥

पदार्थः—(इन्दवः) विज्ञानिनः (अस्य) अस्य परमात्मनो हि (योजनम्) सम्बन्धम् (विदाना) जानन्तः (सुश्रियः) विविधशोभाः दधति (ऋतस्य) तथा च सत्यस्य परमात्मनः (धर्मन्) धर्मणि तिष्ठन्तः (असृग्रम्) सुगुणान् लभन्ते ॥

पदार्थ—(इन्दवः) विज्ञानी पुरुष (अस्य) इस परमात्मा के (योजनम्) सम्बन्ध को (विदाना) जानते हुए (सुश्रियः) अनन्त प्रकार की शोभाओं को धारण करते हैं (ऋतस्य) और इस सत्यरूप परमात्मा के (धर्मन्) धर्म में रहते हुए (असृग्रम्) अच्छे गुणों को धारण करते हैं ॥

भावार्थ—जो पुरुष परमात्मा और प्रकृति के सम्बन्ध को जा

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नते हैं और परमात्मा के यथार्थ ज्ञान को जानकर उसके धर्मपथ पर चलते हैं वे संसार में ऐश्वर्य को प्राप्त होते हैं ॥ १ ॥

प्र धारा मध्वो अग्रियो महीरपो वि गाहते ।
हविर्हविष्षु वन्द्यः ॥२॥

प्र । धारा । मध्वः । अग्रियः । महीः । अपः ।
वि । गाहते । हविः । हविष्षु । वन्द्यः ॥२॥

पदार्थः—(हविष्षुः) सर्वेष्वादेयपदार्थेषु (हविः) सर्वाधिकग्राह्योऽस्ति (वन्द्यः) विश्ववन्दनीयः स एव (अग्रियः) अग्रणीः परमात्मा (मध्वः, धाराः) मधुरधाराभिः (महीः) पृथिवीम् (अपः) द्युलोकञ्च (विगाहते) अवगाहते ॥

पदार्थ—(हविष्षु) 'हूयते गृह्यत इति हविः' संपूर्ण ग्रहणयोग्य पदार्थों में से जो (हविः) सर्वोपरि ग्राह्य है और (वन्द्यः) सम्पूर्ण विश्व से वन्दनीय है वह (अग्रियः) अग्रणी परमात्मा (मध्वः, धाराः) मीठी धाराओं से (महीः) पृथिवी लोक तथा (अपः) द्युलोक को (विगाहते) अवगाहन करता है ॥ २ ॥

भावार्थ—सर्वजनवन्दनीय परमात्मा लोकलोकान्तरों में सर्वत्र ही अपने मधुर आनन्द की वृष्टि करता है ॥ २ ॥

प्र युजो वाचो अग्रियो वृषावचक्रदद्वने ।
सद्मा भि सत्यो अध्वरः ॥३॥

प्र । युजः । वाचः । अग्रियः । वृषा । अव । चक्रदत् । वने ।
सद्म । अभि । सत्यः । अध्वरः ॥३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—हे परमात्मन् ! भवान् (अध्वरः) अहिंसक सत्यवर्त्मनोदर्शकश्चास्ति (सत्यः) सत्यस्वरूपः (वृषा) अभि लकामवर्षणशीलः तथा (अग्रियः) सर्वाग्रणीः तथा (प्रयुज वाचः) उपयुक्तवाचां प्रकाशकः अस्ति (वने, सद्म, अभि याज्ञिकोपासनासु (अव, चक्रदत्) संस्थाप्यते ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (अध्वरः) " नध्वरतीत्यध्व अध्वानं राति वा अध्वरः " हिंसावर्जित हैं और सत्य का रास्ता दिख लाने वाले हैं (सत्यः) सत्य स्वरूप हैं (वृषा) कामनाप्रद तथा (अ ग्रियः) सब से अग्रणी और (प्रयुजः, वाचः) उपयुक्तवाणी के बोलने वाले हैं (वने, सद्म, अभि) याज्ञिक उपासनाओं में (अव, चक्रदत्) उपास्य ठहराये जाते हैं ।

भावार्थ—परमात्मा सत्यस्वरूप अर्थात् त्रिकालाबाध्य है ऐसे सत्यादि पदों से उपनिषदों में "सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म" ये लक्षण किये गये हैं ॥ ३ ॥

परि॒ यत्काव्या॑ क॒विर्नृ॒म्णा व॑सा॒नो अ॑र्षति ।
स्व॑र्वा॒जी सि॑षासति ॥४॥

परि॑ । यत् । काव्या॑ । क॒विः । नृ॒म्णा । व॒सा॒नः । अ॒र्ष॒ति॒ । स्वः॑ । वा॒जी । सि॒सा॒स॒ति॒ ॥४॥

पदार्थः—स परमात्मा (कविः) सर्वज्ञः (नृम्णा) ऐश्वर्यम् (वसानः) धारयति (पर्यर्षति) सर्वगतिरस्ति (स्वर्वाजी) आनन्दमयबलवान् तथा (काव्या, सिषासति) कविकर्माणि प्रचिचारयिषति ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—वह परमात्मा (कविः) सर्वज्ञ है "कवते जानाति सर्वमिति कविः" जो सबको जाने उसका नाम कवि है और (नृम्णा) ऐश्वर्यों को (वसानः) धारण करनेवाला (पर्यषति) सर्वत्र प्राप्त है (स्वर्वाजी) आनन्दरूप बलवाला है तथा (काव्या, सिषासति) कवित्वरूप कर्मों के प्रचार की इच्छा करता है ॥४॥

पवमानो अभि स्पृधो विशो राजेव सीदति ।
यदीमृण्वन्ति वेधसः ॥५॥२८॥

पवमानः । अभि । स्पृधः । विशः । राजाऽइव । सीदति । यत् । ईं । ऋण्वन्ति । वेधसः ॥५॥

पदार्थः—(पवमानः) सर्वस्यपावयिता (अभि, स्पृधः) सर्वोत्कर्षेण वर्तमानः (विशः, राजा, इव, सीदति) प्रजाः राजेवानुशास्ति (यद्, ईम्) सम्यक् (ऋण्वन्ति) सत्कर्मसु प्रेरयति (वेधसः) सर्वोपरिज्ञाता विधाता चास्ति ॥

पदार्थ—(पवमानः) "पवते, इतिपवमानः" सबको पवित्र करने वाला (अभिस्पृधः) सबको मर्दन करके विराजमान है (विशः राजा, इव सीदति) प्रजाओं को राजा के समान अनुशासन करता है (यद्, ईम्) भली भाँति (ऋण्वन्ति) सत्कर्मों में प्रेरणा करता है (वेधसः) सर्वोपरि बुद्धिमान् है ॥

भावार्थ—राजा की उपमा यहाँ इस लिये दी गयी है कि राजा का शासन लोकप्रसिद्ध है इस अभिप्राय से यहाँ राजा का दृष्टान्त है, ईश्वर के समान बलसूचना के अभिप्राय से नहीं और जो मन्त्र में बहुवचन है वह व्यत्यय से है ॥ ५ । २८ ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अव्यो वारे परि प्रियो हरिर्वनेषु सीदति ।
रेभो वनुष्यते मती ॥६॥

अव्यः । वारे । परि । प्रियः । हरिः । वनेषु । सीदति ।
रेभः । वनुष्यते । मती ॥६॥

पदार्थः—स परमेश्वरः (अव्यः, वारे) प्रकाशमानद्यादिलोकेषु (परि, सीदति) संतिष्ठते (प्रियः) सर्वहितकरोऽस्ति (हरिः) अखिलजनस्य दुःखं हरति (वनेषु) उपासनादिभक्तिषु तस्यैवोपासनया (मती, वनुष्यते) बुद्धिः शुद्ध्यति (रेभः) वेदादिशब्दप्रकाशकोऽस्ति ॥

पदार्थ—वह परमात्मा (अव्यः, वारे) "अव्यते प्रकाश्यते इति अविर्द्यादिलोकः" प्रकाशवाले लोकों में (परि, सीदति) रहता है (प्रियः) सर्वप्रिय है (हरिः) सब के दुःखों को हरण करनेवाला है (वनेषु) उपासनादि भक्तियों में उसी की उपासना से (मती, वनुष्यते) बुद्धि निर्मल होती है (रेभः) वेदादि शब्दों का प्रकाशक है ॥

भावार्थ—परमात्मा सब लोकलोकान्तरों में व्यापक है और भक्तों की बुद्धि में विराजमान है अर्थात् जिसकी बुद्धि उपासनादि सत्कर्मों से निर्मल हो जाती है उसी की बुद्धि में परमात्मा का आभास पड़ता है ॥६॥

स वायुमिन्द्रमश्विना साकं मदेन गच्छति ।
रणा यो अस्य धर्मभिः ॥७॥

सः । वायुम् । इन्द्रम् । अश्विना । साकम् । मदेन । गच्छति । रण । यः । अस्य । धर्मभिः ॥७॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(यः) यः पुरुषः (अस्य, धर्मभिः) अस्य परमात्मनः धर्मैः सह वर्त्तमानः (रणा) रमते (सः) समनुष्यः (वायुम्) ज्ञानिना (इन्द्रम्) ऐश्वर्यवता (अश्विना) ज्ञानयोगिकर्मयोगिभ्यां च (साकम्) सह (मदेन) गर्वेण (गच्छति) याति ॥

पदार्थ—(यः) जो पुरुष (अस्य, धर्माभिः) इस परमात्मा के धर्मों को धारण करता हुआ (रणा) रमण करता है (सः) वह (वायुम्) ज्ञानी यज्ञकर्मा पुरुष के और (इन्द्रम्) ऐश्वर्यवाले पुरुष के (अश्विना) ज्ञानयोगी और कर्मयोगी पुरुष के (साकम्) साथ (मदेन) अभिमान से (गच्छति) चल सकता है ॥

भावार्थ—जो पुरुष परमात्मा के अपहतपाप्मादि धर्मों को धारण करता है वह ज्ञानी विज्ञानी आदिकों की सब पदवियों को प्राप्त होता है अर्थात् अभिमान के साथ वह ज्ञानी विज्ञानी विद्वानों के मद को मर्दन कर सकता है ॥ ७ ॥

आ मित्रावरुणा भगं मध्वः पवन्त ऊर्मयः ।
विदाना अस्य शक्मभिः ॥८॥

आ । मित्रावरुणा । भगम् । मध्वः । पवन्ते । ऊर्मयः ।
विदानाः । अस्य । शक्मभिः ॥ ८ ॥

पदार्थः—येषां विदुषाम् (मध्वः, ऊर्मयः) मधुरकृत्तयः (भगम्) ईश्वरैश्वर्यमभि प्रवर्तन्ते तथा (मित्रावरुणा) ईश्वरस्य प्रेमाकर्षणशक्तिमभि च प्रवर्त्तन्ते, ते (विदाना) विद्वांसः (अस्य, शक्मभिः) परमात्मानन्दैः (आपवन्ते) कृत्स्नं जगत्पुनन्ति ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—जिन विद्वानों की (मध्वः, ऊर्मयः) मीठी वृत्ति (भगम्) ईश्वर के ऐश्वर्य की ओर लगती हैं तथा (मित्रावरुणा) ईश्व के प्रेम और आकर्षणरूप शक्ति की ओर लगती हैं वे (विदाना) वि ज्ञानी (अस्य, शक्मभिः) इस परमात्मा के आनन्द से (आ, पवन्ते) सम्पूर्ण संसार को पवित्र करते हैं ॥

भावार्थ—ईश्वरपरायण लोग केवल अपने आप का ही उद्धा नहीं करते किन्तु अपने भावों से सम्पूर्ण संसार का उद्धार करते हैं ॥८

अस्मभ्यं रोदसी रयिं मध्वो वाजस्य सातये ।
श्रवो वसूनि सञ्जितम् ॥९॥२९॥

अस्मभ्यम् । रोदसी इति । रयिम् । मध्वः । वाजस्य । सातये । श्रवः । वसूनि । सं । जितम् ।

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (रोदसी) द्यावापृथिव्योर्मध्ये (मध्वः, वाजस्य) महतोबलस्य (सातये) प्राप्तये (रयिम्) धनम् (श्रवः) ऐश्वर्यम् (वसूनि) रत्नानि च (सञ्जितम्) प्रयच्छतु मह्यम् ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (रोदसी) दिव और पृथिवी लोक के मध्य में (मध्वः, वाजस्य) बड़े बल की (सातये) प्राप्ति के लिये (रयिम्) धन (श्रवः) ऐश्वर्य (वसूनि) रत्न (सञ्जितम्) हमको आपदेयँ ॥

भावार्थ—परमात्मा जब प्रसन्न होता है तो नाना प्रकार की विभूतियों का प्रदान करता है क्योंकि जो विभूतियें हैं वह सब परमात्म का ऐश्वर्य है जैसा कि " यद्यद्विभूतिमत्सत्वं श्रीमदूर्जितमेववा

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तत्तदेवावगच्छत्वं मम तेजोंशसंभवम्" गीता । अर्थात् जो कुछ विभूति वाली या शोभा वाली या बल वाली वस्तु है वह सब परमात्मा के ऐश्वर्य की सूचक है ॥९॥

इति सप्तमं सूक्तमेकोनत्रिंशत्तमोवर्गश्च समाप्तः ॥७॥२९॥

यह सातवां सूक्त और उनतीसवांवर्ग समाप्त हुआ ॥ ७॥२९॥

अथ नवर्चस्य अष्टमसूक्तस्य–

१–९ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः–१, २, ५, ८ निचृद्गायत्री । ३, ४, ७ गायत्री । ६ पाद निचृद्गायत्री । ९ विराड् गायत्री । षड्जः स्वरः ॥

सम्प्रति सोमात्परमात्मनो निखिलकार्यसिद्धिः कथ्यते ।

अब उक्त सोमस्वभाव परमात्मा से कामनाओं की सिद्धि कथन करते हैं ।

एते सोमा अभि प्रियमिन्द्रस्य काममक्षरन् ।
वर्धन्तो अस्य वीर्यम् ॥१॥

एते । सोमाः । अभि । प्रियम् । इन्द्रस्य । कामम् । अक्षरन् । वर्धन्तः । अस्य । वीर्यम् ॥१॥

पदार्थः–(अस्य, इन्द्रस्य) अस्य जीवात्मनः (अभि, प्रियम्, कामम्) अभिलषितां कामनाम् (अक्षरन्) ददत् (वीर्यम्)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तद्बलं च (एते, सोमाः) असौ परमात्मा (वर्धन्तः) समि
कुर्वन्नास्ते ।

पदार्थ—(अस्य) इस (इन्द्रस्य) जीवात्मा की (अभिप्रिय
कामम्) अभीष्ट-कामनाओं को (अक्षरन्) देता हुआ (वीर्यम्) उस
बल को (एते, सोमाः) उक्त परमात्मा (वर्धन्तः) बढ़ाता है ॥

भावार्थ—"बलमसि बलं मेदेहि वीर्यमसि वीर्यं मे देहि" अ
२।३।१७ जिस प्रकार इस मन्त्र में परमात्मा से बल वीर्यादिकों की प्रार्थना
इसी प्रकार इस मन्त्र में भी परमात्मा से बल वीर्यादिकों की प्रार्थना है ॥

पुनानासश्चमूषदो गच्छन्तो वायुमश्विना ।
ते नो धान्तु सुवीर्यम् ॥२॥

पुनानासः । चमूसदः । गच्छन्तः । वायुम् । अश्विना । ते
नः । धान्तु । सु । वीर्यम् ॥२॥

पदार्थः—(पुनानासः) सर्वजनं पुनानः परमात्मा (च
षदः) प्रतिसैनिकबलं विद्यमानः (अश्विना) प्रत्येकं कर्मयोगि
ज्ञानयोगिनं च तथा (वायुम्) गमनशीलं विद्वांसं च (गच्छन्त
प्राप्नुवन् (ते) स ईश्वरः (नः) अस्माकम् (सुवीर्यम्
सुतेजः (धान्तु) धारयतु ॥

पदार्थ—(पुनानासः) सबको पवित्र करने वाला परमात्
(चमूषदः) जो प्रत्येक सैनिक बल में रहता है (अश्विना) प्रत्येक
योगी और ज्ञानयोगी को तथा (वायुम्) गतिशील विद्वान्
(गच्छन्तः) जो प्राप्त है (ते) वह परमात्मा (नः) हमको (सुवीर्य
सुन्दरबलं (धान्तु) धारण कराये ॥२॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इन्द्रस्य सोम राधसे पुनानो हार्दि चोदय।
ऋतस्य योनिमासदम् ॥३॥

इन्द्रस्य। सोम। राधसे। पुनानः। हार्दि। चोदय।
ऋतस्य। योनिम्। आसदम् ॥३॥

पदार्थः—हे परमात्मन्! भवान् (ऋतस्य, योनिम्) सत्यरूपिणो यज्ञस्य जनकः (आसदम्) कृत्स्नानां सत्यवादिनां हृत्सु वर्तमानोऽस्ति (सोम) हे सौम्यस्वभाव भगवन्! (हार्दि) अभिलषितसिद्धये (इन्द्रस्य) जीवात्मानम् (राधसे) ऐश्वर्यार्थम् (चोदय) प्रेरयतु, यतः (पुनानः) सर्वस्य शोधको भवानेव॥

पदार्थ—(ऋतस्य, योनिम्) हे परमात्मन्! आप सत्यरूपी यज्ञ के कारण हो (आसदम्) प्रत्येक सत्यवादी के हृदय में स्थिर हो (सोम) हे सौम्य स्वभाव परमात्मन्! (हार्दि) अभिलषित कामनाओं की सिद्धि के लिये (इन्द्रस्य) इस जीवात्मा की (राधसे) ऐश्वर्य के लिये (चोदय) आप प्रेरणा करें क्योंकि (पुनानः) आप सब को पवित्र करने वाले हैं॥

भावार्थ—सत्य का स्थान एकमात्र परमात्मा ही है इसी अभिप्राय से "ऋतंचसत्यं चाभीद्धात्तपसः" इस मन्त्र में यह लिखा है कि दीप्तिमान परमात्मा से ऋत और सत्य अर्थात् ऋत शास्त्रीयसत्य, और सत्य वस्तुगतसत्य ये दोनों प्रकार के सत्य परमात्मा के आधार पर ही स्थिर रहते हैं इस अभिप्राय से यहाँ परमात्मा को ऋत की योनि कहा गया है योनि के अर्थ यहाँ कारण के हैं॥३॥

सृजन्ति त्वा दश क्षिपो हिन्वन्ति सप्त धीतयः।
अनु विप्रा अमादिषुः ॥४॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मृजन्ति । त्वा । दश । क्षिपः । हिन्वन्ति । सप्त । धीतयः ।
अनु । विप्राः । अमादिषुः ॥४॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (त्वा, दश, क्षिपः) भवत्
पञ्च सूक्ष्मभूताः पञ्च च स्थूलभूता एते दश (मृजन्ति) ऐश्वर्यवत्
कुर्वन्ति तथा (सप्त, धीतयः) सप्तमहदादिप्रकृतयः भवन्त
(हिन्वन्ति) गतिरूपेण वर्णयन्ति (अनु) ततः (विप्राः
मेधाविनः भवन्तं साक्षात्कृत्य (अमादिषुः) प्रहृष्टा भवन्ति ॥

पदार्थ—हे परमात्मन्! (त्वा, दश, क्षिपः) तुम को पाँच सूक्ष्म
भूत और पांच स्थूलभूत (मृजन्ति) ऐश्वर्यसम्पन्न करते हैं और (स
धीतयः) महदादि सात प्रकृतियें तुम्हें (हिन्वन्ति) गति रूप से वर्णन कर
हैं (अनु) इस के पश्चात् (विप्राः) मेधावी लोग आप को उपलब्ध कर
(अमादिषुः) हर्षित होते हैं ।

भावार्थ—पाँच सूक्ष्म और पांच स्थूलभूत उसकी शुद्धि
ऐश्वर्य का कारण इस अभिप्राय से वर्णन किये गये हैं कि उन्हीं भूतों
कार्यरूप इन्द्रिय कर्म और ज्ञान द्वारा उसको उपलब्ध करते हैं और
उपलब्धि को पाकर विद्वान् लोग आनन्द को प्राप्त होते हैं ॥४॥

देवेभ्यस्त्वा मदाय कं सृजानमति मेष्यः ।
सं गोभिर्वासयामसि ॥५॥३०॥

देवेभ्यः । त्वा । मदाय । कं । सृजानम् । अति । मेष्यः ।
सं । गोभिः । वासयामसि ॥५॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(मेष्यः) अज्ञानवृत्तयः (सृजानम्) संसारस्य रचयितारम्भवन्तम् (अति) अतिक्रामन्ति । (देवेभ्यः, त्वा) दिव्यवृत्तयो ये देवास्तेभ्यः त्वदीयः (कम्) आनन्दः (मदाय) आह्लादाय भवतु, येन वयं भवन्तम् (सम्) सम्यक् (गोभिः) इन्द्रियैः (वासयामसि) वासयाम ॥

पदार्थ—(मेष्यः) अज्ञान की वृत्तियें (सृजानम्) संसार के रचने वाले तुमको (अति) अति क्रमण करजाती हैं (देवेभ्यः, त्वा) दिव्य वृत्तियों वाले देवताओं के लिये तुम्हारा (कम्) आनन्द (मदाय) आह्लाद के लिये हो ताकि हम आपको (सम्) भली प्रकार (गोभिः) इन्द्रियों द्वारा (वासयामसि) निवास देयँ ।

भावार्थ—जो पुरुष अज्ञानी हैं उनकी बुद्धि का विषय ईश्वर नहीं होता इस लिये कहा गया है कि उनकी बुद्धि को अति क्रमण कर जाता है और जो लोग शुद्ध इन्द्रियों वाले हैं वह लोग उसको बुद्धि का विषय बना कर आनन्द को उपलब्ध करते हैं ॥ ५ । ३० ॥

पुनानः कलशेष्वा वस्त्राण्यरुषो हरिः ।
परि गव्यान्यव्यत ॥ ६ ॥

पुनानः । कलशेषु । आ । वस्त्राणि । अरुषः । हरिः । परि । गव्यानि । अव्यत ॥६॥

पदार्थः—सपरमात्मा (वस्त्राणि, अरुषः) विद्युदिव तेजोमयवस्त्रं दधानः (आ) समस्तवस्तूनि आत्मनि निधाय कलशेषु) प्रतिब्रह्माण्डं व्याप्य (पुनानः) जगत् पुनाति, तथा (हरिः) सर्वापहारकः (गव्यानि, पर्यव्यत) पृथिव्यादि सर्वलोकानाच्छादयति ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—वह परमात्मा (वस्त्राणि, अरुषः) विद्युत् के समान तेज रूप वस्त्रों को धारण करता हुआ (आ) प्रत्येक वस्तु को अपने भीतर रख कर (कलशेषु) प्रत्येक ब्रह्माण्ड में आप व्यापक होकर (पुनानः) सबको पवित्र कर रहा है और (हरिः) सबके दुःखों को हरने वाला (गव्यानि, पर्यव्यत) प्रत्येक पृथिव्यादि ब्रह्माण्डों को आच्छादन कर रहा है ॥

भावार्थ—परमात्मा इस संसार की उत्पत्ति, स्थिति तथा प्रलय का कारण है इसी लिये उसको हरि रूप से कथन किया है वह परमात्मा विद्युत् के समान गति शील होकर सब को चमत्कृत करता है उसी की ज्योति को ज्ञानवृत्ति द्वारा उपलब्ध करके योगी आनन्दित होते हैं ॥६॥

मघोन आ पवस्व नो जहि विश्वा अपद्विषः ।
इन्दो सखायमा विश ॥७॥

मघोनः । आ । पवस्व । नः । जहि । विश्वाः । अप । द्विषः । इन्दो इति सखायम् । आ । विश ॥७॥

पदार्थः—(इन्दो) हे परमैश्वर्यसम्पन्न परमात्मन् ! भवान् (नः, मघोनः) अस्मान्त्रिविधधनवतः कुरुताम् (आ, पवस्व) सर्वथा पावयतु च (विश्वा) सर्वान् (अप, द्विषः) दुष्टान् अपहन्तु तथा (सखायम्) आविश (सज्जनान्) सर्वत्र तनोतु च ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे परमैश्वर्य वाले परमात्मन् ! आप (मघोनः) हमको ऐश्वर्यसम्पन्न करें (आ, पवस्व) और सब प्रकार से पवित्र करें (विश्वा,) सब (अपद्विषः) दुष्टों का नाश करें और (सखायम्, आविश) सज्जनों को सर्वत्र फैलायें ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि हे पुरुषो ! तुम इस प्रकार के प्रार्थनारूप भाव को हृदय में उत्पन्न करो कि तुम्हारे सत्कर्मी सज्जनों की रक्षा हो और दुष्टों का नाश हो ॥७॥

वृष्टिं दिवः परि स्रव द्युम्नं पृथिव्या अधि ।
सहो नः सोम पृत्सु धाः ॥८॥

वृष्टिं । दिवः । परि । स्रव । द्युम्नम् । पृथिव्याः । अधि । सहः । नः । सोम । पृत्ऽसु । धाः ॥८॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन् ! (दिवः) द्युलोकात् (वृष्टिं, परिस्रव) वृष्टिं परिक्षर तथाच (द्युम्नम्) अन्नाद्यैश्वर्यं सम्पादय तथा च (पृथिव्याः, अधि) सर्वत्र पृथिवीमध्ये (नः) अस्मभ्यम् (सहः) बलं दत्त्वा (पृत्सु, धाः) युद्धेषु जापय ।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (दिवः) द्युलोक से (वृष्टिं, परि, स्रव) वृष्टि द्वारा (द्युम्नम्) अन्नादि ऐश्वर्यों को दीजिये और (पृथिव्याः, अधि) सर्वत्र पृथिवी में (नः) हमको (सहः) बल देकर (पृत्सु, धाः) युद्धों में विजयी करिये ॥

भावार्थ—जो लोग परमात्मविश्वासी होते हैं परमात्मा उनको युद्धों में विजयी और धनादि ऐश्वर्यों से नानाविधऐश्वर्यसम्पन्न करता है ॥८॥

नृचक्षसं त्वा वयमिन्द्रपीतं स्वर्विदम् ।
भक्षीमहि प्रजामिषम् ॥९॥३१॥

पाणिनि-प्रज्ञा-अनुसन्धान
तिथी
नं०
भारती पुस्तकालय

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नृऽचक्षसम् । त्वा । वयम् । इन्द्रऽपीतम् । स्वःविदम् ।
भक्षीमहि । प्रऽजाम् । इषम् ॥९॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (इन्द्रपीतम्) विदुषामभ्यस्तम् (नृचक्षसम्) सर्वजनानां द्रष्टारम् (स्वर्विदम्) सर्वज्ञम् (त्वाम्) भवन्तं संसेव्य (प्रजाम्, इषम्) सर्वविधसन्तानधनाद्यैश्वर्यं (भक्षीमहि) भजेमहि ।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (इन्द्रपीतम्,) विद्वानों के द्वारा गृहीत किये गये (नृचक्षसम्) " नृन् चष्टे पश्यति यःस नृचक्षास्तम् " सर्वद्रष्टा (स्वर्विदम्) सर्वज्ञ (त्वाम्) आपकी कृपा से (प्रजाम् , इषम्) संसार के ऐश्वर्य को (भक्षीमहि) भोगें ॥

भावार्थ—जो लोग विद्वानों के सदुपदेश से सर्वज्ञत्वादि गुणयुक्त परमात्मा की उपासना करते हैं वे संसार के आनन्द को भोगते हैं ॥९॥

इत्यष्टमं सूक्तमेकत्रिंशत्तमो वर्गश्च समाप्तः ।

यह आठवाँ सूक्त और इकतीसवाँ वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ नवर्चस्य नवमसूक्तस्य—

१—९असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः—१, ३–५, ८ गायत्री । २, ६, ७, ९ निचृद्गायत्री । षड्जः स्वरः ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ सौम्यस्वभावस्य परमात्मनोऽन्ये गुणा वर्ण्यन्ते ।

अब सौम्यस्वभाव परमात्मा के अन्य गुणों का वर्णन करते हैं ।

परि प्रिया दिवः कविर्वयांसि नप्त्योर्हितः ।
सुवानो याति कविक्रतुः ॥१॥

परि । प्रिया । दिवः । कविः । वयांसि । नप्त्योः । हितः ।
सुवानः । याति । कविऽक्रतुः ॥१॥

पदार्थः—(कविक्रतुः) सर्वज्ञः (सुवानः) सर्वस्योत्पादकः (नप्त्योः, हितः) जीवप्रकृत्योर्हितकारकः (कविः) मेधावी (वयांसि) व्याप्तिशीलः (दिवः, प्रिया) द्युलोकप्रियः (परि, याति) सर्वत्र व्याप्नोति ॥

पदार्थ—(कविक्रतुः) सर्वज्ञ (सुवानः) सब को उत्पन्न करने वाला (नप्त्योः, हितः) जीवात्मा और प्रकृति का हित करने वाला (कविः) मेधावी (वयांसि) व्याप्तिशील (दिवः, प्रिया) द्युलोक का प्रिय (परि, याति) सर्वत्र व्याप्नोति ॥

भावार्थ—"न पततीति नप्ती" जिसके स्वरूप का नाश न हो उसका नाम यहाँ नप्ती है इस प्रकार जीवात्मा और प्रकृति का नाम यहाँ नप्ती हुआ इन दोनों का परमात्मा हित करने वाला है अर्थात् प्रकृति को ब्रह्माण्ड की रचना में लगा कर हित करता है और जीव को कर्म फल भोग में लगा कर हित करता है । "वियन्ति व्याप्नुवन्ति—इति वयांसि" जो सर्वत्र व्याप्त हो उस को वयस् कहते हैं और बहुवचन यहाँ ईश्वर के सामर्थ्य के अनन्तत्व बोधन के लिये आया है, तात्पर्य यह निकला कि जो प्रकृति पुरुष का अधिष्ठाता और संसार का निर्माता तथा विधाता है उस को यहाँ कविक्रतु आदि नामों से वर्णन किया है ॥१॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रप्र क्षयाय पन्यसे जनाय जुष्टो अद्रुहे ।
वीत्यर्ष चनिष्ठया ॥२॥

प्रऽप्र । क्षयाय । पन्यसे । जनाय । जुष्टः । अद्रुहे । वीती । अर्ष । चनिष्ठया ॥२॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (पन्यसे) कर्मयोगिणे (अद्रुहे) सर्वस्य हितं कुर्वते च (जनाय) मनुष्याय हितं कर्तुं तद्हृदयं भवान् (प्र प्र, क्षयाय) नितान्तं विराजसे (च) तथा (वीती) तत्तृप्तये (निष्ठया, जुष्टः) ऐश्वर्यधारया संयुतः सन् (अर्ष) प्रयच्छैश्वर्यम् ।

पदार्थ—हे परमात्मन् (पन्यसे) जो पुरुष कर्मयोगी है तथा (अद्रुहे) जो किसी के साथ द्वेष नहीं करता (जनाय) ऐसे मनुष्य के हृदय में आप (प्र, प्र, क्षयाय) अत्यन्त विराजमान होते हैं (च) और (वीती) उसकी तृप्ति के लिये (निष्ठया, जुष्टः) ऐश्वर्य की धारा से संयुक्त होकर (अर्ष) ऐश्वर्य देयँ ।

भावार्थ—यद्यपि परमात्मा सर्व व्यापक हैं तथापि ऐश्वर्य के प्रदाता होकर उन्हीं पुरुषों के हृदय में विराजमान हो रहे हैं जो पुरुष कर्मयोगी और रागद्वेष से रहित हैं, इस लिये पुरुष को चाहिये कि वह राग द्वेष के भाव से रहित होकर निष्काम भाव से सदैव कर्मयोग में लगा रहे ॥२॥

स सूनुर्मातरा शुचिर्जातो जाते अरोचयत् ।
महान्मही ऋतावृधा ॥३॥

सः । सूनुः । मातरा । शुचिः । जातः । जाते इति । अरोचयत् । महान् । मही इति । ऋतऽवृधा ॥३॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(सः) सकर्मयोगी (शुचिः) पवित्रोऽस्ति (महान्) विशालात्माऽस्ति (ऋता, वृधा) यज्ञस्य वर्धयित्रोः (मही) महतोः (जाते) विश्वस्य जनयित्रोः (मातरा) माता-पितृरूपिणोः द्युलोकपृथिवीलोकयोः (जातः, सूनुः) सत्यः पुत्रोऽस्ति (अरोचयत्) सकर्मयोगेण तावैश्वर्यसम्पन्नौ करोति ॥

पदार्थ—(सः) वह कर्मयोगी पुरुष (शुचिः) पवित्र है (महान्) विशालात्मा वाला है (ऋता, वृधा) यज्ञ के बढ़ाने वाले (मही) महान् (जाते) विश्व के उत्पन्न करने वाले (मातरा) जो माता पिता रूप द्युलोक और पृथिवी लोक हैं तिनका (जातः, सूनुः) वह सच्चा पुत्र है (अरोचयत्) और वह कर्मयोग से उनको ऐश्वर्य सम्पन्न करता है ।

भावार्थ—द्युलोक और पृथिवीलोक के मध्य में कर्म योगी ही एक ऐसा पुरुष है जो अपने कर्मों द्वारा संसार को प्रकाशित करता है इसी अभिप्राय से उसको द्युलोक और पृथिवीलोक का सच्चा पुत्र कहा गया ॥३॥

स सप्त धीतिभिर्हितो नद्यो अजिन्वदद्रुहः ।
या एकमक्षि वावृधुः ॥४॥

सः । सप्त । धीतिऽभिः । हितः । नद्यः । अजिन्वत । अद्रुहः । याः । एकम् । अक्षि । ववृधुः ॥४॥

पदार्थः—(सः) स परमात्मा (सप्त, नद्यः) इडापिङ्गलादि सप्त नाडीः, यदा (धीतिभिः) बुद्धिवृत्तिभिः (हितः) गृहीतो भवति तदा (अजिन्वत्) योगेन तर्पयति (याः, अद्रुहः)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

याः स्वकर्तव्यं पालयन्त्यः (एकम्, अक्षि) केवलं तमव्ययं प
मात्मानम् (वावृधुः) प्रकटयन्ति ॥

पदार्थ—(सः) वह परमात्मा (सप्त, नद्यः) इडा, पिङ्गलादि
सात नाड़ियों को "नदन्तीति नद्यः" (धीतिभिः) 'धीयते सर्वकर्म
इति धीतिर्बुद्धिः' जब बुद्धि की वृत्तियों से (हितः) धारण किया जाता
है तो (अजिन्वत्) योग द्वारा तृप्त करता है (याः, अद्रुहः) जो नाड़ियें
स्वकर्तव्य पालन करती हुयीं (एकम्, अक्षि) उस एक अविनाशी प
मात्मा को (वावृधुः) प्रकाशित करती हैं ॥

भावार्थ—इस मन्त्र में योगविद्या का वर्णन किया गया है
भाव यह है कि जब पुरुष अपने प्राणायाम द्वारा इडा पिङ्गलादि नाड़ियों
को तृप्त कर देता है तो वह उस अभ्यास से एकाग्र चित्त होकर अवि
नाशी परमात्मा के भाव को अनुभव करता है ॥४॥

ता अभि सन्तमस्तृतं महे युवानमा दधुः ।
इन्दुमिन्द्र तव व्रते ॥५॥३२॥

ताः । अभि । सन्तम् । अस्तृतम् । महे । युवानम् । आ
दधुः । इन्दुम् । इन्द्र । तव । व्रते ॥५॥

पदार्थः—(इन्द्र) हे परमैश्वर्यशालिपरमात्मन् ! (तव
व्रते) तव व्रतस्य पूर्तये (इन्दुम्) जीवात्मानम् (युवानम्)
नित्यं यौवनसम्पन्नम् (सन्तम्) सत्कर्माणम् (अस्तृतम्
अच्छेद्यम् (ताः) ता योगजबुद्धिवृत्तयः (महे) महत्फलाय
(अभि) सम्यक् (आदधुः) दधति ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(इन्द्र) हे परमैश्वर्यशालि परमात्मन् (तव, व्रते) तुम्हारे व्रत की पूर्ति के लिये (इन्दुं) जीवात्मा को (युवानम्) जो नित्य-नूतन है (सन्तम्) सत्कर्मी (अस्तृतम्) जो अच्छेद्य है उसको (ताः,) वे (अभि) भलीभाँति योगजबुद्धिवृत्तियें (महे) महत्व की प्राप्ति के लिये (आदधुः) धारण करती हैं ।

भावार्थ—कर्मयोगी पुरुष अपने निष्काम कर्म द्वारा उस तत्व को प्राप्त होता है जिस को योग में एकतत्वाभ्यास लिखा है अर्थात् उस तत्व की प्राप्ति के लिये कर्मयोगी होना आवश्यक है ॥५॥३२॥

अभि वह्निरमर्त्यः सप्त पश्यति वावहिः ।
क्रिविर्देवीरतर्पयत् ॥६॥

अभि । वह्निः । अमर्त्यः । सप्त । पश्यति । वावहिः । क्रिविः । देवीः । अतर्पयत् ॥६॥

पदार्थः—(अमर्त्यः) यो मृत्युरहितः (वह्निः) प्रकाशमानश्च (वावहिः) यश्च सर्वेषां प्रेरकः (सप्त, देवीः) भूम्यादि सप्त देव्यः (अतर्पयत्) यं वर्णयन्ति (क्रिविः) यः सर्व सद्गुणपूर्णः सः (पश्यति) सर्वान् स्वज्ञानदृष्ट्या ईक्षते ।

पदार्थ—जो (अमर्त्यः) मृत्यु रहित है (वह्निः) प्रकाशमान है (वावहिः) जो सबका प्रेरक है (सप्त, देवीः) भूम्यादि सात प्रकृतियें (अतर्पयत्) जिसको वर्णन करती हैं । (क्रिविः) जो सद्गुणों से भरा हुआ है वह (पश्यति) सबको अपनी ज्ञानदृष्टि से देखता है ।

भावार्थ—जो परमात्मा महत्त्वादि सात प्रकार की प्रकृतियों से अलंकृत किया हुआ है और जिसको धारणा ध्यानादि बुद्धि की सात

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वृत्तियें विषय करती हैं वह परमात्मा सर्वत्र परिपूर्ण हो रहा है, एक मात्र उसी परमात्मा की उपासना करनी चाहिये ॥६॥

अवा कल्पेषु नः पुमस्तमांसि सोम योध्या ।
तानि पुनान जङ्घनः ॥७॥

अव । कल्पेषु । नः । पुमः । तमांसि । सोम । योध्या ।
तानि । पुनान । जंघनः ॥७॥

पदार्थः—(सोम) हे सौम्यस्वभाव परमात्मन् ! भवान् (तमांसि) अज्ञानम् (योध्या) येच दुष्टयोद्धारः (तानि) तांश्च (जङ्घनः) हन्तु (पुनान) हे सर्वेषां पावयितः ! (पुमन्) हे पूर्णपुरुष ! (नः) अस्मान् (कल्पेषु) सर्वदशासु (अव) रक्षतु ।

पदार्थ—हे (सोम) सौम्यस्वभाव परमात्मन् ! आप (तमांसि) अज्ञानों को और जो (योध्या) युद्ध करने योग्य हैं (तानि) उनको (जङ्घनः) हनन करो (पुनान) हे सबको पवित्र करने वाले परमात्मन् (पुमन्,) हे पूर्ण पुरुष (नः) हमारी (कल्पेषु) सब अवस्थाओं में (अव) रक्षा करें ।

भावार्थ—मनुष्य का परम शत्रु एकमात्र अज्ञानही है जो पुरुष अज्ञानरूपी शत्रु को नहीं जीतता वह शूर वीर व विजयी कदापि नहीं कहला सकता, बहुत क्या पुरुष में पुरुषत्व यही है कि वह अज्ञानरूपी शत्रु को जीत कर अभ्युदय और निःश्रेयस रूपी फलों को लाभ करे इस अभिप्राय के लिये उक्त मन्त्र में अज्ञान के जीतने की परमात्मा से प्रार्थना की गई, और अज्ञानरूपी शत्रु की शत्रुता का वर्णन "पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम्।" गीता के इस श्लोक में सुस्पष्ट

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

है कि हे जीव तू ज्ञान और विज्ञान के नाश करने वाले परम शत्रु अज्ञान का सब से पहले नाश कर ॥७॥

नू नव्यसे नवीयसे सूक्ताय साधया पथः ।
प्रत्नवद्रोचया रुचः ॥८॥

नु । नव्यसे । नवीयसे । सुऽउक्ताय । साधय । पथः । प्रत्नऽवत् । रोचय । रुचः ॥८॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (नव्यसे) नवजीवनं सम्पादयितुम् (नु) निश्चयम् (नवीयसे, सूक्ताय) नववाणीभ्यः (साधया, पथः) विधिमार्गं विधेहि, पूर्ववच्च (रुचः) स्वदीप्तीः (रोचया) प्रकाशय ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (नव्यसे) नूतन जीवन बनाने के लिये (नु) निश्चय करके (नवीयसे, सूक्ताय) नयी वाणियों के लिये (साधया, पथः) हमारे लिये रास्ता खोलो और पहले के समान (रुचः) अपनी दीप्तियें (रोचया) प्रकाशित करो ॥

भावार्थ—जो पुरुष अपने जीवन को नित्य नूतन बनाना चाहे उसका कर्तव्य है कि वह परमात्मा की ज्योति से देदीप्यमान होकर अपने आप को प्रकाशित करे, और नित्य नूतन वेदवाणियों से अपने रास्तों को साफ करे अर्थात् वेदोक्त धर्मों पर स्वयं चले और और लोगों को चलाये ॥८॥

पवमान महि श्रवो गामश्वं रासि वीरवत् ।
सना मेधां सना स्वः ॥९॥३३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पवमान । महि । श्रवः । गाम् । अश्वम् । रासि । वीरवत् । सनम् । मेधाम् । सनम् । स्वरिति स्वः ॥९॥

पदार्थः—(पवमान) हे सर्वपावक परमात्मन् ! (महि श्रवः) मह्यं सर्वातिरिक्तमानन्दं प्रयच्छ तथा (गाम्, अश्वम्) गवाश्वादिविविधैश्वर्यसाधनानि (रासि) मह्यं देहि, तथा (वीरवत्) वीर्यवतो जनान् (सना) प्रयच्छ (मेधां) बुद्धिं च (स्वः) स्वर्गं च (सना) देहि ॥

पदार्थ—(पवमान) हे सबको पवित्र करनेवाले परमात्मन् (महि, श्रवः) हमको सर्वोपरि आनन्द प्रदान करो और (गाम्, अश्वम्) गौ अश्वादि नाना प्रकार के ऐश्वर्य के साधन (रासि) आप हमको दें और (वीरवत्) वीरता धर्म वाले मनुष्य (सना) देयँ (मेधाम्) बुद्धि और (स्वः) स्वर्ग (सना) देयँ ॥

भावार्थ—जिस जाति वा धर्म पर परमात्मा की अत्यन्त कृपा होती है उसको परमात्मा नानाप्रकार के ऐश्वर्य के साधन प्रदान करता है और शुद्ध बुद्धि तथा सर्वोपरि आनन्द का प्रदान करता है ॥९॥३३॥

इति नवमं सूक्तं त्रयस्त्रिंशत्तमो वर्गश्च समाप्तः ।

यह नवमा सूक्त और तेंतीसवां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ दशमस्य सूक्तस्य—

१—९ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः—१, २, ६, ८ निचृद्गायत्री । ३, ५, ७, ९ गायत्री । ४ भुरिग्गायत्री । षड्जः स्वरः ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ पूर्वोक्तः परमात्मा यज्ञत्वेन वर्ण्यते ।

अब उक्त परमात्मा को यज्ञरूप से वर्णन करते हैं ।

प्रस्वानासो रथा इवार्वन्तो न श्रवस्यवः ।
सोमासो राये अक्रमुः ॥१॥

प्र । स्वानासः । रथाःइव । अर्वन्तः । न । श्रवस्यवः ।
सोमासः । राये । अक्रमुः ॥१॥

पदार्थः—(सोमासः) चराचरजगदुत्पादकः स परमात्मा (राये) ऐश्वर्याय (अक्रमुः) शश्वदुद्यतोऽस्ति (रथाः, इव) शीघ्रतरगामिविद्युदादिवत् (प्रस्वानासः) यः प्रसिद्धः (अर्वन्तः) गतिशीलाराजानः (न) इव (श्रवस्यवः) ऐश्वर्यं दातुं सदोद्यतः अस्ति ।

पदार्थ—(सोमासः) चराचर संसार का उत्पादक उक्त परमात्मा (राये) ऐश्वर्य के लिये (अक्रमुः) सदा उद्यत है (रथाः, इव) अति शीघ्र गति करने वाले विद्युदादि के समान (प्र, स्वानासः) जो प्रसिद्ध है और जो (अर्वन्तः, नः) गतिशील राजाओं के समान (श्रवस्यवः) ऐश्वर्य देने को सदा उद्यत है ।

भावार्थ—जिस प्रकार बिजली की जागृतिशील ध्वनि से सब पुरुष जागृत हो जाते हैं इस प्रकार परमात्मा के शब्द से सब लोग उद्बुद्ध हो जाते हैं, अर्थात् परमात्मा नाना प्रकार के शब्दों से पुरुषों को उद्बोधन करता है, और जिस प्रकार न्याय शील राजा अपनी प्रजा को ऐश्वर्य प्रदान करता है इसी प्रकार वह सत्कर्मी पुरुषों को सदैव ऐश्वर्य प्रदान करता है ॥१॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हिन्वानासो रथा इव दधन्विरे गभस्त्योः ।
भरासः कारिणामिव ॥२॥

हिन्वानासः । रथाःऽइव । दधन्विरे । गभस्त्योः । भरासः
कारिणाऽइव ॥२॥

पदार्थः—सः (रथाः, इव) विद्युदिव (गभस्त्योः, दध
न्विरे) स्वचमत्कृतरश्मीनां धारकः (हिन्वानासः) सततगा
शीलोऽस्ति तथा च (कारिणाम्, इव) कर्मयोगिन इव (भरास
शश्वत्सत्कर्मभारं वोढुमुद्यतोऽस्ति ।

पदार्थ—(रथा इव) विद्युत् के समान (गभस्त्योः, दधन्वि
अपनी चमत्कृत रश्मियों को धारण किये हुये है । (हिन्वानासः) सर्व
गति शील है और (कारिणाम्, इव) कर्मयोगियों के समान सर्व
सत्कर्म के (भरासः) भार उठाने को समर्थ है ।

भावार्थ—जिस प्रकार कर्मयोगी सत्कर्म को करने में सर्व
तत्पर रहता है इसी प्रकार संसार की उत्पत्ति स्थिति प्रलयादि कर्मों
परमात्मा सदैव तत्पर रहता है अर्थात् उक्त कर्म उस में स्वतःसिद्ध औ
अनायास से होते रहते हैं, इसी अभिप्राय से ब्राह्मणग्रन्थों में उ
सर्वकर्मा सर्वगन्धः सर्वरसः" ऐसा प्रतिपादन किया है कि सर्व प्रका
के कर्म और सब प्रकार के गन्ध तथा रस उसी से अपनी २ सत्ता
लाभ करते हैं ।

इस प्रकार परमात्मा सदैव गति शील है, इसी अभिप्राय से गतिक
रंहति धातु से निष्पन्न रथ की उपमा दी है जो लोग उसको अक्रि
कह कर यह सिद्ध करते हैं कि शुद्ध ब्रह्म में कोई क्रिया नहीं होती
क्रिया करने की शक्ति माया के साथ मिल कर आती है अन्यथा न

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इसलिये ईश्वर जगत् का कारण है ब्रह्म नहीं, ऐसा कथन करने वाले वैदिक सिद्धान्त से सर्वथा भिन्न हैं क्योंकि वेदों में "भूमिं जनयन् देवएकः यजुः १७।१९।' सूर्याचन्द्रमसौधाता यथा पूर्वमकल्पयत्' 'विश्वस्य कर्त्ता भुवनस्य गोप्ता मुं० १।१।१' इत्यादि वेदोपनिषद् के वाक्यों में शुद्ध ब्रह्म में जगत्कर्तृत्व कदापि न पाया जाता यदि ईश्वर में क्रिया न होती, इससे स्पष्ट सिद्ध है कि ईश्वर में क्रिया स्वतः सिद्ध है, इसी अभिप्राय से कहा है कि "स्वाभाविकी ज्ञानबल क्रिया च" ॥२॥

राजानो न प्रशस्तिभिः सोमासो गोभिरञ्जते ।
यज्ञो न सप्त धातृभिः ॥३॥

राजानः । न । प्रशस्तिभिः । सोमासः । गोभिः । अञ्जते ।
यज्ञः । न । सप्त । धातृऽभिः ॥३॥

पदार्थः—(राजानः, न) नृपाइव (सोमासः) सौम्य स्वभाववान् परमात्मा (गोभिः) स्वप्रकाशमयज्योतिभिः (अञ्जते) प्रकाशते (यज्ञः, न) यथा यज्ञः (सप्त,धातृभिः) सप्तविधहोतृभिर्विराजते तथावत् परमात्मापि प्रकृतिविकृतिरूपमहदादिसप्तप्रकृतिभिः संसारावस्थायां द्योतत इत्यर्थः ।

पदार्थ—(राजानः, न) राजाओं के समान (सोमासः) सौम्यस्वभाव वाला परमात्मा (गोभिः) अपनी प्रकाशमय ज्योतियों से (अञ्जते) प्रकाशित होता है (यज्ञःन) जिस प्रकार यज्ञ (सप्त, धातृभिः) ऋत्विगादि सात प्रकार के होताओं से सुशोभित होता है इसी प्रकार परमात्मा प्रकृति की विकृति महदादि सात प्रकृतिओं से संसारावस्था में सुशोभित होता है ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—संसार भी एक यज्ञ है और इस यज्ञ के कार्यक्रम ऋत्विगादि होता प्रकृति की शक्तियें हैं, जब परमात्मा इस बृहत् यज्ञ को करता है तो प्रकृति की शक्तियें उसमें ऋत्विगादि का काम करती इसी अभिप्राय से यह कथन किया है कि। तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्ष पुरुषं जात मग्रतः " तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च यजुः ३१।९ कि उस पुरुषमेधयज्ञ को करते हुये ऋषि लोग सर्व परमात्मा को अपना लक्ष्य बनाते हैं, इस प्रकार परमात्मा का इस में यज्ञ रूप से वर्णन किया है इसी अभिप्राय से "यज्ञो वैविष्णुः" श इत्यादि वाक्यों में परमात्मा को यज्ञ कथन किया है ॥३॥

परि सुवानास इन्दवो मदाय बर्हणा गिरा ।
सुता अर्षन्ति धारया ॥४॥

परि । सुवानासः । इन्दवः । मदाय । बर्हणा । गिरा ।
सुताः । अर्षन्ति । धारया ॥४॥

पदार्थः—(परिसुवानासः) संसारमुत्पादयन् (इन्दवः सर्वप्रकाशकः परमात्मा (बर्हणा, गिरा) अभ्युदयं दधान वेदवाचा (सुताः) वर्णितः (धारया) अमृतवर्षेण (मदा अर्षति) आनन्दं ददाति ।

पदार्थ—(परि, सुवानासः) संसार को उत्पन्न करता हु (इन्दवः) सर्वप्रकाशक परमात्मा (बर्हणा, गिरा) अभ्युदय वाली वेदवाणी द्वारा (सुताः) वर्णन किया हुआ (धारया) की दृष्टि से (मदाय, अर्षति) आनन्द को देता है ।

भावार्थ—द्युभ्वादि अनेक लोकों को उत्पन्न करने

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परमात्मा अपनी पवित्र वेदवाणी द्वारा हमको नाना विध के आनन्द प्रदान करता है ॥४॥

आपानासो विवस्वतो जनन्त उषसो भगम् ।
सूरा अण्वं वि तन्वते ॥५॥३४॥

आपानासः । विवस्वतः । जनन्तः । उषसः । भगम् । सूराः अण्वम् । वितन्वते ॥५॥३४॥

पदार्थः—(आपानासः) सर्वथा क्लेशानामपहर्ता (विवस्वतः) सूर्यात् (उषसः, भगम्) उषोरूपं स्वैश्वर्यम् (जनन्तः) जनयन् (सूराः) गन्त्रीम् (अण्वम्) सूक्ष्मप्रकृतिम् (वितन्वते) वितनोति ।

पदार्थ—(आपानासः) सब दुःखों का नाश करने वाला (विवस्वतः) सूर्य से (उषसः, भगम्) उषारूप ऐश्वर्य को (जनन्तः) उत्पन्न करता हुआ (सूराः) गतिशील (अण्वम्) सूक्ष्मप्रकृति का (वितन्वते) विस्तार करता है ।

भावार्थ—परमात्मा प्रकृति की सूक्ष्मावस्था से अथवा यों कहो कि परमाणुओं से सृष्टि को उत्पन्न करता है और सूर्यादि प्रकाश मय ज्योतियों से उषारूप ऐश्वर्यों को उत्पन्न करता हुआ संसार के दुःखों का नाश करता है ।

तात्पर्य यह है कि उषःकाल होते ही जिस प्रकार सब ओर से आह्लाद उत्पन्न होता है इस प्रकार का आह्लाद और समय में नहीं होता इस लिये उषःकाल को यहां ऐश्वर्य रूप से कथन किया है यद्यपि प्रातः सन्ध्या, मध्याह्न इत्यादि सब काल परमात्मा की विभूति हैं तथापि जिस प्रकार की उत्तम विभूति उषःकाल है वैसी विभूति अन्य काल नहीं,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तात्पर्य यह है कि उषःकाल को उत्पन्न करके परमात्मा ने सब दुःखों को दूर किया है अर्थात् उक्त काल में योगी भोगी तथा रोगी सब प्रकार के लोग उस परमात्मा के आनन्द में उषःकाल में निमग्न हो जाते हैं। एक प्रकार से उषःकाल अपनी लालिमा के समान ब्रह्मोपासनारूपी रंग से सम्पूर्ण संसार को रंजित कर देता है ॥ ५ ॥ ३४ ॥

अप द्वारा मतीनां प्रत्ना ऋण्वन्ति कारवः ।
वृष्णो हरस आयवः ॥६॥

अप । द्वारा । मतीनाम् । प्रत्नाः । ऋण्वन्ति । कारवः ।
वृष्णः । हरसे । आयवः ॥६॥

पदार्थः—(वृष्णः) सर्वकामप्रदातुः परमात्मनः (हरसे) पापनाशाय (आयवः) उपासकामनुष्याः (कारवः) कर्म योगिनः (प्रत्नाः) दृढाभ्यासाः सन्तः (मतीनाम्) बुद्धीनाम् (अपद्वारा) कुत्सितमार्गान् (ऋण्वन्ति) शोधयन्ति ।

पदार्थ—(वृष्णः) सब कामनाओं के दाता परमात्मा के (हर से) पाप की निवृत्ति के लिये उपासना करने वाले (आयवः) मनुष्य (कारवः) जो कर्म योगी हैं (प्रत्नाः) जो अभ्यास में परिपक्व हैं वह (मतीनाम्) बुद्धि के (अप, द्वारा) जो कुत्सित मार्ग हैं उनका (ऋण्वन्ति) मार्जन कर देते हैं ।

भावार्थ—जो कर्मयोगी लोग कर्मयोग में तत्पर हैं और ईश्वर की उपासना में प्रति दिन रत रहते हैं वह अपनी बुद्धि को कुमार्ग की ओर कदापि नहीं जाने देते, तात्पर्य यह है कि कर्म योगियों को अभ्यास की दृढ़ता के प्रभाव से ऐसा सामर्थ्य उत्पन्न हो जाता है कि उनकी बुद्धि सदैव सत्मार्ग की ओर ही जाती है अन्यत्र नहीं ॥ ६ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

समीचीनास आसते होतारः सप्तजामयः ।
पदमेकस्य पिप्रतः ॥७॥

सम्ऽईचीनासः । आसते । होतारः । सप्तऽजामयः । पदम् । एकस्य । पिप्रतः ॥७॥

पदार्थः—(सप्त, जामयः) यज्ञकर्मणि संगमनशीलाः सप्त (होतारः) यज्ञाङ्गभूताः होत्रादयः (समीचीनासः) ये च यज्ञे दक्षास्ते (एकस्य, पदम्) केवलपरमात्मनः पदं (आसते) श्रयन्ते यदा-तदा (पिप्रतः) यथेष्टं पूरयन्ति यज्ञम् ।

पदार्थ—(सप्त, जामयः) यज्ञकर्म में संगति रखने वाले (होतारः) होता लोग (समीचीनासः) यज्ञ कर्म में जो निपुण हैं वे (एकस्य, पदम्) एक परमात्मा के पद को जब (आसते) ग्रहण करते हैं तो वे (पिप्रतः) यज्ञ को संपूर्ण करते हैं ॥

भावार्थ—जो लोग एक परमात्मा की उपासना करते हैं उन्हीं के सब कामों की पूर्ति होती है तात्पर्य यह है कि ईश्वरपरायण लोगों के कार्यों में कदापि विघ्न नहीं होता ॥ ७ ॥

नाभा नाभिं न आ ददे चक्षुश्चित्सूर्ये सचा ।
कवेरपत्यमा दुहे ॥८॥

नाभा । नाभिम् । नः । आ । ददे । चक्षुः । चित् । सूर्ये । सचा । कवेः । अपत्यम् । आ । दुहे ॥८॥

पदार्थः—(कवेः) तस्य सर्वज्ञस्य परमात्मनः (अप-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्सम) ऐश्वर्यम् (आ, दुहे) प्राप्नुयामहम् तथा च (नाभिम्) तं चराचरजगतो नियन्तारम् (नाभा, नः) स्वहृदये (आददे) ध्यानद्वारा वासयानि यः (सूर्ये, चित्) सूर्येऽपि (चक्षुः, सचा) चक्षूरूपेण संगतोऽस्ति ।

पदार्थ—(कवेः) उस सर्वज्ञ क्रान्तकर्मा परमात्मा के (अपत्यम्) ऐश्वर्य को (आ, दुहे) मैं प्राप्त करूँ और (नाभिम्) 'नाभिर्नह्यतिचराचरं जगदितिनाभिः' जो चराचर जगत् को नियम में रखता है उसको (नाभा, नः) अपने हृदय में (आददे) ध्यानरूप से स्थिर करूं, जो (सूर्ये, चित्) सूर्य में भी (चक्षुः सचा) चक्षुरूप से संगत है।

भावार्थ—उक्त कामधेनु रूप परमात्मा के ऐश्वर्य को वह लोग दुह सकते हैं जो लोग उस परमात्मा को अपने हृदयरूपी कमल में साक्षी रूप से स्थिर समझ कर सत्कर्मी बनते हैं और वह परमात्मा अपने प्रकाश रूप शक्ति से सूर्य का भी प्रकाशक है, इस मंत्र में परमात्मा इस भाव को बोधन करते हैं कि हे जिज्ञासु पुरुषो ! तुम उस प्रकाश से अपने हृदय को प्रकाशित करके संसार के पदार्थों को देखो जो सर्व प्रकाश है और जिस से यह भूतवर्ग अपनी उत्पत्ति और स्थिति को लाभ करता है जैसा कि 'नाभ्या आसीदन्तरिक्षम्' "चन्द्रमा मनसोजातश्चक्षोः सूर्योऽअजायत" यजुः ३१।१२ इत्यादि मन्त्रों में वर्णन किया है कि उसी के नाभिरूप सामर्थ्य से अन्तरिक्ष लोक उत्पन्न हुआ और उसी के चक्षुरूप सामर्थ्य से सूर्य उत्पन्न हुआ चक्षु के अर्थ यहाँ 'चष्टे पश्यत्यनेनेति चक्षुः' अर्थात् अपने सात्विक सामर्थ्य से सूर्य को उत्पन्न किया जैसा कि अन्यत्र भी कहा है कि सत्वात्संजायते ज्ञानम्, बहुत जगह यतोवा इमानिभूतानिजायन्ते येन जातानि जीवन्ति यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति तद्विजिज्ञासस्व तद्ब्रह्म। अर्थात् उसी से यह सब संसार आविर्भाव को प्राप्त होता है और उससे सत्ता लाभ करके स्थिर रहता और अन्त में परमाणु रूप हो कर उसी में लय हो जाता है उसी के जानने

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

की इच्छा करनी चाहिये वही सर्वोपरिब्रह्म है बृंहते वर्धत-इतिब्रह्म । जो सदैव वृद्धि को प्राप्त है अर्थात् जिससे कोई बड़ा नहीं उस का नाम यहाँ ब्रह्म है ॥ ८ ॥

अभि प्रिया दिवस्पदमध्वर्युभिर्गुहा हितम् ।
सूरः पश्यति चक्षसा ॥९॥३५॥

अभि । प्रिया । दिवः । पदम् । अध्वर्युऽभिः । गुहा । हितम् । सूरः । पश्यति । चक्षसा ॥ ९ ॥ ३५ ॥

पदार्थः—(सूरः) विद्वान् (अभि, प्रिया) सर्वेषांप्रियः (अध्वर्युभिः) अध्वर्य्वादिऋत्विग्भिः यत् (गुहा, हितम्) यज्ञात्मकगुहायां निहितमस्ति तथाच (दिवस्पदम्) द्युलोकस्यापि आश्रयरूपेण पदमस्ति तत् (चक्षसा) ज्ञानदृष्ट्या (पश्यति) अवलोकते ॥

पदार्थ—(सूरः) "सरति ज्ञानद्वारेण सर्वत्र प्राप्नोतीतिसूरो-विद्वान्" विद्वान् (अभि, प्रिया) जो सब का प्यारा है वह (अध्वर्युभिः) अध्वर्युआदि ऋत्विजों से जो (गुहा, हितम्) यज्ञरूपी गुहा में निहित है और (दिवस्पदम्) जो द्युलोक का भी अधिकरणरूपी पद है उसको (चक्षसा) ज्ञानदृष्टि से (पश्यति) देखता है ।

भावार्थ—जो इस संसार रूपी गुहा में स्थिर सूक्ष्म से अति सूक्ष्म परमात्मा है और जो द्यावादिलोकों का एकमात्र अधिकरण है उसको आत्मज्ञानी विद्वान् ही जान सकते हैं अन्य नहीं ॥ ९ ॥ ३५ ।

इति दशमं सूक्तं पञ्चत्रिंशत्तमो वर्गश्च समाप्तः ।—
यह दशवां सूक्त और पैंतीसवाँ वर्ग समाप्त हुआ ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नवर्चस्य एकादशस्य सूक्तस्य—

१—९ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः—१-४, ९ निचृद्गायत्री । ५-८ गायत्री । षड्जः स्वरः ॥

सम्प्रति उक्त परमात्मनः उपासनाप्रकारः कथ्यते:—

अब उक्त परमात्मा के उपासन का प्रकार कथन करते हैं:—

उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे ।
अभि देवाँ इयक्षते ॥१॥

उप । अस्मै । गायत । नरः । पवमानाय । इन्दवे । अभि । देवान् । इयक्षते ॥१॥

पदार्थः—(नरः) हे यज्ञनेतारः ! यूयम् (पवमानाय) सर्वेषां पावयित्रे (इन्दवे) परमैश्वर्यवते (उपास्मै) अस्मै परमात्मने तदर्थमेव (गायत) वेदवाग्भिः स्तुत, यः (अभि, देवाँ, इयक्षते) यज्ञादिकर्मसु विदुषः संगमयितुमिच्छति ।

पदार्थ—(नरः) हे यज्ञ के नेता लोगो ! तुम (पवमानाय) सबको पवित्र करनेवाला (इन्दवे) 'इन्दतीतीन्दुः' और जो परम ऐश्वर्यवाला है (उपास्मै) उसकी प्राप्ति के लिये (गायत) गायन करो, जो (अभि, देवाँ, इयक्षते) यज्ञादि कर्मों में विद्वानों की संगति को चाहता है ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि हे मनुष्यो ! तुम यज्ञादि कर्मों में विद्वानों की संगति करो और मिलकर अपने उपास्य देव का गायन करो ॥ १ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अभि ते मधुना पयोऽथर्वाणो अशिश्रयुः।
देवं देवाय देवयु ॥२॥

अभि। ते। मधुना। पयः। अथर्वाणः। अशिश्रयुः।
देवं। देवाय। देवऽयु ॥२॥

पदार्थः—हे परमात्मन्! (ते) त्वाम् (अथर्वाणः) दृढविश्वासवन्तो विद्वांसः (अशिश्रयुः) आश्रयन्ते यस्त्वम् (देवाय) दिव्यशक्तिप्रदानाय (देवम्) केवल देवोऽसि तथा (देवयु) दिव्यशक्तिमिच्छुर्जनः (पयः) भवद्रसम् (मधुना) माधुर्येण (अभि) सम्यग्गृह्णाति॥

पदार्थ—हे परमात्मन् (ते) तुमको (अथर्वाणः) "न थर्वति स्वाधिकारं नमुञ्चतीत्यथर्वा" जो अपने अधिकार को न छोड़े उसका नाम अथर्वा है, ऐसे दृढविश्वासी विद्वान् (अशिश्रयुः) आश्रयण करते हैं जो तुम (देवाय) दिव्य शक्तियों के देने के लिये (देवम्) एकमात्र देव हो, और (देवयु) "देवमिच्छतीति देवयु" दिव्य शक्ति की इच्छा करनेवाला पुरुष (पयः) आपके रस को (मधुना) मधुरता के साथ (अभि) भलीभांति ग्रहण करता है॥

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि हे दृढविश्वासी विद्वानो! आप लोग उस रस का पान करो जिससे बढ़कर संसार में अन्य कोई रस नहीं और उपास्यत्वेन उस देव का आश्रयण करो जिससे बढ़कर और कोई उपास्य नहीं, वास्तव में बात भी यही है कि परमात्मा के आनन्द के बराबर और कोई आनन्द नहीं इसी अभिप्राय से कहा है कि रसोह्येवसः रसं हि लब्ध्वा एष आनन्दी भवति" तै०२।७। परमात्मा रस अर्थात् आनन्दरूप है उसके आनन्द को लाभ करके पुरुष

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आनन्दित होता है इसी अभिप्राय से गीता में कहा है कि "यल्लब्ध्वा नापरोलाभः" उसको प्राप्त करने के अनन्तर फिर कोई प्राप्तव्य व नहीं रहती ॥२॥

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते ।
शं राजन्नोषधीभ्यः ॥३॥

सः । नः । पवस्व । शं । गवे । शं । जनाय । शं । अ
र्वते । शं । राजन् । शं । ओषधीभ्यः ॥३॥

पदार्थः—(राजन्, सः) हे पूर्वोक्तदीप्तिमन् परमात्मन् (नः) अस्माकम् (गवे) इन्द्रियेभ्यः (शं, पवस्व) कल्याणक्षर (शम्, अर्वते, जनाय) कर्मकाण्डिने च कल्याणप्रयच्छ (शम्, ओषधीभ्यः) ओषधिभ्यश्च कल्याणकर्त्ता भव ।

पदार्थ—हे (राजन्, सः) पूर्वोक्त दीप्तिमन् परमात्मन् ! (न हमारी (गवे) इन्द्रियों के लिये (शं, पवस्व) कल्याणकारी हों (श अर्वते, जनाय) कर्मकाण्डी मनुष्यों के लिये कल्याणकारी हों (श ओषधीभ्यः) और हमारी ओषधियों के लिये कल्याणकारी हों ॥

भावार्थ—यहां ओषधि आदिक केवल उपलक्षण हैं वस्तु प्रत्येक संसार वर्ग के लिये, इस मन्त्र में कल्याण की प्रार्थना की गई है

बभ्रवे नु स्वर्तवसेऽरुणाय दिविस्पृशे ।
सोमाय गाथमर्चत ॥४॥

बभ्रवे । नु । स्वर्तवसे । अरुणाय । दिविस्पृशे । सो
माय । गाथम् । अर्चत ॥४॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—भो मनुष्याः ! यूयम् (बभ्रवे) विश्वम्भराय (स्वतवसे) बलस्वरूपिणे (दिविस्पृशे) द्युलोकं व्याप्ताय (सोमाय) जगदुत्पादकाय (अरुणाय) सर्वव्यापकाय (नु) शीघ्रम् (गाथम्) स्तुतिम् (अर्चत) प्रादुर्भावयत ॥

पदार्थ—हे मनुष्यो ! तुम (बभ्रवे) 'विभर्तीतिबभ्रुः' जो विश्वम्भर परमात्मा है और जो (स्वतवसे) बलस्वरूप है और (दिविस्पृशे) जो द्युलोक तक फैला हुआ है (सोमाय) चराचर संसार का उत्पन्न करने वाला है (अरुणाय) "ऋच्छतीत्यरुणः" जो सर्वव्यापक है उसकी (नु) शीघ्र ही (गाथम्) स्तुति (अर्चत) करो ॥

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि हे पुरुषो ! तुम ऐसे पुरुष की स्तुति करो जो पूर्ण पुरुष अर्थात् द्युभ्वादि सब लोकों में पूर्ण हो रहा है और तेजस्वी और सर्वव्यापक है, इस भाव को वेद के अन्यत्र भी कई एक स्थलों में वर्णन किया है जैसा कि "यस्य भूमिः प्रमामन्तरिक्षमुतोदरम् दिवं यश्चक्रे मूर्धानं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः" अ. १०।४।७ कि जिस की भूमि ज्ञान का साधन है अन्तरिक्ष जिसका उदर स्थानीय है जिस में द्युलोक मस्तक के सदृश कहा जा सकता है उस सर्वोपरि ब्रह्म को हमारा नमस्कार है, जैसा इस मन्त्र में रूपकालङ्कार से द्युलोक को मूर्धा स्थानीय कल्पना किया है इसी प्रकार 'दिवस्पृशम्' इस शब्द में द्युलोक के साथ स्पर्श करने वाला भी रूपकालङ्कार से वर्णन किया है मुख्य नहीं।

यही भाव "नभस्पृशं दीप्तमनेकवर्णम्" गीता इत्यादि के श्लोकों में वर्णित है ॥ ४ ॥

हस्तच्युतेभिरद्रिभिः सुतं सोमं पुनीतन ।
मधावा धावता मधु ॥५॥३६॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हस्तऽच्युतेभिः । अद्रिऽभिः । सुतम् । सोमम् । पुनीतन मधौ । आ । धावत । मधु ॥५॥३६॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! भवान् (हस्तच्युतेभिः, अद्रिभिः) वाग्वज्रैः (सुतम्) क्षुण्णम् (सोमम्) ममस्वभावम् (पुनीतन) पावयतु येन (मधौ) भवदीय मधुरस्वरूपे (मधु) मधुरोभूत्वा (आधावत) प्रवर्तताम् ।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (हस्तच्युतेभिः, अद्रिभिः) वाणी रूप वज्र से (सुतं) कूट २ कर (सोमं) मेरे स्वभाव को (पुनीतन) पवित्र करें ताकि (मधौ) आप के मधुर स्वरूप में (मधु) मीठा बन कर (आधावत) लगे ।

भावार्थ—परमात्मा का वागरूपी वज्र जिस पुरुष की आसुरिकता को काटता है वह पुरुष सरल प्रकृति बन कर परमात्मा के आनन्दमय स्वरूप में निमग्न होता है ॥ ५ ॥

नमसेदुप सीदत दध्नेदभि श्रीणीतन ।
इन्दुमिन्द्रे दधातन ॥६॥

नमसा । इत् । उप । सीदत । दध्ना । इत् । अभि श्रीणीतन । इन्दुम् । इन्द्रे । दधातन ॥६॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! भवान् (नमसा, इत्) भक्तियुक्तवाग्भिः (उपसीदत) हृदये निवसतु (दध्ना, इत्) मदीयधारणया च (उपश्रीणीतन) ध्यानविषयोभवतु (इन्दुम्, इन्द्रे) मदीयंमनः स्वप्रकाशितस्वरूपे (दधातन) योजयतु ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (नमसा, इत्) हमारी नम्रवाणियों से (उपसीदत) हमारे हृदय में निवास करो (दध्रा इत्) "धीयतेऽनेनेति दधि" हमारी धारणा से (उप, श्रीणीतन) हमारे ध्यान का विषय बनो (इन्दुम्, इन्द्रे) हमारे मन को अपने प्रकाशित स्वरूप में (दधातन) लगाओ ।

भावार्थ—जो लोग प्रार्थना से अपने हृदय को नम्र बनाते हैं उनका मन परमात्मा के स्वरूप में अवश्यमेव स्थिर होता है ॥ ६ ॥

अमित्रहा विचर्षणिः पवस्व सोम शं गवे ।
देवेभ्यो अनुकामकृत् ॥७॥

अमित्रऽहा । विऽचर्षणिः । पवस्व । सोम । शं । गवे ।
देवेभ्यः । अनुकामऽकृत् ॥७॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन् (अमित्रहा) भवान् दुष्टानां नाशकः (देवेभ्यो, अनुकामकृत्) दैवसम्पत्तिवतां कामनाप्रदश्चास्ति, यतः (विचर्षणिः) न्यायदृष्ट्या पश्यति भवान् (गवे) मद्वृत्तीः (शं, पवस्व) कल्याणप्रदानपूर्वकं पुनातु ।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (अमित्रहा) आप प्रेम रहित नास्तिक लोगों के हनन करने वाले हैं और (देवेभ्यो, अनुकाम कृत्) और दैवीसम्पत्ति के गुण रखने वाले लोगों की कामनाओं के पूर्ण करने वाले हैं क्योंकि (विचर्षणिः) आप न्यायदृष्टि से देखने वाले हैं आप (गवे) हमारी वृत्तियों का (शं, पवस्व) कल्याण करें और पवित्र करें ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—संसार में असुर और देव दो प्रकार के मनुष्य पा जाते हैं असुर उनको कहते हैं जो धर्म को त्याग करके केवल प्रा यात्रा में लग जाते हैं अर्थ इसके इस प्रकार हैं 'अस्यति धर्मामित्यसु यद्वा—'असुषुरमते-इत्यसुरः" जो धर्म को छोड़ दे या प्राणों में रमण करे वह असुर है। और 'दीव्यतीति देवः' जो सदसद्विवेकि बुद्धि रखने वाले ज्ञानी पुरुष हैं उनको देव कहते हैं जो असुर लोग उन्हीं को इस मन्त्र में अमित्र माना गया है अर्थात् दैवी सम्पत्ति वा पुरुषों को परमात्मा बढ़ाता है और आसुरी सम्पत्ति वाले पुरुषों संहार करता है ॥७॥

इन्द्राय सोम पातवे मदाय परिषिच्यसे ।
मनश्चिन्मनसस्पतिः ॥८॥

इन्द्राय । सोम । पातवे । मदाय । परि । सिच्यसे । मन चित् । मनसः । पतिः ॥८॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन् ! (मनश्चित्) भव ज्ञानस्वरूपः (मनसस्पतिः) सर्वेषां मनसां प्रेरकश्चास्ति (इन्द्र य, पातवे) जीवात्मनः तृप्तये (मदाय) आह्लादाय च (प षिच्यते) उपास्यते ।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (मनश्चित्) आप ज्ञानस्व हैं 'मनुते-इतिमनः' और (मनसस्पतिः) सब के मनों के प्रेरक (इन्द्राय) जीवात्मा की (पातवे) तृप्ति के लिये (मदाय) आह्लाद के लि (परिषिच्यसे) उपासना किये जाते हैं ।

भावार्थ—जो लोग उपासना द्वारा अपने हृदय में ईश्वर विराजमान करते हैं वे उसके मधुर आनन्द का पान करते हैं ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तात्पर्य यह है कि यों तो परमात्मा सर्वव्यापक होने के कारण सब के हृदय में स्थिर है पर जो लोग धारणा ध्यानादि साधनों से सम्पन्न होकर उस को अत्यन्त समीपी बनाते हैं वे ही उसके मधुर आनन्द का पान कर सकते हैं अन्य नहीं ॥ ८ ॥

पवमान सुवीर्यं रयिं सोम रिरीहि नः ।
इन्दविन्द्रेण नो युजा ॥९॥३७॥

पवमान । सुऽवीर्यम् । रयिम् । सोम । रिरीहि । नः ।
इन्दो इति । इन्द्रेण । नः । युजा ॥९॥३७॥

पदार्थः—(पवमान) हे सर्वेषां पावक ! (सुवीर्यम्) सुबलम् (रयिम्) धनं च (नः, रिरीहि) अस्मभ्यं प्रयच्छतु (इन्दो) हे सर्व प्रकाशक ! (इन्द्रेण) परमैश्वर्येण सह (नः, युजा) अस्मान् योजयतु (सोम) यतः सौम्यस्वभावो भवान् ।

पदार्थ—(पवमान) हे सब को पवित्र करने वाले (सुवीर्यम्) सुन्दरबल को (रयिम्) और धन को (नः, रिरीहि) हमको देयँ, (इन्दो) हे सर्व प्रकाशक (इन्द्रेण) परमैश्वर्य के साथ (नः, युजा) हमको युक्त करैं (सोम) आप सौम्यस्वभाव वाले हैं ।

भावार्थ—जो लोग सत्कर्मी बन कर ईश्वरपरायण होते हैं परमात्मा सर्वोपरि ऐश्वर्य का उन्हीं को दान देता है ॥ ९ । ३७ ॥

इत्येकादशं सूक्तं सप्तत्रिंशत्तमो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ग्यारहवां सूक्त और सैंतीसवां वर्ग समाप्त हुआ ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ नवर्चस्यद्वादशस्यसूक्तस्य—

१–९ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः–१, २, ६–८ गायत्री । ३–५, ९ निचृद्गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ उक्तपरमात्मानंयज्ञादिकर्मणः कर्तृत्वेनवर्णयति ।

अब उक्त परमात्मा को यज्ञादि कर्मों का कर्त्तारूप से वर्णन करते

सोमा असृग्रमिन्दवः सुता ऋतस्य सादने ।
इन्द्राय मधुमत्तमाः ॥१॥

सोमाः । असृग्रम् । इन्दवः । सुताः । ऋतस्य । सदने । इन्द्राय । मधुमत्ऽतमाः ॥ १ ॥

पदार्थः—(इन्द्राय) जीवात्मने (मधुमत्तमाः) योऽ आनन्दमयः (ऋतस्य) यज्ञस्य (सादने) स्थितौ (सुताः उपास्योयः सः (इन्दवः) प्रकाशमयः (सोमाः) सौम्यस्वभा श्चास्ति (असृग्रम्) तेनैवेदं जगत्तेने ।

पदार्थ—(इन्द्राय) जीवात्मा के लिये (मधुमत्तमाः) जो अ न्त आनन्द मय परमात्मा है (ऋतस्य) यज्ञ की (सादने) स्थिति जो (सुताः) उपास्य समझा गया है वह (इन्दवः) प्रकाशस्वरूप (सोम सौम्य स्वभाव वाला है (असृग्रम्) उसी के द्वारा यह संसार रचा गया

भावार्थ—जो सब प्रकार की सचाइयों का एक मात्र आ करण है और जिस से वसन्तादि यज्ञरूप ऋतुओं का परिवर्तन होता वही परमात्मा इस निखिल ब्रह्माण्ड का अधिपति है ॥१॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अभि विप्रा अनूषत गावो वत्सं न मातरः।
इन्द्रं सोमस्य पीतये ॥२॥

अभि। विप्राः। अनूषत। गावः। वत्सं। न। मातरः।
इन्द्रम्। सोमस्य। पीतये ॥ २ ॥

पदार्थः—तमीश्वरं लब्धुम् (गावः) इन्द्रियाणि (मातरः, वत्सं, न) यथामातृः वत्स आश्रयते तद्वत् आश्रयन्ते तथैव च (विप्राः) विज्ञानिनः (सोमस्य, पीतये) सौम्यस्वभावम् निर्मातुम् (इन्द्रम्) परमात्मानम् (अभ्यनूषत) विभूषयन्ति।

पदार्थ—उस परमात्मा को पाने के लिये (गावः) इन्द्रियें (मातरः, वत्सम्, न) जैसे माता को बछड़ा आश्रयण करता है इसी प्रकार आश्रयण करती हैं उसी प्रकार (विप्राः) विज्ञानी लोग (सोमस्य, पीतये) सौम्य स्वभाव के बनाने के लिये (इन्द्रम्) परमात्मा को (अभि अनूषत) विभूषित करते हैं।

भावार्थ—जब तक पुरुष सौम्यस्वभाव परमात्मा को आश्रयण नहीं करता तब तक उसके स्वभाव में सौम्य भाव नहीं आ सकते और उसका आश्रयण करना साधारण रीति से हो तो कोई अपूर्वता उत्पन्न नहीं कर सकता जब पुरुष परमात्मा में इस प्रकार अनुरक्त होता है जैसा कि वत्स अपनी माता में अनुरक्त होते हैं अथवा इन्द्रियें अपने शब्दादि विषयों में अनुरक्त होती हैं इस प्रकार की अनुरक्ति के विना परमात्मा के भावों को पुरुष कदापि ग्रहण नहीं कर सकता ॥२॥

मदच्युत्क्षेति सादने सिन्धोरूर्मा विपश्चित्।
सोमो गौरी अधि श्रितः ॥३॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मदऽच्युत् । क्षेति । सदने । सिन्धोः । ऊर्मा । विपःऽचित् । सोमः । गौरी इति । अधि । श्रितः ॥ ३ ॥

पदार्थः—यथा (ऊर्मा) वीचयः (सिन्धोः) नदीरा यन्ते अथ च (विपश्चित्) विद्वान् (गौरी, अधि, श्रितः वेदवाचं अधितिष्ठति, तथैव (सोमः, मदच्युत्) आनन्दद सौम्यस्वभावो भगवान् (सादने, क्षेति) यज्ञस्थले सदा सुखे निवसति ।

पदार्थ—जिस प्रकार (ऊर्मा) तरंगें (सिन्धोः) नदी आश्रयण करती हैं और (विपश्चित्) विद्वान् (गौरी, अधि, श्रि वेदवाणी में अधिष्ठित होता है इसी प्रकार (सोमः, मदच्युत) आन का देने वाला सौम्य स्वभाव परमात्मा (सादने, क्षेति) यज्ञस्थल प्रिय समझता है ।

भावार्थ—कर्म यज्ञ, योगयज्ञ, जप यज्ञ, इस प्रकार यज्ञ ना प्रकार के हैं परन्तु 'यजनं यज्ञः' जिसमें ईश्वर का उपासना रूप अ विद्वानों की संगति रूप अथवा दानात्मक कर्म किये जायँ उसका यहां यज्ञ है और वह यज्ञ ईश्वर की प्राप्ति का सर्वोपरि साधन है अभिप्राय से 'यज्ञो वै विष्णु श. ' । ३७ । परमात्मा का नाम यज्ञ है इसी भाव को वर्णन करते हुये गीता में यह कहा है कि 'बहुविधायज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे' इस प्रकार के कई एक यज्ञ वेद वर्णन किये गये हैं ॥३॥

दिवो नाभा विचक्षणोऽव्यो वारे महीयते ।
सोमो यः सुक्रतुः कविः ॥ ४ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दिवः । नाभा । विऽचक्षणः । अव्यः । वारे । महीयते ।
सोमः । यः । सुऽक्रतुः । कविः ॥ ४ ॥

पदार्थः—(यः) यः परमात्मा (दिवः, नाभा) द्युलोकस्य नाभिरास्त (विचक्षणः) सर्वज्ञोऽस्ति (अव्यः) सर्वेषां भजनीयः (वारे, महीयते) सर्वेषां श्रेष्ठानां श्रेष्ठतमश्च (सोमः) सौम्यस्वभाववांश्चास्ति (सुक्रतुः) सत्कर्मा (कविः) क्रान्तकर्मा चास्ति ।

पदार्थ—(यः) जो परमात्मा (दिवः, नाभा) द्युलोक का नाभि है (विचक्षणः) सर्वज्ञ है (अव्यः) सब का भजनीय है (वारे महीयते) जो सब श्रेष्ठों में श्रेष्ठतम है (सोमः) सौम्यस्वभाव वाला है (सुक्रतुः) सत्कर्मी है और (कविः) क्रान्तकर्मा है ॥

भावार्थ—जिस प्रकार 'सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म' तै २।१ सत्य ज्ञान और अनन्तादि गुणोंवाला ब्रह्म है यह वाक्य सिद्धवस्तु को बोधन करता है इसी प्रकार उक्त मंत्र भी सिद्ध वस्तु का बोधक है—और जो इस में महीयते कहा गया है ये भी सिद्धवस्तु का बोधक है परन्तु इस से ये शङ्का कदापि नहीं होनी चाहिये कि इस में कर्तव्य का उपदेश नहीं, क्योंकि जब महीयते कह दिया तो अर्थ ये निकले कि वह पूजा जाता है पूजा एक प्रकार का कर्म है उसी को कर्तव्य कहते हैं तात्पर्य ये निकला कि-परमात्मा ने इस मंत्र में उपदेश किया है कि तुम लोग उक्त गुण सम्पन्न परमात्मा का पूजन करो अर्थात् सन्ध्यावन्दनादि कर्मों से उसे वन्दनीय समझो ॥४॥

यः सोमः कलशेष्वाँ अन्तः पवित्र आहितः ।
तमिन्दुः परि षस्वजे ॥५॥३८॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यः । सोमः । कलशेषु । आ । अन्तरिति । पवित्रे । आऽहितः । तम् । इन्दुः । परि । सस्वजे ॥५॥३८॥

पदार्थः—(यः) यःपरमात्मा (कलशेषु) वैदिकशब्दे (आ) वर्णितः (पवित्रे, अन्तः) सब पावित्र वस्तुषु (आहितः स्थिरोऽस्ति (सोमः) सौम्यस्वभाववांश्च (तम्, इन्दुः) तमीश्व विद्वांसः (परिषस्वजे) लभन्ते ।

पदार्थ—(यः) जो परमात्मा (कलशेषु) कलंशवातीति कल शोवैदिकशब्दः' वैदिक शब्दों में (आ) वर्णन किया गया है (पवित्रे अन्तः) और सब पवित्र वस्तुओं में (आहितः) स्थिर है और (सोमः सौम्यस्वभाव वाला है (तम्, इन्दुः) उसको विद्वान् लोग (परिषस्वजे लाभ करते हैं ।

भावार्थ—विद्वान् लोग परमात्मा की अभिव्यक्ति अर्थात् आ विर्भाव को सब पवित्र वस्तुओं में उपलब्ध करते हैं, तात्पर्य ये है कि जो जो विभूति वाली वस्तु है उसमें वे परमात्मा के तेज को अनुभ करते हैं,मालूम होता है कि 'यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव व तत्तदेवावगच्छत्वं ममतेजोंऽशसम्भवम्' । कि जो जो विभूतिवाल वस्तु अथवा शोभा वाली वा यों कहो कि बलवाली है वह सब परमात्म के तेज से ही उत्पन्न हुई है मालूम होता है गीता का यह भाव पूर्वोक्त मन्त्रों से ही लिया गया है ॥ ५ । ३८ ॥

प्र वाचमिन्दरिष्यति समुद्रस्याधि विष्टपि ।
जिन्वन्कोशं मधश्चुतम् ॥६॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्र। वाचम्। इन्दुः। इष्यति। समुद्रस्य। अधि। विष्टपि। जिन्वन्। कोशम्। मधुश्चुतम् ॥६॥

पदार्थः—(समुद्रस्य, अधि, विष्टपि) यःपरमात्मा अन्तरिक्षमध्ये (मधुश्चुतम्, कोशम्) सर्वविधमधुरतायाः वर्षितारं कोशम् (जिन्वति) वर्धयति (इन्दुः) परमैश्वर्यवान् स एव (वाचम्, प्र, इष्यति) वेदवाणीः प्रेरयति।

पदार्थ—(समुद्रस्य, अधि, विष्टपि) "समुद्रयन्ति यस्मादापः स समुद्रः" जो परमात्मा अन्तरिक्ष लोक के मध्य में (मधुश्चुतम्, कोशम्) सब प्रकार की मधुरताओं के सिञ्चन करने वाले कोश को (जिन्वति) बढ़ाता है (इन्दुः) वही परमैश्वर्यसम्पन्न परमात्मा (वाचम्, प्र, इष्यति) वेदवाणी की प्रेरणा करता है॥

भावार्थ—परमात्मा के नियम से समुद्र अर्थात् अन्तरिक्ष में जलों का सञ्चय रहता है क्यों कि समुद्र के अर्थ ये हैं जिस में जलों का भलीभांति सञ्चार हो अर्थात् इतस्ततः गमन हो उसको समुद्र कहते हैं अन्तरिक्ष लोक में मेघों का इतस्ततः गमन होता है इस लिये मुख्य नाम समुद्र इन्हीं का है, तात्पर्य ये है कि जिस परमात्मा ने इन विशाल नियमों को बनाया है उसी परमात्मा ने वेदरूपी वाणी को प्रकट किया है॥

नित्यस्तोत्रो वनस्पतिर्धीनामन्तः सर्वदुघः।
हिन्वानो मानुषा युगा ॥७॥

नित्यऽस्तोत्रः। वनस्पतिः। धीनाम्। अन्तरिति। सर्वःऽदुघः हिन्वानः। मानुषा। युगा ॥७॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—स परमात्मा (नित्यस्तोत्रः) नित्य स्तवनीय (वनस्पतिः) सर्व ब्रह्माण्डाधिपतिः (धीनाम्, अन्तः) बुद्धीनामवसानः (सवः, दुघः) अमृतेन तर्पकश्च (मानुषा, युगा) स्त्री पुरुषयोर्युगलस्योत्पादकश्च (हिन्वानः) सर्वस्य तृप्ति कारकश्चास्ति ।

पदार्थ—वह परमात्मा (नित्यस्तोत्रः) नित्यस्तुति करने योग्य है (वनस्पतिः) सब ब्रह्माण्डों का स्वामी है (धीनाम्, अन्तः) बुद्धियों का अन्त है (सवः, दुघः) अमृत से परिपूर्ण करने वाला है (मानुषा युगा) और स्त्री पुरुष के जोड़े को उत्पन्न करने वाला है (हिन्वानः) सबका तृप्ति कारक है ।

भावार्थ—बुद्धियों का अन्त उसको इस अभिप्राय से कहा किया गया है कि मनुष्य की बुद्धि उसके पारावार को नहीं पा सकती इस लिये उसने मनुष्यों पर अत्यन्त करुणा करके अपने वेद रूपी ज्ञान का प्रकाश किया है ॥७॥

अभि प्रिया दिवस्पदा सोमो हिन्वानो अर्षति ।
विप्रस्य धारया कविः ॥८॥

अभि । प्रिया । दिवः । पदा । सोमः । हिन्वानः । अर्षति ।
विप्रस्य । धारया । कविः ॥८॥

पदार्थः—(कविः) क्रान्त कर्मा (सोमः) सौम्य भाववान् सः (दिवस्पदा) द्युलोकस्य व्यापक रूपेणाधिकमास्ति (विप्रस्य) ज्ञानस्य (धारया) वर्षेण (प्रिया, आ अर्षति) अस्मान्प्रियं विधाय आनन्दयति ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(कविः) क्रान्त कर्मा (सोमः) सौम्यस्वभाव वाला परमात्मा (दिवस्पदा) द्युलोक का व्यापक रूप से अधिकरण है (विप्रस्य) ज्ञान की (धारया) धारा से (प्रिया, अभि, अर्षति) हमको आनन्दित करता है ॥८॥

आ पवमान धारय रयिं सहस्रवर्चसम् ।
अस्मे इन्दो स्वाभुवम् ॥९॥३९॥७॥

आ । पवमान । धारय । रयिम् । सहस्रऽवर्चसम् । अस्म इति । इन्दो इति । सुऽआभुवम् ॥९॥३९॥७॥

पदार्थः—(पवमान) हे सर्वेषां पावक (इन्दो) परमैश्वर्यशालि परमात्मन् । (अस्मे) अस्मभ्यम् (रयिम्) धनम् तथा (सहस्रवर्चसं, स्वाभुवम्) अत्यन्त दीप्तिमतो गृहान् (आ, धारय) धारयतु ददात्वित्यर्थः ।

पदार्थ—(पवमान) हे सबको पवित्र करने वाले (इन्दो) परमैश्वर्यसम्पन्न परमात्मन् ! (अस्मे) आप हमारे लिये (रयिम्) धन को तथा (सहस्रवर्चसं, स्वाभुवम्) अत्यन्त दीप्ति वाले गृहों को (आ, धारय) धारण कराइये अर्थात् दीजिये ।

भावार्थ—परमात्मा जिन पुरुषों के कर्मों द्वारा प्रसन्न होता है उनको अनन्त प्रकार की दीप्तियों वाले गृहों को देता है और नाना विध ऐश्वर्य से उनको सम्पन्न करता है ॥९॥

वेदव्याख्यानपुण्येन मोहोममनिवर्त्यताम् ।
याचेऽहमीशतोह्येतद्वेदधर्मः प्रवर्त्तताम् ॥

इति द्वादशंसूक्तमेकोनचत्वारिंशत्तमो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ऋग्वेद के छठे अष्टक में सातवां अध्याय और उनतालीसवां वर्ग, नवमण्डल में बारहवां सूक्त समाप्त हुआ ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ नवर्चस्य त्रयोदशस्य सूक्तस्य—

१—९ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः—१, ३, ५, ८ गायत्री । ४ निचृद्गायत्री । ६ भुरिग्गायत्री । ७ पाद निचृद्गायत्री ९ यवमध्या गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अधुना परमात्मनः यज्ञादिकर्मप्रियता दानप्रियता च विधीयते

अब परमात्मा की यज्ञादि कर्म प्रियता और दान प्रियता को कहते हैं

सोमः पुनानो अर्षति सहस्रधारो अत्यविः ।
वायोरिन्द्रस्य निष्कृतम् ॥१॥

सोमः । पुनानः । अर्षति । सहस्रऽधारः । अतिऽअविः वायोः । इन्द्रस्य । निःऽकृतम् ॥१॥

पदार्थः—(सोमः) चराचर जगदुत्पादकः परमात्मा (पुनानः, अर्षति) सर्वं पावयन् सर्वत्र व्याप्नोति, तथा (सहस्रधारः) सहस्राणि वस्तूनां धारयति (अत्यविः) अत्यन्त रक्षकोऽस्ति (वायोः) कर्मशीलस्य (इन्द्रस्य) ज्ञानशीलस्य विदुषः (निष्कृतम्) उद्धारकोऽस्ति ।

पदार्थ—(सोमः) 'सूते चराचरं जगादिति सोमः' सब चराचर जगत् को उत्पन्न करने वाला वह परमात्मा (पुनानः, अर्षति) सबको पवित्र करता हुआ सब जगह व्याप्त हो रहा है और (सहस्रधारः) सहस्र वस्तुओं को धारण करने वाला है (अत्यविः) अत्यन्त रक्षक है और

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(वायोः) कर्मशील तथा (इन्द्रस्य) ज्ञान शील विद्वानों का (निष्कृतं) उद्धार करने वाला है॥

भावार्थ—यद्यपि परमात्मा सर्व रक्षक है वह किसी को द्वेष दृष्टि व प्रिय दृष्टि से नहीं देखता तथापि वह सत्कर्मी पुरुषों को शुभ फल देता है और असत्कर्मियों को अशुभ, इसी अभिप्राय से उस को कर्मशील पुरुषों का प्यारा वर्णन किया है॥ १॥

पव॑मानमवस्यवो॒ विप्र॑मभि॒ प्र गा॑यत।
सु॒ष्वा॒णन्दे॒ववी॑तये ॥२॥

पव॑मानम्। अव॑स्यवः। विप्र॑म्। अ॒भि। प्र। गा॒य॒त। सु॒ष्वा॒नम्। दे॒वऽवी॑तये ॥२॥

पदार्थः—(अवस्यवः) हे सदुपदेशेन प्रजाः रिरक्षिषवो विद्वांसः! भवन्तः (देववीतये) दिव्यैश्वर्यप्राप्तये (सुष्वाणम्) सर्वेषां प्रेरकम् (पवमानम्, विप्रम्) सर्वेषां पावयितारं पूर्ण-पुरुषम् (अभि, प्र, गायत) स्तुवन्तु॥

पदार्थ—(अवस्यवः) हे उपदेश द्वारा प्रजा की रक्षा चाहने वाले विद्वानों! आप (देववीतये) दिव्य ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये (सुष्वाणम्, पवमानम्, विप्रम्) सबको पवित्र करने वाले पूरण परमात्मा का (अभि, प्र, गायत) तुम गान करो।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि हे विद्वानों! तुम उस पुरुष की उपासना करो जो सर्व प्रेरक है और सब को पवित्र करने वाला है और व्यापक रूप से सर्वत्र स्थिर है॥ २॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पवन्ते वाजसातये सोमाः सहस्रपाजसः ।
गृणाना देववीतये ॥३॥

पवन्ते । वाजऽसातये । सोमाः सहस्रऽपाजसः । गृणानाः । देवऽवीतये ॥ ३ ॥

पदार्थः—उक्ता विद्वांसः (देववीतये) ऐश्वर्यलाभा (गृणानाः) स्तुतिं कुर्वाणाः (सहस्रपाजसः) विविधबल सहिताः (सोमाः) सौम्यस्वभाववन्तः (वाजसातये) धर्म युद्धेषु (पवन्ते) पुनन्ति अस्मान् ।

पदार्थ—उक्त विद्वान् (देववीतये) ऐश्वर्य की प्राप्ति के लि (गृणाना) स्तुति करते हुये (सहस्रपाजसः) अनन्त प्रकार के बल वाले (सोमाः) सौम्य स्वभाव वाले (वाजसातये) धर्म युद्धों में (प वन्ते) हमको पवित्र करते हैं ।

भावार्थ—जो लोग ईश्वर पर विश्वास रख कर अनन्त प्रका के कला कौशलादि बलों से सम्पन्न होते हैं वे ही सब प्रजा को पवि करते हैं अर्थात् अपने ज्ञान से प्रजा की रक्षा करते हैं ॥३॥

उत नो वाजसातये पवस्व बृहतीरिषः ।
द्युमदिन्दो सुवीर्यम् ॥ ४ ॥

उत । नः वाजऽसातये । पवस्व । बृहतीः । इषः । द्युमत् इंदोइति । सुऽवीर्यं ॥४॥

पदार्थः—(इन्दो) हे परमैश्वर्यशालिपरमात्मन् ! (द्युमत् दीप्तिमत् (सुवीर्यम्) बलम् (पवस्व) अस्मभ्यं देहि (उत

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तथा च (वाजसातये) युद्धेषु (नः, बृहतीः, इषः) अस्मभ्यं प्रबलां शक्तिं प्रयच्छ ।

पदार्थ—(इन्दो) हे परमैश्वर्य वाले परमात्मन् ! (द्युमत्) दीप्तिवाला (सुवीर्यम्) बल (पवस्व) हमको दें (उत) और (वाजसातये) युद्धों में (नः, बृहतीः, इषः) हमको बड़ी शक्ति प्रदान करें ॥४॥

ते नः सहस्रिणं रयिं पवन्तामा सुवीर्यम् ।
सुवाना देवास इन्दवः ॥ ५ ॥ १ ॥

ते । नः । सहस्रिणं । रयिं । पवंतां । आ । सुऽवीर्यं
सुवानाः । देवासः । इंदवः ॥ ५ । १ ॥

पदार्थः—(इन्दवः) परमैश्वर्यवान्परमात्मा (देवासः) दिव्यशक्तिः (सुवानाः) सर्वेषामुत्पादकः (सुवीर्यम्) पर्याप्तं पराक्रमम् (आ, पवन्ताम्) सम्यक् ददातु तथा (ते) सः (सहस्रिणम्) अनेकविधम् (रयिम्) ऐश्वर्यम् (नः) अस्मभ्यम्प्रयच्छतु ।

पदार्थ—(इन्दवः) परमैश्वर्ययुक्तपरमात्मा (देवासः) दिव्य शक्तिवाला (सुवानाः) सबको उत्पन्न करने वाला (सुवीर्यम्) सुन्दर बल को (आ, पवन्ताम्) भली भांति हमको देय और (ते) वह (सहस्रिणम्) अनन्त प्रकार के (रयिम्) ऐश्वर्य को (नः) हमको देय ।

भावार्थ—यहां 'व्यत्ययोबहुलम्' इस सूत्र से एकवचन के स्थान में बहुवचन हुआ है इसलिये ईश्वर का ही ग्रहण समझना चाहिये किसी अन्य का नहीं ॥५॥१॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अत्या हियाना न हेतृभिरसृग्रं वाजसातये ।
विवारमव्यमाशवः ॥ ६ ॥

अत्याः । हियानाः । न । हेतृऽभिः । असृग्रं । वाजऽसातये ।
विवारं । अव्यं । आशवः ॥६॥

पदार्थः—(अत्याः) सर्वत्र वर्तमानः (हियानाः) स्तु
मानः (हेतृभिः, न) शीघ्रगामिविद्युदादिशक्तिरिव (वाजसाते
धर्मयुद्धेषु (असृग्रम्) रक्षतु नः (विवारम् , आशवः) यद्वद्
ज्ञानं विनाश्य ज्ञानस्य प्रकाशकः (अव्यम्) सर्वेषां रक्षक
तमुपास्महे ।

पदार्थ—(अत्याः) " अतति सर्वमित्यत्यः " जो सर्वत्र
पूर्ण हो उसका नाम अत्य है (हियानाः) प्रार्थना किया गया (हेतृ
शीघ्रगामी विद्युदादि शक्तियों के (न) समान (वाजसातये) धर्मयु
में (असृग्रम्) हमारी रक्षा करे (विवारम्, आशवः) जो शीघ्र ही अ
को नाश करके ज्ञान का प्रकाश करने वाला और (अव्यम्) सब
रक्षक है उसकी हम उपासना करते हैं ।

भावार्थ—जो पुरुष ज्ञान स्वरूप परमात्मा की उपासना क
हैं और एकमात्र उसी का भरोसा रखते हैं वे धर्म युद्धों में सदैव विज
होते हैं ॥६॥

वाश्रा अर्षन्तीन्दवोऽभि वत्सं न धेनवः ।
दधन्विरे गभस्त्योः ॥ ७ ॥

वाश्राः । अर्षंति । इंदवः । अभि । वत्सं । न । धेनवः ।
दधन्विरे । गभस्त्योः ॥७॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(धेनवः) इन्द्रियाणि (न) यथा (वत्सम्) स्वं प्रियार्थमभियान्ति तथैव (वाश्राः) सर्वशास्त्रयोनिः (इन्दवः) परमात्मा (अभ्यर्षन्ति) स्वोपासकमभियाति (गभस्त्योः) स्वप्रकाशम् (दधन्विरे) वितनोति च ।

पदार्थ—(धेनवः) इन्द्रियें (न) जिस प्रकार (वत्सं,) अपने प्रिय अर्थ की ओर जाती हैं उसी प्रकार (वाश्राः) जो वेदादि शास्त्रों की योनि है (इन्दवः) वह परमात्मा (अभ्यर्षन्ति) अपने उपासक की ओर जाता है (गभस्त्योः, दधन्विरे) और सर्वत्र अपना प्रकाश फैलाता है ।

भावार्थ—उपासक पुरुष जब शुद्ध हृदय से ईश्वर की उपासना करता है तो ईश्वर का प्रकाश उसको आकर प्रकाशित करता है 'उपास्यतेऽनेनेत्युपासनम्' जिससे ईश्वर की समीपता लाभ की जाय उस कर्म का नाम उपासन कर्म है समीपता के अर्थ यहां ज्ञान द्वारा समीप होने के हैं किसी देश द्वारा समीप होने के नहीं इस लिये जब परमात्मा ज्ञान द्वारा समीप होता है तो उसका प्रकाश उपासक के हृदय को अवश्यमेव प्रकाशित करता है ॥७॥

जुष्ट इन्द्राय मत्सरः पवमान कनिक्रदत् ।
विश्वा अप द्विषो जहि ॥ ८ ॥

जुष्टः । इन्द्राय । मत्सरः । पवमान । कनिक्रदत् । विश्वा । अप । द्विषः । जहि ॥८॥

पदार्थः—(इन्द्राय) यो धर्मवतां विदुषां (जुष्टः) सहचरोऽस्ति (मत्सरः) यश्च न्यायमदेन मत्तश्चसः (पवमानः)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri Sarvaar Kosha

सर्वस्यपावयिता (कनिक्रदत्) सर्वेभ्यः सदुपदेशदाता (विश्वा) कृत्स्नानि (अप, द्विषः, जहि) मम राग द्वेषादीनि नाशयतु स

पदार्थ—(इन्द्राय) जो धर्मप्रिय विद्वानों का (जुष्टः) संगी (मत्सरः) जो न्याय रूपी मद से मत्त हैवह (पवमानः) सब को पवि करने वाला (कनिक्रदत्) सब को सदुपदेश दाता (विश्वा) सम (अप, द्विषः, जहि) जो हमारे राग द्वेषादि हैं उनको नाश करे ॥

भावार्थ—जो लोग ईश्वर परायण हो कर अपनी जीवनयह करते हैं परमात्मा उन के रागद्वेषादि भावों को निवृत्त करता है ॥८॥

अपघ्नन्तो अराव्णः पवमानाः स्वर्दृशः ।
योनावृतस्य सीदत ॥ ९ ॥ २ ॥

अपऽघ्नतः । अराव्णः । पवमानाः । स्वःऽदृशः । योनौ । ऋतस्य । सीदत ॥९॥२॥

पदार्थः—(अराव्णः) दुष्टान् (अपघ्नतः) दारुणं दण्ड ददत् (पवमानाः) सतः पावयन् (स्वर्दृशः) सर्वद्रष्टा परमात्मा (ऋतस्य) सत्कर्मरूपयज्ञस्य (योनौ) वेद्याम् (सीदत) आगत्य तिष्ठतु ।

पदार्थ—(अराव्णः) दुष्टों को (अपघ्नतः) दारुण दण्ड दे वाला (पवमानाः) सत्कर्मिओं को पवित्र करने वाला (स्वर्दृशः) स द्रष्टा परमात्मा (ऋतस्य) सत्कर्म रूपी यज्ञ की (योनौ) वेदी में (सी दत) आकर विराज मान हो ।

भावार्थ—कर्म योगी और ज्ञान योगियों के यज्ञों में परमात्म अपने सद्भावों से आकर सदैव विराज मान होता है तात्पर्य यह है

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परमात्मा के आत्म सत्कर्मों द्वारा अभिव्यक्त होते हैं इसी लिये आकर विराजना कथन किया गया है। वस्तुतः परमात्मा सदैव कूटस्थनित्य है कहीं जाता आता नहीं इसी अभिप्राय से कहा है कि 'तदेजति तन्नैजति दूरे तद्वन्तिके" यजुः ४० । ५ । वह अज्ञानियों की दृष्टि में चलता है और वास्तव में नहीं चलता अज्ञानियों की दृष्टि में दूर है वास्तव में समीप, इस प्रकार वेद उसको सर्वत्र गतिरहित वर्णन करता है ॥९॥

इति त्रयोदशंसूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः ।

यह तेरहवां सूक्त और दूसरा वर्ग समाप्त हुआ ।

अथाष्टर्चस्य चतुर्दश सूक्तस्य-

१-८ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः-१-३, ५, ७ गायत्री । ४, ८ निचृद्गायत्री । ६ ककुम्मती गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथोक्तपरमात्मन अन्येगुणा वर्ण्यन्ते ।

अब उक्त परमात्मा के अन्य गुणों का वर्णन करते हैं ।

परि प्रासिष्यदत्कविः सिन्धोरूर्मावधि श्रितः ।
कारं बिभ्रत्पुरुस्पृहम् ॥ १ ॥

परि । प्र । असिस्यदत् । कविः । सिंधोः । ऊर्मौ । अधि । श्रितः । कारं । बिभ्रत् । पुरुऽस्पृहं ॥१॥

पदार्थः--(सिन्धोः, ऊर्मौ) यः समुद्रतरङ्गाणाम् (अधि,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रितः) निर्माता (कारम्, बिभ्रत् पुरुस्पृहम्) येन सर्वजन मनोरथरूपः संसारोनिरमायि (कविः) स एव परमात्मा (प्रासिष्यदत्) सर्वत्र व्याप्नोति ।

पदार्थ--(सिन्धोः ऊर्मौ) जिसने समुद्र की लहरों को (अधि श्रितः) निर्माण किया (कारम्, बिभ्रत्, पुरुस्पृहम्) जिसने सर्वजनों के मनोरथ रूप इस कार्य ब्रह्माण्ड को बनाया (कविः) वही परमात्मा (प्रासिष्यदत्) सर्वत्र परिपूर्ण हो रहा है ।

भावार्थ--उस परमात्मा ने इस ब्रह्माण्ड में नाना प्रकार की रचनाओं को बनाया है, कहीं महासागरों में अनन्त प्रकार की लहरें उठती हैं । कहीं हिमालय के उच्च शिखर नभोमण्डलवर्ती वायुओं से संघर्षण कर रहे हैं एवं नाना प्रकार की रचनाओं का रचयिता वही परमात्मा है ॥१॥

गिरा यदी सबन्धवः पञ्च व्राता अपस्यवः ।
परिष्कृण्वन्ति धर्णसिम् ॥ २ ॥

गिरा । यदि । सऽबंधवः । पंच । व्रताः । अपस्यवः । परिऽकृण्वंति । धर्णसिं ॥२॥

पदार्थः--(पञ्च, व्राताः) पञ्च ज्ञानेन्द्रियाणि (सबन्धवः) कर्मेन्द्रियसहिताः (यदि, अपस्यवः) यदा ईश्वरपराणि भवन्ति तदा (गिरा) परमात्मस्तुत्या (धर्णसिम्) इमां पृथिवीम् (परिष्कृण्वन्ति) भूषयन्ति ।

पदार्थ--(पञ्च, व्राताः) पांचज्ञानेन्द्रियें (सबन्धवः) कर्मेन्द्रियों के साथ (यदि, अपस्यवः) जब ईश्वर परायण हो जाती हैं तो (गिरा)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परमात्मा की स्तुति से (धर्णसिम्) इस पृथिवी को (परिष्कृण्वन्ति) भूषित कर देती हैं।

भावार्थ—ज्ञानयोगी पुरुष जब शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध इन पांचों विषयों को हटा कर अपने पांचो ज्ञानेन्द्रियों को ईश्वर की ओर लगा देता है तो इस सम्पूर्ण संसार को अलंकृत करता है तात्पर्य यह है कि स्वभावतः बहिर्मुख इन्द्रियों को जिनको "पराञ्चि खानिव्यतृणत्स्वयंभूः" कठ ४ । २ । स्वयंभू विधाता ने स्वभावतः बाहर की ओर बहने वाली बनाया है, कोई एक धीर बीर पुरुष ही उनके वेग को बाहर से हटा कर उनको अन्तर्मुखी बनाता है अन्य नहीं ॥२॥

आदस्य शुष्मिणो रसे विश्वे देवा अमत्सत ।
यदी गोभिर्वसायते ॥ ३ ॥

आत् । अस्य । शुष्मिणः । रसे । विश्वे । देवाः । अमत्सत । यदि । गोभिः । वसायते ॥३॥

पदार्थः—(यदि) चेद् (विश्वेदेवाः) सम्पूर्णविद्वांसः (अस्य) इमम्पूर्वोक्तम् (शुष्मिणः) बलिनम्परमात्मानं (गोभिः, वसायते) इन्द्रियगोचरं कुर्युः (आत्) तदा पुनः ते सर्वे (अमत्सत) ध्यानविषयं तं कृत्वा नन्दन्ति ॥

पदार्थ—(यदि) अगर (विश्वेदेवाः) सम्पूर्ण विद्वान् (अस्य) पूर्वोक्त (शुष्मिणः) बलसम्पन्न परमात्मा को (गोभिः, वसायते) इन्द्रियगोचर कर सकें (आत्) तदनन्तर वे सब देव (अमत्सत) उस को ध्यान का विषय बनाकर आनन्दित होते हैं।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि हे मनुष्यो! तुम्हारे

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इन्द्रिय तुमको स्वभाव से बहिर्मुख बनाते हैं तुम यदि संयमी बन उनका संयम करो तो इन्द्रिय परमात्मा के स्वरूप को विषय करके तुमें आनन्दित करेंगे, इसी अभिप्राय से उपनिषद् में कहा है कि "कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षत" क० ४।१। कोई धीर पुरुष ही प्रत्यगात्मा को देख सकता है, यहां देखने के अर्थ व इन्द्रियगोचर करने के अर्थ मूर्त्तिमान् पदार्थ के समान देखने के नहीं, किन्तु जिस प्रकार निराकार और निरूप होने पर भी सुख दुःखादिकों का अनुभव होता है इस प्रकार अनुभव का विषय बनाने का नाम यहां देखना व इन्द्रिय गोचर करना है इसी अभिप्राय से "दृश्यते त्वग्र्या बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः" कि वह सूक्ष्म बुद्धि के द्वारा देखा जा सकता है, सूक्ष्म बुद्धि से तात्पर्य यहां योगज सामर्थ्य का है अर्थात् चित्तवृत्ति निरोध द्वारा परमात्मा का अनुभव हो सकता है इसी अभिप्राय से कहा है कि "तदाद्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्" उस समय द्रष्टा के स्वरूप में स्थिति हो जाती है इसी अभिप्राय से कहा है कि "यदि गोभिर्वसायते" ॥३॥

निरिणानो विधावति जहच्छर्याणि तान्वा ।
अत्रा सञ्जिघ्नते युजा ॥ ४ ॥

निऽरिणानः । वि । धावति । जहत् । शर्याणि । तान्वा ।
अत्र । सं । जिघ्नते । युजा ॥४॥

पदार्थः—उक्तः परमात्मा (निरिणानः) ज्ञानविषयो भवन् (तान्वा) स्वप्रकाशेन (द्वाराणि) स्वप्रकाशरश्मिवर्गो जहत् (विधावति) जिज्ञासुबुद्धौ तिष्ठति (अत्र, युजा) अस्मिन् परमात्मनि योगेन (सं, जिघ्नते) उपासकाः स्वाज्ञानं घ्नन्ति ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—उक्त परमात्मा (निरिणानः) ज्ञान का विषय होता हुआ (तान्वा) अपने प्रकाश से (द्वाराणि) अपनी प्रकाश रश्मियों को छोड़ता हुआ (विधावति) जिज्ञासु के बुद्धिगत होता है (अत्र, युजा) उस परमात्मा में युक्त होकर (सं, जिघ्नते) उपासक लोग अज्ञानों का नाश करते हैं ॥

भावार्थ—ध्यान का विषय हुआ वह परमात्मा जिज्ञासुओं के अन्तः करणों को निर्मल करता है और जिज्ञासुजन उस की उपासना करते हुये अज्ञान को नाश करके परम गति को प्राप्त होते हैं ॥४॥

नृ॒षीभि॒र्यो वि॒वस्व॑तः शु॒भ्रो न मा॑मृ॒जे यु॒वा ।
गाः कृ॑ण्वा॒नो न नि॒र्णिज॑म् ॥ ५ ॥ ३ ॥

नृ॒षीभिः । यः । वि॒वस्व॑तः । शु॒भ्रः । न । ममृ॒जे । यु॒वा ।
गाः । कृ॒ण्वा॒नः । न । निः॒ऽनिज॑म् ॥५॥

पदार्थः—(यः) यः परमात्मा (विवस्वतः) विज्ञानिनो जिज्ञासोः (नृषीभिः) चित्तवृत्तिभिः (शुभ्रः) प्रकाशमानः (युवा) समीपस्थवस्तु (न) इव (मामृजे) साक्षात्कृतोभवति स साक्षात्कारश्च (गाः कृण्वानः) इन्द्रियाणि प्रीणयन् (निर्णिजम्, न) रूपमिव सम्पद्यते ।

पदार्थ—(यः) जो परमात्मा विवस्वतः) विज्ञान वाले जिज्ञासु की (नृषीभिः) चित्त वृत्तियों द्वारा (शुभ्रः) प्रकाशित होकर (युवा) समीपस्थ वस्तु के (न) समान (मामृजे) साक्षात्कार को प्राप्त होता है और वह साक्षात्कार (गाः कृण्वानः) इन्द्रियों को प्रसन्न करते हुये (निर्णिजं, न) रूप के समान होता है ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ--जो पुरुष अपने मन को शुद्ध करते हैं वे उस पु
का साक्षात्कार करते हैं उन पुरुषों की चित्त वृत्तियें उसको हस्तामल
वत् साक्षाद्रूप से अनुभव करती हैं, अर्थात् शुद्धमन द्वारा साक्षा
किये हुये परमात्मध्यान में फिर किसी प्रकार का भी संशय व वि
र्यय ज्ञान नहीं होता ॥५॥३॥

अति श्रिती तिरश्चता गव्या जिगात्यण्व्या ।
वग्नुमियर्ति यं विदे ॥ ६ ॥

अति । श्रिति । तिरश्चता । गव्या । जिगाति । अण्व्या ।
वग्नुम् । इयर्ति । यं । विदे ॥६॥

पदार्थः—(अति, श्रिती) अनन्याधारः परमात्म
(अण्व्या) अणुभिः (तिरश्चता) तीक्ष्णाभिः (गव्या) इन्द्रिय
वृत्तिभिः (जिगाति) प्रकाश्यते (यं) यम् (वग्नुम्) शब्द
प्रमाणम् (विदे) जिज्ञासवे (इयर्ति) प्रकटयति अन्यस्मै न

पदार्थ--(अति, श्रिती) 'श्रितिमतिक्रान्तः अतिश्रिती
जो किसी अन्यवस्तु के आश्रित न हो उसका नाम अतिश्रिती अर्था
सबका आश्रय परमात्मा (अण्व्या) सूक्ष्म (तिरश्चता) तीक्ष्ण (गव्या
इन्द्रियों की वृत्तियों से (जिगाति) प्रकाश को प्राप्त होता है (यं) जिसको
(वग्नुम्) शब्द प्रमाण (विदे) जिज्ञासु के लिये (इयर्ति) प्रकट करता है

भावार्थ--जब धारणा ध्यानादि योगाङ्गों से चित्त की वृत्तियें
निर्मल होती हैं तो उक्त परमात्मा को विषय करती हैं जो पुरुष आप्त
प्रमाण पर विश्वास करते हैं वे साधन सम्पन्न वृत्तियों के द्वारा उसका
अनुभव करते हैं अन्य नहीं ॥६॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अभि क्षिपः समग्मत मर्जयन्तीरिषस्पतिम् ।
पृष्ठा गृभ्णत वाजिनः ॥ ७ ॥

अभि । क्षिपः । सम् । अग्मत । मर्जयन्तीः । इषः । पतिम् पृष्ठा । गृभ्णत । वाजिनः ॥ ७ ॥

पदार्थः—(क्षिपः) चित्तवृत्तयः (अभि) सर्वतः (इषस्पतिम्) सर्वैश्वर्यस्वामिनम् (मर्जयन्तीः) प्रकाशयन्त्यः (समग्मत) समाधिदशामधिगच्छन्ति तत्र च (वाजिनः) अखिल बलानाम् (पृष्ठा) आधारम् (गृभ्णत) गृह्णन्ति ।

पदार्थ—(क्षिपः) चित्तवृत्तियें (अभि) सब ओर से (इषस्पतिम्) जो सब ऐश्वर्यों का पति है उसको (मर्जयन्तीः) प्रकाशित करती हुयीं (समग्मत) समाधि अवस्था को प्राप्त होती हैं, और वहां (वाजिनः) सब बलों के (पृष्ठा) अधिकरण को (गृभ्णत) ग्रहण करती हैं ।

भावार्थ—परमात्मा सब पदार्थों का अधिकरण है अर्थात् उसी की सत्ता से सब पदार्थ स्थिर हो रहे, हैं उस बलस्वरूप परमात्मा का साक्षात्कार समाधि अवस्था के विना कदापि नहीं हो सकता ॥ ७ ॥

परि दिव्यानि मर्म्शद्विश्वानि सोम पार्थिवा ।
वसूनि याह्यस्मयुः ॥ ८ ॥ ४ ॥

परि । दिव्यानि । मर्म्शत् । विश्वानि । सोम । पार्थिवा । वसूनि । याहि । अस्मऽयुः ॥ ८ । ४ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन् ! (दिव्यादिनि) दिव्य त्राणि (पार्थिवानि) पृथिवीसम्बन्धीनि (विश्वानि, वसूनि) सर्वाणि धनानि (मर्मृशत्) प्रयच्छन् (अस्मयुः) अस्मान् र्तुमिच्छन् (परि, याहि) अस्मान् प्राप्नुहि ।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (दिव्यानि) दिव्य (पार्थि वानि) पृथिवीलोक के (विश्वानि, वसूनि) सम्पूर्ण धनों के (मर्मृज सहित (अस्मयुः) हमारे उद्धार की इच्छा करते हुये (परि, याहि) हम प्राप्त हों ।

भावार्थ—पार्थिवानि यह कथन यहां उपलक्षण मात्र है अ पृथिवी लोक अथवा द्युलोक के जितने ऐश्वर्य हैं उनको परमात्मा प्रदान करे इस सूक्त में परमात्मा के सर्वाश्रयत्व और सर्वदातृत्व अनेक प्रकार के गुणों का वर्णन किया है ॥ ८ । ४ ॥

चतुर्दशं सूक्तं चतुर्थोवर्गश्च समाप्तः ।
यह चौदहवां सूक्त और चौथा वर्ग पूरा हुआ ।

अथर्चस्य पञ्चदशसूक्तस्य—

१–८ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः ॥ पवमानः सो देवता ॥ छन्दः–१, ३–५, ८ निचृद्गायत्री । २, ६ गायत्री । ७ विराड् गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ गुणान्तरैः परमात्मनोमहत्त्वं वर्ण्यते ।

अब अन्य गुणों से परमात्मा का महत्व कथन करते हैं।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एष धिया यात्यण्व्या शूरो रथेभिराशुभिः ।
गच्छन्निन्द्रस्य निष्कृतम् ॥ १ ॥

एषः । धिया । याति । अण्व्या । शूरः । रथेभिः । आशुऽभिः । गच्छन् । इन्द्रस्य । निःऽकृतम् ॥१॥

पदार्थः—(एषः) अयं परमात्मा (धिया, अण्व्या) सूक्ष्मया स्वधारणशक्त्या (याति) सर्वत्र प्राप्नोति (रथेभिः) शक्तिभिः (आशुभिः) शीघ्रगामिभिः (इन्द्रस्य, निष्कृतम्) जीवान् उद्धर्तुम् (शूरः) अविद्यादिदोषान् शमयन् (गच्छन्) जगन्निर्माणरूपकर्म करोति ।

पदार्थ—(एषः) यह परमात्मा (धिया, अण्व्या) सूक्ष्म अपनी धारणशक्ति से (याति) सर्वत्र प्राप्त हो रहा है (रथेभिः, आशुभिः) अपनी शीघ्रगामिनी शक्तियों से (इन्द्रस्य, निष्कृतं) जीवात्मा के उद्धार के लिये (शूरः) "शृणाति हन्तीतिशूरः" अविद्यादि दोषों को हनन करने वाला (गच्छन्) जगद्रचनारूप कर्म करता है ॥

भावार्थ—परमात्मा जीवों को कर्मों का फल भुगाने के लिये इस संसाररूपी रचना को रचता है और वह अपनी विविध शक्तियों के द्वारा सर्वत्र परिपूर्ण हो रहा है अर्थात् जिस २ स्थान में परमात्मा की व्यापकता है उस २ स्थान में परमात्मा अनन्त शक्तियों के साथ विराजमान है ॥ १ ॥

एष पुरू धियायते बृहते देवतातये ।
यत्रामृतास आसते ॥ २ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एषः । पुरु । धियाऽयते । बृहते । देवऽतातये । यत्र अमृतासः । आसते ॥२॥

पदार्थः—(एषः) असौ परमात्मा (पुरु, धियायते) अनन्तविज्ञानानां दाताऽस्ति (बृहते, देवतातये) शश्वत् जगति देवत्वं विवर्द्धयिषुः (यत्र) यत् प्राप्य (अमृतासः, आसते) अमृतत्वं प्राप्यते ।

पदार्थ—(एषः) यह पूर्वोक्त परमात्मा (पुरु, धियायते) अनन्त विज्ञानों का दाता है (बृहते, देवतातये) सदैव संसार में देवत्व फैलाने का अभिलाषी है (यत्र) जिस ब्रह्म को प्राप्त होकर (अमृतासः, आसते) अमृतभाव को प्राप्त हो जाते हैं ।

भावार्थ—परमात्मा अनन्तकर्मा है उस की शक्तियों के पारावार को कोई पा नहीं सकता, इसी अभिप्राय से कहा है "तस्मिन्दृष्टे परावरे" उस परावर ब्रह्म के जानने पर हृदय की ग्रन्थि खुल जाती है और इसी अभिप्राय से "परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते" इत्यादि वाक्यों में उपनिषत्कार ऋषियों ने भी कहा है कि उसकी शक्तियें असंख्यात हैं उसी को जान कर मनुष्य अमृत पद को लाभ कर सकता है अन्यथा नहीं ॥२॥

एष हितो वि नीयतेऽन्तः शुभ्रावता पथा ।
यदी तुञ्जन्ति भूर्णयः ॥ ३ ॥

एषः । हितः । वि । नीयते । अन्तरिति । शुभ्रऽवता पथा । यदि । तुञ्जन्ति । भूर्णयः ॥३॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(यदि, भूर्णयः) यद्युपासकाः (तुञ्जन्ति) तदाज्ञां पालयन्ति तदा (शुभ्रावता) शुभेन (पथा) मार्गेण (एषः, हितः) तं हितकरम्, (अन्तः, विनीयते) अन्तःकरणे सुस्थापयन्ति ।

पदार्थ—(यदि, भूर्णयः) यदि उपासक लोग (तुञ्जन्ति) उसकी आज्ञा का पालन करते हैं तो (शुभ्रावता) शुभ (पथा) मार्ग-द्वारा (एषः, हितः) उस हितकारक परमात्मा को (अन्तः, विनीयते) अन्तःकरण में स्थिर करते हैं ।

भावार्थ—जो लोग यम नियमों का पालन करते हैं वे अपने अन्तःकरण में परमात्मसत्ता का साक्षात्कार करते हैं और परम पद को लाभ करते हैं ॥३॥

एष शृङ्गाणि दोधुवच्छिशीते यूथ्यो३ वृषा ।
नृम्णा दधान ओजसा ॥ ४ ॥

एषः । शृङ्गाणि । दोधुवत् । शिशीते । यूथ्यः । वृषा । नृम्णा । दधानः । ओजसा ॥४॥

पदार्थः—(एषः) उक्त ईश्वरः (शृङ्गाणि) अखिललोकान् (दोधुवत्) चालयति (शिशीते) सर्वत्रगोऽस्ति (यूथ्यः) सर्वपतिः (वृषा) कामनाप्रदः (ओजसा) स्वतेजसा (नृम्णा) कृत्स्नमैश्वर्यं (दधानः) धारयन् तिष्ठति ।

पदार्थ—(एषः) उक्त परमात्मा (शृङ्गाणि) सब ब्रह्माण्डों को (दोधुवत्) गतिशील करता है (शिशीते) सर्वव्यापक है (यूथ्यः)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सबका पति है (वृषा) कामनाओं की वृष्टि करने वाला है (ओजसा) अपने पराक्रम से (नृम्णा) सब ऐश्वर्यों को (दधानः) धारण कर रहा है

भावार्थ—वही परमात्मा कोटानुकोटि ब्रह्माण्डों का चलानेवाला है, और उसी ने इन ब्रह्माण्डों में विद्युत आदि शक्तियों को उत्पन्न करके अनेक प्रकार के आकर्षण विकर्षण आदि गुणों को उत्पन्न किया है एक मात्र उसकी उपासना करने से मनुष्य सद्गति को लाभ कर सकता है ॥४॥

एष रुक्मिभिरीयते वाजी शुभ्रेभिरंशुभिः ।
पतिः सिन्धूनां भवन् ॥ ५ ॥

एषः । रुक्मिऽभिः । ईयते । वाजी । शुभ्रेभिः । अंशुऽभिः ।
पतिः । सिंधूनां । भवन् ॥५॥

पदार्थः—(एषः, वाजी) अनन्तबलोऽयं परमात्मा (रुक्मिभिः, शुभ्रेभिः, अंशुभिः) दीप्तिमतीभिः स्वच्छाभिः प्रकाशमयशक्तिभिः (ईयते) सर्वत्र व्याप्नोति (सिन्धूनाम्) स्यन्दनशीलप्रकृतीनाम् (पतिः, भवन्) पतिःसोऽस्ति ।

पदार्थ—(एषः, वाजी) अनन्तबलवाला यह पूर्वोक्त परमात्मा (रुक्मिभिः) दीप्तिमती (शुभ्रेभिः) निर्मल (अंशुभिः) प्रकाशरूप शक्तियों से (ईयते) सर्वत्र व्याप्त हो रहा है (सिन्धूनाम्) स्यन्दनशील सब प्रकृतियों का (पतिः, भवन्) वह पति है ।

भावार्थ—प्रकृति परिणामिन नित्य है परमात्मा की कृति अर्थात् यत्न से प्रकृति परिणामभाव को धारण करती है उस से महत्तत्व और महत्तत्त्व से अहंकार और अहंकार से पञ्चतन्मात्र इस प्रकार सृष्टि की रचना होती है, इस अभिप्राय से उसको स्यन्दनशील अर्थात् बहनेवाला

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रकृतियों का अधिपति कथन किया गया है उक्तप्रकार के गुणों वाला परमात्मा उस पुरुष के हृदय में अपनी अनन्त शक्तियों का आविर्भाव करता है जो पुरुष अपनी अनन्य भक्ति से उसकी उपासना करता है ॥५॥

एष वसूनि पिब्दना परुषा ययिवाँ अति ।
अव शादेषु गच्छति ॥ ६ ॥

एषः । वसूनि । पिब्दना । परुषा । ययिऽवान् । अति । अव । शादेषु । गच्छति ॥६॥

पदार्थः—(एषः) असौ परमात्मा (वसूनि) ऐश्वर्याणि (पिब्दना) अपहरतः (परुषा) दारुणान् राक्षसान् (अति, ययिवान्) अतिक्रम्य (शादेषु) युद्धेषु भक्तान् (अवगच्छति) बहुविधज्ञानादीनि साधनानि प्रदाय रक्षति ।

पदार्थ—(एषः) यह पूर्वोक्त परमात्मा (वसूनि) ऐश्वर्यों को (पिब्दना) छीनने वाले (परुषा) कठोर राक्षसों को (अति, ययिवान्) अतिक्रमण करके (शादेषु) युद्धों में भक्तों की (अवगच्छति) अनेक प्रकार से ज्ञानादिकों को देकर रक्षा करता है ।

भावार्थ—जो पुरुष अपने पवित्र भावों से परमात्मपरायण होते हैं परमात्मा उनकी अवश्यमेव रक्षा करता है ॥ ६ ॥

एतं मृजन्ति मर्ज्यमुप द्रोणेष्वायवः ।
प्रचक्राणं महीरिषः ॥ ७ ॥

एतं । मृजन्ति । मर्ज्यम् । उप । द्रोणेषु । आयवः । प्रऽचक्राणम् । महीः । इषः ॥७॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(आयवः) मनुष्याः (मर्ज्यम्, एतम्) ध्
तव्यमिमं परमात्मानम् (द्रोणेषु) अन्तःकरणेषु संस्थाप्य (उ
मृजन्ति) उपासते (महीः, इषः) यो हीश्वरः महदन्नाद्यैश्व
(प्रचक्राणम्) कुर्वन्नास्ते ॥

पदार्थ—(आयवः) मनुष्य (मर्ज्यं, एतम्) ध्यान करने यो
इस परमात्मा को (द्रोणेषु) अन्तःकरणों में रख कर (उप, मृजन्ति
उपासना करते हैं, (प्रचक्राणं) जो परमात्मा (महीः, इषः) बड़े भा
अन्नाद्यैश्वर्यों का दाता है ।

भावार्थ—उपासकों को चाहिये कि वे उपासनासमय में प
मात्मा के विराट्स्वरूप का ध्यान करते हुए उसके गुणों द्वारा उस
उपासन करें अर्थात् उसकी शक्तियों का अनुसन्धान करते हुए उस
विराट्स्वरूप को भी अपनी बुद्धि में स्थिर करें ॥७॥

एतमु त्यं दश क्षिपो मृजन्ति सप्त धीतयः ।
स्वायुधं मदिन्तमम् ॥ ८ ॥ ५ ॥

एतं । ऊं इति । त्यं । दश । क्षिपः । मृजंति । सप्त ।
धीतयः । सुऽआयुधं । मदिन्ऽतमं ॥८॥५॥

पदार्थः—(एतं त्यं, उ) तं सर्वगुणसम्पन्नं परमात्मान
(दशक्षिपः) दशेन्द्रियाणि (सप्तधीतयः) सप्तेन्द्रियवृत्तय
(मृजन्ति) प्रकटयन्ति च परमात्मा (स्वायुधं) स्वतन्त्रत
विराजते यश्च (मदिन्तमम्) सर्वानन्ददाताऽस्ति ।

पदार्थ—(एतं, त्यम्, उ) उस सर्वगुणसम्पन्न परमात्मा
(दश, क्षिपः) दश इन्द्रियें और (सप्त, धीतयः) और सात धार

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दिव्यतियें (मृजन्ति) प्रकट करती हैं (स्वायुधं) जो स्वतन्त्रसत्तावाला है और (मदिन्तमम्) सब को आनन्द देने वाला है ।

भावार्थ—परमात्मा अपनी स्वतन्त्रसत्ता से विराजमान है जब वह श्रेष्ठों का उद्धार और दुष्टों का दमन करता है तब उसे किसी शस्त्रादि साधन की आवश्यकता नहीं किन्तु उसका स्वरूप ही आयुध का काम करता है इस प्रकार के स्वतन्त्रसत्तासम्पन्न परमात्मा को हृदय में धारण करने वाले अत्यन्त आनन्द को प्राप्त होते है ॥८॥९॥

पञ्चदशसूक्तं पञ्चमो वर्गश्च समाप्तः ।

यह पन्द्रहवां सूक्त और पांचवां वर्ग समाप्त हुआ ।

—❀—

अथाष्टर्चस्य षोडशसूक्तस्य--

१–८ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः–१ विराड् गायत्री । २, ८ निचृद्गायत्री ३–७ गायत्री ।

षड्जः स्वरः ॥

अथ सात्विकभावोत्पादका रसा वर्ण्यन्तेः–

अब सात्विकभाव को उत्पन्न करनेवाले रसों का वर्णन करते हैंः—

प्र ते सोतार ओण्यो३ रसं मदाय घृष्वये ।
सर्गो न तक्त्येतशः ॥१॥

प्र । ते । सोतारः । ओण्योः । रसं । मदाय । घृष्वये ।
सर्गः । न । तक्ति । एतशः ॥१॥

पदार्थः—(प्रसोतारः) भो जिज्ञासवः ! (ते) युष्माकं (मदाय) आनन्दाय (घृष्वये) शत्रुनिवर्हणाय (ओण्योः)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्यावापृथिव्योर्मध्ये (रसं) सौम्यस्वभावप्रदाता रसः भवद्भ
(सर्गः) सृष्टः यः (एतशः, न, तार्क्षि) विद्युदिव तीक्ष्णतां ददाति

पदार्थ—(प्रसोतारः) हे जिज्ञासु लोगो ! (ते) तुम्हारे (मदा
आनन्द के लिये और (घृष्वये) शत्रुओं के नाश के लिये (ओण्योः
द्यावा पृथिवी के मध्य में (रसम्) सौम्य स्वभाव का देने वाला र
(सर्गः) बनाया है जो (एतशः, न तर्क्षि) विद्युत् के समान तीक्ष्ण
देने वाला है ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि हे मनुष्यो ! तुम ऐ
रस का पान करो जिस से तुम में बल उत्पन्न हो और शत्रुओं पर वि
जयी होने के लिये तुम सिंह के समान आक्रमण कर सको । यहां
रस के अर्थ किसी रस विशेष के नहीं किन्तु आह्लादजनक रसमात्र के हैं

वा यों कहो कि सौम्य स्वभाव उत्पन्न करने वाले रस के हैं
लिये इसको सोमरस भी कहा जा सकता है, और 'धात्वर्थ' भी इसम
यह है कि 'रसआस्वादने रस्यते स्वाद्यत इति रसः' जो आनन्द के
वा आनन्द के लिये आस्वादन किया जाय उसका नाम यहां रस है
इस प्रकरण में यह शंका नहीं करनी चाहिये कि कहीं सोम के अर्थ र
के और कहीं सोम के अर्थ ईश्वर के ऐसा व्यत्यय क्यों ? इसका उत्त
यह है कि "स्याच्चैकस्य ब्रह्मशब्दवत्" २ । ३ । ५ । इस ब्रह्मसूत्र में इ
बात का निर्णय कर दिया है कि एक प्रकरण ही नहीं किन्तु एक वाक्य
में भी तात्पर्य भेद से दो अर्थ हो जाते हैं जैसे कि "तपसा ब्रह्मविजि
ज्ञासस्व तपोब्रह्म" तै० ३ । २ । तप से ब्रह्म की जिज्ञासा करो औ
तप ब्रह्म है, यहां पहले ब्रह्मशब्द के अर्थ ईश्वर के और द्वितीय ब्रह्मशब्द
के अर्थ तप के हैं । और यह नियम वेद, ब्राह्मण, उपनिषद् और शास्त्र
सर्वत्र ही पाया जाता है जैसे कि शतपथ में यज्ञ नाम यज्ञका भी औ
यज्ञ नाम ईश्वर का भी है । अग्नि नाम भौतिक अग्नि का भी औ
अग्नि नाम ईश्वर का भी है ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इस नियम के अनुसार यहां सोम के अर्थ कहीं सोम रस के और कहीं ईश्वर के किये गये हैं, इस में कोई दोष नहीं ॥१॥

क्रत्वा दक्षस्य रथ्यमपो वसानमन्धसा ।
गोषामण्वेषु सश्चिम ॥२॥

क्रत्वा । दक्षस्य । रथ्यं । अपः । वसानं । अंधसा । गोऽसाम् । अण्वेषु । सश्चिम ॥ २ ॥

पदार्थः—(दक्षस्य) चातुर्य्यदातारम् (रथ्यम्) स्फूर्तिदातारम् (अन्धसा, वसानम्) अन्नेभ्यो निष्पादितम् (गोऽसां) इन्द्रियाणाम् (अण्वेषु) सूक्ष्मशक्तिषु बलोत्पादकम् (क्रत्वा, सश्चिम) एवंविधं रसं कर्मभिरहमुत्पादयेयम् ।

पदार्थ—(दक्षस्य) चतुराई का देने वाला (रथ्यम्) स्फूर्ति का देने वाला (अन्धसा, वसानम्) अन्नों से जिस की उत्पत्ति है (गोषाम्) इन्द्रियों को (अण्वेषु) सूक्ष्मशक्तियों में बल उत्पन्न करने वाला रस (क्रत्वा, सश्चिम) कर्मों के द्वारा हम प्राप्त करें ।

भावार्थ—जीवों की प्रार्थना द्वारा ईश्वर उपदेश करते हैं कि हे जीवो ! तुम ऐसे रस की प्राप्ति की प्रार्थना करो जिस से तुम्हारी चतुराई बढ़े तुम्हारी स्फूर्ति बढ़े और तुम्हारी इन्द्रियों की शक्तियें बढ़ें और तुम ऐश्वर्यसम्पन्न होओ ॥२॥

अनंसमप्सु दुष्टरं सोमं पवित्र आ सृज ।
पुनीहीन्द्राय पातवे ॥३॥

अनंसं । अप्ऽसु । दुस्तरं । सोमं । पवित्रे । आ । सृज । पुनीहि । इंद्राय । पातवे ॥ ३ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—हे परमात्मन् ! भवान् (पवित्रे) श्रेष्ठजनाय (सोमं) सोमरसम् उत्पादयतु यः (अनंसं) क्रूरकर्मभिः अप्राप्यम् (अपऽसु) यस्य संस्कारः दुग्धेषु क्रियते अन्यच्च (दुस्तरं) आसुरसम्पत्तिमद्भिः दुस्तरमस्ति (इंद्राय) कर्मयोगिनः (णः (पातवे) पानाय उक्तविधं रसं भवान् उत्पादयतु ।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (पवित्रे) श्रेष्ठ लोगों के लिये (सोमं) सोम रस को उत्पन्न करो जो (अनंसम्) क्रूर स्वभाव वालों के लिये अप्राप्य है और (अप्सु) जिसका संस्कार दूध में किया जाता है और जो (दुष्टरम्) आसुरी सम्पत्ति वालों के लिये दुस्तर है (इन्द्राय) कर्मयोगी के (पातवे) पीने के लिये ऐसे रस को तुम पवित्र बनाओ ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि हे मनुष्यो ! तुम दैवी सम्पत्ति के देने वाले अर्थात् सौम्य स्वभाव के बनाने वाले सोम रस की प्रार्थना करो ताकि तुम कर्मयोगियों को कर्मों में तत्पर करने के लिये पर्याप्त हो।

तात्पर्य यह है कि जो पुरुष अन्नादि औषधियों के रसों को पान करके अपने कामों में तत्पर होते हैं वे पूरे २ कर्मयोगी बन सकते हैं और जो लोग मादक द्रव्यों का सेवन करते हैं वह अपनी इन्द्रियों की शक्तियों को नष्ट भ्रष्ट करके स्वयं भी नाश को प्राप्त हो जाते हैं ॥३॥

प्र पुनानस्य चेतसा सोमः पवित्रे अर्षति ।
क्रत्वा सधस्थमासदत् ॥४॥

प्र । पुनानस्य । चेतसा । सोमः । पवित्रे । अर्षति । क्रत्वा । सधऽस्थं । आ । असदत् ॥ ४ ॥

पदार्थः—(चेतसा, प्र, पुनानस्य) चित्तं पवित्रीकुर्व

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

णस्य द्रव्यस्य यः (सोमः) सोमरसोऽस्ति सः (पवित्रे) सत्कर्मसु ज्ञानमुत्पादयति ततः स मनुष्यः (कृत्वा) शुभकर्माणि कृत्वा (सधऽस्थं) सद्गतिं (आसदत्) प्राप्नोति ।

पदार्थ—(चेतसा, प्र, पुनानस्य) चित्त को पवित्र करने वाले द्रव्य का जो (सोमः) सोमरस है वह (पवित्रे, अर्षति) पवित्र लोगों में ज्ञान को उत्पन्न करता है फिर वह मनुष्य (कृत्वा) शुभकर्मों को करके (सधस्थम्) सद्गति को (आसदत्) प्राप्त होता है ।

भावार्थ—सोमरस, जो कि पवित्र और सुन्दर द्रव्यों से निकाला गया है अर्थात् जो स्वभाव को सौम्य बनाते हैं उनका रस मनुष्य में शुभ बुद्धि को उत्पन्न करता है ॥४॥

प्र त्वा नमोभिरिन्दव इन्द्र सोमा असृक्षत ।
महे भराय कारिणः ॥५॥

प्र । त्वा । नमःऽभिः । इंदवः । इंद्र । सोमाः । असृक्षत ।
महे । भराय । कारिणः ॥ ५ ॥

पदार्थः—(इन्द्र) भोः शूरवीर ! मया (त्वा) भवदर्थं (नमःऽभिः) अन्नादिद्वारेण (इन्दवः, सोमाः) परमैश्वर्यस्य दातारः सौम्यस्वभावस्य उत्पादकाः (प्रासृक्षत) रसाः उत्पादिताः ये (कारिणः) कर्मयोगिणे (महे, भराय) अत्यन्तपुष्टिप्रदाः सन्ति ।

पदार्थ—(इन्द्र) हे शूरवीर मैंने (त्वा) तुम्हारे लिये (नमोभिः) अन्नादि द्वारा (इन्दवः, सोमाः) परमैश्वर्य के देने वाले और सौम्यस्वभाव बनानेवाले सुन्दर रस (प्रासृक्षत) उत्पन्न किये हैं जो कि (कारिणः) कर्मयोगी पुरुष के लिये (महे, भराय) अत्यन्त पुष्टि करने वाले हैं ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि हे शूरवीर लोगो। मैंने तुम्हारे लिये अनन्त प्रकार के रसों को उत्पन्न किया है जिनका उपभोग करके तुम आह्लादित होकर अन्यायकारी शत्रुओं के विजय के लिये शक्तिसम्पन्न हो सकते हो ॥५॥

अब इस बात को कथन करते हैं कि किस प्रकार का शूरवीर युद्ध में उपयुक्त हो सकता है।

पुनानो रूपे अव्यये विश्वा अर्षन्नभि श्रियः।
शूरो न गोषु तिष्ठति ॥६॥

पुनानः। रूपे। अव्यये। विश्वाः। अर्षन्। अभि। श्रियः। शूरः। न। गोषु। तिष्ठति ॥ ६ ॥

पदार्थः—(अव्यये रूपे) निराकारस्य परमात्मनो विज्ञानेन (पुनानः) येन आत्मा पवित्रीकृतः (विश्वाः, श्रियः) संपूर्णम् ऐश्वर्य्यं (अभ्यर्षन्) भुञ्जानोपि (न, गोषु, तिष्ठति) य इन्द्रियवशवर्ती न भवति स एव (शूरः) वीरो भवितुमर्हति।

पदार्थ—(अव्यये, रूपे) निराकार परमात्मा के स्वरूप के विश्वास से (पुनानः) जिसने अपने आप को पवित्र किया है (विश्वाः श्रियः) सम्पूर्ण ऐश्वर्यों को (अभ्यर्षन्) धारण करता हुआ भी (न, गोषु, तिष्ठति) जो इन्द्रियों के वशीभूत नहीं होता वही (शूरः) वीर कहला सकता है।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि हे शूरवीर पुरुषो। तुम संपूर्ण ऐश्वर्यों को भोगते हुये भी इन्द्रियों के वशीभूत मत होओ क्योंकि इन्द्रियों के वशवर्ती लोग शूरवीरता के धर्म को कदापि धारण नहीं कर सकते इस लिये शूर वीरों के लिये संयमी बनना अत्यावश्यक है ॥६॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दिवो न सानु पिप्युषी धारा सुतस्य वेधसः ।
वृथा पवित्रे अर्षति ॥७॥

दिवः । न । सानु । पिप्युषी । धारा । सुतस्य । वेधसः ।
वृथा । पवित्रे । अर्षति ॥ ७ ॥

पदार्थः—(पवित्रे) तस्मिन् पात्रे (पिप्युषी) तर्पयित्री (वेधसः सुतस्य, धारा) मातुर्दुग्धस्य धारा वा सोमादिरसानाम् धारा (वृथा, अर्षति) वृथैव पतति यः तद्धारापात्ररूपो मनुष्यो संयमी न भवति यथा (दिवः, न, सानु) अन्तरिक्षात् पर्वतोपरि पतिता मेघधारा वृथैव भवति ।

पदार्थ—(पवित्रे) उस पात्र में (पिप्युषी) तृप्ति करने वाली (वेधसः सुतस्य, धारा) माता के दूध की या सोमादि रस की धारा (वृथा, अर्षति) वृथा ही गिरती है जो इन्द्रिय संयमी नहीं है जिस तरह (दिवः, न, सानु) अन्तरिक्ष से उन्नत शिखर पर मेघ की धारा गिर कर व्यर्थ ही हो जाती है ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि हे शूरवीर पुरुषो ! तुम संयमी बनो इन्द्रियारामी मत बनो इन्द्रियारामी पुरुषों में जो सोमादि रसों की धारायें पड़ती हैं वे मानों इस प्रकार पड़ती हैं जिस प्रकार चोटी के ऊपर पड़ता हुआ जल इधर उधर बह जाता है और उस में कोई विचित्र भाव उत्पन्न नहीं करता इसी प्रकार असंयमियों का दुग्धादि रसों का उपभोग करना है । यहां चोटी पर जल गिरने के दृष्टान्त से परमात्मा ने स्पष्टरीति से बोधन कर दिया कि जो पुरुष वीर्य ही का संयम नहीं करते न वे धीर वीर बन सकते हैं न वे ज्ञानी विज्ञानी ध्यानी बन सकते हैं । उक्त सब प्रकार की पदवियों के लिये मनुष्य का संयमी बनना अत्यन्त आवश्यक है । इसी अभिप्राय से योगसूत्र

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

में कहा है कि 'ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः' यो० साध० ३८ ब्रह्मच प्रतिष्ठा अर्थात् इन्द्रियसंयमी बनने से पुरुष को वीर्य का लाभ होता है ॥७

त्वं सोम विपश्चितं तना पुनान आयुषु ।
अव्यो वारं वि धावसि ॥८॥६॥

त्वं । सोम । विपःऽचितं । तना । पुनानः । आयुषु । अव्यः वारं । वि । धावसि ॥८॥६॥

पदार्थः—(सोम) हे सौम्यस्वभाव परमात्मन् ! (आयुषु) मनुष्येषु (विपःऽचितं, तना) विद्वांसं सम्य प्रकारेण (पुनानः) पवित्रीकुर्वाणः (अव्यः) रक्षार्थम् (वारं उक्तवरीतारंविद्वांसं (वि, धावसि) प्राप्नोषि ।

पदार्थ--(सोम) हे सौम्यस्वभाव परमात्मन् ! (त्वम्) (आयुषु) मनुष्यों में (विपश्चितं, तना) विद्वान् को भली भाँति (पुना पवित्र करते हुये (अव्यः) रक्षा के लिये (वारम्) उस वरण को (विधावसि) प्राप्त होते हो ।

भावार्थ—जो पुरुष परमात्मा को वरण करता है अर्थात् मात्र उसी पर विश्वास रख कर उसी को उपास्य देव ठहराता है की परमात्मा अवश्यमेव रक्षा करता है, वार शब्द का अर्थ यहाँ है कि 'वृणुते इति वारः' जो वरण करे वह वार है इसी प्रकार चराचरंजगदिति सोमः' इस मंत्र में सोम के अर्थ परमात्मा के तात्पर्य यह है कि उक्त परमात्मा की उपासना करने वाला पुरुष कृतकार्य होता है क्योंकि परमात्मा उसका रक्षक होता है इस उपासक के लिये परमात्मपरायण होना आवश्यक है ॥८॥

षोडशं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः ।
यह सोलहवाँ सूक्त और छठा वर्ग समाप्त हुआ ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथाष्टर्चस्य सप्तदशस्य सूक्तस्य--

१–८ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः–१, ३–८ गायत्री । २ भुरिग्गायत्री । षड्जः स्वरः ॥

अधुना उपासकस्य हृदये परमात्मप्रकाशः कथ्यते ।

अब उपासक के हृदय में परमात्मा का प्रकाश कथन करते हैं ।

प्र निम्नेनेव सिन्धवो घ्नन्तो वृत्राणि भूर्णयः ।
सोमा असृग्रमाशवः ॥१॥

प्र । निम्नेन॑ऽइव । सिंधवः । घ्नंतः । वृत्राणि । भूर्णयः ।
सोमाः । असृग्रं । आशवः ॥ १ ॥

पदार्थः—(सोमाः) पूर्वोक्तः सौम्यस्वभाववान् परमात्मा (वृत्राणि, घ्नन्तः) अज्ञानानि नाशयन् (भूर्णयः) द्रुततरगमनशीलः (आशवः) सर्वव्यापकः (सिन्धवः, प्रनिम्नेन, इव) यथा नद्यः निम्नाभिमुखं गच्छन्ति तथैव सः (असृग्रम्) भक्तहृदयेषु प्रकाशते ।

पदार्थ—(सोमाः) उक्तसौम्यस्वभाव वाला परमात्मा (वृत्राणि, घ्नन्तः) अज्ञानों का नाश करता हुआ "वृणोत्याच्छादयत्यात्मानमिति-वृत्रमज्ञानम्" (भूर्णयः) शीघ्रगतिशील (आशवः) सर्वव्यापक "अश्नुते व्याप्नोति सर्वमित्याशुः" (सिन्धवः, प्रनिम्नेन, इव,) नदियें जैसे शीघ्रगतिशील नीचे की ओर जाती हैं उसी प्रकार वह (असृग्रम्) भक्तों के हृदय में प्रकाशित होता है ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ--जो लोग शुद्धहृदय से उसकी उपासना करते और यम नियमों द्वारा अपने आत्मा को संस्कृत करते हैं उनके हृ में अतिशीघ्र परमात्मा का प्रकाश उत्पन्न होता है ॥१॥

अभि सुवानास इन्दवो वृष्टयः पृथिवीमिव ।
इन्द्रं सोमासो अक्षरन् ॥२॥

अभि । सुवानासः । इंदवः । वृष्टयः । पृथिवींऽइव । इंद्रं सोमासः । अक्षरन् ॥ २ ॥

पदार्थः--(इन्दवः) सर्वैश्वर्यसम्पन्नः (सोमासः परमात्मा (अभि, सुवानासः) भक्तैः सेव्यमानः (इन्द्रम् स्वसेवकमैश्वर्यसम्पन्नं सम्पाद्य (अक्षरन्) दयावृष्ट्या आर्द्र यथा (वृष्टयः पृथिवीम्, इव) वृष्टयः भूमिमार्द्रयन्ति तद्व

पदार्थ--(इन्दवः) सर्वैश्वर्यसम्पन्न (सोमासः) परमा (अभि, सुवानासः) भक्तों से सेवन किया गया (इन्द्रम्) सेवक ऐश्वर्यसम्पन्न करके (अक्षरन्) दयावृष्टि से आर्द्र करता है जि प्रकार (वृष्टयः, पृथीवीम्, इव) वृष्टियें पृथिवी को आर्द्र करती हैं प्रकार सबको आर्द्र करता है ।

भावार्थ--जिस प्रकार वर्षाकाल की वृष्टियें धरातल को भि कर के नाना प्रकार के अंकुर उत्पन्न करती हैं इसी प्रकार परमा की कृपादृष्टियें उपासकों के हृदय में नाना प्रकार के ज्ञान विज्ञा दिभावों को उत्पन्न करती हैं ॥२॥

अत्यूर्मिर्मत्सरो मदः सोमः पवित्रे अर्षति ।
विघ्नन्रक्षांसि देवयुः ॥३॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अतिऽऊर्मिः । मत्सरः । मदः । सोमः । पवित्रे । अर्षति । विऽघ्नन् । रक्षाँसि । देवऽयुः ॥ ३ ॥

पदार्थः—(अत्यूर्मिः) विघ्नकारका अखिलसंसारबाधा अतिक्रान्तः (मत्सरः) प्रभुत्वाभिमानी (मदः) हर्षप्रदः (सोमः) उक्तपरमात्मा (रक्षांसि, विघ्नन्) दुराचारान्नाशयन् (देवयुः) सत्कर्मणः वाञ्छन् (पवित्रे, अर्षति) य उपासनया पात्रतां लब्धस्तस्मिन्विराजते ॥

पदार्थ—(अत्यूर्मिः) विघ्न पैदा करने वाली सम्पूर्ण संसार की बाधाओं को अतिक्रमण करने वाला (मत्सरः) प्रभुता के अभिमान वाला (मदः) हर्षप्रद (सोमः) उक्त परमात्मा (रक्षांसि, विघ्नन्) दुराचारियों को नष्ट करता हुआ और (देवयुः) सत्कर्म्मियों को चाहता हुआ (पवित्रे, अर्षति) जो कि उपासना द्वारा पात्रता को प्राप्त है, उसमें विराजमान होता है ।

भावार्थ—जिस पुरुष ने ज्ञानयोग और कर्मयोगद्वारा अपने आत्मा को संस्कृत किया है वह ईश्वर के ज्ञान का पात्र कहलाता है, उक्त पात्र के हृदय में परमात्मा अपने ज्ञान को अवश्यमेव प्रकट करता है जैसा कि "यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुते तनुं स्वाम्" क०, १।२३ । जिसको यह पात्र समझता है उसको अपना आत्मा समझ कर स्वीकार करता है ॥३॥

आ कलशेषु धावति पवित्रे परि षिच्यते ।
उक्थैर्यज्ञेषु वर्धते ॥४॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आ । कलशेषु । धावति । पवित्रे । परि । सिच्यते । उक्थैः यज्ञेषु । वर्धते ॥४॥

पदार्थः—स पूर्वोक्तः परमात्मा (कलशेषु, आ, धावति) वेदादिवाक्येषु वाच्यतया सम्यग् विराजते (पवित्रे, परि सिच्यते) पात्रे ह्यभिषिक्तो भवति (उक्थैः, यज्ञेषु, वर्धते) स्तुतिभिर्यज्ञेषु प्रकाश्यते ।

पदार्थ—वह पूर्वोक्त परमात्मा (कलशेषु, आ, धावति) 'कलयति इति कलशः' वेदादिवाक्यों में भलीभांति वाच्यरूप से विराजमान है (पवित्रे, परिसिच्यते) और पात्र में अभिषेक को प्राप्त होता है और (उक्थैः, यज्ञेषु, वर्धते) स्तुतिद्वारा यज्ञों में प्रकाशित किया जाता है ।

भावार्थ—जब वेदवेत्ता लोग मधुर ध्वनि से यज्ञों में उक्त परमात्मा का स्तवन करते हैं तो मानों उसका साक्षात् रूप भान होने लगता है ॥४॥

अति त्री सोम रोचना रोहन्न भ्राजसे दिवम् ।
इष्णन्त्सूर्यं न चोदयः ॥५॥

अति । त्री । सोम । रोचना । रोहन् । न । भ्राजसे । दिवम् । इष्णन् । सूर्यं । न । चोदयः ॥५॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन् ! (त्री, रोचना, अति) भवान् त्रीनपि लोकानतिक्रम्य (रोहन्, न) सर्वोपरि विराजमानः (दिवम् भ्राजसे) द्युलोकं दीपयति (न) तथा (इष्णन्) सर्वं व्याप्नुवन् (सूर्यम्, चोदयः) सूर्यमपि प्रेरयति ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (त्री, रोचना, अति) आप तीनों लोकों को अतिक्रमण करके (रोहन, न) सर्वोपरि विराजमान होकर (दिवं, भ्राजसे) द्युलोक को प्रकाशित करते हैं (न) और (इष्णन्) सर्वत्र गतिशील होकर (सूर्यम्, चोदयः) सूर्य की भी प्रेरणा करते हैं ।

भावार्थ—परमात्मा की सत्ता से पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्यौ ये तीनों लोक स्थिर हैं और उसी की सत्ता में सूर्य चन्द्रमा आदि तेजस्वी पदार्थ सब स्थिर हैं । अर्थात् उसी के नियम में विराजमान हैं 'भयादस्याग्निस्तपति भयात्तपति सूर्यः भयादिन्द्रश्च वायुश्च मृत्युर्धावति पञ्चमः' क० २ । ६ ॥ ५ ॥

अभि विप्रा अनूषत मूर्धन्यज्ञस्य कारवः ।
दधानाश्चक्षसि प्रियम् ॥६॥

अभि । विप्राः । अनूषत । मूर्धन् । यज्ञस्य । कारवः । दधानाः । चक्षसि । प्रियं ॥६॥

पदार्थः—(कारवः) कर्मकाण्डिनः (चक्षसि, प्रियं, दधानाः) तत्र सर्वद्रष्टरि प्रेम दधानाः (विप्राः) विद्वांसश्च (यज्ञस्य, मूर्धनि) यज्ञारम्भे (अभ्यनूषत) तं परमात्मानं साधु स्तुवन्ति ।

पदार्थ—(कारवः) कर्मकाण्डी और (चक्षसि, प्रियं, दधानाः) उस सर्वद्रष्टा परमेश्वर में प्रेम को धारण करते हुये (विप्राः) विद्वान् लोग (यज्ञस्य, मूर्धनि) यज्ञ के प्रारम्भ में (अभ्यनूषत) उस परमात्मा की भलीभांति स्तुति करते हैं ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—यज्ञ के प्रारम्भ में उद्गात आदि लोग पहले प
मात्मा के महत्व का गायन करके फिर यज्ञ के अन्य कर्मों का आर
करते हैं ॥६॥

तमु त्वा वाजिनं नरो धीभिर्विप्रा अवस्यवः ।
मृजन्ति देवतातये ॥७॥

तं । ऊं इति । त्वा । वाजिनं । नरः । धीभिः । विप्राः
अवस्यवः । मृजंति । देवऽतातये ॥७॥

पदार्थः—हे परमेश्वर ! (अवस्यवः) रक्षामिच्छन्
(विप्राः, नरः) विद्वांसो जनाः (देवतातये) यज्ञाय (तम्
उ) पूर्वोक्तगुणसम्पन्नम् (वाजिनम्) अन्नाद्यैश्वर्यस्य दात
रम् (त्वा) भवन्तम् (धीभिः) बुद्धिभिः (मृजन्ति) ल
ज्ञानविषयं कुर्वन्ति ।

पदार्थ—हे परमेश्वर ! (अवस्यवः) रक्षा चाहने वाले (विप्रा
नरः) विद्वान् लोग (देवतातये) यज्ञ के लिये (तम्, उ) पूर्वोक्तगुण
विशिष्ट (वाजिनम्) अन्नादि ऐश्वर्य के देने वाले (त्वा) आपको (धीभिः
अपनी बुद्धिओं से (मृजन्ति) बुद्धि की वृत्ति का विषय करते हैं ॥

भावार्थ—याज्ञिक लोग जब 'यज्ञाग्रतो दूरमुदैति दैवम्
इत्यादि मंत्रों का पाठ करते हैं केवल पाठही नहीं किन्तु उसके वाच्यार्थ
पर दृष्टि देकर तत्व का अनुशीलन करते हैं तब परमात्मा का साक्षा
त्कार होता है । इसी अभिप्राय से कहा है कि 'धीभिः त्वामृजन्ति' अर्थात्
बुद्धिद्वारा तुम्हारा परिशीलन करते हैं ॥७॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मधोर्धारामनु क्षर तीव्रः सधस्थमासदः ।
चारुर्ऋताय पीतये ॥८॥७॥

मधोः । धाराम् । अनु । क्षर । तीव्रः । सधऽस्थम् । आ । असदः ।
चारुः । ऋताय । पीतये ॥८॥७॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! भवानस्मिन्मम यज्ञे (मधोःधाराम्, अनुक्षर) प्रेमधारां स्यन्दयतु (तीव्रः) यतो भवान् वेगवान् तथा (चारुः) दर्शनीयश्चास्ति (ऋताय, पीतये) सत्यप्राप्तये (सधस्थम्, आसदः) यज्ञस्थं मां स्वीकरोतु ।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप हमारे इस यज्ञ में (मधोः, धाराम्, अनुक्षर) प्रेम की धारा बहाइये (तीव्रः) आप गतिशील हैं और (चारुः) सुन्दर हैं (ऋताय, पीतये) सत्य की प्राप्ति के लिये (सधस्थम्, आसदः) यज्ञ में स्थित हुये हमको स्वीकार करिये ।

भावार्थ—जो लोग सत्कर्मों में स्थिर हैं और सत्कर्मों के प्रचार के लिये यज्ञादि कर्म करते हैं उनके उत्साह को परमात्मा अवश्यमेव बढ़ाता है ॥८॥

इति सप्तदशं सूक्तं सप्तमो वर्गश्च समाप्तः ॥
यह सत्रहवां सूक्त और सातवाँ वर्ग समाप्त हुआ ॥

अथसप्तर्चस्य अष्टादशस्य सूक्तस्य—

१-७ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः—१, ४ निचृद्गायत्री । २ ककुम्मती गायत्री । ३, ५, ६ गायत्री । ७ विराड् गायत्री । षड्जः स्वरः ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ विभूतिमत्सु वस्तुषु परमात्मनो महत्त्वं कथ्यते-

अब विभूतिवाली वस्तुओं में परमात्मा का महत्त्व कथन करते हैं-

परि सुवानो गिरिष्ठाः पवित्रे सोमो अक्षाः ।
मदेषु सर्वधा असि ॥१॥

परि । सुवानः । गिरिऽस्थाः । पवित्रे । सोमः । अक्षारिति । मदेषु । सर्वऽधाः । असि ॥१॥

पदार्थः—स भवान् (परिसुवानः) सर्वोत्पादकः (गिरिष्ठाः) विद्युदादिपदार्थेषु तिष्ठति च (पवित्रे) पवित्रपदार्थे विराजते (सोमः) सौम्यस्वभाववांश्चास्ति (अक्षाः) सर्वत्र (मदेषु) सर्वेषु हर्षयुक्तवस्तुषु (सर्वधाः) सर्वविधशोभाधारकः (असि) अस्ति ।

पदार्थ—वह आप (परि सुवानः) 'परि सर्वं सुत इति सुवानः' सर्वोत्पादक हैं (गिरिष्ठाः) 'गृणाति शब्दं करोतीति गिरि' आप विद्युदादि पदार्थों में स्थित हैं (पवित्रे) पवित्र पदार्थों स्थित हैं (सोमः) सौम्य स्वभाव वाले हैं (अक्षाः) 'अक्षति व्याप्नोति सर्वमित्यक्षाः' और सर्वव्यापक हैं, (मदेषु) और हर्षयुक्त वस्तु में (सर्वधाः) सब प्रकार की शोभा के धारण कराने वाले (असि) हैं

भावार्थ—परमात्मा विद्युदादि सब शक्तियों में विराजमान क्योंकि वह सर्वव्यापक है और जो २ विभूति वाली वस्तु हैं उन में प्रकार की शोभा के धारण कराने वाला परमात्मा ही है कोई अन्य नहीं

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तात्पर्य यह है कि यद्यपि व्यापकरूप से परमात्मा सर्वत्र परिपूर्ण है तथापि विभूति वाली वस्तुओं में उसकी अभिव्यक्ति विशेषरूप से पायी जाती है इसी आभिप्राय से कहा है कि 'मदेषु सर्वधा असि ॥१॥

त्वं विप्रस्त्वं कविर्मधु प्र जातमन्धसः ।
मदेषु सर्वधा असि ॥२॥

त्वं । विप्रः । त्वं । कविः । मधु । प्र । जातं । अंधसः ।
मदेषु । सर्वऽधाः । असि ॥२॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (त्वं, विप्रः) त्वं सर्वप्रेरकः तथा (त्वं, कविः) त्वं सर्वज्ञश्च (मधु, प्रजातम्, अन्धसः) अन्नादिषु रसानामुत्पादकस्त्वमेव तथा च (मदेषु) हर्षजनक-वस्तुषु (सर्वधाः) सर्वविधशोभानां जनकः (असि) त्वमेवासि।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (त्वं, विप्रः) 'विप्राति क्षिप्नोतीति विप्रः' आप सब के प्रेरक हैं और (त्वं, कविः) "कवते जानाति सर्वमिति कविः" आप सर्वज्ञ हैं (मधु, प्रजातम्, अन्धसः) और अन्नादिकों में रस आपही ने उत्पन्न किया है और (मदेषु) हर्षयुक्त वस्तुओं में (सर्वधाः) सब प्रकार की शोभा धारण कराने वाले (असि) आप ही हैं।

भावार्थ—परमात्मानें अपनी विचित्र शक्तियों से नानाविध के रस उत्पन्न किये हैं, और नानाप्रकार के ऐश्वर्य उत्पन्न किये हैं. वस्तुतः परमात्मा ही सब ऐश्वर्यों का अधिष्ठान और सब रसों की खान है ॥२॥

तव विश्वे सजोषसो देवासः पीतिमाशत ।
मदेषु सर्वधा असि ॥ ३ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तव । विश्वे । सऽजोषसः । देवासः । पीतिम् । आशत
मदेषु । सर्वऽधाः । असि ॥३॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (तव पीतिम्) भवतस्तृप्ति
(सजोषसः) परस्परप्रेमकर्तारः (विश्वे, देवासः) सर्वे वि
निनः (आशत) प्राप्नुवन्ति (मदेषु) हर्षयुक्तव
(सर्वधाः) सर्वविधशोभानां जनकः (असि) त्वमेवासि

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (तव, पीतिम्) आपकी तृप्ति
(सजोषसः) परस्पर प्रेम करने वाले (विश्वे, देवासः) सब विज्ञा
लोग (आशत) पाते हैं (मदेषु) हर्षयुक्त वस्तुओं में (सर्वधा
सब प्रकार की शोभा के धारण कराने वाले (असि) आप हैं।

भावार्थ—परमात्मा के आनन्द को विज्ञानी लोग ही वस्तु
पासकते हैं अन्य नहीं, कारण यह कि विविध प्रकार के ज्ञान के वि
उसका आनन्द मिलना अति कठिन है ॥३॥

आ यो विश्वानि वार्या वसूनि हस्तयोर्दधे ।
मदेषु सर्वधा असि ॥ ४ ॥

आ । यः । विश्वानि । वार्या । वसूनि । हस्तयोः । द
मदेषु । सर्वऽधाः । असि ॥४॥

पदार्थः—(यः) यः परमात्मा (विश्वानि) सर्वा
(वार्या) प्रार्थनीयानि (वसूनि) धनरत्नादीनि (हस्तयो
आदधे) विज्ञानिनां हस्तगतानि करोति स एव (मदेषु) सर्व
युक्तवस्तुषु (सर्वधाः) सर्वविधशोभानां धारकः (असि) अस्ति

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(यः) जो परमात्मा (विश्वानि) सब (वार्या) 'वरीतुं योग्यानि वार्याणि' प्रार्थनीय (वसूनि) धन रत्नादिकों को (हस्तयोः, आदधे) विज्ञानी लोगों के हस्तगत कर देता है वही (मदेषु) सब हर्षयुक्त वस्तुओं में (सर्वधाः) सब प्रकार की शोभा को धारण कराने वाला (आसि) है।

भावार्थ—जो सम्पूर्ण वस्तुओं को अपने हस्तगत करना चाहते हो तो ईश्वर के उपासक बनो ॥४॥

य इमे रोदसी मही सं मातरेव दोहते।
मदेषु सर्वधा असि ॥ ५ ॥

यः। इमे इति। रोदसी इति। मही इति। सम्। मातराऽइव। दोहते। मदेषु। सर्वऽधाः। असि ॥५॥

पदार्थः—(यः) यः परमात्मा (मातरा, इव) जीवानां मातेव (इमे, मही, रोदसी) आभ्यां महद्भ्यां द्युलोकपृथिवीलोकाभ्याम् (सं, दोहते) पय इव नानाविधधनरत्नादीनि दोग्धि स एव (मदेषु) हर्षयुक्तसर्ववस्तुषु (सर्वधाः) सर्वविधशोभानां धारकः (आसि) अस्ति।

पदार्थ—(यः) जो परमेश्वर (मातरा, इव) जीवों की माता के समान (इमे, मही, रोदसी) इस महान आकाश और पृथिवी लोक से (सं, दोहते) दूध के समान नाना प्रकार के धन रत्नादिकों को दुहता है (मदेषु) वही परमात्मा हर्षयुक्त वस्तुओं में (सर्वधाः) सब प्रकार की शोभा को धारण कराने वाला (आसि) है।

भावार्थ—माता शब्द यहां उपलक्षणमात्र है वास्तव में भाव

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यह है कि जीवों की माता पिता के समान जो पृथिवीलोक और द्युलोक हैं इन से नानाविध भोग पैदा करने वाला एकमात्र परमात्मा ही कोई अन्य नहीं ॥५॥

परि यो रोदसी उभे सद्यो वाजेभिरर्षति ।
मदेषु सर्वधा असि ॥ ६ ॥

परि । यः । रोदसी इति । उभे इति । सद्यः । वाजेभिः । अर्षति । मदेषु । सर्वऽधाः । असि ॥६॥

पदार्थः—(यः) यः परमात्मा (उभे रोदसी) उभयोरपिद्यावापृथिव्योर्मध्ये (वाजेभिः, पर्यषति) सैश्वर्येण व्याप्नोति स एव (मदेषु) सर्वहर्षयुक्तद्रव्येषु सर्वविधशोभानां धाता (असि) अस्ति ।

पदार्थ—(यः) जो परमात्मा (उभे, रोदसी) पृथिवी और आकाश इन दोनों लोकों में (वाजेभिः, पर्यषति) ऐश्वर्यों के साथ व्याप्त है वही (मदेषु) सब हर्षयुक्त वस्तुओं में (सर्वधाः) सब प्रकार की शोभा को धारण कराने वाला (असि) है ।

भावार्थ—यद्यपि परमात्मा के ऐश्वर्य से कोई स्थान भी खाली नहीं तथापि प्राकृत ऐश्वर्यों का स्थान जैसा द्युलोक और पृथिवी लोक है ऐसा अन्य नहीं इसी भाव से इन दोनों का वर्णन विशेषरीति किया है ॥६॥

स शुष्मी कलशेष्वा पुनानो अचिक्रदत् ।
मदेषु सर्वधा असि ॥ ७ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सः । शुष्मी । कलशेषु । आ । पुनानः । अचिक्रदत् । मदेषु । सर्वऽधाः । असि ॥७॥

पदार्थः—(शुष्मी) ओजस्वी (पुनानः) सर्वस्य पावयिता (सः) स परमात्मा (कलशेषु) वैदिकशब्देषु (अचिक्रदत्) ब्रवीति स एव (मदेषु) सर्वहर्षयुक्तवस्तुषु (सर्वधाः) सर्वविधशोभानां धारकः (असि) अस्ति ।

पदार्थ—(शुष्मी) ओजस्वी और (पुनानः) सब को पवित्र करने वाला (सः) वह परमात्मा (कलशेषु) "कलं शवन्ति इति कलशा-वैदिकशब्दाः" वैदिक शब्दों में (अचिक्रदत्) बोलता है (मदेषु) और हर्षयुक्त वस्तुओं में (सर्वधाः) सब प्रकार की शोभा को धारण करने वाला (असि) वही है ।

भावार्थ—जिस प्रकार परमात्मा के अन्तरिक्ष उदर और द्युलोक मूर्धस्थानी रूपकालङ्कार से माने गये हैं इसी प्रकार उसके शब्दों की भी रूपकालङ्कार से कल्पना की गयी है वास्तव में वह परमात्मा 'अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययम्' कि वह शब्दस्पर्शादिगुणों से रहित है और अव्यय = अविनाशी है इत्यादि वाक्यों द्वारा शब्दादि गुणों से सर्वथा रहित वर्णन किया गया है, उपनिषदों का यह भाव भी 'सपर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणम्' यजु०, ४०।८ कि वह निराकार परमात्मा सर्वत्र व्यापक है इत्यादि वेद मन्त्रों से लिया गया है ॥७॥

अष्टादशं सूक्तमष्टमोवर्गश्च समाप्तः ।

यह अठारहवां सूक्त और आठवां वर्ग समाप्त हुआ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथैकोनविंशतितमस्य सप्तर्चस्य सूक्तस्य--

१–७ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः ॥ पवमानः सो
देवता ॥ छन्दः–१ विराड् गायत्री । २,५,७ निचृ
गायत्री । ३,४ गायत्री । ६ भुरिग्गायत्री ॥
षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मन ऐश्वर्य्यं प्रार्थ्यतेः--

अब ऐश्वर्य्य की प्रार्थना करते हैंः—

यत्सोम चित्रमुक्थ्यं दिव्यं पार्थिवं वसु ।
तन्नः पुनान आ भर ॥ १ ॥

यत् । सोम । चित्रम् । उक्थ्यम् । दिव्यम् । पार्थिव
वसु । तत् । नः । पुनानः । आ । भर ॥१॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन् ! (चित्रम्) अद्भु
यत् (उक्थ्यम्) प्रशंसनीयम् (दिव्यम्) द्युलोकसम्ब
तथा (पार्थिवम्) पृथिवीसम्बन्धि (वसु) धनरत्नाद्यैश्वर्यम
(तत्) तेन (नः) अस्मान् (पुनानः) पावयन् (आभ
परिपूरयितुमुपदिशतु ।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (यत्) जो (चित्र
अद्भुत (उक्थ्यम्) प्रशंसनीय (दिव्यम्) द्युलोकसम्बन्धी
(पार्थिवं) पृथिवीसम्बन्धी (वसु) धनरत्नादि ऐश्वर्य है (त
उससे (नः) हमको (पुनानः) पवित्र करते हुये (आभर) परि
होने की शिक्षा दीजिये ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—इसमें परमात्मा से विविध धनादि ऐश्वर्य पाने के लिये शिक्षा की प्रार्थना है ॥१॥

युवं हि स्थः स्वर्पती इन्द्रश्च सोम गोपती ।
ईशाना पिप्यतं धियः ॥ २ ॥

युवम् । हि । स्थः । स्वः पती इति स्वःऽपती । इन्द्रः । च । सोम । गोपती इति गोऽपती । ईशाना । पिप्यतम् । धियः ॥२॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन् ! भवान् (इन्द्रश्च) अध्यापकश्च (युवं, हि) उभावपि (स्वर्पती) सुखस्वामिनौ (स्थः) भवथः (गोपती) वाणीपती अपि स्थः (ईशाना) शिक्षां प्रदातुमीश्वरौ च स्थः (धियः, पिप्यतम्) युवामुभावपि मद्बुद्धीः उपदेशेन समेधयतम् ।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्, आप (च) और (इन्द्रः,) अध्यापक (युवम्, हि) ये दोनों (स्वर्पती) सुख के पति (स्थः) हैं और (गोपती) वाणियों के पति हैं और (ईशाना) शिक्षा देने में समर्थ हैं (धियः, पिप्यतं) आप दोनों हमारी बुद्धि को उपदेश द्वारा बढ़ाइये ।

भावार्थ—इस मंत्र में परमात्मा ने जीवों को प्रार्थना द्वारा यह शिक्षा दी है कि तुम अपने अध्यापकों से और ईश्वर से सदैव शुभशिक्षा की प्रार्थना किया करो ॥२॥

वृषा पुनान आयुषु स्तनयन्नधि बर्हिषि ।
हरिः सन्योनिमासदत् ॥ ३ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वृषा । पुनानः । आयुषु । स्तनयन् । अधि । बर्हिषि । हरिः । सन् । योनिम् । आ । असदत् ॥३॥

पदार्थः—(वृषा) सर्वकामनाम्प्रदाता (आयुषु पुनानः) सर्वमनुष्येषु पवित्रतां जनयन् (अधि, बर्हिषि, स्तनयन्) प्रकृतिषु पञ्चतन्मात्रादिकारणान्युत्पादयन् स ईश्वरः (हरिः, सन्) सर्वाण्यज्ञानानि नाशयन् (योनिम् आसदत्) प्रकृत्यात्मकयोनिं लभते ।

पदार्थ—(वृषा) सब कामनाओं का देने वाला (आयुषु पुनानः) सब मनुष्यों को पवित्र करता हुआ (अधि, बर्हिषि, स्तनयन्) प्रकृति में पञ्चतन्मात्रादि कारणों को उत्पन्न करता हुआ वह परमेश्वर (हरिः, सन्) अज्ञानादिकों का नाश करता हुआ (योनिम्, आसदत्) प्रकृतिरूप योनि को प्राप्त होता है ॥

भावार्थ—परमात्मा जब प्रकृति के साथ मिलता है अर्थात् अपनी कृति से प्रकृति में नाना प्रकार की चेष्टायें उत्पन्न करता है तब प्रकृति में पञ्चतन्मात्रादि कार्य उत्पन्न होते हैं अर्थात् सूक्ष्म भूतों के कारण उत्पन्न होते हैं, इस कार्यावस्था में प्रकृतिरूप योनि अर्थात् उपादान कारण का परमात्मा आश्रयण करता है, जैसा कि ' योनिश्चेहगीयते ' वे० १।४।२७। इस व्याससूत्र में भी योनिनाम प्रकृति का स्पष्ट है ॥३॥

अवावशन्त धीतयो वृषभस्याधि रेतसि ।
सूनोर्वत्सस्य मातरः ॥ ४ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अवावशन्त । धीतयः । वृषभस्य । अधि । रेतसि । सूनोः । वत्सस्य । मातरः ॥४॥

पदार्थः—(धीतयः) सप्त प्रकृतयः (वृषभस्य) सर्वकामप्रदस्य परमात्मनः (अधिरेतसि) कार्येषु (अवावशन्त) सङ्गता भवन्ति (सूनोः, वत्सस्य) यथा वत्सार्थम् (मातरः) मातरो गावः संगच्छन्ते तद्वत् ।

पदार्थ—(धीतयः) सात प्रकृतियें (वृषभस्य) सब कामप्रद परमात्मा के (अधिरेतसि) कार्य में (अवावशन्त) सङ्गत होती हैं (सूनोः, वत्सस्य) जैसे वत्स के लिये (मातरः) गाय संगत होती हैं॥

भावार्थ—गऊ अपने बच्चे को दुग्ध पिला कर जिस प्रकार परिपुष्ट करती है इसी प्रकार प्रकृति अपने इस कार्यरूप ब्रह्माण्ड को अपने परमाण्वादि दुग्धों द्वारा परिपुष्ट करती है, तात्पर्य यह है कि प्रकृति इस जगत् का उपादान कारण है परमात्मा निमित्त कारण है और यह संसार वत्ससमान प्रकृति और वृषभरूपी पुरुष का कार्य है ॥४॥

कुविद्वृषण्यन्तीभ्यः पुनानो गर्भमादधत् ।
याः शुक्रं दुहते पयः ॥ ५ ॥

कुवित् । वृषण्यन्तीभ्यः । पुनानः । गर्भम् । आऽदधत् । याः । शुक्रं । दुहते । पयः ॥५॥

पदार्थः—(पुनानः) सर्वस्य पावयिता परमात्मा (वृषण्यन्तीभ्यः) प्रकृतिभ्यः (कुविद् गर्भम्) बहुं गर्भं (आदधत्) दधार (याः) याः प्रकृतयः (शुक्रं, पयः) सूक्ष्मभूतेभ्यः कार्यरूपब्रह्माण्डम् (दुहते) दुहन्ति ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(पुनानः) सबको पवित्र करने वाले परमात्मा (वृषण्यन्तीभ्यः) प्रकृतियों से (कुविद्, गर्भम्) बहुत से गर्भ (आदधत्) धारण किया (याः) जो प्रकृतियें (शुक्रं, पयः) सूक्ष्म भूतों से कार्यरूप ब्रह्माण्ड को (दुहते) दुहती हैं ।

भावार्थ—तात्पर्य यह है कि जलादि सूक्ष्म भूतों से यह ब्रह्माण्ड स्थूलावस्था में आता है पञ्च तन्मात्रा के कार्य जो पांच सूक्ष्म भूत उन्हीं का कार्य यह सब संसार है, जैसा कि 'तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः संभूतः आकाशद्वायुः वायोरग्निरग्नेरापोऽद्भ्यः पृथिवी तै० २।१॥ इत्यादि वाक्यों में निरूपण किया है कि परमात्मारूपी निमित्त कारण से प्रथम आकाशरूप तत्व का आविर्भाव हुआ जो एक अतिसूक्ष्मतत्त्व, और जिस का शब्द गुण है, फिर उस से वायु और वायु के संघर्षण से अग्नि और अग्नि से फिर जल आविर्भाव में अर्थात् स्थूलावस्था में आया । उसके अनन्तर पृथिवी ने स्थूल रूप को धारण किया यह कार्यक्रम है जिसको उक्त मन्त्र ने वर्णन किया है ॥५॥

उप शिक्षापतस्थुषो भियसमा धेहि शत्रुषु ।
पवमान विदा रयिम् ॥ ६ ॥
उप । शिक्ष । अपऽतस्थुषः । भियसम् । आ । धेहि । शत्रुषु ।
पवमान । विदाः । रयिम् ॥६॥

पदार्थः—(पवमान) हे सर्वस्य पावयितः भगवन् (अपतस्थुषः, उपशिक्ष) स्वानुकूलजनान् उपदिशतु तथा (शत्रुषु, भियसम्, आधेहि) स्वप्रतिकूलेभ्यश्च भयमादधातु अपि (विदाः, रयिम्) तद्धनानि चापहरतु ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(पवमान) 'पवत इति पवमानः संबुद्धौ तु पवमान' हे सब को पवित्र करने वाले भगवन् ! आप (अपतस्थुषः, उपाशिक्ष) जो आप के समीप में रहने वाले हैं उनको शिक्षा दीजिये और (शत्रुषु) भियसम्, आधेहि) शत्रुओं में भय उत्पन्न करिये तथा (विदा, रयिम्, उनके धनको अपहरण कर लीजिये।

भावार्थ—मित्रदल से तात्पर्य यहां उस दल का है जो न्याय-कारी और दोनों पर दया और प्रेम करने वाला हो शत्रुदल से तात्पर्य उस दल का है जो "शातयतीति शत्रुः" शुभगुणों का नाश करने वाला हो इस लिये उक्त मन्त्रार्थ में अन्याय का दोष नहीं, क्योंकि न्याय यही चाहता है कि दैवी सम्पत्ति के गुण रखने वाले वृद्धि को प्राप्त हों और आसुरी सम्पत्ति के रखने वाले नाश को प्राप्त हों ॥६॥

नि शत्रोः सोम वृष्ण्यं नि शुष्मं नि वयस्तिर ।
दूरे वा सतो अन्ति वा ॥ ७ ॥

नि । शत्रोः । सोम । वृष्ण्यम् । नि । शुष्मम् । नि । वयः । तिर । दूरे । वा । सतः । अन्ति । वा ॥७॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन्, (शत्रोः) तव भक्तस्यरियोः (वृष्ण्यम्) बलं (नितिर) नाशय तथा (नि, शुष्मम्) तेजः तथा (वयः, नि) अन्नाद्यैश्वर्यम् नाशय यः शत्रुः (दूरे, सतः) दूरे विद्यमानः (वा, अन्ति) समीप वा।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्, (शत्रोः) शत्रु के (वृष्ण्यं) बल को (नितिर) नाश करिये और (नि, शुष्मम्) तेज को तथा (वयः, नि) अन्नादि ऐश्वर्य को नाश करिये जो शत्रु (दूरे सतः) दूर में विद्यमान है (वा, अन्ति) समीप में।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—इस मन्त्र में परमात्मा ने जीवों के आवद्वारा अन्याकारी शत्रुओं के नाश करने का उपदेश किया है। जिस देश में अन्याकारियों के नाश करने का भाव नहीं रहता वह देश कदापि उन्नतिशील नहीं हो सकता ॥७॥

एकोनविंशतितमं सूक्तं नवमो वर्गश्च समाप्तः ।

यह उन्नीसवां सूक्त और नवम वर्ग समाप्त हुआ ।

अथसप्तर्चस्य विंशतितमस्य सूक्तस्य—

१–७ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः १, ४–७ निचृद्गायत्री । २, ३ गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अस्मिन्सूक्ते वेदवित्सु बलप्रदानं कथ्यते :—

इस सूक्त में वेदवेत्ताओं में बलप्रदान का कथन करते हैं :—

प्र कविर्देववीतयेऽव्यो वारेभिरर्षति ।
सह्वान्विश्वा अभि स्पृधः ॥ १ ॥

प्र । कविः । देवऽवीतये । अव्यः । वारेभिः । अर्षति । सह्वान् । विश्वाः । अभि । स्पृधः ॥१॥

पदार्थः—स परमात्मा (कविः) मेधाव्यस्ति (अव्यः) सर्वस्य रक्षकश्चास्ति (देववीतये) विदुषां तृप्तये (अर्षति) ज्ञानं ददाति (सह्वान्) सहिष्णुरस्ति (विश्वाः) स्पृधः कुत्सान्दुष्टान्संग्रामे (अभि) तिरस्करोति ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—वह परमात्मा (कविः) मेधावी है और (अव्ययः) सबका रक्षक है (देववीतये) विद्वानों की तृप्ति के लिये (अर्षति) ज्ञान को देता है (साहान्) सहनशील है (विश्वाः, स्पृधः) सम्पूर्ण दुष्टों को संग्रामों में (अभि) तिरस्कृत करता है ।

भावार्थ—परमात्मा विद्वानों को ज्ञानप्रदान से और न्यायकारी सैनिकों को बलप्रदान से तृप्त करता है ॥१॥

स हि ष्मा जरितृभ्य आ वाजं गोमन्तमिन्वति ।
पवमानः सहस्रिणम् ॥ २ ॥

सः । हि । स्म । जरितृऽभ्यः । आ । वाजम् । गोऽमन्तम् । इन्वति । पवमानः । सहस्रिणम् ॥२॥

पदार्थः—(सः, हि, ष्म) स हि पूर्वोक्तः (पवमानः) सर्वेषां पावयिता परमात्मा (जरितृभ्यः) स्वदुर्बलोपासकेभ्यः (आ) सम्यक् (सहस्रिणम्) अनेकविधम् (गोमन्तम्) बुद्धिसहितम् (वाजिनम्) बलम् (इन्वति) प्रयच्छति ॥

पदार्थ—(सः, हि, ष्म) वही (पवमानः) सबको पवित्र करने वाला परमात्मा (जरितृभ्यः) अपने बलहीन उपासकों को (आ) भली प्रकार (सहस्रिणम्) हजारों प्रकार के (गोमन्तम्) बुद्धि के सहित (वाजिनम्) बलों को (इन्वति) देता है ।

भावार्थ—परमात्मा परमात्मपरायण पुरुषों को अनन्त प्रकार का बल और बुद्धि प्रदान करता है ॥२॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परि विश्वानि चेतसा मृशसे पवसे मती ।
स नः सोम श्रवो विदः ॥ ३ ॥

परि । विश्वानि । चेतसा । मृशसे । पवसे । मती । सः । नः । सोम । श्रवः । विदः ॥३॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन्, (चेतसा) अस्मन्मनः चिन्तितानि (विश्वानि) सर्वविधधनानि भवान् (परि मृशसे) ददाति (मती, पवसे) मद्बुद्धीः स्तुतिभिः पुनाति (सनः) भवानस्मभ्यम् (श्रवः, विदः) सर्वविधैश्वर्याणि ददातु ।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (चेतसा) हमारे मन के अ कूल (विश्वानि) आप सब प्रकार के धनों को (परिमृशसे) देते (मती, पवसे) हमारी बुद्धि को स्तुतियों से पवित्र करते हो (सः, न सो आप हमारे लिये (श्रवः, विदः) सब प्रकार के ऐश्वर्यों को दीजिये

भावार्थ—परमात्मपरायण पुरुषों की परमात्मा सब प्रकार रक्षा करता है और उनको ऐश्वर्य प्रदान करता है ॥३॥

अभ्यर्ष बृहद्यशो मघवद्भ्यो ध्रुवं रयिम् ।
इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥ ४ ॥

अभि । अर्ष । बृहत् । यशः । मघवत्ऽभ्यः । ध्रुवम् । रयिम् । इषम् । स्तोतृऽभ्यः । आ । भर ॥४॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (मघवद्भ्यः) ये भवदुपास धनाद्यैश्वर्यसम्पन्नाः तेषाम् (रयिम् ध्रुवम्) धनं सुस्थिरं क

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तथा (बृहद्यशः) अत्यन्तयशः (अभ्यर्ष) प्रयच्छतु तथा (इषम्, स्तोतृभ्यः, आभर) स्वस्तोतृभ्यो धनाद्यैश्वर्यं ददातु ।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (मघवद्भ्यः) जो आप के उपासक धनादि ऐश्वर्यसम्पन्न हैं उनके (रयिं, ध्रुवम्) धनको अचल सुरक्षित कीजिये और (बृहद्, यशः) अत्यन्तयश को (अभ्यर्ष) दीजिये और (इषं, स्तोतृभ्यः, आभर) जो आप के स्तोता हैं उनके लिये धनादि ऐश्वर्य दीजिये ।

भावार्थ—परमात्मा सदाचारी और संयमी पुरुषों के धनादि ऐश्वर्य और यश को दृढ़ करता है ॥४॥

त्वं राजेव सुव्रतो गिरः सोमा विवेशिथ ।
पुनानो वह्ने अद्भुत ॥ ५ ॥

त्वं । राजाऽइव । सुऽव्रतः । गिरः । सोम । आ । विवेशिथ ।
पुनानः । वह्ने । अद्भुत ॥ ५ ॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन् ! (त्वम्, राजा, इव) भवान् राजा इव (सुव्रतः) सुकर्माऽस्ति तथा (गिरः, आविवेशिथ) वेदवाक्षु प्रविष्टोऽस्ति (पुनानः) सर्वस्य पावयितास्ति (वह्ने) हे सर्वस्य प्रेरक ! भवान् (अद्भुत) नित्यनवोऽस्ति ।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (त्वं, राजा इव) आप राजा की तरह (सुव्रतः) सुकर्मा हैं और (गिरः, आविवेशिथ) वेद वाणियों में प्रविष्ट हैं (पुनानः) सब को पवित्र करने वाले हैं और (वह्ने) हे सबके प्रेरक ! आप (अद्भुत) नित्य नूतन हैं ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा सब नियमों का नियन्ता है, नियमपालन की शक्ति मनुष्यों में उसी की कृपा से आती है ॥५॥

स वह्निरप्सु दुष्टरो मृज्यमानो गभस्त्योः ।
सोमश्चमूषु सीदति ॥ ६ ॥

सः । वह्निः । अप्सु । दुस्तरः । मृज्यमानः । गभस्त्योः ।
सोमः । चमूषु । सीदति ॥ ६ ॥

पदार्थः—(सः, सोमः) स परमात्मा (अप्सु) प्रतिलोक विद्यमानः (वह्निः) सर्वेषां प्रेरकश्च तथा (दुष्टरः) दुराधर्षोऽपि (गभस्त्योः) स्वप्रकाशैः (मृज्यमानः) प्रकाशमानः (चमू सीदति) न्यायकारिसेनासु स्वयं विराजते च ।

पदार्थ—(सः, सोमः) वह परमात्मा (अप्सु) लोक लोकान्तर में विद्यमान है और (वहिः) सब का प्रेरक है और (दुष्टरः) दुरा है (गभस्त्योः) अपने प्रकाश से (मृज्यमानः) स्वयं प्रकाशित है (च सीदति) न्यायकारियों की सेना में स्वयं विराजमान होता है ।

भावार्थ—यद्यपि परमात्मा के भाव सर्वत्र भावित हैं तथा जैसे न्यायकारी सम्राजों की सेनायें में उनके रौद्र, वीर, भयानकादि प्रस्फुटित होते हैं ऐसे अन्यत्र नहीं ॥६॥

क्रीळुर्मखो न मंहयुः पवित्रं सोम गच्छसि ।
दधत्स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥ ७ ॥

क्रीळुः । मखः । न । मंहयुः । पवित्रं । सोम । गच्छसि ।
दधत् । स्तोत्रे । सुऽवीर्यम् ॥ ७ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन् ! (क्रीळुः) भवान् क्रीडनशीलः (मखः, न मंहयुः) क्रतुरिव दातास्ति (पवित्रं, गच्छसि) सत्कर्माणं जनं समभिगच्छति (स्तोत्रे सुवीर्यं, दधत्) वेदादिशास्त्रेषु स्वबलं समर्पयति च ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (क्रीळुः) आप क्रीडन शील हैं (मखः, न, मंहयुः) यज्ञ के समान दानी हो (पवित्रं, गच्छसि) पवित्र सत्कर्मी मनुष्य को प्राप्त होते हो (स्तोत्रे, सुवीर्यं, दधत्) वेदादिसच्छास्त्रों में अपना बल प्रधान करते हैं ।

भावार्थ—संसार की यह विविध प्रकार की रचना जिस के पारावार को मनुष्य मन से भी नहीं पा सकता वह परमात्मा के आगे एक लीलामात्र है ॥७॥

विंशतितमं सूक्तं दशमो वर्गश्च समाप्तः ।

यह बीसवां सूक्त और दसवां वर्ग समाप्त हुआ ॥

अथ सप्तर्चस्यैकविंशस्य सूक्तस्य—

१-७ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः १, ३ विराड् गायत्री २, ७ गायत्री । ४—६ निचृद्गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ विराट् परमात्मनोरथरूपेण वर्ण्यते—

अब विराट् को परमात्मा के रथरूप से वर्णन करते हैं—

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एते धावन्तीन्दवः सोमा इन्द्राय घृष्वयः ।
मत्सरासः स्वर्विदः ॥ १ ॥

एते । धावन्ति । इन्दवः । सोमाः । इन्द्राय । घृष्वयः ।
मत्सरासः । स्वःऽविदः ॥१॥

पदार्थः—(एते, सोमाः) हे परमात्मन् ! भवान् (धावन्ति) सर्वत्र व्याप्नोति (इन्दवः) स्वप्रकाशेन प्रकाशितः (इन्द्राय, घृष्वयः) विद्वद्भिः स्तुत्यश्च (मत्सरासः) प्रभुताभिमानी चास्ति (स्वर्विदः) सुखदश्च ॥

पदार्थ—(एते, सोमाः) हे परमात्मन्, आप (धावन्ति) सर्व व्याप्त हो रहे हैं, (इन्दवः) स्वप्रकाश से प्रकाशित हैं, (इन्द्राय, घृष्वयः) विद्वानों द्वारा स्तुत्य हैं, (मत्सरासः) प्रभुता के अभिमान से युक्त और (स्वर्विदः) सुख के देने वाले हैं ।

भावार्थ—परमात्मा स्वयंप्रकाश और अपने प्रभुत्वभाव से त्रैव विराजमान है ॥१॥

प्रवृण्वन्तो अभियुजः सुष्वये वरिवोविदः ।
स्वयं स्तोत्रे वयस्कृतः ॥ २ ॥

प्रऽवृण्वन्तः । अभिऽयुजः । सुस्वये । वरिवःऽविदः । स्वयम् ।
स्तोत्रे । वयःऽकृतः ॥२॥

पदार्थः—(प्रवृण्वन्तः) यो हि जनैः सम्यग् भज्यते (अभियुजः) यश्चान्येषां प्रेरकः (सुष्वये) सेवकाय (वरिवोविदः

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

धनानां दाता च (स्वयं) स्वसत्तया विराजमानः (स्तोत्रे, वयस्कृतः) स एव स्वस्तुतिकर्त्रे अन्नादीनां प्रदाता चास्ति।

पदार्थ—(प्रवृण्वन्तः) जो लोगों से भजन किया जाता, (अभियुजः) जो दूसरों का प्रेरक, (सुष्वये) सेवक के लिये (वरिवोविदः) धन देने वाला, (स्वयं) स्वसत्ता से विराजमान (स्तोत्रे-वयस्कृतः) और स्तोता के लिये अन्नादिकों को देने वाला है।

भावार्थ—जिन लोगों को परमात्मा की विविध प्रकार की रचना पर विश्वास है आप परमात्मा की अनन्यभक्ति करते हैं उनको परमात्मा अनन्तप्रकार के ऐश्वर्य प्रदान करता है॥२॥

वृथा क्रीळन्त इन्दवः सधस्थमभ्येकमित्।
सिन्धोरूर्मा व्यक्षरन्॥३॥

वृथा। क्रीळन्तः। इन्दवः। सधऽस्थम्। अभि। एकम्। इत्। सिन्धोः। ऊर्मा। वि। अक्षरन्॥३॥

पदार्थः—उक्तपरमात्मनि सूर्यादिविविधग्रहाः (सिन्धोः, ऊर्मा) यथा सिन्धौ वीचयस्तद्वत् तत्रैवोत्पद्योत्पद्य विलीयन्ते, ते च ग्रहा उपग्रहाश्च (वृथा, क्रीळन्तः) यदृक्षया भ्राम्यन्ति दिवि (इन्दवः) यथा प्रकाशमया अमयः (सधस्थम्) यज्ञकुण्डमेत्य सङ्गच्छन्ते तथा (अभि, एकमित्) एकस्मिन्नेव परमात्मनि संगच्छन्ते।

पदार्थ—उक्त परमात्मा में विविध प्रकार के सूर्य चन्द्रमा आदि ग्रह (सिन्धोः, ऊर्मा) जिस तरह सिन्धु में से लहरें उठती हैं इस प्रकार

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इसी से पैदा होकर इसी में समा जाते हैं वे ग्रह उपग्रह कैसे हैं (इन्दवः क्रीळन्तः) जो अनायास से भ्रमण करते हैं (इन्दवः) जिस तरह प्रकाश रूप अग्नियें (सधस्थम्) यज्ञकुण्ड में आके प्राप्त होती हैं इस प्रकार (अग्निं एकमित्) वह एक ही परमात्मा में प्राप्त होते हैं "एति गच्छतीतिइन्दवः"

भावार्थ—सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों में जितने ग्रह, उपग्रह हैं वे सब परमात्मा को ही आश्रित करते हैं ॥३॥

एते विश्वानि वार्या पवमानास आशत ।
हिता न सप्तयो रथे ॥४॥

एते । विश्वानि । वार्या । पवमानासः । आशत । हिताः न । सप्तयः । रथे ॥४॥

पदार्थः—यथा (सप्तयः) सप्त सूर्यकिरणाः (रथे अस्मिन् विराड्रूपे रथे (हिताः) निहिताः सन्ति (न) तथैव (एते, पवमानासः) सर्वेषां पावयितृणि इमानि (विश्वानि) सर्वाणि (वार्या) ब्रह्माण्डानि (आशत) परमात्मनि निवसन्ति

पदार्थ—जिस प्रकार (सप्तयः) सात सूर्य की किरणें (रथे) इस विराट्रूपी रथ में (हिताः) निहित हैं (न) इसी प्रकार (एते पवमानासः) सब को पवित्र करते हुए ये (विश्वानि) सम्पूर्ण (वार्या) ब्रह्माण्ड (आशत) परमात्मा में निवास करते हैं ।

भावार्थ—जिस प्रकार उपग्रह सूर्य आदि ग्रहों के इतस्ततः भ्रमण करते हैं इसी प्रकार सब लोक, लोकान्तर इस विराट् के इतस्ततः परिभ्रमण करते हैं ॥४॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आस्मिन्पिशङ्गमिन्दवो दधाता वेनमादिशे ।
यो अस्मभ्यमरावा ॥५॥

आ । अस्मिन् । पिशङ्गम् । इन्दवः । दधात । वेनम् । आऽदिशे । यः । अस्मभ्यम् । अरावा ॥५॥

पदार्थः—(अस्मिन्) अस्मिन् विराट्पुरुषे (पिशङ्गम्) नानावर्णम् (दधाता) धारयन्ति (इन्दवः) अखिलब्रह्माण्डानि (वनम्, आदिशे) तमेव परमात्मानमाश्रयन्ते (यः) यः परमात्मा (अस्मभ्यम्) अस्मभ्यम् (अरावा) सर्वकामप्रदोऽस्ति ।

पदार्थ—(अस्मिन्) इस विराट् में (पिशङ्गम्) अनेक वर्णों को (दधाता) धारण करते हुए (इन्दवः) सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड (वेनम्, आदिशे) उस परमात्मा का आश्रय लेते हैं (यः) जो परमात्मा (अस्मभ्यम्, अरावा) हमारे लिये सब कामनाओं का देने वाला है ।

भावार्थ—उक्त कोट्यनुकोटि ब्रह्माण्ड उसी निराकार परमात्मा के आधार पर स्थित हैं ॥ ५ ॥

ऋभुर्न रथ्यं नवन्दधाता केतमादिशे ।
शुक्राः पवध्वमर्णसा ॥६॥

ऋभुः । न । रथ्यम् । नवम् । दधात । केतम् । आऽदिशे । शुक्राः । पवध्वम् । अर्णसा ॥६॥

पदार्थः—(शुक्राः) हे पवित्रकारकपरमात्मन् ! भवान्

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(रथ्यम्, नवम्) नवमश्वम् (दधाता) वशमानयन् (ऋभुर्न सारथिरिव सर्वान् वशमानयन् (केतम्, आदिशे) ज्ञानमु दिशति (अर्णसा, पवध्वम्) भवान् मां धनाद्यैश्वर्येण तर्पयतु

पदार्थ—(शुक्राः) हे पवित्रकारक परमात्मन् ! आप (रथ्य नवम्) नये घोड़े को (दधाता) वश में रखते हुये (ऋभुर्न) सार की तरह (केतम्, आदिशे) आप सबको वश में करके ज्ञानादि ऐश्व देते हैं (अर्णसा) आप हमको धनाद्यैश्वर्य देकर (पवध्वं) पवित्र करिये।

भावार्थ—जीव करने में स्वतन्त्र और भोगने में परतन्त्र है। ईश्वर कर्मों के भुगाने में उसे ऐसे नियमों में निगड़ित रखता है जिसका वह अतिक्रमण कदापि नहीं कर सकता। बड़े २ सम्राटों को भी कर्मों का फल अवश्यमेव भोगना पड़ता है। इसी अभिप्राय से यह कहा है कि जिस प्रकार घोड़े को सारथी अपने अधीन रखता है इसी प्रकार परमात्मा जीवों को अपने अधीन रखता है ॥६॥

एत उ त्ये अवीवशन्काष्ठां वाजिनो अक्रत ।
सतः प्रासाविषुर्मतिम् ॥७॥११॥

एते । ऊं इति । त्ये । अवीवशन् । काष्ठाम् । वाजिनः । अक्रत । सतः । प्र असाविषुः । मातिम् ॥७॥११॥

पदार्थः—(वाजिनः) सर्वविधैश्वर्यवान् (त्ये, एते, उ, स एव पूर्वोक्तः परमात्मा (अवीवशन्) सर्वान् वशीकरोति तथा च (सतः, मतिम्) सत्कर्मणां बुद्धिम् (असाविषुः) शुभ मार्गाभिमुखं प्रेरयति च (पराम्, काष्ठाम्, अक्रत) एवंभूतः परमकाष्ठां प्रापयति ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(वाजिनः) सब प्रकार के ऐश्वर्य वाला (त्ये, एते, उ) वही पूर्वोक्त परमात्मा (अवीवशन्) सबको वश में रखता हुआ (सतः, मतिम्) सत्कर्मियों की बुद्धि को (असाविषुः) शुभ मार्ग की ओर लगाता हुआ (पराम्, काष्ठाम्, अक्रत) परम काष्ठा को प्राप्त कराता है ।

भावार्थ—जो लोग परमात्मा की ओर झुकते हैं अर्थात् यम-नियमादिसाधनसम्पन्न होकर संयमी बनते हैं वे ब्रह्मविद्या की परा काष्ठा को प्राप्त होते हैं इसी अभिप्राय से उपनिषदों में यह कहा है कि 'सा काष्ठा सा परागतिः' ॥७॥

एकविंशतितमं सूक्तमेकादशो वर्गश्च समाप्तः ।

यह इक्कीसवां सूक्त और ग्यारहवां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ सप्तर्चस्यद्वाविंशस्य सूक्तस्य ।

१-७ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः—१, २ गायत्री । ३ विराड् गायत्री ४-७ निचृद्गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मनो जगतः कर्तृत्वं वर्ण्यते—

अब परमात्मा की सृष्टिरचना का वर्णन करते हैं—

एते सोमास आशवो रथा इव प्र वाजिनः ।
सर्गाः सृष्टा अहेषत ॥१॥

एते । सोमासः । आशवः । रथाःऽइव । प्र । वाजिनः । सर्गाः । सृष्टाः । अहेषत ॥१॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(एते, सोमासः) अयं परमात्मा (रथाः, इव) विद्युदिव (आशवः) शीघ्रगाम्यस्ति (प्रवाजिनः) अत्यन्त बलाश्रयश्च (सर्गाः, सृष्टाः, अहेषत) स एव सृष्टिं शब्दायमानामुदपादयत् ।

पदार्थ—(एते, सोमासः) यह परमात्मा (रथाः, इव) विद्युत् के समान (आशवः) शीघ्रगामी है और (प्र, वाजिनः) अत्यन्त बल वाला है (सर्गाः, सृष्टाः, अहेषत) उसने सृष्टिओं को शब्दायमान रचा है ।

भावार्थ—परमात्मा में अनन्त शक्तियें पायी जाती हैं उसकी शक्तियें विद्युत्के समान क्रियाप्रधान हैं उसने कोटानुकोटि ब्रह्माण्डों को रचा है, जो शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध इन पांच तन्मात्रों के कार्य हैं और इनकी ऐसी अचिन्त्य रचना है जिसका अनुशीलन मनुष्य मन भी भली भांति नहीं कर सकता ॥१॥

ऐते वाता इवोरवः पर्जन्यस्येव वृष्टयः ।
अग्नेरिव भ्रमा वृथा ॥२॥

एते । वाताःऽइव । उरवः । पर्जन्यस्यऽइव । वृष्टयः । अग्नेःऽइव । भ्रमाः । वृथा ॥ २ ॥

पदार्थः—(एते) इमानि सर्वाणि ब्रह्माण्डानि (उरवः, वाताः, इव) बहवो वायव इव (पर्जन्यस्य, वृष्टयः, इव) मेघस्य वृष्टिः इव च (अग्नेः, भ्रमाः, इव) अग्नेः ज्वाला इव (वृथा) अनायासं भ्रमन्ति ।

पदार्थ—(एते) सब उत्पन्न हुए ब्रह्माण्ड (उरवः, वाताः, इव) बहुतसी वायु की तरह (पर्जन्यस्य, वृष्टयः, इव) और मेघ की वृष्टि

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

समान (अग्नेः, भ्रमाः, इव) अग्नि के प्रज्वलन की तरह (वृथा) अनायास गमन कर रहे हैं ।

भावार्थ—जिस प्रकार अग्नि की ज्वलनशक्ति स्वाभाविक है इसी प्रकार वे ब्रह्माण्ड भी स्वाभाविक गतिशील बनाये गये हैं। स्वाभाविक से तात्पर्य यहां आकस्मिक नहीं है किन्तु नियमपूर्वक भ्रमण का है। जैसे कि सूर्य चन्द्र आदि ईश्वरदत्त नियम से सदैव परिभ्रमण करते हैं इसी प्रकार ये सब ब्रह्माण्ड ईश्वरदत्त नियम से परिभ्रमण करते हैं। इसी अभिप्राय से कहा है कि 'भयादस्याग्निस्तपति भयात्तपति सूर्यः, क० २ । ६ । उस के भय से अग्नि तपती है और उसी के भय से सूर्य तपता है, जिस प्रकार इस में ईश्वराधीनता अग्न्यादि तत्वों की वर्णन की गयी है इसी प्रकार सब कार्यजात ईश्वराधीन हैं ॥२॥

एते पूता विपश्चितः सोमासो दध्याशिरः ।
विपा व्यानशुर्धियः ॥३॥

एते । पूताः । विपःऽचितः । सोमासः । दधिऽआशिरः । विपा । वि । आनशुः । धियः ॥ ३ ॥

पदार्थः—(पूताः) पवित्राणि (एते, सोमासः) इमानि ब्रह्माण्डानि (दध्याशिरः) सर्वस्य धातृणि (विपा) ज्ञानद्वारा (विपश्चितः) विदुषां (धियः) बुद्धीनां (व्यानशुः) विषयीभूतानि भवन्ति ।

पदार्थ—(पूताः) पवित्र (एते, सोमासः) ये सब उत्पन्न हुए ब्रह्माण्ड (दध्याशिरः) सब के धारक आश्रयभूत (विपा) ज्ञानद्वारा (विपश्चितः) विद्वानों की (धियः) बुद्धि का (व्यानशुः) विषय होते हैं ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा की रचना में जो कोटानुकोटि ब्रह्माण्ड वे सब ज्ञानी विज्ञानियों के ही समझ में आ सकते हैं अन्यों के नहीं ॥

एते मृष्टा अमर्त्याः ससृवांसो न शश्रमुः ।
इयक्षन्तः पथो रजः ॥४॥

एते । मृष्टाः । अमर्त्याः । ससृऽवांसः । न । शश्रमुः ।
इयक्षन्तः । पथः । रजः ॥ ४ ॥

पदार्थः—(मृष्टाः) भास्वराः (अमर्त्याः) नक्षत्रगण (पथः, रजः) रजोगुणेन मार्गम् (इयक्षन्तः) प्राप्तुमिच्छन् (ससृवांसः) अत्यन्तसरणशीलाः (न, शश्रमुः) विश्रामं लभन्ते ॥

पदार्थ—(मृष्टाः) भास्वररूप (अमर्त्याः) नक्षत्रगण (पथः रजः) रजोगुण से मार्ग को (इयक्षन्तः) प्राप्त होने वाले (ससृवांसः) चलते हुये (न, शश्रमुः) विश्राम को नहीं पाते ।

भावार्थ—यों तो संसार में दिव्यादिव्य अनेक प्रकार के नक्ष हैं पर जो दिव्य नक्षत्र हैं उनकी ज्योति प्रतिपल सहस्रों मील चलती भी अभीतक इस भूगोल के साथ स्पर्श नहीं करने पायी । तात्पर्य यह कि इस दिव्यरचनारूप ब्रह्माण्डों की इयत्ता को पाना परमात्मा काम ही है, खद्योतकल्प क्षुद्र जीव केवल इनकी रचना को कुछ २ अ भव करता है सब नहीं। हां योगी जन जो परमात्मा के योग में रत हैं लोग साधारणासाधारण लोगों से परमात्मा की रचना को अधिक अ भव करते हैं। इसी अभिप्राय से वेद में अन्यत्र भी यह कहा है कि अद्धावेद क इह प्रवोचत कुतो विजाता कुत इयं विसृष्टिः' १०।१३० कौन जान सकता है और कौन कह सकता है कि यह विविध प्रकार

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सृष्टि परमात्मा ने कहां से और किस शक्ति से किस समय उत्पन्न की। इस से आगे यह निरूपण किया है कि इसका पूर्णरूप से ज्ञाता वह परमात्मा ही है कोई अन्य नहीं। इसी अभिप्राय से 'परिच्छिन्नं न सर्वोपादानम्' सां० १ । ७६ ॥ इत्यादि सूत्रों में सांख्य शास्त्र में प्रकृति को विभु माना है, पर वहां यह व्यवस्था समझनी चाहिये कि प्रकृति सापेक्ष विभु है अर्थात् अन्य कार्यों की अपेक्षा विभु है। वास्तव में इयत्तारहित विभु एकमात्र परमात्मा ही है कोई अन्य वस्तु नहीं ॥४॥

एते पृष्ठानि रोदसोर्विप्रयन्तो व्यानशुः ।
उतेदमुत्तमं रजः ॥५॥

एते । पृष्ठानि । रोदसोः । विऽप्रयन्तः । वि । आनशुः ।
उत । इदम् । उत्ऽतमम् । रजः ॥५॥

पदार्थः—(एते) एतानि नक्षत्राणि (रोदसोः, पृष्ठानि) द्यावापृथिव्योर्मध्यगतानि (विप्रयन्तः) गच्छन्ति सन्ति (इदम्, उत्तमम्, रजः) एतमुत्तमं रजोगुणम् (उत, व्यानशुः) व्याप्नुवन्ति।

पदार्थ—(एते) ये सब नक्षत्रादि (रोदसोः, पृष्ठानि) पृथिवी और द्युलोक के मध्य में (विप्रयन्तः) चलते हुए (इदं, उत्तमम्, रजः) इस उत्तम रजो गुण को (उत, व्यानशुः) व्याप्त होते हैं।

भावार्थ—उक्त ब्रह्माण्डों की विविध रचना में परमात्मा ने इस प्रकार का आकर्षण और विकर्षण उत्पन्न किया है जिस में एक दूसरे के आश्रित होकर वे प्रतिक्षण गतिशील बन रहे हैं। वा यों कहो कि सत्व, रज, और तम प्रकृति के ये तीनों गुण अर्थात् प्रकृति की ये तीनों अवस्थायें जिस प्रकार एक दूसरे का आश्रयण करती हैं इस प्रकार एक दूसरे को आश्रयण करता हुआ प्रत्येक ब्राह्माण्ड इस

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri Gyaan Kosha

नभोमण्डल में वायुवेग से उत्तेजित तृण के समान प्रतिक्षण चल रहे कोई स्थिर नहीं ॥५॥

तन्तुं तन्वानमुत्तममनु प्रवत आशत ।
उतेदमुत्तमाय्यम् ॥६॥

तन्तुम् । तन्वानम् । उत्ऽतमम् । अनु । प्रऽवतः । आशत । उत । इदम् । उत्ऽतमाय्यम् ॥६॥

पदार्थः—(प्रवतः) गतिशीलब्रह्माण्डानि (इदम्) उत्तम तन्तुं, तन्वानम्) उत्तमं परमाणुप्रबन्धं वर्धयन्ति सन्ति (उत्तमाय्यम्) उत्तमकार्यैः (उत, अन्वाशत) व्याप्नुवन्ति ।

पदार्थ—(प्रवतः) गतिशील ब्रह्माण्ड (उत्तमं, तन्तुं तन्वानम्) उत्तम परमाणुप्रबन्ध को बढ़ाते हुये (इदम्) इतने (उत्तमाय्यम्) उत्तम कार्यों से (उत, अन्वाशत) व्याप्त हो रहे हैं ।

भावार्थ—प्रत्येक ब्रह्माण्ड मानों तन्तुरूप से अर्थात् रचनारूप यज्ञ से परमात्मा की संसृति को बढ़ा रहा है ॥ ६ ॥

त्वं सोम पणिभ्य आ वसु गव्यानि धारयः ।
ततं तन्तुमचिक्रदः ॥७॥१२॥

त्वं । सोम । पणिऽभ्यः । आ । वसु । गव्यानि । धारयः । ततं । तन्तुं । अचिक्रदः ॥७॥

पदार्थः—(सोम) हे सर्वोत्पादक परमात्मन् ! (त्वं) भवान् (पणिभ्यः) दुष्टेभ्यः (वसु, गव्यानि) अखिलपार्थि

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रत्नानि (आ, धारयः) सम्यक् आदत्ते तथा (ततम्, तन्तुम्) वर्धितं कर्मरूपयज्ञं (अचिक्रदः) प्रख्यापयति ॥

पदार्थ—(सोम) हे सर्वोत्पादक परमात्मन् ! (त्वम्) आप (पणिभ्यः) दुष्टों से (वसु, गव्यानि) सम्पूर्ण पृथिवीसम्बन्धी रत्नों का (आ, धारयः) अच्छी प्रकार ग्रहण करते हो और (ततं, तन्तुम्) बढ़े हुये कर्मात्मकयज्ञ का (अचिक्रदः) प्रचार करते हो ।

भावार्थ— इस सूक्त की समाप्ति करते हुए अर्थात् इस अगाध रचयिता की रचना का वर्णन करते हुए परमात्मा रुद्ररूप का वर्णन करके इस सूक्त का उपसंहार करते हैं 'रोदयति राक्षसानिति रुद्रः' जो अन्यायकारी राक्षसों को रुला दे उसका नाम यहाँ रुद्र है वह रुद्र-रूप परमात्मा अन्यायकारी दुष्ट दस्युओं से धन जन और राज्य श्री का अपहरण कर लेता है और न्यायकारी दान्त शान्त देवताओं को लेकर प्रदान कर देता है, इसी का नाम देवासुर संग्राम है और इसी का नाम दैवी और आसुरी सम्पत्ति है। यह व्यवहार परमात्मा की विविध रचना में घटीयंत्र के समान सदैव होता रहता है जिस तरह घटीयंत्र अर्थात् रहट के पात्र जो कभी भरे हुए होते हैं वेही ऊंचे चढ़ कर गर्व करते हुए सर्वथा रीते हो जाते हैं और जो रीते हो जाते हैं वेही विनय और नम्रता करते हुए भर जाते हैं अर्थात् परिपूर्ण हो जाते हैं इस लिये सदैव परमात्मा की विनयभाव से पूर्ण होने की अभिलाषा प्रत्येक अभ्युदया-भिलाषी को करनी चाहिये ॥ ७ ॥

द्वाविंशं सूक्तं द्वादशो वर्गश्च समाप्तः ।

यह—बाईसवां सूक्त और बारहवां वर्ग समाप्त हुआ ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ सप्तर्चस्य त्रयोविंशतितमस्य सूक्तस्य—

१-७ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः-१-४, ६ निचृद्गायत्री । ५ गायत्री । ७ विराड्गायत्री ॥ षड्जःस्वरः ॥

अथोक्तरचना प्रकारान्तरेण वर्ण्यते—

अब उक्त रचना को प्रकारान्तर से वर्णन करते हैं—

सोमा असृग्रमाशवो मधोर्मदस्य धारया ।
अभि विश्वानि काव्या ॥१॥

सोमाः । असृग्रं । आशवः । मधोः । मदस्य । धारया । अभि । विश्वानि । काव्या ॥१॥

पदार्थः—(सोमाः) ब्रह्माण्डानि विविधानि (मधोः मदस्य) प्रकृतेः रञ्जकभावैः (धारया) सूक्ष्मावस्थया (आशवः) शीघ्रगमनशीलानि (असृग्रम्) सृष्टानि, (अभि, विश्वानि, काव्या) ततश्च सर्वविधवेदादिशास्त्राणि निरमायिषत ।

पदार्थ—(सोमाः) "सूयन्ते = उत्पद्यान्त इति सोमाः ब्रह्माण्डानि" अनन्त प्रकार के कार्यरूप ब्रह्माण्ड (मधोः, मदस्य) प्रकृति के हर्षजनक भावों की (धारया) सूक्ष्म अवस्था से (आशवः) शीघ्र गति वाले (असृग्रम्) बनाए गये हैं और (अभि, विश्वानि, काव्या) तदनन्तर सब प्रकार के वेदादि शास्त्रों की रचना हुई ।

भावार्थ—परमात्मा ने प्रकृति की सूक्ष्मावस्था से कोटि ब्रह्माण्डों को उत्पन्न किया और तदनन्तर उसने विधिनिषेधात्मक

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विद्याभण्डार वेदों को रचा। जैसा कि "तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऋचः सामानि जज्ञिरे" इत्यादि वेदमंत्र और "जन्माद्यस्य यतः" इत्यादि सूत्रों से प्रति पादन कर आये हैं ॥१॥

अनु प्रत्नास आयवः पदं नवीयो अक्रमुः।
रुचे जनन्त सूर्यम् ॥२॥

अनु। प्रत्नासः। आयवः। पदं। नवीयः। अक्रमुः। रुचे। जनन्त। सूर्यम् ॥२॥

पदार्थः—(आयवः) तेषु च द्रुततरगन्तारः प्रकृतिपरमाणवः (प्रत्नासः) ये हि स्वरूपेणानादयः ते (अनु, नवीयः, पदम्, अक्रमुः) पश्चात् नूतनतमं पदं गृह्णन्ति (रुचे) दीप्तये तैरेव परमाणुभिः (सूर्यम्, जनन्त) सूर्यजनयामास।

पदार्थ—उन में से (आयवः) शीघ्रगामी प्रकृतिपरमाणु (प्रत्नासः) जो स्वरूप से अनादि हैं वे (अनु, नवीयः, पदम्, अक्रमुः) नवीन पद को धारण करते हैं (रुचे) दीप्ति के लिये परमात्मा ने उन्हीं परमाणुओं में से (सूर्यम्, जनन्त) सूर्य को पैदा किया।

भावार्थ—प्रकृति की विविध प्रकार की शक्तियों से परमात्मा सम्पूर्ण कार्यों को उत्पन्न करता है। इन सब कार्यों का उपादान कारण प्रकृति अनादि अनन्त है। इसी भाव से मन्त्रों में 'प्रत्नासः' पद से वर्णन किया है ॥२॥

आ पवमान नो भरार्यो अदाभ्यो गयम्।
कृधि प्रजावतीरिषः ॥३॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आ । पवमान । नः । भर । अर्यः । अदाशुषः । गयं कृधि । प्रजाऽवतीः । इषः ॥ ३ ॥

पदार्थः—(पवमान) हे सर्वेषां पावयितर्भगवन् । (नः अस्मभ्यं (अर्यः) ये भावाः (अदाशुषः) असुरेभ्यो न दद्यु ते (गयम्) भावाः (आ, भर) दीयन्ताम् (प्रजावतीः इषः) धनपुत्राद्यैश्वर्यं च (कृधि) ददातु ।

पदार्थ—(पवमान) हे सबको पवित्र करने वाले परमात्मन् (नः) हम को (अर्यः) जो भाव असुरों को (अदाशुषः) नहीं दिये वह (गयम्) भाव (आ, भर) देयँ और (प्रजावतीः, इषः) धनपुत्रादि ऐश्वर्यों को (कृधि) देयँ ।

भावार्थ—इस मंत्र में (अर्यः) परमात्मा का नाम है "ऋच्छति गच्छति सर्वत्र प्राप्नोति इत्यर्य्यः परमात्मा" जो सर्वत्र व्यापक हो उस का नाम अर्य है उस अर्य परमात्मा से यह प्रार्थना की गयी है कि परमात्मन्, आप हमको दैवी सम्पत्ति के गुण दें अर्थात् हम को ऐसे पवित्र भाव दें जिस से हम में आसुर भाव कदापि न आवे जो पुरुष सदैव देवताओं के गुणों से सम्पन्न होने की प्रार्थना करते हैं परमात्मा उन्हें सदैव दिव्य गुणों का दान देता है ॥३॥

अभि सोमास आयवः पवन्ते मद्यं मदम् ।
अभि कोशं मधुश्चुतम् ॥४॥

अभि । सोमासः । आयवः । पवन्ते । मद्यं । मदं । अभि कोशं । मधुऽश्चुतम् ॥४॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(सोमासः) इमानि कार्यरूपब्रह्माण्डानि (आयवः) गन्तृणि सन्ति (मद्यं, मदम्) अनेकविधानि आह्लादकानि मादकानि न वस्तूनि (अभि) सर्वत्रोत्पादयन्ति (मधुश्चुतम्) विविधरसजनकम् (कोशम्) आकरम् (अभि) अभित उत्पादयन्ति च ।

पदार्थ—(सोमासः) ये कार्य्य ब्रह्माण्ड जो (आयवः) गतिशील हैं (मद्यं, मदम्) अनन्त प्रकार के आह्लादकारक और मदकारक वस्तुओं को (अभि) सब ओर से उत्पन्न करते हैं और (मधुश्चुतम्) नानाप्रकार के रसों को देनेवाले (कोशम्) खजाने को (अभि) सब ओर से उत्पन्न करते हैं ।

भावार्थ—सब विभूतियों की खानिरूप ब्रह्माण्डों का वर्णन किया है । तात्पर्य यह है कि इस संसार में नानाप्रकार की वस्तुएँ जिन ब्रह्माण्डों में उत्पन्न होती हैं उनको सोम नाम से कथन किया गया है ॥४॥

सोमो अर्षति धर्णसिर्दधान इन्द्रियं रसम् ।
सुवीरो अभिशास्तिपाः ॥५॥

सोमः । अर्षति । धर्णसिः । दधानः । इन्द्रियं । रसं । सुऽवीरः । अभिशास्तिऽपाः ॥५॥

पदार्थः—(सोमः) अखिलपदार्थोत्पत्तिस्थानमिदं ब्रह्माण्डम् (अर्षति) शश्वद्गच्छति (धर्णसिः) सर्वेषां धारकः (इन्द्रियं, रसम्) इन्द्रियसम्बन्धीनि शब्दस्पर्शादीनि (दधानः) धारयन् आस्ते (सुवीरः) सर्वशक्तिमान् परमात्मा (अभिशास्तिपाः) अभितो रक्षति तत् ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(सोमः) सब पदार्थों का उत्पत्तिस्थान यह ब्रह्म (अर्षति) गति कर रहा है (धर्णसिः) सब के धारण करनेवाला और (इन्द्रियं, रसम्) इन्द्रियों के शब्दस्पर्शादि रसों को (दधानः) धारण करता हुआ विराजमान है और उसका (शुचीरः) सर्वशक्तिसम्प परमात्मा (अभि, शस्तिपाः) सब ओर से रक्षक है।

भावार्थ—जो ब्रह्माण्ड कोटि २ नक्षत्रों को धारण किये हु हैं और जिनमें नानाप्रकार के रस उत्पन्न होते हैं उनका जन्मदाता प मात्र परमात्मा ही है अन्य कोई नहीं। इस मंत्र में ब्रह्माण्डादिपति प मात्मा का वर्णन किया गया है और उसी की सत्ता से धारण कि हुए ब्रह्माण्डों का वर्णन है ॥५॥

इन्द्राय सोम पवसे देवेभ्यः सधमाद्यः।
इन्दो वाजं सिषाससि ॥६॥

इन्द्राय। सोम। पवसे। देवेभ्यः। सधऽमाद्यः। इन्दो इति। वाजम्। सिसाससि ॥६॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन्! (इन्द्राय) कर्मयो गिने (पवसे) पवित्रतां ददासि त्वम् (देवेभ्यः) विद्वद्भ्य (सधमाद्यः) यज्ञे सेव्यरूपेणास्ते (इन्दो) हे परमैश्वर्यशालिन् त्वमेव (वाजम्, सिषाससि) सर्वेभ्योऽन्नं ददासि।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्, (इन्द्राय) कर्मयोगी के लि तुम (पवसे) पवित्रता देते हो और (देवेभ्यः) विद्वान लोगों के लि तुम (सधमाद्यः) यज्ञ में सेवनीय हो और (इन्दो) परमैश्वर्यशा परमात्मन्, आप (वाजं, सिषाससि) सबको अन्न दान देते हो।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा ही कर्मयोगी को कर्म्मों में लगने का बल देता है और परमात्मा ही सत्कर्मी पुरुषों को अन्न करने का सामर्थ्य प्रदान करता है। बहुत क्या परमात्मा ही अन्य धनादि सम्पूर्ण ऐश्वर्यों का प्रदान करता है ॥६॥

अस्य पीत्वा मदानामिन्द्रो वृत्राण्यप्रति ।
जघान जघनच्च नु ॥७॥१३॥

अस्य । पीत्वा । मदानाम् । इन्द्रः । वृत्राणि । अप्रति । जघान । जघनत् । च । नु ॥७॥

पदार्थः—(अस्य) अस्य परमात्मन आनन्दं (पीत्वा) अनुभूय (मदानाम्) योहि परमात्मा सर्वविधमदान् तिरस्कृत्य विराजते (इन्द्रः) कर्मयोगी (वृत्राणि) अज्ञानानाम् (अप्रति) प्रतिपक्षीभूत्वा (जघान) तानि नाशयायास (जघनच्च) नाशयति (नु) निश्चयं तदानन्दमेव पिब ।

पदार्थ—(अस्य) इस परमात्मा के आनन्द को (पीत्वा) पी कर जो (मदानाम्) सब प्रकार के मदों को तिरस्कार करके विराजमान है (इन्द्रः) कर्मयोगी पुरुष (वृत्राणि) अज्ञानों को (अप्रति) प्रतिपक्षी बन कर (जघनच्च) नाश करता है (नु) निश्चय करके तुम उसी परमात्मा के आनन्द को पान करो ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि हे मनुष्यो ! सब आनन्दों से बढ़ कर ब्रह्मानन्द है। इस आनन्द के आगे सब प्रकार के मादक द्रव्य भी निरानन्द प्रतीत होते हैं वास्तव में मदकारक वस्तु मनुष्य की बुद्धि को नाश करके आनन्ददायक प्रतीत होती है और ब्रह्मानन्द का भान किसी प्रकार के मद को उत्पन्न नहीं करता किन्तु

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आह्लाद को उत्पन्न करता है। इसी लिये सब प्रकार के मद उसके
तुच्छ हो जाते हैं जिस प्रकार राजमद धनमद यौवनमद रूपमद
सब मद विद्यानन्द के आगे तुच्छ प्रतीत होते हैं इसी प्रकार विद्या
योगानन्द इत्यादि आनन्द ब्रह्मानन्द के आगे सब फीके हो जाते
इसी अभिप्राय से मंत्र में कहा है कि "मदानाम्" सब मदों
सच्चा मद एकमात्र परमात्मा का आनन्द है इसी अभिप्राय से कहा
"रसोह्येवहि सः रसं ह्येव लब्ध्वा आनन्दी भवति" परमात्मा आ
स्वरूप है उस आनन्द स्वरुप को लाभ करके पुरुष आनन्दित होता है।

इति त्रयोविंशं सक्तं त्रयोदशो वर्गश्च समाप्तः ॥

यह तेईसवां सूक्त और तेरहवां वर्ग समाप्त हुआ।

अथ सप्तर्चस्य चतुर्विंशतितमस्य सूक्तस्य—

१–७ असितः काश्यपो देवलो वा ऋषिः ॥ पवमानः सोमो
देवता ॥ छन्दः-१,२ गायत्री । ३,५,७ निचृद्गायत्री
४,६ विराड् गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

प्र सोमासो अधन्विषुः पवमानास इन्दवः ।
श्रीणाना अप्सु मृञ्जत ॥१॥

प्र । सोमासः । अधन्विषुः । पवमानासः । इन्दवः ।
श्रीणानाः । अप्ऽसु । मृजत ॥१॥

पदार्थः—(सोमासः) सौम्यस्वभावस्य कर्तारः परमात्
आह्लादादिगुणाः (पवमानासः) ये च पवित्रकर्तारः (इन्दव
दीप्तिमन्तश्च ये च कर्मयोगिषु (प्रधन्विषुः) प्रकर्षतयोत्पद

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ते (श्रीणानाः) सेविताः सन्तः (अप्सु) वाङ्मनःशरीराणां त्रिविधानामपि यत्नानां (मृज्जत) शुद्धिमुत्पादयन्ति।

पदार्थ—(सोमासः) सौम्य स्वभाव को उत्पन्न करने वाले परमात्मा के आह्लादादि गुण (पवमानासः) जो मनुष्य को पवित्र कर देने वाले हैं (इन्दवः) जो दीप्ति वाले हैं जो कर्मयोगियों में (प्र) प्रकर्षता से आनन्द (अधन्विषुः) उत्पन्न करने वाले हैं (श्रीणानाः) सेवन किये हुए (अप्सु) शरीर मन और वाणी तीनों प्रकार के यत्नों में (मृज्जत) शुद्धि को उत्पन्न करते हैं।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि हे मनुष्यो! तुम परमात्मा के गुणों का चिन्तन करके अपने मन, वाणी तथा शरीर की शुद्धि करो। जिस प्रकार जल शरीर की शुद्धि करता है और परमात्मोपासन मन की शुद्धि करता है और स्वाध्याय अर्थात् वेदाध्यायन वाणी की शुद्धि करता है इसी प्रकार परमात्मा के ब्रह्मचर्य्यादि गुण शरीर, मन और वाणी की शुद्धि करते हैं। 'ब्रह्म' नाम यहां वेद का है। वेद के निमित्त जो व्रत किया जाता है उस का नाम 'ब्रह्मचर्य्य' है। इस व्रत में इन्द्रियों का संयम भी करना अत्यावश्यक होता है। इस लिये ब्रह्मचर्य्य के अर्थ जितेन्द्रियता भी हैं। मुख्य अर्थ इसके वेदाध्ययन व्रत के ही हैं। वेदाध्ययन व्रत इन्द्रिय-संयमद्वारा शरीर की शुद्धि करता है ज्ञानद्वारा मन की शुद्धि करता है और अध्ययनद्वारा वाणी की शुद्धि करता है इसी प्रकार परमात्मा के सत्य, ज्ञान और अनन्तादि गुण आह्लाद उत्पन्न करके मन वाणी तथा शरीर की शुद्धि के कारण होते हैं। इसी अभिप्राय से उपनिषदोंने "सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म तै० २। १। इत्यादि वाक्यों में परमात्मा के सत्यादि गुणों का वर्णन किया है॥ १॥

अभि गावो अधन्विषुरापो न प्रवता यतीः।
पुनाना इन्द्रमाशत ॥२॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभि । गावः । अधन्विषुः । आपः । न । प्रऽवता । यतीः ।
पुनानाः । इन्द्रम् । आशत ॥२॥

पदार्थः—(गावः) इन्द्रियाणि कर्मयोगिषु (आपः, न) जलमिव (प्रवता) वेगवन्ति (अभि, अधन्विषुः) भवन्ति (यतीः) वशीभूतानि भवन्ति । (पुनानाः) तानि च पवित्रीकुर्वाणानि (इन्द्रम्, आशत) परमात्मानं विषयीकुर्वन्ति ।

पदार्थ—(गावः) इन्द्रियें (अभि, अधन्विषुः) कर्मयोगियों में (आपः, न) जल के समान (प्रवता) वेग वाली होती हैं और (यतीः) वशीभूत होती हैं (पुनानाः) वे वशीकृत इन्द्रियें मनुष्य को पवित्र करती हुई (इन्द्रम्, आशत) परमात्मा को विषय करती हैं ।

भावार्थ—कर्मयोगी पुरुषों की इन्द्रियें परमात्मा का साक्षात्कार करती हैं । यहां साक्षात्कार से तात्पर्य्य यह है कि वे परमात्मा को विषय करती हैं जैसा कि "दृश्यते त्वग्रया बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः" कठ० ३।१२। इस वाक्य में निराकार परमात्मा बुद्धि का विषय माना गया है । इसी प्रकार कर्मयोगी पुरुष की इन्द्रियें परमात्मा के साक्षात्कार के सामर्थ्य को लाभ करती हैं ॥ २ ॥

प्र पवमान धन्वसि सोमेन्द्राय पातवे ।
नृभिर्यतो वि नीयसे ॥३॥

प्र । पवमान । धन्वसि । सोम । इन्द्राय । पातवे ।
नृऽभिः । यतः । वि । नीयसे ॥३॥

पदार्थः—(प्र, पवमान) हे परमात्मन् ! (धन्वसि) भवान् सर्वत्र गमनशीलः (सोम) हे भगवन् ! (इन्द्रा

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पातवे) कर्मयोगिनः तृप्तये केवलो भवानेवोपास्यः (यतः) यस्मात् (नृभिः) ऋत्विगादिभिः (विनीयसे) विनयेन लभ्यते भवान् ।

पदार्थ—(पवमान) हे परमात्मन् ! (धन्वसि) तुम सर्वत्र गतिशील हो और (सोम, इन्द्राय) कर्मयोगी की (पातवे) तृप्ति के लिये तुम ही एकमात्र उपास्यदेव हो (यतः) जिस लिये (नृभिः) ऋत्विगादि लोगों के (विनीयसे) विनीतभाव से आप उन्हें प्राप्त होते हैं ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि जो पुरुष कर्मयोगी व ज्ञान योगी हैं उनकी तृप्ति का कारण एकमात्र परमात्मा ही है । तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार परमात्मा में ज्ञान, बल, क्रिया इत्यादि धर्म स्वाभाविक पाये जाते हैं इसी प्रकार कर्मयोगी और ज्ञानयोगी पुरुष भी साधन-सम्पन्न हो कर उन धर्मों को धारण करते हैं ॥३॥

त्वं सोम नृमादनः पवस्व चर्षणीसहे ।
सस्निर्यो अनुमाद्यः ॥४॥

त्वं । सोम । नृऽमादनः । पवस्व । चर्षणिऽसहे । सस्निः । यः । अनुऽमाद्यः ॥४॥

पदार्थः—(सोम) हे सर्वोत्पादक ! (त्वम्) भवान् (नृमादनः) मनुष्येभ्यः आनन्दस्य दाता (चर्षणीसहे) स्वप्रति-कूलेभ्योऽपि क्षमते (सस्निः) शुद्धस्वरूपः (अनुमाद्यः) सर्वथास्तुत्यः (यः) एवंभूतोयो विराजते स भवानेव (पवस्व) अस्मान्पावयतु ।

पदार्थ—(सोम) हे सर्वोत्पादक परमात्मन् ! (त्वं) तुम (नृमादनः) मनुष्यों को आनन्द देने वाले हो (चर्षणीसहे) जो

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आप से विमुख मनुष्य ह उन पर भी कृपा करने वाले हो (सर्वत्र शुद्ध स्वरूप हो (अनुमाद्यः) सर्वथा स्तुति करने योग्य हो (यः) इस प्रकार के गुणों का आधार सर्वोपरिदेव आप हैं (पवस्व) हम पर कृपा करें ।

भावार्थ—परमात्मा किसी से राग, द्वेष नहीं करते सब स्वकर्मानुकूल फल देते हैं । अर्थात् एकमात्र परमात्मा ही पक्षपात से रहित होकर न्याय करते हैं । इसी लिये परमात्मा को यहां "चर्षणीसह" अर्थात् सब पर दया करनेवाला कहा गया है ॥४॥

इन्दो यदद्रिभिः सुतः पवित्रं परिधावसि ।
अरमिन्द्रस्य धाम्ने ॥५॥

इन्दः । यत् । अद्रिभिः । सुतः । पवित्रं । परिधावसि ।
अरं । इन्द्रस्य । धाम्ने ॥५॥

पदार्थः—(इन्दो) हे परमात्मन् ! त्वं (यत्) यदा (पवित्रं) पवित्रान्तःकरणं (परिधावसि) अधितिष्ठसि तदा (अद्रिभिः, सुतः) अन्तःकरणवृत्तिभिः साक्षात्कृतः (इन्द्रस्य धाम्ने) कर्मयोगिणामन्तःकरणरूपे धाम्नि (अरम्) अलङ्करोषि ।

पदार्थ—(इन्दो) हे परमात्मन् ! (यत्) जब तुम (पवित्रं) पवित्र अन्तःकरणों में (परिधावसि) निवास करते हो तब (अद्रिभिः सुतः) अन्तःकरण की वृत्तिद्वारा साक्षात्कार को प्राप्त हुए आप (इन्द्रस्य धाम्ने) कर्मयोगी पुरुष के अन्तःकरणरूपी धाम को (अरम्) अलङ्कृत करते हैं ।

भावार्थ—परमात्मा अपनी व्यापकता से कर्मयोगी पुरुषों के अन्तःकरणों को अलङ्कृत करता है ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यद्यपि परमात्मा प्रत्येक पुरुष के अन्तःकरण को विभूषित करता है तथापि कर्मयोग वा ज्ञानयोग द्वारा जिन पुरुषों ने अपने अन्तःकरणों को निर्मल बनाया है उनके अन्तःकरण में परमात्मा का प्रकाश विशेष-रूप से प्रतीत होता है । इसी लिये योगियों के अन्तःकरणों का विशेष रूप से प्रकाशित होना कथन किया गया है ॥५॥

पवस्व वृत्रहन्तमोक्थेभिरनुमाद्यः ।
शुचिः पावको अद्भुतः ॥६॥

पवस्व । वृत्रहन्ऽतम । उक्थेभिः । अनुऽमाद्यः । शुचिः । पावकः । अद्भुतः ॥६॥

पदार्थः—(वृत्रहन्तम) हे अज्ञाननाशक परमात्मन् ! त्वम् (उक्थेभिः) यज्ञैः (अनुमाद्यः) मनुष्येभ्य आनन्द-दाता, (शुचिः) शुद्धस्वरूपः (पावकः) सर्वेषां पविता (अद्-भुतः) आश्चर्यरूपश्चासि त्वं कृपां कृत्वा (अस्मान्) पवित्री कुरु ।

पदार्थ—(वृत्रहन्तम) हे अज्ञान के नाश करने वाले परमात्मन! आप (उक्थेभिः) यज्ञों द्वारा (अनुमाद्यः) मनुष्यों को आनन्द देते हैं (शुचिः) शुद्धस्वरूप हैं (पावकः) सब को पवित्र करने वाले हैं तथा (अद्भुतः) आश्चर्यरूप हैं आप कृपा कर (पवस्व) हम को पवित्र करें ।

भावार्थ—परमात्मा ही इस संसार में आश्चर्यमय है अर्थात् अन्य सब वस्तुओं का पारावार मिल जाता है एकमात्र परमात्मा ही ऐसा पदार्थ है जिस का पारावार नहीं । यद्यपि जिज्ञासु पुरुष उस पूर्ण को पूर्णरूप से नहीं जान सकता तथापि उस के ज्ञानमात्र से अर्थात् "अस्ति इत्येवोपलब्धव्यः" उसकी सत्ता के साक्षात्कार से पुरुष आनन्द का अनुभव करता है केवल एकमात्र परमात्मा ही आनन्दमय है अन्य सब उसी के आनन्द को लाभ करके आनन्द पाते हैं अन्यथा नहीं ॥६॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri Gyaan Kosha

शुचिः पावक उच्यते सोमः सुतस्य मध्वः ।
देवावीरघशंसहा ॥७॥१४॥

शुचिः । पावकः । उच्यते । सोमः । सुतस्य । मध्वः ।
देवऽअवीः । अघशंसऽहा ॥७॥

पदार्थः—स परमात्मा (शुचिः) शुद्धस्वरूपः (पावकः उच्यते) सर्वेषां पावकश्च कथितः (सोमः) सर्वजगदुत्पादकः (सुतस्य) एतत्कार्य्यमात्रस्य ब्रह्माण्डस्य (मध्वः) आधारः (देवावीः) देवानां रक्षकः (अघशंसहा) पापप्रशंसकानां पुंसां हन्ता चास्ति ।

पदार्थ—वह परमात्मा (शुचिः) शुद्धस्वरूप है (पावकः उच्यते) सब का पवित्र करने वाला कहा जाता है (सोमः) "सर्वं चाराचरं यः स सोमः" जो सब का उत्पादक है उसका नाम यहां सोम है (सुतस्य) इस कार्यमात्र ब्रह्माण्ड का (मध्वः) अधिकरण है (देवावीः) देवताओं का रक्षक है (अघशंसहा) पापों की स्तुति करने वा पापमय जीवन व्यतीत करने वाले पुरुषों का हनन करने वाला है ।

भावार्थ—जो लोग पापमय जीवन व्यतीत करते हैं परमात्मा उनकी वृद्धि कदापि नहीं करता । यद्यपि पापी पुरुष भी कहीं कहीं फलते फूलते हुए देखे जाते हैं तथापि उनका परिणाम अच्छा कदापि नहीं होता अन्त में 'यतोधर्मस्ततोजयः' का सिद्धान्त ही ठीक रहता है जिस ओर धर्म होता है उसी पक्ष की जय होती है इस तात्पर्य से मंत्र यह कथन किया है कि परमात्मा पापी पुरुष और उनका अनुमोदन करने वाले दोनों का नाश करता है ॥७॥

इति चतुर्विंशं सूक्तं, चतुर्दशो वर्गः, प्रथमोऽनुवाकश्च समाप्तः ।
यह चौबीसवां सूक्त और चौदहवां वर्ग तथा पहिला अनुवाक समाप्त हुआ ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ षड्ऋचस्य पञ्चविंशतितमस्य सूक्तस्य—

१-६ दृढच्युत आगस्त्य ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता छन्दः—१,३,५,६ गायत्री। २,४ निचृद्गायत्री॥ षड्जः स्वरः॥

अथ परमात्मा मुक्तिधामत्वेन वर्ण्यतेः—

मुक्ति का धाम एकमात्र परमात्मा है अब इस बात का वर्णन करते हैं:—

पवस्व दक्षसाधनो देवेभ्यः पीतये हरे।
मरुद्भ्यो वायवे मदः॥१॥

पवस्व। दक्षऽसाधनः। देवभ्यः। पीतये। हरे। मरुत्ऽभ्यः। वायवे। मदः॥१॥

पदार्थः—(हरे) हे परमात्मन्! सर्वदुःखहर्तर्जगदीश्वर, भवान् (वायवे) कर्मयोगिणे पुरुषाय (मदः) आनन्दस्वरूपोऽस्ति (मरुद्भ्यः) ज्ञानयोगिभ्यश्च आनन्दस्वरूपोऽस्ति भवान् (देवेभ्यः) उक्तविदुषां (पीतये) तृप्त्यै (दक्षसाधनः) पर्य्याप्तसाधनोऽस्ति त्वम् (पवस्व) अस्मान् पुनीहि।

पदार्थ—(हरे) हे परमात्मन्! सब दुःखों के हरने वाले जगदीश्वर! आप (वायवे) कर्मयोगी पुरुष के लिये (मदः) आनन्दस्वरूप हैं (मरुद्भ्यः) और ज्ञानयोगियों के लिये भी आनन्दस्वरूप हैं आप (देवेभ्यः) उक्त विद्वानों की (पीतये) तृप्ति के लिये (दक्षसाधनः) पर्याप्त साधनों वाले हैं।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा के आनन्द का अनुभव केवल ज्ञानयोगी व कर्मयोगी पुरुष ही कर सकते हैं अन्य नहीं। जो पुरुष अयोगी है अ जिस पुरुष का किसी तत्त्व के साथ योग नहीं वह कर्मयोगी व ज्ञा योगी नहीं बन सकता ॥१॥

पवमान धिया हितोऽभि योनिं कनिक्रदत्।
धर्मणा वायुमा विश ॥२॥

पवमान । धिया । हितः । अभि । योनिं । कनिक्रदत् धर्मणा । वायुं । आ । विश ॥२॥

पदार्थः—(पवमान) हे सर्वेषां पावक भगवन् ! त (धिया, हितः) बुद्ध्या धृतः (अभि, योनिं) हृदय स्थाने (कनिक्रदत्) साधूपदिशन् (आविश) प्रविश च (धर्मणा) अपहतपाप्मादिभिर्धर्मैः (वायुम्) कर्मयोगि विदुषो हृदय आगत्य प्रविश ।

पदार्थ—(पवमान) हे सब को पवित्र करने वाले परमात्म (धिया, हितः) बुद्धि से धारण किये हुये आप (अभि, योनिं) हृदयरूपी स्थान में (कनिक्रदत्) सदुपदेश करते हुये (आविश) कीजिये और (धर्मणा) अपने अपहतपाप्मादि धर्मों द्वारा (वायुं) कर्मयोगी विद्वान् के हृदय में आकर प्रवेश करें ॥

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि जो लोग शुद्ध द्वारा परमात्मा की उपासना करते हैं उनके हृदय को परमात्मा सदैव करता है। तात्पर्य यह है कि अपहतपाप्मादि परमात्मा के गुणों को पुरुषधारण कर सकता है जो पुरुष योगसाधनादि द्वारा संस्कृत की हुई बुद्धि साथ परमात्मा का ध्यान करता है। इसी आशय से कहा है कि "हृ

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्वग्रया बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शीभिः"कठ० ३।१२॥ तथा"यदा पश्यः पश्यते रुक्मवर्णंकर्तारमीशं पुरुषं ब्रह्मयोनिम्। तदा विद्वान् पुण्यपापे विधूय निरञ्जनः परमं साम्यमुपैति"मु० ३,१,३। जब जिज्ञासु पुरुष उस स्वतः प्रकाश ब्रह्मको अपने योगजसामर्थ्य से देखता है तो पुण्य पाप से छूटता है अर्थात् जिस प्रकार वह परमपुरुष निष्पाप है उसी प्रकार वह भी निष्पाप हो कर उसके सत्यादि गुणों को धारण करता है। इसी का नाम वैदिक मत में मुक्ति है अर्थात् पापरूपी मल से छूट कर ब्रह्म के अमृत भावादि धर्मों को धारण करने का नाम मुक्ति है इसीलिये "ब्रह्मविदाप्नोति परम् " और "अमृतत्वमानशुः" इत्यादि उपनिषद्वाक्यों में उसको अमृत शब्द से कथन किया है केवल उपनिषदों में ही नहीं किन्तु वेद के बहुत से मन्त्रों में अमृत शब्द से मुक्त पुरुषों का कथन किया है जैसे कि "कस्यनूनं कतमस्यामृतानांमनामहे" ऋग्०—१।२।२४।१॥ और "अग्नेर्वयं प्रथमस्यामृतानां मनामहे ऋग्०—१।२४।१॥ इत्यादि मन्त्रों से स्पष्ट है कि अमृत यहां मुक्त पुरुषों का नाम है। क्यों कि अमृतानाम् यह निर्धारण षष्ठी है और निर्धारण बहुतों में से ही किया जाता है इससे स्पष्ट है कि बहुत यहां मुक्त जीव ही लिये जा सकते हैं अन्य नहीं ॥

जो लोग इन मंत्रों के अर्थ पुनर्जन्म के करके अमृतों के अर्थ देवताओं के करते हैं उनके मत में भी देव मुक्त पुरुष ही हो सकते हैं।

यदि कहा जाय कि देव विद्वानों का नाम है तो यहां यह स्मरण रखने योग्य है कि यहां विद्वानों का कोई प्रसङ्ग नहीं, प्रसङ्ग यहां मुक्त पुरुषों का ही है। युक्ति इसमें यह है कि बहुत से जीवों को अमृतभाव प्राप्त हो। तभी 'अमृतानाम्' यह बहुवचन कहा जा सक्ता है। यदि उत्पत्तिनाश न होने के अभिप्राय से यहां अमृत शब्द का प्रयोग होता तो "न मृत्युरासीदमृतंन" इस मन्त्र में मृत्यु के मुकाबिले में अमृत शब्द का प्रयोग न होता। मृत्यु के प्रतिपक्षी अमृत शब्द का प्रयोग इस बात को सिद्ध

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करता है कि जिसपुरुष ने अमृत पद का लाभ किया है उसी का
यहां अमृत है अन्य का नहीं इससे स्पष्ट रीति से मुक्तपुरुषों का
पाया जाता है ।

जो लोग उक्त मन्त्रों के यह अर्थ करते हैं कि उक्त दोनों
बद्ध जीवों की प्रार्थना का वर्णन करते हैं वे वेद के आशय से
अनभिज्ञ हैं । क्योंकि बद्ध जीव की प्रार्थना पुनः माता पिता के
में पड़ने की कदापि नहीं हो सकती । क्योंकि इन मन्त्रों के अन
"पितरं च दृशेयं मातरं च" अर्थात् मैं पुनः माता पिता को
यह कदापि नहीं हो सकता । क्योंकि माता पिता का देखना वही
है जिसने देर से इस संसारचक्र के माता पिता को त्यागा हुआ
इस से स्पष्ट सिद्ध है कि यहां मुक्त जीव की प्रार्थना है बद्ध जी
नहीं इसके विषय में "सयोवै तत्परमं ब्रह्म वेद ब्रह्मैव भ
नास्याब्रह्मवित्कुले भवति"

इस प्रमाण से यह पाया जाता है कि ब्रह्मवेत्ता मुक्त पुरुष का
कुल होता है उसके कुल में कोई अब्रह्मवित् नहीं होता, अथवा
अर्थ ये भी किये जा सकते हैं कि इस मुक्त पुरुष का जन्म "अब्रह्म
त्कुले = अब्रह्मविदां कुले न भवति" अर्थात् अब्रह्मवेत्ताओं के
में नहीं होता किन्तु ब्रह्मवेताओं के ही कुल में होता है, इस से स्पष्ट
है कि मुक्त पुरुष का जन्म लोकोपकार के लिये फिर भी होता
का नाम मुक्ति से पुनरावृत्ति है ।

इतना ही नहीं "यं यं लोकं मनसा संविभाति विशुद्ध
कामयते यांश्च कामान् । तं तं लोकं जयते तांश्च काम
मुक्त पुरुष जिस जिस लोक विशेष की कामना करता है उसी
लोक विशेष में जाकर उत्पन्न होता है इसी अभिप्राय से "ते ब्रह्म
षु परान्तकाले प्रामृतात् परिमुच्यन्ति सर्वे" इस वाक्य में
पुनरावृत्ति का कथन किया है । जो यह कहा जाता है कि "

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्" इस मन्त्र में अमृत रहने की प्रार्थना की गयी है इससे मुक्ति नित्य सिद्ध होती है।

इसका उत्तर यह है कि यदि स्वभावसिद्ध मुक्ति से पुनरावृत्ति नहीं होती तो मुक्त रहने की प्रार्थना ही क्यों की जाती जिस प्रकार दुःखनिवृत्ति की प्रार्थना है तो दुःखप्राप्त था तब दुःखनिवृत्ति की प्रार्थना है इसी प्रकार मुक्ति से पुनरावृत्ति प्राप्त थी तभी उससे न छूटने की प्रार्थना की गयी।

अन्य बात यह है कि प्रार्थना जिस वस्तु की की जाती है वह सम्पूर्ण ही पुरुष को ज्यों की त्यों प्राप्त हो यह नहीं कहा जा सकता क्योंकि जिन मन्त्रों में यह प्रार्थना है कि हे ईश्वर! आप हमको सब ऐश्वर्य दें तो क्या जीव को कभी सब ऐश्वर्य प्राप्त हो सकता है? यदि यह कहा जाय कि यहां उपचार है अर्थात् सब ऐश्वर्य से तात्पर्य बहुत ऐश्वर्य का है तो क्या "मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्" इस वाक्य में अधिक काल तक मुक्त से अविमुक्त होने के अर्थ नहीं लिये जा सकते?

अस्तु। मुख्य प्रसङ्ग यह है कि अमृत पद वेद में बहुधा मुक्ति के लिये आता है और कहीं २ ब्रह्म स्वरूप के लिये भी आता है उक्त मन्त्र में अमृत पद ब्रह्म के स्वरूप को कथन करता है इसलिये कोई दोष नहीं क्योंकि अमृत पद के निर्णय के लिये विशेष नियम यह है कि जहां अमृत पद में एकवचन होता है वहां प्रायः अमृत शब्द ईश्वर के स्वरूप का बोधक होता है और जहां द्विवचन वा बहुवचन होता है वहां मुक्त पुरुषों का ग्रहण होता है। इस नियम का व्यभिचार केवल "नमृत्युरासीदमृतं न तर्हि" इसी वाक्य में पाया जाता है इसका कारण यह है कि यहां अमृत पद मृत्यु का प्रतिद्वन्द्वी है इसलिये यहां एकवचन भी मुक्ति को कहता है अन्यत्र कहीं नहीं, अन्यत्र सर्वत्रैव अमृत शब्द एकवचनान्त है, वेद में सर्वत्र ईश्वर के स्वरूप को कथन करता है, इसलिये "मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्" यहां ईश्वर के स्वरूप से मृत्यु दूर हो यह अर्थ है॥२॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सं देवैः शोभते वृषा कविर्योनावधि प्रियः ।
वृत्रहा देववीतमः ॥३॥

सं । देवैः । शोभते । वृषा । कविः । योनौ । अधि । प्रियः ।
वृत्रऽहा । देवऽवीतमः ॥३॥

पदार्थः—सर्वजगज्जनकः स परमात्मा (देवैः) दिव्यशक्तिभिः (सं, शोभते) द्योततेतराम् (वृषा) सर्वकामदः (कविः) सर्वज्ञः, (योनौ, अधि) प्रकृतिरूपायां योनौ अधिष्ठानरूपेण विराजमानः, (प्रियः) सर्वप्रियः, (वृत्रहा) अज्ञानध्वंसकः (देववीतमः) विदुषां हृदये प्रकाशरूपेण विराजमानश्चास्ति ।

पदार्थ—सर्व जगत् का उत्पादक वह परमात्मा (देवैः) दिव्य शक्तियों के द्वारा (सं, शोभते) शोभा को प्राप्त हो रहा है (वृषा) सब कामनाओं का देने वाला है (कविः) सर्वज्ञ (योनौ, अधि) प्रकृतिरूप योनि में अधिष्ठित अर्थात् अधिष्ठानरूप से जो विराजमान है (प्रियः) वह सर्वप्रिय और (वृत्रहा) अज्ञान का नाश करने वाला (देववीतमः) विद्वानों के हृदय में प्रकाशरूप से विराजमान है ।

भावार्थ—यद्यपि परमात्मा सर्वत्र परिपूर्ण है तथापि उसको साक्षात् करने वाले विद्वानों के हृदय में विशेषरूप से विराजमान है। इस अभिप्राय से गीता में कहा है कि "नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः" माया के सम्बन्ध के कारण परमात्मा सबको अपने हृदय में प्रतीत नहीं होता वरन् सबके हृदय में आकाशवत् परिपूर्णरूप से विराजमान है ॥३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मुक्तपुरुषाः तस्य ब्रह्मणः स्वरूपे निवसन्तीत्युच्यतेः-

अब इस बात का कथन करते हैं कि मुक्त पुरुष उस ब्रह्म के स्वरूप में निवास करते हैं:—

विश्वा रूपाण्याविशन्पुनानो याति हर्यतः ।
यत्रामृतास आसते ॥४॥

विश्वा । रूपाणि । आऽविशन् । पुनानः । याति । हर्यतः ।
यत्र । अमृतासः । आसते ॥४॥

पदार्थः—(पुनानः) सर्वान् पवित्रयन् परमात्मा (विश्वा, रूपाणि) सर्वाणि रूपाणि (आविशन्) प्रविशन् (हर्यतः) स्वसौन्दर्येण (याति) सर्वं प्राप्तो भवति (यत्र) यस्मिन् ब्रह्मणि (अमृतासः) मुक्तिपदं भुञ्जाना मुक्ताः पुरुषाः (आसते) निवसन्ति तद् ब्रह्म सर्वं पुनाति ।

पदार्थ—(पुनानः) सबको पवित्र करता हुआ (विश्वा, रूपाणि) सब रूपों में (आविशन्) प्रवेश करता हुआ (हर्यतः) अपनी कमनीयता से (याति) सर्वत्र प्राप्त है (यत्र) जिस ब्रह्मरूप में (अमृतासः) मुक्ति पद को भोगते हुये (आसते) मुक्त पुरुष निवास करते हैं वह ब्रह्म सबको पवित्र करने वाला है ।

भावार्थ—परमात्मा प्रत्येक वस्तु के भीतर व्यापक है अर्थात् वह प्रत्येक रूप में प्रविष्ट है, इसी तात्पर्य से उपनिषद् में कथन किया है "रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव" प्रत्येकरूप में परमात्मा तद्रूप हो रहा है अर्थात् उसी की सत्ता से उस रूप की मनोहरता है इस प्रकार का जो सर्वाधिकरण परमात्मा है उसी में मुक्त पुरुष जाकर निवास करते हैं ॥४॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अरुषो जनयन्गिरः सोमः पवत आयुषक्।
इन्द्रं गच्छन्कविक्रतुः ॥५॥

अरुषः। जनयन्। गिरः। सोमः। पवते। आयुषक्।
इन्द्रं। गच्छन्। कविऽक्रतुः ॥५॥

पदार्थः—(अरुषः) प्रकाशमानः परमात्मा (गिरः) वेदरूपा गिरः (जनयन्) उत्पादयन् (सोमः) संसारस्य [illegible] (इन्द्रं) जीवात्मानं (आयुषक्) यः कर्मयोगे संसक्तस्तम् (गच्छन्) प्राप्नुवन् (पवते) पवित्रयति सच परमात्मा (कविक्रतुः) सर्वज्ञ

पदार्थ—(अरुषः) प्रकाशमान परमात्मा (गिरः) वेदरूप [illegible] णियों को (जनयन्) उत्पन्न करने वाला (सोमः) संसार के उत्प करने वाला (इन्द्रं) जीवात्मा को (आयुषक्) जो कि कर्मयोग में ल हुआ है (गच्छन्) प्राप्त हो कर (पवते) पवित्र करता है (कविक्रतु वह परमात्मा सर्वज्ञ है।

भावार्थ—शुभाशुभ कर्मों के द्वारा परमात्मा प्रत्येक जीव प्राप्त है। अर्थात् उनको शुभाशुभ कर्मों के फल देता है। और वही प मात्मा वेदरूप वाणियों का प्रकाश करके पुरुषों को शुभाशुभ दर्शा कर शुभ कर्मों की ओर प्रेरणा करता है ॥५॥

आ पवस्व मदिन्तम पवित्रं धारया कवे।
अर्कस्य योनिमासदम् ॥६॥१५॥

आ। पवस्व। मदिन्ऽतम। पवित्रं। धारया। कवे।
अर्कस्य। योनिं। आऽसदं ॥६॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(अर्कस्य) ज्ञानरूपप्रकाशस्य (योनिं) स्थानम् (आसदम्) प्राप्तुम् (मदिन्तम) हे आनन्दस्वरूप भगवन्, (धारया) आनन्दवृष्ट्या (पवित्रं) मां पुनीहि। (कवे) हे सर्वद्रष्टः, त्वम् (आपवस्व) सर्वतोमां पावित्रय ।

पदार्थ—(अर्कस्य) ज्ञानरूप प्रकाश के (योनिं) स्थान की (आसदम्) प्राप्ति के लिये (मादिन्तम) हे आनन्दस्वरूप भगवन, आप (धारया) आनन्द की वृष्टि द्वारा (पवित्रं) हमको पवित्र करें (कवे) हे सर्वद्रष्टः, (आपवस्व) सब ओर से आप हम को पवित्र करें।

भावार्थ—जो लोग शुद्ध हृदय से परमात्मा की उपासना करते हैं उन के हृदय में ज्ञान का प्रकाश अवश्यमेव होता है वे लोग सूर्य्य के समान प्रकाशमान होते हैं ॥६॥

इति पञ्चविंशतितमं सूक्तं पञ्चदशो वर्गश्च समाप्तः ।

यह २५ वां सूक्त और १५ वां वर्ग समाप्त हुआ।

अथ षड्चस्य षड्विंशतितमस्य सूक्तस्य—

१-६ इध्मवाहो दार्ढच्युत ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता । छन्दः-१,३-५ निचृद्गायत्री । २,६ गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथेश्वरः केन प्रकारेण बुद्धिविषयो भवतीत्युच्यते—

ईश्वर किस प्रकार बुद्धिविषय होता है अब इस बात का उपदेश करते हैं:—

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तमंमृक्षन्त वाजिनंमुपस्थे अदितेरधि ।
विप्रासो अण्व्या धिया ॥१॥

तं । अमृक्षन्त । वाजिनं । उपऽस्थे । अदितेः । अधि ।
विप्रासः । अण्व्या । धिया ॥१॥

पदार्थ—(विप्रासः) धारणाध्यानादिसाधनैः शुद्धबुद्धयः जनाः (अण्व्या) सूक्ष्मया (धिया) बुद्ध्या (अदितेः, अधि) सत्यादिज्योतिषामधिकरणरूपं (तं, वाजिनम्) तं बलस्वरूपं परमात्मानं (उपस्थे) स्वीयान्तःकरणे (अमृक्षन्त) शुद्धज्ञानविषयीकुर्वन्ति ।

पदार्थ—(विप्रासः) धारणाध्यानादि साधनों से शुद्ध हुई बुद्धि वाले लोग (अण्व्या) सूक्ष्म (धिया) बुद्धिद्वारा (अदितेरधि) सत्यादिक ज्योतियों के अधिकरण स्वरूप (तं, वाजिनं) उस बलस्वरूप परमात्मा को (उपस्थे) अपने अन्तःकरण में (अमृक्षन्त) शुद्ध ज्ञान का विषय करते हैं ।

भावार्थ—जिन लोगो ने निर्विकल्प, सविकल्प समाधियों द्वारा अपने चित्तवृत्ति को स्थिर करके बुद्धि को परमात्मविषयिणी बनाया है वे लोग सूक्ष्म से सूक्ष्म परमात्मा का साक्षात्कार करते हैं। अर्थात् उसको आत्मसुख के समान अनुभव का विषय बना लेते हैं । तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार अपने आनन्दादि गुण प्रतीत होते हैं इसी प्रकार योगी पुरुषों को परमात्मा के आनन्दादि गुणों की प्रतीती होती है ॥

अथोक्तस्वरूपस्य साक्षात्काराय प्रकारान्तरं कथ्यते:—

अब उक्त स्वरूप के साक्षात्कार का अन्य प्रकार कथन करते हैं:—

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तं गावो अभ्यनूषत सहस्रधारमक्षितम् ।
इन्दुं धर्तारमा दिवः ॥२॥

तं । गावः । अभि । अनूषत । सहस्रऽधारं । अक्षितं । इन्दुं । धर्तारं । आ । दिवः ॥२॥

पदार्थः—(गावः) इन्द्रियाणि (तम्) तं परमात्मानम् (अभ्यनूषत) स्वविषयं कुर्वन्ति यः परमात्मा (सहस्रधारम्) विविधवस्तूनां धर्ता, (अक्षितम्) अच्युतः, (इन्दुम्) परमैश्वर्यसम्पन्नः (दिवः, आधर्तारम्) द्युलोकादीनां धारकश्चास्ति ॥

पदार्थ—(गावः) "गच्छन्ति विषयानिति गाव इन्द्रियाणि" इन्द्रियें (तम्) उस परमात्मा को (अभ्यनूषत) अपना विषय बनाती हैं, जो परमात्मा (सहस्रधारम्) अनेक वस्तुओं का धारण करने वाला, (अक्षितम्) अच्युत, (इन्दुम्) परमैश्वर्यसम्पन्न (दिवः, आधर्त्तारम्) तथा द्युलोक पर्यन्त लोकों का धारण करने वाला है ।

भावार्थ—जो परमात्मा द्युभ्वादि लोकों का आधार है और जिस में अनन्त प्रकार की वस्तुएं निवास करती हैं वह शुद्ध इन्द्रियों द्वारा साक्षात्कार किया जाता है ॥२॥

तं वेधां मेधयाह्यन्पवमानमधि द्यवि ।
धर्णसिं भूरिधायसम् ॥३॥

तं । वेधां । मेधया । अह्यन् । पवमानं । अधि । द्यवि । धर्णसिं । भूरिऽधायसम् ॥३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(तं, वेधाम्) तं स्रष्टारं परमात्मानं (मेधया अह्वन्) विद्वांसः स्वबुद्धिविषयीकुर्वन्ति (पवमानं) यः सर्वं पविता, (अधि, द्यवि) द्युलोकमधिष्ठानरूपेण अधिष्ठाता (धर्णसिं) सर्वाधारः (भूरिधायसम्) अनेकवस्तूनामुत्पादकश्चास्ति ।

पदार्थ—(तम्, वेधां) उस सृष्टिकर्त्ता परमात्मा को (मेधया अह्वन्) विद्वान् लोग अपनी बुद्धि का विषय बनाते हैं जो (पवमानम्) सब को पवित्र करने वाला है और (अधि, द्यवि) जो द्युलोक में अधिष्ठातारूप से स्थित है (धर्णसिम्) सबको धारण करने वाला तथा (भूरिधायसम्) अनेक वस्तुओं का रचयिता है ।

भावार्थ—उक्त परमात्मा जो सब लोक लोकान्तरों का आधार है उसको योगादि साधनों द्वारा संस्कृत बुद्धि से योगी जन विषय करते हैं । इस मन्त्र में जो परमात्मा को वेधा अर्थात् "विधति लोकान् विदधातीति वा वेधाः" विधाता रूप से वर्णन किया है इसका तात्पर्य यह है कि परमात्मा सब वस्तुओं का निर्माण कर्त्ता है इसी अभिप्राय से "सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्" ऋ. सू. १९ में यह कथन किया है कि सूर्य चन्द्रमा आदि ज्योतिर्मय पदार्थों का निर्माण एकमात्र परमात्मा ने ही किया है । सूर्य चन्द्रमा यहाँ उपलक्षण हैं वस्तुतः सब ब्रह्माण्डों का निर्माता एक परमात्मा ही है कोई अन्य नहीं ॥३॥

तमह्वन्भुरिजोर्धिया संवसानं विवस्वतः ।
पतिं वाचो अदाभ्यम् ॥४॥

तं । अह्वन् । भुरिजोः । धिया । संऽवसानं । विवस्वतः । पतिं । वाचः । अदाभ्यं ॥४॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(वाचः, पतिं) ऋग्वेदादिवाचां पतिं, (अदाभ्यं) निष्कपटं सेवनीयं, (संवसानं) व्यापकरूपेण सम्पूर्णब्रह्माण्डे वर्तमानं (तं) तं परमात्मानं (विवस्वतः) तस्य प्रकाशरूपस्य (भुरिजोः) शक्तीश्च विद्वांसः (धिया) स्वबुद्ध्या (अह्यन्) पश्यन्ति ।

पदार्थ—(वाचः, पतिम्) जो ऋग्वेदादि वाणियों का पति परमात्मा है और (अदाभ्यम्) जो निष्कपट सेवन करने योग्य है (संवसानम्) सम्पूर्ण ब्रह्मण्डों में व्यापक है (तम्) उस परमात्मा को तथा (विवस्वतः) उस प्रकाशस्वरूप की (भुरिजोः) शक्तियों को विद्वान् लोग (धिया) अपनी बुद्धि से (अह्यन्) साक्षात्कार करते हैं ।

भावार्थ—जिस प्रकाशस्वरूप परमात्मा से ऋगादि चारो वेद उत्पन्न होते हैं, अर्थात् ऋगादि वेद जिसकी वाणीरूप है वह परमात्मा योगीजनों के ध्यानगोचर होकर उनको आनन्द का प्रदान करता है ॥४॥

तं सानावधि जामयो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः ।
हर्यतं भूरिचक्षसम् ॥५॥

तं । सानौ । अधि । जामयः । हरिं । हिन्वन्ति । अद्रिऽभिः । हर्यतं । भूरिऽचक्षसम् ॥५॥

पदार्थः—(जामयः) इन्द्रियवृत्तयः (तं) तस्य परमात्मनः (सानौ, अधि) उन्नतोन्नतप्रदेशे (अद्रिभिः) स्वशक्तिभिः (हिन्वन्ति) प्रेरयन्ति यः (हरिं) भक्तद्वःखविहन्ता, (हर्यतम्) प्रलयादिपरिणामेषु हेतुभूतः (भूरिचक्षसम्) सर्वज्ञश्चास्ति ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(जामयः) इन्द्रियवृत्तियें (तं) उस परमात्मा (सानौ, अधि) उच्च से उच्च प्रदेश में (अद्रिभिः) अपनी शक्तियों (हिन्वन्ति) प्रेरणा करती हैं जो कि (हरिम्) भक्तों के दुःख को ह वाला और (हर्यतम्) प्रलयादि परिणामों में हेतुभूत तथा (भूरि सम्) सर्वज्ञ है ॥

भावार्थ—उक्त परमात्मा ही जगत् के जन्मादिकों का हे अर्थात् उसी से जगत् की उत्पत्ति, स्थिति तथा प्रलय होता है। व मात्मा हिमालय के उच्च से उच्च प्रदेशों में और सागर के गम्भीर गम्भीर स्थानों में विराजमान है। उस सर्वज्ञ का साक्षात्कार चित्त निरोधरूपी योगद्वारा ही हो सकता है अन्यथा नहीं ॥५॥

तं त्वा हिन्वन्ति वेधसः पवमान गिरावृधम् ।
इन्दविन्द्राय मत्सरम् ॥६॥१६॥

तं । त्वा । हिन्वन्ति । वेधसः । पवमान । गिरावृध इन्दो इति । इन्द्राय । मत्सरम् ॥६॥१६॥

पदार्थः—(पवमान) हे सर्वस्य पवितः परमात्मन्, (गिरावृधम्) पूर्वोक्तगुणसम्पन्नं वेदवाग्भिः प्रकाशमानं (त्वा) भ (वेधसः) विद्वांसः (हिन्वन्ति) साक्षात्कुर्वन्ति । (इन्दो परमैश्वर्य्यसम्पन्न भगवन्, यो भवान् (इन्द्राय) अज्ञानिजीवे (मत्सरम्) अत्यन्तगूढोऽस्ति ॥

पदार्थ—(पवमान) हे सब को पवित्र करने वाले परमात्म (तम्, गिरावृधम्) उस पूर्वोक्तगुणसम्पन्न और वेदवाणियों से प्र मान (त्वा) आप को (वेधसः) विद्वान् लोग (हिन्वन्ति) साक्षा

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करते हैं। (इन्दो) हे परमैश्वर्यसम्पन्न भगवन्! आप (इन्द्राय, मत्सरम्) अज्ञानी जीव के लिये अत्यन्त गूढ़ हों।

भावार्थ—परमात्मा के साक्षात्कार करने के लिये मनुष्य को संयमी होना आवश्यक है। जो पुरुष संयमी नहीं होता उसको परमात्मा का साक्षात्कार कदापि नहीं होता। संयम मन, वाणी तथा शरीर तीनों का कहलाता है। मन के संयम का नाम शम और वाणी के संयम का नाम वाक्संयम, और इन्द्रियों के संयम का नाम दम है। इस प्रकार जो पुरुष अपनी इन्द्रियों को संयम में रखता है और अपने मन को संयम में रखता है तथा व्यर्थ बोलता नहीं किन्तु वाणी को संयम में रखता है, वह पुरुष संयमी तथा दमी कहलाता है। इसका वर्णन शतपथ ब्राह्मण में विस्तार पूर्वक है। वहां यह लिखा है कि देव और असुर में यही भेद है कि देव दमी अर्थात् इन्द्रियों को दमन करने वाले मनुष्य-वर्ग का नाम है और इन्द्रियारामी विषयपरायण लोगों का नाम असुर है। उक्त मन्त्र में परमात्मा ने यह उपदेश किया है कि हे मनुष्यो! तुम इन्द्रियारामी और अज्ञानी मत बनो किन्तु तुम विद्वान् बन कर संयमी बनो यही मनुष्य जन्म का फल है॥६॥

इति षड्विंशतितमं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः।

यह छबीसवां सूक्त और सोलहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ षड्ऋचस्य सप्तविंशतितमस्य सूक्तस्य।

१-६ नृमेध ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता॥ छन्दः-१,६ निचृद्गायत्री। ३-५ गायत्री॥ षड्जः स्वरः॥

अथोक्तपरमात्मनो विविधशक्तयो वर्ण्यन्ते—

अब उक्त परमात्मा की नाना शक्तियों को वर्णन करते हैं—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एष कविरभिष्टुतः पवित्रे अधि तोशते।
पुनानो घ्नन्नप स्रिधः ॥१॥

एषः। कविः। अभिऽस्तुतः। पवित्रे। अधि। तोशते।
पुनानः। घ्नन्। अप। स्रिधः ॥१॥

पदार्थः—(एषः) अयं परमात्मा (कविः) सर्व
(अभिष्टुतः) सर्वैः स्तुत्यः, (पवित्रे, अधि) अन्तःक
मध्ये (तोशते) प्राप्तो भवति, (स्रिधः) दुराचारान् श
(अपघ्नन्) नाशयन् (पुनानः) सत्कर्मिणः पवित्रयति।

पदार्थ— एषः) यह परमात्मा (कविः) सर्वज्ञ है (अ
ष्टुतः) सब को स्तुति के योग्य है (पवित्रे, अधि) अन्तःकरण के
में (तोशते) प्राप्त होता है (स्रिधः) दुराचारी शत्रुओं को (अप,
नाश करता हुआ (पुनानः) सत्कर्मियों को पवित्र करता है।

भावार्थ—परमात्मा दुष्टों का दमन करके सदाचारियों
उन्नतिशील बनाता है। उसके पाने के लिये अपने अन्तःकरण को प
बनाना चाहिये। जो लोग अपने अन्तःकरण को पवित्र नहीं बनाते वे
को कदापि उपलब्ध नहीं कर सकते ॥१॥

एष इन्द्राय वायवे स्वर्जित्परि षिच्यते।
पवित्रे दक्षसाधनः ॥२॥

एषः। इन्द्राय। वायवे। स्वःऽजित्। परि। सिच्यते
पवित्रे। दक्षऽसाधनः ॥२॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(एषः) स उक्तः परमात्मा (वायवे, इन्द्राय) कर्मयोगिन सुलभः, (स्वर्जित, परिषिच्यते) विजितसुखास्वादैः पुरुषैः सत्क्रियते (पवित्रे) पवित्रान्तःकरणे (दक्षसाधनः) सुनीतिं ददाति च ।

पदार्थ—(एषः) वह उक्त परमात्मा (वायवे, इन्द्राय) कर्मयोगी के लिये सुलभ होता है (स्वर्जित्, परिषिच्यते) जिन लोगों ने सुख को जीत लिया है उन लोगों से सत्कृत होता है और (पवित्रे) पवित्र अन्तःकरण में (दक्षसाधनः) सुनीति का देने वाला है ।

भावार्थ—जो लोग परमात्मा पर दृढ़ विश्वास रखते हैं उनको परमात्मा सुनीति का दान देता है और वह परमात्मा जिन लोगों ने विषयजन्य सुख को जीत लिया है उन्ही की चित्तवृत्तियों का विषय होता है ।

वा यों कहो कि कर्मयोगी लोग अपने उग्र कर्मों द्वारा उसको उपलब्ध करके उसके भावों को प्राप्त होते हैं । जो लोग आलसी बन कर अपने जन्म को व्यर्थ व्यतीत करते हैं उनका उद्धार कदापि नहीं होता ॥ २॥

एष नृभिर्वि नीयते दिवो मूर्धा वृषा सुतः ।
सोमो वनेषु विश्ववित् ॥३॥

एषः । नृऽभिः । वि । नीयते । दिवः । मूर्धा । वृषा । सुतः ।
सोमः । वनेषु । विश्वऽवित् ॥३॥

पदार्थः—(एषः) अयं परमात्मा (वनेषु, सोमः) प्रार्थनासु सौम्यः, (दिवः, मूर्धा) लोकस्यच मस्तकरूपः, (वृषा) सर्वकामदः, (सुतः) स्वयंसिद्धः (विश्ववित्) सर्वज्ञश्च एवंभूतः परमात्मा (नृभिः, विनीयते) मनुष्यैरुपास्यो भवति ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(एषः) यह परमात्मा (वनेषु, सोमः) प्रार्थना में सौम्यस्वभाव वाला है (दिवः, मूर्धा) और द्युलोक का मूर्धा है (वृषा) सब कामनाओं को देने वाला है (सुतः) स्वयंसिद्ध (विश्ववित्) सर्वज्ञ है एवं भूत परमात्मा (नृभिः, विनीयते) मनुष्य का उपास्य देव है ।

भावार्थ—ईश्वर की आज्ञा को पालन करने वाले नम्र पुरुषों के लिये परमात्मा सौम्य स्वभाव है और जो उद्दण्ड अनाज्ञाकारी हैं उन के लिये परमात्मा उग्ररूप है । उक्त परमात्मा से सदैव अपने कल्याण की प्रार्थना करनी चाहिये ॥३॥

ए॒ष ग॒व्युर॑चिक्रद॒त्पव॑मानो हिरण्य॒युः ।
इन्दुः॑ सत्रा॒जिदस्तृ॑तः ॥४॥

ए॒षः । ग॒व्युः । अ॒चि॒क्र॒द॒त् । पव॑मानः । हि॒र॒ण्य॒ऽयुः । इन्दुः॑ । स॒त्रा॒ऽजित् । अस्तृ॑तः ॥४॥

पदार्थः—(अस्तृतः, एषः) अयमुक्तोऽविनाशी परमात्मा (सत्राजित्) सर्वविधशत्रूणां विजयं कृत्वा सदाचारिभ्यो धनं ददाति किंच (पवमानः) पुनानः (अचिक्रदत्) निर्भयत्वमुपदिशति स एव परमात्मा (गव्युः) भूम्यादि धनं वितरति (इन्दुः) प्रकाशरूपश्चास्ति ।

पदार्थ—(अस्तृतः, एषः) यह उक्त अविनाशी परमात्मा (सत्राजित्) सब प्रकार के शत्रुओं को जीत कर सदाचारियों को (हिरण्ययुः) धन देता है और (पवमानः) पवित्र करता हुआ (अचिक्रदत्) निर्भयता का उपदेश करता है और वही परमात्मा (गव्युः) भूम्यादि धनों का दाता है (इन्दुः) प्रकाशस्वरूप है ॥४॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा जिन लोगों पर प्रसन्न होता है उनको भूम्यादि धनों का स्वामी बनाता है और उनको हिरण्यादि ऐश्वर्यों का स्वामी बना कर उनसे शत्रुओं को परास्त कराता है ॥४॥

एष सूर्येण हासते पवमानो अधि द्यवि ।
पवित्रे मत्सरो मदः ॥५॥

एषः । सूर्येण । हासते । पवमानः । अधि । द्यवि । पवित्रे । मत्सरः । मदः ॥५॥

पदार्थः—(एषः) अयं परमात्मा (सूर्येण, हासते) सूर्यमपि स्वतेजसा परिभवति, (पवमानः) सर्वं पवित्रयति, (अधि, द्यवि) द्युलोकादिसमस्तलोकेषु विराजते (पवित्रे-मत्सरः, मदः) विशुद्धान्तःकरणान्मनुष्यान् स्वानन्देनानन्दयति च ।

पदार्थ—(एषः) यह परमात्मा (सूर्येण, हासते) सूर्य को भी अपने तेज से तिरस्कृत करता है (पवमानः) सबको पवित्र करते वाला है (अधि, द्यवि) और द्युलोकादि सम्पूर्ण लोकों में विराजमान है (पवित्रे, मत्सरः, मदः) पवित्र अन्तःकरण वाले पुरुषों को अपने आनन्द से आनन्दित करता है ।

भावार्थ—परमात्मा की सत्ता से ही सूर्य चन्द्रमाआदि प्रकाशित होते हैं और वही परमात्मा सब लोकान्तरों का अधिष्ठाता है; उसी में चित्तवृत्ति लगाने से पुरुष आनन्दित होता है अन्यथा नहीं ॥५॥

एष शुष्म्यसिष्यदद्न्तरिक्षे वृषा हरिः ।
पुनान इन्दुरिन्द्रमा ॥६॥१७॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एषः । शुष्मी । असिष्यदत् । अन्तरिक्षे । वृषा । हरिः
पुनानः । इन्दुः । इन्द्रं । आ ॥६॥

पदार्थः—(एषः) अयं (शुष्मी) बलवान् परमा
(अन्तरिक्षे, असिष्यदत्) सर्वमन्तरिक्षं व्याप्नोति (वृष
सर्वकामप्रदः, (हरिः) दुखस्य हर्ता, (पुनानः) सर्व
पविता; (इन्दुः) सर्वत्र प्रकाशमानः (इन्द्रम्, आ) कर्मयो
पुरुषान् प्राप्नोति ।

पदार्थ—(एषः) यह (शुष्मी) बलवान परमात्मा (अन्तरि
असिष्यदत्) अन्तरिक्ष में सर्वत्र व्याप्त हो रहा है (वृषा) सब क
नाओं का देने वाला और (हरिः) दुख का हरने वाला; (पुनानः)
को पवित्र करने वाला; (इन्दुः) सर्वत्र प्रकाशमान; (इन्द्रम्, आ) क
योगी पुरुष को प्राप्त होता है ॥६॥

भावार्थ—सच्चिदानन्दस्वरूप ब्रह्म जो सर्व व्यापक और
कामनाओं का देने वाला है वह अपने निवास का स्थान एकमात्र क
योगी पुरुषों को समझता है । यद्यपि ब्रह्म सर्वव्यापक है तथापि विशे
भिव्यक्ति उसकी कर्मयोगियों के हृदय में ही होती है अन्यत्र नहीं
तात्पर्य यह है कि कर्मयोगी पुरुष अपने कर्मों द्वारा उसकी आज्ञा
को पालन करके दिखला देता है अन्य लोग आलस्य में पड़े पड़े
समय को बिता देते हैं इस लिये इस मन्त्र में कर्मयोगी पुरुष को
का मुख्यपात्र निरूपण किया गया है ॥६॥

इति सप्तविंशतितमं सूक्तं सप्तदशोवर्गश्च समाप्तः ।

यह २७ वां सूक्त और १७ वां वर्ग समाप्त हुआ ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ षड्ऋचस्याष्टाविंशस्य सूक्तस्यः—

१-६ प्रियमेध ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता॥ छन्दः—
१,४,५ गायत्री। २,३,६ विराड् गायत्री॥
षड्जः स्वरः॥

अथेश्वरः अज्ञानस्यनिवर्त्तकत्वरूपेण वर्ण्यते—

अथ ईश्वर का अज्ञाननिवर्त्तकत्वरूप से वर्णन करते हैं—

एषः वाजी हितो नृभिर्विश्वविन्मनसस्पतिः।
अव्यो वारं वि धावति॥१॥

एषः। वाजी। हितः। नृऽभिः। विश्वऽवित्। मनसः। पतिः। अव्यः। वारं। वि। धावति॥१॥

पदार्थः—(एषः) अयं परमात्मा (वाजी) प्रबलः, (नृभिः, हितः) जिज्ञासुभिः स्वहृदये स्थापितः, (विश्ववित्) सर्वज्ञः, (मनसः, पतिः) मनोऽधिपतिः (अव्यः) अविनाशी च (विधावति) स्वभक्तहृदयमीधवसीत।

पदार्थ—(एषः) यह परमात्मा (वाजी) बल वाला है और (नृभिः, हितः) जिज्ञासुओं करके अन्तः करण में धारण किया गया है (विश्ववित्) सर्वज्ञ है (मनसः, पतिः) मन का स्वामी है (अव्यः) अविनाशी है और (वारं, विधावति) अपने भक्त के हृदय में निवास करता है।

भावार्थ—इस मन्त्र में परमात्मा को मनसस्पति इस लिये कहा गया कि मन उसके सात्विक रूप सामर्थ्य से उत्पन्न हुआ है इस लिये

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मन से ज्ञान उत्पन्न होता है । वा यों कहो कि मन का निरोध केवल ज
की कृपा से हो सकता है इस लिये मनसस्पति कहा है। तात्पर्य यह है कि
आत्मिक बल बढ़ाने वाले पुरुषों को चाहिये कि सब ओर से अपने
का निरोध करके अपने मन को उसी परमात्मा में लगायें ॥१॥

एष पवित्रे अक्षरत्सोमो देवेभ्यः सुतः ।
विश्वा धामान्याविशन् ॥२॥

एषः । पवित्रे । अक्षरत् । सोमः । देवेभ्यः । सुतः
विश्वा । धामानि । आऽविशन् ॥२॥

पदार्थ--(एषः) अयं परमात्मा (सोमः) सौम्यस्व
भावः (देवेभ्यः, सुतः) दैवसम्पत्तिमद्भ्यः प्रकाशमान
(विश्वा, धामानि, आविशन्) सर्वं स्थानं व्याप्नोति एवंभूत
परमात्मा (पवित्रे, अक्षरत्) जिज्ञासूनां पवित्रान्तःकरणे
विराजते ।

पदार्थः--(एषः) यह परमात्मा (सोमः) सौम्य स्वभा
वाला (देवेभ्यः, सुतः) दैवी सम्पत्ति वालों के लिये प्रकाशमान
(विश्वा, धामानि, आविशन्) सम्पूर्ण स्थानों में व्याप्त है एवंभू
परमात्मा (पवित्रे, अक्षरत्) जिज्ञासुओं के पवित्र अन्तःकरण में विराज
मान होता है ।

भावार्थ--"यस्मिन्सर्वाणि भूतानि आत्मैवाभूद् विजानतः
यजुः विज्ञानी पुरुष के लिये सब भूत उसका निवास स्थान हैं। और
इसी प्रकार-'य आत्मनि तिष्ठन् आत्मनोऽन्तरो यमात्मा न वे
यस्यात्मा शरीरम्" बृ० अन्तर्यामि ब्रा० इत्यादि वाक्यों में यह प्रति
पादन किया है कि जीवात्मा उसका शरीरस्थानी है अर्थात् जिस प्रका

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जीवात्मा अपने शरीर का प्रेरक है उसी प्रकार वह जीवात्मा का प्रेरक है इस लिये मन्त्र में धामान्याविशन् का कथन किया है अर्थात् शरीर-रूपी धाम में वह विराजमान है ॥२॥

एष देवः शुभायतेऽधि योनावमर्त्यः।
वृत्रहा देववीतमः ॥३॥

एषः। देवः। शुभायते। अधि। योनौ। अमर्त्यः। वृत्रऽहा। देवऽवीतमः ॥३॥

पदार्थः—(एषः, देवः) अयं परमात्मा (अधि, योनौ) प्रकृतौ (अमर्त्यः) अविनाशी सन् (शुभायते) प्रकाशते (वृत्रहा) अज्ञाननाशकः (देववीतमः) सत्कर्मिभ्यो भृशं स्पृहयति च।

पदार्थ—(एषः, देवः) यह परमात्मा (अधि, योनौ) प्रकृति में (अमर्त्यः) अविनाशी हो कर (शुभायते) प्रकाशित हो रहा है (वृत्रहा) और वह अज्ञान का नाशक है तथा (देववीतमः) सत्कर्मियों को अत्यन्त चाहने वाला है।

भावार्थ—तात्पर्य यह है कि योनि नाम यहां कारण का है वह कारण प्रकृतिरूपी कारण है अर्थात् प्रकृति परिणामी नित्य है और ब्रह्म कूटस्थ नित्य है परिणामी नित्य उसको कहते हैं कि जो वस्तु अपने स्वरूप को बदले और नाशको न प्राप्त हो और कूटस्थनित्य उसको कहते हैं कि जो स्वरूप से नित्य हो अर्थात् जिसके स्वरूप में किसी प्रकार का विकार न आये। उक्त प्रकार से यहां परमात्मा को कूटस्थ-रूप से वर्णन किया है ॥३॥

एष वृषा कनिक्रदद्दशभिर्जामिभिर्यतः।
अभि द्रोणानि धावति ॥४॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एषः । वृषा । कनिक्रदत् । दशऽभिः । जामिऽभिः । यतः ।
अभि । द्रोणानि । धावति ॥४॥

पदार्थः—(एषः, वृषा) सर्वकामप्रदोऽयं परमात्मा (कनिक्रदत्) शब्दायमानः (दशभिः, जामिभिः, यतः) दशधास्थूलसूक्ष्मभूतैःस्थिरः (अभि, द्रोणानि, धावति कार्यमात्रं प्राप्तो भवति ।

पदार्थ—(एषः, वृषा) यह सर्वकामप्रद परमात्मा (कनिक्रदत्) शब्दायमान और (दशभिः, जामिभिः, यतः) दश स्थूल भूत और सूक्ष्म भूतों द्वारा स्थिर है (अभि, द्रोणानि, धावति) कार्यमात्र में प्राप्त है ।

भावार्थ—तात्पर्य यह है कि परमात्मा दश सूक्ष्म भूत और दश स्थूल भूतों को व्याप्त करके स्थिर है इसी लिये 'सभूमिं सर्वतः स्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्" यह कथन किया है कि वह कार्यमात्र में अपने में व्याप्त करके दश प्रकार के भूतों को भी अतिक्रमण करके विराजमान है ॥४॥

एष सूर्यमरोचयत्पवमानो विचर्षणिः ।
विश्वा धामानि विश्ववित् ॥५॥

एषः । सूर्यम् । अरोचयत् । पवमानः । विऽचर्षणिः । विश्वा धामानि । विश्वऽवित् ॥५॥

पदार्थः—(एषः) अयं परमात्मा (सूर्यम्, अरोचयत्) सूर्यमपि प्रकाशयति, (पवमानः) सर्वं पवित्रयति, (विचर्षणिः

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सर्वद्रष्टास्ति, (विश्वा, धामानि) सर्वस्थानेषु विराजते (विश्ववित्) सर्वज्ञश्चास्ति ।

पदार्थ—(एषः) यह परमात्मा (सूर्यम्, अरोचयत्) सूर्य को भी प्रकाशित करता है (विचर्षणिः) सर्वद्रष्टा है (विश्वा, धामानि) सब स्थानों में विराजमान है (विश्ववित्) सर्वज्ञ है ।

भावार्थ—इस मन्त्र में परमात्मा को सूर्य का भी प्रकाशक कथन किया है । तात्पर्य यह है कि यह जड़ सूर्य उसकी सत्ता से प्रकाशित होता है, जो लोग गायत्री आदि मन्त्रों में इस जड़ सूर्य को उपास्य बतलाया करते हैं उनको 'सूर्यमरोचयत्' इस वाक्य से यह शिक्षा लेनी चाहिये कि यदि वेद का तात्पर्य जड़ सूर्य को उपास्य देव कथन करने का होता तो इस जड़ सूर्य को उस से प्रकाश पाकर प्रकाशित होना न कथन किया जाता और न "सूर्याचन्द्रमसौधाता" इत्यादि वाक्यों से इस जड़ सूर्यादि का निर्माता कथन किया जाता ॥६॥

एष शुष्म्यदाभ्यः सोमः पुनानो अर्षति ।
देवावीरघशंसहा ॥६॥१८॥

एषः । शुष्मी । अदाभ्यः । सोमः । पुनानः । अर्षति । देवऽअवीः । अघशंसऽहा ॥६॥

पदार्थः—(एषः) अयं (शुष्मी) प्रबलः परमात्मा (अदाभ्यः) दम्भरहितः, (सोमः) सौम्यस्वभावः, (पुनानः) पविता, (अर्षति) सर्वं व्याप्नोति (देवावीः) देवरक्षकः (अघशंसहा) दुरात्मनां विनाशयिता चास्ति ॥

पदार्थ—(एषः) यह (शुष्मी) बल वाला परमात्मा (अदाभ्यः)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दम्भ से अप्राप्य है (सोमः) सौम्यस्वभाव वाला (पुनानः) पवित्रता कारक (सर्वत्र) व्याप्त हो रहा है (देवावीः) देवताओं का रक्षक तथा (अघशंसहा) अघशंसियों का नाश करने वाला है ।

भावार्थ—जो लोग स्वयं पापी अथवा पापियों की प्रशंसा करते हैं उन को परमात्मा कदापि प्राप्त नहीं होता । परमात्मप्राप्ति के लिये सदैव सरलप्रकृति होनी चाहिये । तात्पर्य यह है कि परमात्मप्राप्ति विना दैवी सम्पत्ति नहीं होती । दैवी सम्पत्ति के गुण ये हैं तेज, तेजस्वी होना, धृति-दृढ़ता, क्षमा, शौच, अद्रोह, अहिंसा, सत्य अक्रोध इत्यादि अनेक प्रकार के दैवी सम्पत्ति के गुण हैं । और जो लोग आसुरी सम्पत्ति वाले हैं उन में निम्नलिखित अवगुण होते हैं दम्भ, दर्प = गर्व, अभिमान, क्रोध, पारुष्य इत्यादि । इस मन्त्र में परमात्मा अदाभ्यः पद से इस बात का उपदेश करता है कि दम्भ दर्पादि छोड़ कर तुम लोग सन्मार्ग का ग्रहण करो ॥६॥

इति अष्टाविंशतितमं सूक्तमष्टादशो वर्गश्च समाप्तः ।

यह अट्ठाइसवां सूक्त और अठारहवां वर्ग समाप्त हुआ ॥

अथ षडर्चस्यैकोनत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्यः—

१–६ नृमेध ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः–१ विराड् गायत्री । १-४,६ निचृद्गायत्री । ५ गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मनाऽभ्युदयप्राप्तेः साधनानि वर्ण्यन्तेः—

अब परमात्मा अभ्युदयप्राप्ति के साधनों का वर्णन करते हैं:—

प्रास्य धारा अक्षरन्वृष्णः सुतस्यौजसा ।
देवाँ अनु प्रभूषतः ॥१॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्र । अ॒स्य॒ । धाराः॑ । अ॒क्ष॒र॒न् । वृष्णः । सु॒तस्य॑ । ओज॑सा । दे॒वान् । अनु॑ । प्र॒ऽभूष॑तः ॥१॥

पदार्थः—(प्रभूषतः) प्रभुत्वमिच्छतः पुरुषस्येदं कर्तव्यं यत्सः (देवान्, अनु) विदुषामनुयायी स्यात् किं च (सुतस्य, ओजसा) नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्य परमात्मनस्तेजसा आत्मानं तेजस्विनं विदध्यात् (वृष्णः' अस्य, धाराः) सर्वकामप्रदस्य परमात्मनः कृपाधारा (अक्षरन्) आत्मानमभिषिञ्चेत् ॥

पदार्थ—(प्रभूषतः) प्रभुत्व अर्थात् अभ्युदय को चाहने वाले पुरुष का कर्तव्य यह है कि वह (देवान्, अनु) विद्वानों का अनुयायी बने और (सुतस्य, ओजसा) नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त परमात्मा के तेज से अपने आप को तेजस्वी बनावे (वृष्णः, अस्य, धाराः) जो सर्वकामप्रद परमात्मा है उसकी धारा से (अक्षरन्) अपने को अभिषिक्त करे।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि हे पुरुषो! तुम विद्वानों की संगति के विना कदापि अभ्युदय को नहीं प्राप्त हो सकते। जिस देश के लोग नाना प्रकार की विद्याओं के वेत्ता विद्वानों के अनुयायी बनते हैं उस देश का ऐश्वर्य देश देशान्तरों में फैल जाता है। इस लिये हे अभ्युदयाभिलाषी जनो, तुम भी विद्वानों के अनुयायी बनो ॥१॥

सप्तिं॑ मृजन्ति वे॒धसो॑ गृ॒णन्तः॑ का॒रवो॑ गि॒रा ।
ज्योति॑र्जज्ञा॒नमु॒क्थ्य॑म् ॥२॥

सप्तिं॑ । मृ॒ज॒न्ति॒ । वे॒धसः॑ । गृ॒णन्तः॑ । का॒रवः । गि॒रा । ज्योतिः॑ । जज्ञानं । उ॒क्थ्यं॑ ॥२॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(वेधसः) कर्मयोगिनो ये (गृणन्तः) परमात्मपरायणाः (कारवः) कर्मकाण्डिनः (गिरा, जज्ञानं) वेदरूपगिरा उत्पन्नां (सप्तिं) शक्तिं (मृजन्ति) वर्द्धयन्ति (ज्योतिः) सा ज्योतिर्मयी शक्तिः (उक्थ्यं) प्रशंसनीया ॥

पदार्थ—(वेधसः) कर्मयोगी लोग जो (गृणन्तः) परमात्मपरायण हैं (कारवः) वे कर्मकाण्डी लोग (गिरा, जज्ञानम्) वेदरूपी वाणी द्वारा उत्पन्न हुई (सप्तिम्) शक्ति को (मृजन्ति) बढ़ाते हैं (ज्योतिः) वह ज्योतिर्मयशक्ति (उक्थ्यम्) प्रशंसनीय है ॥

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि हे विद्वानो! तुम अपनी शक्तियों को वेदरूपी वाणी द्वारा बढ़ाओ, जो लोग अपनी शक्तियों को ईश्वराज्ञा से बढ़ाते हैं उन का ऐश्वर्य विश्वव्यापी हो जाता है ॥ २ ॥

सु॒षहा॑ सोम॒ तानि॑ ते पुना॒नाय॑ प्रभू॒वसो ।
वर्धा॑ समु॒द्रमु॒क्थ्य॑म् ॥३॥

सु॒ऽसहा॑ । सो॒म॒ । तानि॑ । ते॒ । पु॒ना॒नाय॑ । प्र॒भु॒वसो॒ इति॑ प्रभुऽवसो । वर्ध॑ । स॒मु॒द्रं । उ॒क्थ्यं॑ ॥३॥

पदार्थः—(सोम) हे सौम्य (प्रभूवसो) अखिलधनरत्नादिप्रभो परमात्मन्, (उक्थ्यं, समुद्रं, वर्ध) भवान् आकाशे वर्द्धमानं प्रशंसनीयं यशः मदर्थं वर्धय (तानि, सुषहा, पुनानाय) अथ च सर्वस्य पावकं प्रवृद्धं भवदीयं यशः मत्सुखं भोग्यं स्यात् ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(सोम) हे सौम्यस्वभाव वाले परमात्मन् ! (प्रभूवसो) हे अखिल धन रत्नादिकों के स्वामिन् ! (उक्थ्यम्, समुद्रम्, वर्ष) आप आकाश में फैलनेवाले प्रशंसनीय यश को मेरे लिये बढ़ाइये (तानि, सुषहा, ते, पुनानाय) और यह सबको पवित्र करने वाले आप का बढ़ा हुआ यश हमारे लिये सुख से भोग करने योग्य हो।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि जो लोग अपनी कीर्ति को नभोमण्डलव्यापिनी बनाना चाहें उनका कर्तव्य है कि वे परमात्मपरायण होकर कर्मयोगी बनें कर्मयोगी पुरुष के विना किसी पुरुष का ऐश्वर्य बढ़ नहीं सकता ॥३॥

विश्वा वसूनि सञ्जयन्पवस्व सोम धारया।
इनु द्वेषांसि सध्र्यक् ॥४॥

विश्वा। वसूनि। सञ्जयन्। पवस्व। सोम। धारया। इनु। द्वेषांसि। सध्र्यक् ॥४॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन् (विश्वा, वसूनि, संजयन्) सर्वान् मदर्थं समस्तं धनैश्वर्यं वर्द्धयन् (धारया, पवस्व) आनन्दवृष्ट्या मां पुनीहि (इनु, द्वेषांसि, सध्र्यक्) सर्वप्रकारं द्वेषमपि निराकुरु ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (विश्वा, वसूनि, संजयन्) आप मेरे लिये सम्पूर्ण धनादि ऐश्वर्य को बढ़ा कर (धारया, पवस्व) आनन्द की वृष्टि से हम को पवित्र करिये (इनु, द्वेषांसि, सध्र्यक्) और सब प्रकार के द्वेषों को भी साथ ही दूर करिये।

भावार्थ—इस मन्त्र में इस बात का उपदेश किया है कि जो पुरुष अपना अभ्युदय चाहे वह रागद्वेषरूपी समुद्र की लहरों में कदापि

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न पड़े। क्योंकि जो लोग रागद्वेष के प्रवाह में पड़ कर बह जाते हैं वे आत्मिक सामाजिक तथा शारीरिक तीनों प्रकार की उन्नतियों को नहीं कर सकते इस लिये पुरुष को चाहिये कि वह रागद्वेष के भावों से सर्वथा दूर रहे ॥४॥

रक्षा सु नो अररुषः स्वनात्समस्य कस्य चित्।
निदो यत्र मुमुच्महे ॥५॥

रक्ष। सु। नः। अररुषः। स्वनात्। समस्य। कस्य। चित्। निदः। यत्र। मुमुच्महे ॥५॥

पदार्थः—हे परमात्मन्, (नः) अस्मान् (समस्य, कस्यचित्, अररुषः) सर्वेषामदातृणां (स्वनात्, रक्ष) निन्दारूपशब्देभ्यो रक्ष (निदः) निन्दकेभ्यश्च रक्ष (यत्र, मुमुच्महे) यया रक्षया वयं निन्दादिभ्यो मुक्ताः स्याम।

पदार्थ—हे परमात्मन्, (नः) हमारी (समस्य, कस्यचित्, अररुषः) सम्पूर्ण अदाता लोगों के (स्वनात्, रक्ष) निन्दारूप शब्द से रक्षा करिये (निदः) और निन्दक लोगों से भी बचाइये (यत्र, मुमुच्महे) जिस रक्षा से हम निन्दादिकों से मुक्त रहें।

भावार्थ—अभ्युदयशाली मनुष्य का कर्तव्य यह होना चाहिये कि वह कदर्य कदापि न बने जो पुरुष कदर्य होता है वह सर्वदैव संसार में निन्दनीय रहता है इस लिये हे पुरुषो! तुम कदर्यता, कायरता और प्रमत्तता इत्यादि भावों को छोड़ कर उदारता वीरता, और अप्रमत्तता इत्यादि भावों को धारण करो ॥५॥

एन्दो पार्थिवं रयिं दिव्यं पवस्व धारया।
द्युमन्तं शुष्ममा भर ॥६॥१९॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आ । इन्दो इति । पार्थिवं । रयिं । दिव्यं । पवस्व । धारया । द्युऽमन्तं । शुष्मं । आ । भर ॥६॥

पदार्थः—(इन्दो) हे ऐश्वर्यशालिन् परमात्मन्, भवान् (दिव्यं, पार्थिवं, रयिं) अस्मान् दिव्यपार्थिवैश्वर्याणां (धारया, आपवस्व) धारया पुनातु (द्युमन्तम्, शुष्मं) दिव्यं बलं च (आभर) देहि !

पदार्थ— (इन्दो) हे ऐश्वर्यशालिपरमात्मन् ! (दिव्यम्, पार्थिवम्, रयिम्) आप हमको द्युलोकसम्बन्धी तथा पृथिवीसम्बन्धी ऐश्वर्य की (धारया, आपवस्व) धारा से पवित्र करिये और (द्युमन्तम्, शुष्मम्) दिव्य बल को (आभर) दीजिये ॥

भावार्थ—जो पुरुष उक्त प्रकार के अवगुणों से रहित होते हैं उनको परमात्मा द्युलोक पृथिवी लोक के ऐश्वर्यों से भरपूर करता है ॥६॥

इत्येकोनत्रिंशत्तमं सूक्तमेकोनविंशो वर्गश्च समाप्तः ॥

यह २९वां सूक्त और १९वां वर्ग समाप्त हुआ ॥

अथ षड्चस्य त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य—

१—६ बिन्दुर्ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः-१,२, ६ गायत्री । ३-५ निचृद्गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मा बलप्राप्तेरूपायमुपदिशति :—

अब परमात्मा बलप्राप्ति का उपदेश करते हैं:—

प्र धारा अस्य शुष्मिणो वृथा पवित्रे अक्षरन् ।
पुनानो वाचमिष्यति ॥१॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्र । धाराः । अस्य । शुष्मिणः । वृथा । पवित्रे । अक्षरन् । पुनानः । वाचं । इष्यति ॥१॥

पदार्थः—(प्रपुनानः) आत्मानं पवित्रयन् यः पुरु (वाचम्, इष्यति) वाग्रूपां सरस्वतीमिच्छति (अस्य, शुष्मिणः) अस्मै बलिने (पवित्रे) पात्रे (वृथा) मुधैव सोमरस्य (धाराः) धाराः पतन्ति ।

पदार्थ—(प्रपुनानः) अपने आप को पवित्र करता हुआ पुरुष (वाचम्, इष्यति) वाग्रूप सरस्वती की इच्छा करता है (अस्य, शुष्मिणः) उस बलिष्ठ के लिये (पवित्रे) पात्र में (वृथा) व्यर्थ ही सोमरस की (धाराः) धारायें (अक्षरन्) गिरती हैं ॥१॥

भावार्थ—जितने प्रकार के संसार में बल पाये जाते हैं सब में से वाणी का बल सब से बड़ा है इस अभिप्राय से परमात्मा उपदेश करते हैं कि हे पुरुषो ! यदि तुम सर्वोपरि बल को उपलब्ध करना चाहते हो तो वाणीरूप बल की इच्छा करो जो पुरुष वाणीरूप बल को उपलब्ध करते हैं उनके लिये सोमादि रसों से बल लेने की आवश्यकता नहीं ॥१॥

इन्दुर्हियानः सोतृभिर्मृज्यमानः कनिक्रदत् ।
इयर्ति वग्नुमिन्द्रियम् ॥२॥

इन्दुः । हियानः । सोतृऽभिः । मृज्यमानः । कनिक्रदत् । इयर्ति । वग्नुं । इंद्रियं ॥२॥

पदार्थः—(इन्दुः) दीप्तिमान् शब्दः (सोतृभिः, मृज्यमानः, हियानः) यो वेदज्ञपुरुषैः शुद्धिविधानपूर्वकं प्रेरितः

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(वन्नुम्, इन्द्रियं) श्रोत्रमिन्द्रियं यदा (कनिक्रदत्) गर्जन् (इयर्ति) अभ्युपैति तदानेकधा बलमुत्पादयति ।

पदार्थ—(इन्दुः) दीप्ति वाला शब्द (सोतृभिः, मृज्यमानः, धियानः) जो वेदवेत्ता पुरुषों से शुद्ध करके प्रेरित किया गया है वह (वन्नुम्, इन्द्रियम्) श्रोत्रेन्द्रिय को जब (कनिक्रदत्) गर्जता हुआ (इयर्ति) प्राप्त होता है तो अनेक प्रकार के बल उत्पन्न करता है ।

भावार्थ—सदुपदेशकों द्वारा जिन शब्दों का प्रयोग किया जाता है वे शब्द बलप्रद होते हैं इस लिये हे श्रोता लोगो ! तुम को चाहिये कि तुम सदैव सदुपदेशकों से उपदेश सुन कर अपने आप को तेजस्वी और ब्रह्मवर्चस्वी बनाओ ॥१॥

आ नः शुष्मं नृषाह्यं वीरवन्तं पुरुस्पृहम् ।
पवस्व सोम धारया ॥३॥

आ । नः । शुष्मं । नृऽसह्यं । वीरऽवन्तं । पुरुऽस्पृहं । पवस्व । सोम । धारया ॥३॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन्, (नः) अस्मान् भवान् (शुष्मं) यद्बलं (नृषाह्यं) शत्रुनाशकं, (वीरवन्तं) वीर्य्यवत्, (पुरुस्पृहं) सर्वोत्तममस्ति तस्य (धारया) सुवृष्ट्या (आ, पवस्व) पवित्रीकरोतुतराम् ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (नः) हमको आप (शुष्मम्) जो बल (नृषाह्यम्) शत्रु को नाश करने वाला (वीरवन्तम्) वीरता वाला (पुरुस्पृहम्) सर्वोपरि है उसकी (धारया) सुवृष्टि से (आ, पवस्व) भली प्रकार पवित्र करें ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि जो पुरुष सर्वोपरि बल की कामना करते हुये अपने आप को उस बल के योग्य बनाते हैं उन को संसार में न्याय नियम फैलाने के लिये सर्वोपरि बल अवश्यमेव मिलता है ॥३॥

प्र सोमो अति धारया पवमानो असिष्यदत् ।
अभि द्रोणान्यासदम् ॥४॥

प्र । सोमः । अति । धारया । पवमानः । असिस्यदत् ।
अभि । द्रोणानि । आऽसदं ॥४॥

पदार्थः—(सोमः) परमात्मा (धारया) स्वानुग्रहरूप धाराभिः (पवमानः) पवित्रयन् ज्ञानप्रभावेण (अभि, द्रोणानि, आसदम्) तान्यन्तःकरणानि प्राप्तुमिच्छति यानि सत्कर्मभिः (प्रासिष्यदत्) शुद्धीकृतानि भवन्ति ॥

पदार्थ—(सोमः) परमात्मा (धारया) अपनी कृपा की दृष्टि रूप धाराओं से (पवमानः) पवित्र करता हुआ ज्ञान के प्रभाव से (अभि, द्रोणानि, आसदम्) उन अन्तःकरणों को प्राप्त होता है जो अन्तःकरण सत्कर्मों द्वारा शुद्ध किये हुये होते हैं ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि हे मनुष्यो ! यदि तुम अपने आप को सत्कर्मी बनाओगे तो ज्ञान का प्रवाह तुम्हारे अभ्युदय रूपी अंकुरों को अवश्यमेव अभ्युदयशाली बनायेगा ॥४॥

अप्सु त्वा मधुमत्तमं हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः ।
इन्दविन्द्राय पीतये ॥५॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अप्सु । त्वा । मधुमत्ऽतमं । हरिं । हिन्वन्ति । अद्रिऽभिः । इन्दो इति । इन्द्राय । पीतये ॥५॥

पदार्थः—(इन्दो) हे ऐश्वर्य्यकाम जीव, (अप्सु) सर्वरसेषु (मधुमत्तमम्) स्वादुर्यदेकविधोरसोऽस्ति एवम्भूतम् (त्वा) त्वां (हरिं) अज्ञानच्छेदकं (अद्रिभिः) वाग्रूपैर्वज्रैः (हिन्वन्ति) वेदज्ञाः पुरुषाः प्रेरयन्ति यतस्त्वं (इन्द्राय) कर्मयोगिभ्यः (पीतये) ऐश्वर्यप्रदानाय समर्थः स्याः ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे ऐश्वर्याभिलाषी जीव, (अप्सु,) सब रसों में (मधुमत्तमम्) मीठा जो एक प्रकार का रस है ऐसे (त्वा) तुमको (हरिम्) जो तुम अज्ञान के हरने वाले हो (अद्रिभिः) वाणीरूप वज्र से हिन्वन्ति वेदवेत्ता पुरुष तुम्हें प्रेरित करते हैं ताकि तुम (इन्द्राय) कर्मयोगी को (पीतये) ऐश्वर्यप्रदान करने के लिये समर्थ बनो ।

भावार्थ—जो पुरुष धार्मिक बन के सदुपदेश करते हैं वे मानो सब रसों में से अपने आप को माधुर्य्यसम्पन्न सिद्ध करते हैं और वे ही लोग उपदेष्टा बन कर संसार में लोगों को कर्मयोग का उपदेश करते हैं ॥५॥

सुनोता मधुमत्तमं सोममिन्द्राय वज्रिणे ।
चारुं शर्धाय मत्सरम् ॥६॥२०॥

सुनोत । मधुमत्ऽतमं । सोमं । इन्द्राय । वज्रिणे । चारुं । शर्धाय । मत्सरम् ॥६॥

पदार्थः—(वज्रिणे, इन्द्राय) वज्रोपेताय कर्मयोगिने (सोमं, सुनोत) सोमरसं समुत्पादय यो रसः (चारुं)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सुन्दरः, (शर्धाय, मत्सरम्) बलाय हर्षप्रदः, (मधुमत्तमम्) स्वादुरास्त ॥

पदार्थ—(इन्द्राय, वज्रिणे) वज्र वाले कर्मयोगी के लि (सोमं, सुनोत) सोम रस उत्पन्न करो जो रस (चारुम् सुन्दर (शर्धाय, मत्सरम्) बल के लिये जो हर्ष उत्पन्न करने वाला है (मधु मत्तमम्) जो अत्यन्त मीठा है ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि हे विद्वान् पुरुषो, उत्तमोत्तम ओषधियों से सौम्य स्वभाव बनाने वाले रसों को उत्प करो जिन रसों को पान करके कर्मयोगी पुरुष अपने कर्तव्यों में द रहें और जिन रसों से हर्ष को प्राप्त हो कर संसार में सर्वोपरि व को उत्पन्न करें ॥६॥

इति त्रिंशत्तमं सूक्तं विंशो वर्गश्च समाप्तः ॥

यह तीसवां सूक्त और बीसवां वर्ग समाप्त हुआ ॥

अथ षड्ऋचस्यैकत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य—

१–६ गोतम ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः १ ककुम्मती गायत्री । २ यवमध्या गायत्री । ३,५ गायत्री । ४,६ निचृद्गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ शूरवीरगुणा वर्ण्यन्ते—

अब शूरवीरों के गुणों का वर्णन किया जाता है:—

प्र सोमासः स्वाध्यः पवमानासो अक्रमुः ।
रयिं कृण्वन्ति चेतनम् ॥१॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्र। सोमासः। सुऽआध्यः। पवमानासः। अक्रमुः। रयिं। कृण्वन्ति। चेतनम् ॥१॥

पदार्थः—(सोमासः) शूरवीराः (स्वाध्यः) उच्चोद्देश्याः (पवमानासः) वीर्य्येण भुवनं पवित्रयन्तः (प्राक्रमुः) अन्यायकारिणः शत्रून आक्राम्यन्ति किंच उक्ताक्रमणेन (रयिं) स्वमैश्वर्य्य (चेतनम्) लोकोत्तरं (कृण्वन्ति) विदधते।

पदार्थ—(सोमासः) शूरवीर लोग (स्वाध्यः) उच्चोद्देश्य वाले (पवमानासः) वीरता धर्म से संसार को पवित्र करते हुए (प्राक्रमुः) अन्यायकारी शत्रुओं पर आक्रमण करते हैं और उक्तप्रकार के आक्रमण से (रयिं) अपने ऐश्वर्य्य को (चेतनम्) जीता जागता (कृण्वन्ति) बनाते हैं।

भावार्थ—जो लोग उच्चोद्देश्य से अर्थात् देश की रक्षा के लिये शत्रुओं पर आक्रमण करते हैं वे लोग अपने ऐश्वर्य्य को पुनरुज्जीवित करके अपने यश को विमल करके दशो दिशाओं में फैलाते हैं ॥१॥

उक्तविधैर्वीरैः परमात्मा एवं प्रार्थ्यते:—

उक्त वीर परमात्मा से इस प्रकार प्रार्थना करते हैं—

दिवस्पृथिव्या अधि भवेन्दो द्युम्नवर्धनः।
भवा वाजानां पतिः ॥२॥

दिवः। पृथिव्याः। अधि। भव। इन्दो इति। द्युम्नऽवर्धनः। भव। वाजानाम्। पतिः ॥२॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(इन्दो) हे परमैश्वर्य्ययुक्त परमात्म भवान् (वाजानाम्) सर्वविधैश्वर्याणां (पतिः) स्वामी अ (दिवस्पृथिव्याः, अधि) द्यावापृथिव्योर्मध्ये (द्युम्नवर्धन ऐश्वर्य्यस्य वर्धायता (भव) भवेत् ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे परमैश्वर्य्ययुक्त परमात्मन्, आप (वा नाम्) सब प्रकार के ऐश्वर्यों के (पतिः) स्वामी हैं (दिवस्पृथिव्या अधि) द्युलोक और पृथिवी लोक के बीच में (द्युम्नवर्धनः) ऐश्वर्य बढ़ाने वाले (भव) हों।

भावार्थ—परमात्मा इस प्रकार उपदेश करता है कि हे वीरो, तुम लोग अपने परिश्रम के अनन्तर उस पराशक्ति से इस प्र की प्रार्थना करो कि हमारा ऐश्वर्य्य सर्वत्र फैले और हम द्युलोक पृथिवी लोक के बीच में शान्ति को फैलायें।

तात्पर्य्य यह है कि मनुष्य कैसा ही ऐश्वर्य्य शाली हो अथवा तेज और ब्रह्मवर्चस्वी हो पर फिर भी उसे पराशक्ति की सहायता पड़ती है जिसने इस संसार को अपने नियमों में बांध रखा है॥ २॥

तुभ्यं वाता अभिप्रियस्तुभ्यमर्षन्ति सिन्धवः।
सोम वर्धन्ति ते महः ॥३॥

तुभ्यं। वाताः। अभिऽप्रियः। तुभ्यं। अर्षन्ति। सिन्धवः
सोम। वर्धन्ति। ते। महः ॥३॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन्, (तुभ्यं) तव (वाता वीर्येण सर्वव्यापनसमर्थाः शूरवीराः (अभिप्रियः) प्रेमास्पद

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भवन्ति किंच (तुभ्यं) तव नियमेन (सिन्धवः) सिन्ध्वादिनद्यः (अर्षन्ति) वहन्ति (ते) तव (महः) यशः (वर्धन्ति) वर्धयन्ति ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्, (तुभ्यम्) तुमको (वाताः) शूरवीर "वान्ति वीरधर्मेण सर्वत्र गच्छन्ति इति वाताः शूरवीराः = जो वीर धर्म से सर्वत्र फैल जायँ उनका नाम यहां (वाताः) है" (अभिप्रियः) वे प्यारे हैं और (तुभ्यम्) तुम्हारे नियम से (सिन्धवः) सिन्धु आदि नदियां (अर्षन्ति) बहती हैं (ते, तुम्हारे (महः) यशको (वर्धन्ति) बढ़ाती है।

भावार्थ—परमात्मा के नियम से शूरवीर उत्पन्न हो कर उसके यश को बढ़ाते हैं और परमात्मा के नियम से ही सिन्धु आदि महानद स्यन्दमान होकर सम्पूर्ण धरातल को सिञ्चित करते हैं ॥३॥

आ प्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम् ।
भवा वाजस्य सङ्गथे ॥४॥

आ । प्यायस्व । सं । एतु । ते । विश्वतः । सोम । वृष्ण्यं । भव । वाजस्य । संऽगथे ॥४॥

पदार्थः—(सोम) हे समस्तस्य जगतः कर्तः परमात्मन्, (ते वृष्ण्यं) सर्वाभिलाषदं भवत ऐश्वर्य्यं (विश्वतः) सर्वतः (समेतु) अस्मान् प्राप्नोतु अथ च भवान् (आ, प्यायस्व) अस्मान् सर्वप्रकारेण वर्धय तथा (वाजस्य, संगथे) ऐश्वर्यनिमित्तके संग्रामे (भव) नः सहायको भव ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(सोम) हे सम्पूर्ण संसार के उत्पादक परमात्मन्, (वृष्ण्यं) सब कामनाओं की वर्षा करनेवाला तुम्हारा ऐश्वर्य्य (विश्वतः) सब ओर से (समेतु) हमको प्राप्त हो और आप (आप्यायस्व) इस प्रकार से हमारी वृद्धि करें तथा (वाजस्य, संगथे) ऐश्वर्य्यनिमित्त संग्रामोंमे आप (भव) हमारे सङ्गी बने ।

भावार्थ—जो लोग एकमात्र परमात्मा को अपना आधार बना हैं वे सब प्रकार से ऐश्वर्य्यशाली होते हैं और संग्रामजनित विपत्तियों परमात्मा उनकी सहायता करता है ॥४॥

तुभ्यं गावो घृतं पयो बभ्रो दुदुह्रे अक्षितम् ।
वर्षिष्ठे अधि सानवि ॥५॥

तुभ्यं । गावः । घृतं । पयः । बभ्रोइति । दुदुह्रे । अक्षितं ।
वर्षिष्ठे । अधि । सानवि ॥५॥

पदार्थः—(बभ्रो) हे विश्वम्भर परमात्मन् ! भव (वर्षिष्ठे, अधि, सानवि) विभूतिशालिनि सर्वत्र वस्तुनि शक्ति रूपेण विराजते किंच (तुभ्यं, गावः) भवदर्थमेव पृथिव्यादि लोकाः (घृतं, पयः) घृतदुग्धादिकमनेकधा रसं (अक्षितं) निरन्तरं स्यन्दमानं (दुदुह्रे) उत्पादयन्ति ।

पदार्थ—(बभ्रो) "बिभर्त्तीति बभ्रुः तत्संबुद्धौ बभ्रो" हे सब के धारण करने वाले परमात्मन् (वर्षिष्ठे अधि, सानवि) विभूति वाली प्रत्येक वस्तु में आप शक्तिरूप से विराजमान हैं और (तुभ्यं गावः) तुम्हारे लिये ही पृथिव्यादि लोक लोकान्तर (घृतम्, पयः) घृत दुग्धादि अनन्त प्रकार के रसों को जो (अक्षितम्) निरन्तर स्यन्दमान हो रहे हैं उनको (दुदुह्रे) दुहते हैं ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ--परमात्मरचित इस ब्रह्माण्ड में नाना प्रकार के घृत-दुग्धादि रस दिनरात प्रवाह रूप से स्यन्दमान हो रहे हैं बहुत क्या जो जो विभूति वाली वस्तु है उस में परमात्मा का ऐश्वर्य्य सर्वत्र देदीप्यमान हो रहा है इसी अभिप्राय से कहा है कि "यद्यद्विभूतिमत्सत्वं श्रीमदूर्जितमेव वा । तत्तदेवावगच्छत्वं मम तेजोऽशसम्भवम् ॥ १ ॥ जो जो विभूति वाली वस्तु अथवा ऐश्वर्य्य और शोभावाली है वह सब परमात्मा के प्रकृतिरूप अंश से उत्पन्न हुई है ॥५॥

स्वायुधस्य ते सतो भुवनस्य पते वयं ।
इंदो सखित्वमुश्मसि ॥ ६ ॥ २१ ॥

सुऽआयुधस्य । ते । सतः । भुवनस्य । पते । वयं । इन्दो । इति । सखिऽत्वं । उश्मसि ॥६॥

पदार्थः--(भुवनस्य, पते) हे सर्वजगदीश्वर परमात्मन्, (ते) तुम्हारी (स्वायुधस्य, सतः) उत्तमतमया शक्त्या (इन्दो) परमैश्वर्य रूप, (वयं) वयं भवता (सखित्वं) सौहार्दम् (उश्मसि) कामयामहे ।

पदार्थ--(भुवनस्य, पते) हे सम्पूर्ण भुवनों के पति परमात्मन् ! (ते) तुम्हारी (स्वायुधस्य, सतः) जीवित, जागृत शक्ति से (इन्दो) हे परमैश्वर्य स्वरूप, हम लोग तुम्हारे (सखित्वम्) मैत्रीभाव को (उश्मसि) चाहते हैं ।

भावार्थ--सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के नियन्ता और निखिल ज्ञानों के अनन्त परमात्मा से जो लोग मैत्री डालते हैं वे लोग इस संसार में परमानन्द को लाभ करते हैं ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इस अभेद सम्बन्ध का नाम उपनिषदों में 'अहंग्रह' उपासना है और इस उपासना का पद प्रतीकोपासना से बहुत ऊँचा है। इसी आशय से कहा है कि "अहंवा त्वमसि भगवो देवते त्वं वाहमस्मि" हे भगवन्! मैं तू और तू = मेरा रूप है इस में कोई भेद नहीं इस उपासना का नाम आध्यात्मिकोपासना है। इसको वेद अन्यत्र भी प्रतिपादन करता है जैसा कि "यस्मिन्सर्वाणि भूतानि आत्मैवाभूत् विजानतः तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः" और आधिदैविकोपासना वह कहलाती है जिसमें सूर्य्यचन्द्रमादि में व्यापक मान कर परमात्मा की उपासना की जाती है कि "यः आदित्ये तिष्ठन् आदित्यादन्तरो यमादित्यो न वेद यस्यादित्यः शरीरम्" जो आदित्य इस सूर्य्य में रहता है जिसको सूर्य्य नहीं जानता और सूर्य्य जिसका शरीरस्थानी है वह तुम्हारा अन्तर्यामी अमृतरूप ब्रह्म है।

इसी को प्रतीकोपासन नाम से कहा जाता है अर्थात् प्रतीकोपासनं प्रतीकोपासनम्" जो प्रतीक = सूर्य्य चन्द्रादिकों में व्याप्त समझ कर ब्रह्म की उपासना की जाती है उसका नाम प्रतीकोपासन अथवा "प्रतीकेनोपासनं प्रतीकोपासनम्" जो प्रतीक के द्वारा उपासना किया जाता है उसको भी प्रतीकोपासन कहते हैं। जैसा कि वेदद्वारा ईश्वर का उपासन किया जाता है।

और जो लोग "प्रतीकस्योपासनं प्रतीकोपासनम्" इस प्रकार षष्ठीसमास करके प्रतीक अर्थात् मूर्ति की उपासना सिद्ध करते हैं वे वेदोपनिषदों के रहस्य को नहीं जानते क्योंकि वेदों का तात्पर्य्य आध्यात्मिक आधि दैविक अर्थात् आत्मा में और सूर्य्यादि दिव्य वस्तुओं में व्यापक समझ कर ब्रह्मोपासन करने का है। मृण्मयी अथवा धातुमयी किसी मूर्ति का निर्माण करके उसकी पूजा करने का नहीं।

तात्पर्य्य यह है कि वेदों के आध्यात्मिक आधिदैविक और आधिभौतिक तीनों प्रकार से अर्थ करने से भी आधुनिक मूर्ति पूजा सिद्ध नहीं होती

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आधुनिक मूर्तियें जो वैदिकधर्मी अर्थात् वेदों को सर्वोपरि प्रमाण मानने वाले आर्य्य लोग बनाते हैं। अथवा यों कहो कि अपने आपको हिन्दू नाम से सम्बोधन करने वाले बना लेते हैं वे केवल बौद्धधर्मानुयायी लोगों का अनुकरण करके बनाते हैं।

पुष्ट प्रमाण इसके लिये यह है कि वेदाभिमानी लोगों की कोई मूर्ति भी बुद्ध मूर्तियों से प्राचीन नहीं पायी जाती किन्तु सब अर्वाचीन हैं अर्थात् नवीन हैं॥६॥

इति एकत्रिंशत्तमं सूक्तमेकविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

यह ३१ वां सूक्त और २१ वां वर्ग समाप्त हुआ।

अथ षड्चस्य द्वात्रिंशत्तमस्यसूक्तस्य—

१-६ श्यावाश्व ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता॥ छन्दः-१, २ निचृद्गायत्री। ३-६ गायत्री॥ षड्जः स्वरः॥

अथ परमात्मन उपलब्धिरुच्यतेः-

अब परमात्मा की उपलब्धि का कथन करते हैं:—

प्र सोमासो मदच्युतः श्रवसे नो मघोनः
सुता विदथे अक्रमुः॥ १॥

प्र। सोमासः। मदऽच्युतः। श्रवसे। नः। मघोनः। सुताः। विदथे। अक्रमुः॥१॥

पदार्थः—(मदच्युतः) आनन्दप्रवाहः (सुताः) स्वयम्भूः (सोमासः) परमात्मा (विदथे) यज्ञे (मघोनः, नः) जिज्ञासोर्मम (श्रवसे) ऐश्वर्याय (प्राक्रमुः) आगत्य प्राप्तो भवति।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(मदच्युतः) आनन्द का स्रोत (सुताः) स्वयं (सोमासः) परमात्मा (विदथे) यज्ञ में (मघोनः, नः) मुझ जिज्ञ के (श्रवसे) ऐश्वर्य के लिये (प्राक्रमुः) आकर प्राप्त होता है।

भावार्थ—जो पुरुष शुद्ध भाव से यज्ञ करते हैं उन को प मात्मा अपने आनन्द स्रोत से सदैव अभिषिक्त करता है, यज्ञ के यहां शुद्धान्तःकरण से ईश्वरोपासन १ ब्रह्मविद्यादि उत्तमोत्तम पदा का दान २ और कला कौशलादि द्वारा विद्युदादि पदार्थों को उपयो में लाना ३ ये तीन हैं। जो पुरुष उक्त पदार्थों की संगति करने यज्ञों को करता है वह अवश्यमेव ऐश्वर्यसम्पन्न होता है ॥१॥

आदीं त्रितस्य योषणो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः ।
इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥२॥

आत् । ईं । त्रितस्य । योषणः । हरिं हिन्वन्ति । अद्रिभिः इन्दुं । इन्द्राय । पीतये ॥२॥

पदार्थः—(त्रितस्य) जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु अवस्थास्वप्रति हततेजसो भक्तस्य (योषणः) शक्तयः (इन्द्राय, पीतये) जीवात्मनः तृप्तये (आत्, ईम्) पूर्वोक्तम् (इन्दुम्) परमैश्व (हरिं) सर्वदुःखापहारकं परमात्मानम् (अद्रिभिः) इन्द्रि वृत्तिभिः । (हिन्वन्ति) प्रेरयन्ति ।

पदार्थ—(त्रितस्य) जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति इन तीनों अवस्था में अप्रतिहत प्रभाव वाले भक्त पुरुष की (योषणः) शक्तियां (इन्द्र पीतये) जीवात्मा की तृप्ति के लिये (आत्, ईम्) इस पूर्वोक्त (इन्दु परमैश्वर्य वाले (हरिम्) सब दुःखों के हरने वाले परमात्मा को (अद्रिभि इन्द्रिय वृत्तियों द्वारा (हिन्वन्ति) प्रेरित करती हैं।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—जो लोग परमात्मा की भक्ति में रत हैं उनकी इन्द्रिय वृत्तियें परमात्मज्ञान की उपलब्धि के लिये सदैव तत्पर रहती हैं।

आदीं हंसो यथा गणं विश्वस्यावीवशन्मतिम् ।
अत्यो न गोभिरज्यते ॥ ३ ॥

आत् । ईं । हंसः । यथा । गणं । विश्वस्य । अवीवशत् । मतिं ।
अत्यः । न । गोभिः । अज्यते ॥३॥

पदार्थः—(विश्वस्य, मतिम्, अवीवशत) यः सर्वस्य बुद्धिं वशमानयति तम् (अत्यः, न) विद्युतमिव दुर्ग्रहं (आदीम्) इमं परमात्मनम् (हंसः, यथा, गणं) हंसः स्वसजातीयगणं यथा गच्छति तथा (गोभिः, अज्यते) जीवः इन्द्रियैः संगच्छते ।

पदार्थ—(विश्वस्य, मतिम्, अवीवशत) सब की मति को वश में रखने वाला (अत्यो, न) विद्युत् की नाईं दुर्ग्राह्य (आदीम्) ऐसे परमात्मा को (हंसः, यथा, गणम्) जिस प्रकार हंस अपने सजातीय गण में जाकर मिलता है उसी प्रकार (गोभिः, अज्यते) जीव इन्द्रियों द्वारा साक्षात्कार करता है ॥

भावार्थ—जीवात्मा जब तक अपनी सजातीय वस्तु के साथ सम्बन्ध नहीं लगाता तब तक उसे आनन्द कदापि प्राप्त नहीं हो सकता इस मात्र का इस मन्त्र में उपदेश किया है कि जिस प्रकार हंस अपने सजातीय गण में मिल कर आनन्दित होता है इस प्रकार जीवात्मा भी उस चिद्घन ब्रह्म में मिल जाता है। जीवात्मा को हंस की उपमा इस वास्ते दी है कि "हन्त्यविद्यामितिहंसः" यह जीव अविद्या का हनन करता है यहाँ विज्ञानी जीव का वर्णन है। और ब्रह्म प्राप्ति से जीव अविद्या का हनन करता है जैसे कि 'सता सोम्य तदा सम्पन्नो भवति छा०' ॥३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उभे सोमावचाकशन्मृगो न तक्तो अर्षसि ।
सीदन्नृतस्य योनिमा ॥ ४ ॥

उभे । इति । सोम । अवऽचाकशत् । मृगः । न । तक्तः ।
अर्षसि । सीदन् । ऋतस्य । योनिं । आ ॥४॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन्, भवान् (उभे, अवचाकशत्) द्युलोकपृथिवीलोकौ पश्यति (मृगः, न, तक्तः) सिंह इव प्रकृतिरूपे वने विराजते (ऋतस्य, योनिम्, आसीदन्) कार्यमात्रकारणीभूतायां प्रकृतौ स्थितः (अर्षसि) सर्वं व्याप्नोति

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् (उभे, अवचाकशत्) आप द्युलोक और पृथिवी लोक के साक्षी हैं (मृगः, न, तक्तः) और सिंह के समान प्रकृतिरूप वन में विराजमान हो रहे हैं (ऋतस्य, योनिम् आसीदन्) अखिलकार्य का कारण जो प्रकृति उस में स्थित हो कर (अर्षसि) सर्वत्र व्याप्त हो रहे हैं ।

भावार्थ—परमात्मा इस प्रकृति के कार्य चराचर ब्रह्माण्ड में ओत प्रोत हो रहा है अर्थात् प्रकृति एक प्रकार से गहन वन है और परमात्मा सिंह के समान इस बन का स्वामी है । इस मन्त्र में परमात्मा की व्यापकता और शौर्य क्रौर्यादि गुणों के भाव से परमात्मा की रौद्ररूपता वर्णन की है ।

अभि गावो अनूषत योषा जारमिव प्रियम् ।
अगन्नाजिं यथा हितम् ॥ ५ ॥

अभि । गावः । अनूषत । योषा । जारंऽइव । प्रियं ।
अगन् । आजिं । यथा । हितं ॥५॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—हे परमात्मन्, (योषा, जारमिव, प्रियम्) चन्द्रमिव सर्वप्रियम् (आर्जिं) प्राप्यं (हितं) सर्वस्येष्टदं भवन्तं (यथा, अगन्) यथा प्राप्ताःस्युः तथा (गावः) इन्द्रियवृत्तयः (अभ्यनूषत) त्वां विषयीकुर्वन्ति।

पदार्थ—हे परमात्मन्! (योषाजारमिव, प्रियम्) "योषयति आत्मनि प्रीतिमुत्पादयतीतियोषा रात्रिः तस्या जारोजारयितात्रचन्द्रस्तम्"। चन्द्रमा के समान सर्वप्रिय (आजिम्) प्राप्त करने योग्य (हितम्) सब का हित करने वाले आप (यथा, अगन्) जिस प्रकार प्राप्त हो जायँ उसी प्रकार (गावः) इन्द्रिय वृतियें (अभ्यनूषत) आप को विषय करती हैं॥

भावार्थ—इस मन्त्र में कर्मयोगी और ज्ञान योगियों की ओर से परमात्मा की प्रार्थना कथन की गयी है और परमात्मनिष्ठप्रियता की तुलना चन्द्रमा के साथ की अर्थात् जिस प्रकार चन्द्रमा आह्लादक होने से सर्व प्रिय है इसी प्रकार परमात्मा भी आह्लादक होने से सर्व प्रिय हैं कई एक टीकाकार "योषाजारम्" के अर्थ स्त्री के जार के करते हैं अर्थात् जैसे स्त्री को अपना यार प्यारा होता है उसी प्रकार मुझ उपासक को तुम प्यारे हो। पहले तो यह दृष्टान्त विषम है क्योंकि स्त्री को सर्वदा यार प्यारा नहीं लगता किन्तु जब तक मोहमयी युवावस्था रहती है तभी तक प्यारा लगता है। और दूसरे जार शब्द के अर्थ सर्वत्र वेद मन्त्रों में तमोनिवर्तकआह्लादक गुण के हैं जैसा कि 'स्वसारंजारो ऽभ्येति पश्चात्" इस मन्त्र में जार के अर्थ आह्लादक गुण के ही सब भाष्यकारों ने किये हैं, इससे स्पष्ट सिद्ध है कि योषाजार यहां चन्द्रमा का नाम है किसी लम्पट कामी पुरुष का नहीं॥५॥

अस्मे धेहि द्युमद्यशो मघवद्भ्यश्च मह्यं च।
सनिं मेधामुत श्रवः॥ ६॥ २२॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अस्मे इति । धेहि । द्युऽमत् । यशः । मघवत्ऽभ्यः । मघ
मह्यं । च । सानिं । मेधां । उत । श्रवः ॥६॥

पदार्थः—हे परमात्मन्, त्वम् (अस्मे) अस्मभ्यं (द्युम
यशः, धेहि) दीप्तिमत् यशो देहि (मघवद्भ्यः) कर्मयोगिभ्
(मह्यं, च) मह्यं च (सानिं) धनं (मेधां) बुद्धिं (उत, श्र
च) सुन्दरंकीर्तिं च देहि ।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (अस्मे) मेरे लिये (द्युम
यशः, धेहि) दीप्ति वाले यश को दीजिये (मघवद्भ्यः, च) कर्मयोगिय
के लिये और (मह्यं, च) मेरे लिये (सानिम्) धन को (मेधाम्) बुद्धि
को तथा (उत श्रवः) सुन्दर कीर्ति को दीजिये ॥

भावार्थ—कर्मयोग और ज्ञानयोग के द्वारा परमात्मा निम्नलिखि
गुणों का प्रदान करता है। धन, बुद्धि, सुकीर्ति इत्यादि ।

इति द्वात्रिंशत्तमं सूक्तं, द्वाविंशो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ३२वां सूक्त और २२वां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ षड्चस्य त्रयस्त्रिंशत्तमस्यसूक्तस्य—

१—६ त्रित ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः
ककुम्मती गायत्री । २, ४, ५ गायत्री । ३, ६
निचृद्गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अधुना ईश्वरप्राप्तये ज्ञानकर्मोपासनापराणि त्रीणि वचांसि
निरूप्यन्ते ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अब ईश्वरप्राप्ति के लिये ज्ञान, कर्म, उपासना विषयक तीन वाणियें कहीं जाती हैं ॥

प्र सोमासो विपश्चितोऽपां न यन्त्यूर्मयः ।
वनानि महिषा इव ॥१॥

प्र । सोमासः । विपःऽचितः । अपां । न । यंति । ऊर्मयः । वनानि । महिषाःऽइव ॥१॥

पदार्थः—(अपाम् ऊर्मयः न) यथा वीचयः प्रकृत्या चन्द्रं प्रति समुच्छलन्ति (वनानि, महिषाः, इव) यथा च महात्मानः प्रकृत्या सत्कर्माश्रयन्ते तथा (सोमासः, विपश्चितः, प्रयन्ति) सौम्याः विद्वांसो ज्ञानकर्मोपासनाबोधिका वेदवाचः समाश्रयन्ति ।

पदार्थः—(अपाम्, ऊर्मयः, न) जैसे समुद्र की लहरे स्वभाव ही से चन्द्रमा की ओर उछलती हैं और (वनानि, महिषा, इव) जैसे महात्मा लोग स्वभाव ही से भजन की ओर जाते हैं इसी प्रकार (सोमासः, विपश्चितः यन्ति) सौम्य स्वभाव वाले विद्वान् ज्ञान, कर्म, उपासना बोधक वेद वाणी की ओर लगते हैं ॥

भावार्थ—वेद रूपी वाणी में इस प्रकार आकर्षण शक्ति है जैसी कि पूर्णिमा के चन्द्रमा में आकर्षण शक्ति होती है । अर्थात पूर्णिमा को चन्द्रमा के आह्लादक धर्म की ओर, सब लोग प्रवाहित होते हैं इसी प्रकार ओजस्विनी वेदवाक् अपनी ओर विमल दृष्टि वाले लोगों को खींचती है ।

अभि द्रोणानि बभ्रवः शुक्रा ऋतस्य धारया ।
वाजं गोमन्तमक्षरन् ॥ २ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri Gyaan Kosha

अभि । द्रोणानि । बभ्रवः । शुक्राः । ऋतस्य । धारया ।
वाजं । गोऽमंतं । अक्षरन् ॥२॥

पदार्थः—(बभ्रवः) ज्ञानकर्मोपासनज्ञाः (शुक्राः) पवित्रान्तःकरणाः विद्वांसः (ऋतस्य, धारया) सत्यस्य स्रोतसः (अभि, द्रोणानि) सत्पात्राणि उपदिश्य (वाजम्, गोमन्तम्) तेषामनेकधैश्वर्याणि (अक्षरन्) वर्द्धयन्ति ।

पदार्थ—(बभ्रवः) ज्ञान, कर्म, उपासना को धारण करने वाले (शुक्राः) पवित्र अन्तःकरण वाले विद्वान् (ऋतस्य, धारया) सत्य की धारा से (अभि, द्रोणानि) सत्पात्रों के प्रति उपदेश देकर (वाजम्, गोमन्तम्) उनके अनेक प्रकार के ऐश्वर्य को (अक्षरन्) बढ़ाते हैं ॥

भावार्थ—जो लोग वेद विद्या का सदुपदेश देते हैं, उनके सदुपदेश से सब प्रकार के अन्नादिक ऐश्वर्य बढ़ते हैं ॥२॥

सुता इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः ।
सोमा अर्षंति विष्णवे ॥ ३ ॥

सुताः । इंद्राय । वायवे । वरुणाय । मरुत्ऽभ्यः । सोमाः ।
अर्षंति । विष्णवे ॥३॥

पदार्थः—(मरुद्भ्यः, सुताः, सोमाः) विद्वद्भिः ज्ञानकर्मोपासनासिद्धिगमिता विद्वांसः (विष्णवे, अर्षन्ति) सर्वव्यापकस्य पदमधिगच्छन्ति यः परमात्मा (इन्द्राय) परमेश्वरः तथा (वायवे) सर्वव्यापकः (वरुणाय) सर्वेषां सेव्यश्चास्ति

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(मरुद्भ्यः, सुताः, सोमाः) विद्वानों से कर्मोपासना से सिद्धि को प्राप्त हुये विद्वान् (विष्णवे, अर्षन्ति) सर्वव्यापक परमात्मा के पदको प्राप्त होते हैं। जो परमात्मा (इन्द्राय) "इन्दति परमैश्वर्यं प्राप्नोतीतीन्द्रः" परमैश्वर्य सम्पन्न है तथा (वायवे) "वाति गच्छति सर्वत्र व्याप्नोतीति वायुः" सर्वव्यापक है। (वरुणाय) "व्रियते सं भज्यते जनैरिति वरुणः" सब को भजनीय है उसको प्राप्त होते हैं।

भावार्थ—जिन लोगों ने माता पिता और आचार्य से सिद्धि को प्राप्त किया है वे ज्ञान कर्म उपासना द्वारा ईश्वर को उपलब्ध करते हैं ॥३॥

तिस्रो वाच उदीरते गावो मिमंति धेनवः ।
हरिरेति कनिक्रदत् ॥ ४ ॥

तिस्रः । वाचः । उत् । ईरते । गावः । मिमंति । धेनवः ।
हरिः । एति । कनिक्रदत् ॥४॥

पदार्थः—(धेनवः, गावः) इन्द्रियवृत्तयः (तिस्रः, वाचः उदीरते, मिमन्ति) तिस्रोः, वाचः समुच्चारयन्त्यः परमात्मानं प्रापयन्ति (हरिः) स च परमात्मा (कनिक्रदत्, एति) गर्जन् तेषां ज्ञानविषयो भवति ।

पदार्थ—(धेनवः, गावः) इन्द्रियवृत्तियें (तिस्रः, वाचः उदीरते, मिमन्ति) तीनों वाणियों को उच्चारण करती हुयीं परमात्मा का साक्षात्कारकराती हैं (हरिः) और वह परमात्मा (कनिक्रदत्, एति) गर्जता हुआ उनके ज्ञान का विषय होता है।

भावार्थ—जो लोग वैदिक सूक्तों द्वारा वर्णित परमात्मा के

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्वरूप को अपने ध्यान में लाना चाहते हैं वे भली भांति परमात्मा का साक्षात्कार करते हैं। तात्पर्य यह है कि परमात्मा शब्दगम्य है तर्क से उसका साक्षात्कार नहीं होता क्योंकि तर्क की कोई आस्था नहीं प्रथम की तर्क को द्वितीय जिसकी अधिक बुद्धि है काट देता है द्वितीय की तर्क को तृतीय तृतीय की तर्क को चतुर्थ। और वेद पूर्ण पुरुष का ज्ञान है इस लिये उस में यह दोष नहीं ॥४॥

अभि ब्रह्मीरनूषत यह्वीर्ऋतस्य मातरः ।
मर्मृज्यन्ते दिवः शिशुम् ॥ ५ ॥

अभि । ब्रह्मीः । अनूषत । यह्वीः । ऋतस्य । मातरः । मर्मृज्यंते । दिवः । शिशुं ॥५॥

पदार्थः—(ऋतस्य, मातरः) सत्योत्पादिकाः (यह्वीः, ब्रह्मीः) अतिविस्तृताः परमात्मसम्बद्धा वेदवाचः अभि, अनूषत) स्ववक्तारं विभूषयन्ति मर्मृज्यन्ते, (दिवः शिशुम्) ब्रह्मचारिणं च पवित्रयन्ति

पदार्थ—(ऋतस्य, मातरः) सत्य को उत्पन्न करनेवाली (यह्वीः ब्रह्मीः) अतिविस्तृत परमात्मसम्बधी वेदवाणियें (अभि, अनूषत) अपने वक्ता को विभूषित कर देती हैं (मर्मृज्यन्ते, दिवः शिशुम्) और ब्रह्मचारी को पवित्र कर देती हैं।

भावार्थ—वेद वाणियें परमात्मा के साथ वाच्यवाचकभावसम्बन्ध से रहती हैं इसी लिये इन को ब्रह्मी कहा गया है जैसा कि गीता में "एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति" जिस प्रकार पुरुष ब्राह्मी स्थिति को पाकर मोह को नहीं प्राप्त होता इसी प्रकार वेद वाणियें पुरुष के अज्ञान को सर्वथा छिन्न भिन्न कर देती हैं ॥५॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रायः समुद्रांश्चतुरोऽस्मभ्यं सोम विश्वतः।
आ पवस्व सहस्रिणः॥ ६॥ २३॥

रायः। समुद्रान्। चतुरः। अस्मभ्यं। सोम। विश्वतः। आ। पवस्व। सहस्रिणः॥६॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन्, (सहस्रिणः, रायः) विविधैश्वर्यान् (चतुरः समुद्रान् शब्दरूपजलानां वेदवारिधीन् (अस्मभ्यम्) नः (विश्वतः) सुतरां (आ, पवस्व) देहि।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्! (सहस्रिणः, रायः) अनेक प्रकार के ऐश्वर्य वाले (चतुरः, समुद्रान्) शब्द रूपी जल के चारो वेद रूपी समुद्रों को (अस्मभ्यम्) हमारे लिये (विश्वतः) भली प्रकार (आ, पवस्व) दीजिये॥

भावार्थ—परमात्मा के पास नाना प्रकार के रत्नों के भरे हुये अनन्त समुद्र हैं परन्तु शब्दार्णवरूप समुद्रों से सब प्रकार के ऐश्वर्य उत्पन्न होते हैं इस से परमात्मा से शब्दार्णवरूप समुद्र की प्रार्थना करनी चाहिये॥६॥

इति त्रयस्त्रिंशत्तमं सूक्तं त्रयोविंशो वर्गश्च समाप्तः।

३३ वां सूक्त और २३ वां वर्ग समाप्त हुआ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ परमात्मनोऽद्भुतसत्ता वर्ण्यते ।

अब परमात्मा की अद्भुतसत्ता वर्णन की जाती है।

अथ षड्चस्य चतुस्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य—

१—६ त्रित ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः—२, ४ निचृद्गायत्री ३, ५, ६ गायत्री । षड्जः स्वरः ॥

प्र सुवानो धारया तनेंदुर्हिन्वानो अर्षति ।
रुजद्दृळ्हा व्योजसा ॥ १ ॥

प्र । सुवानः । धारया । तना । इन्दुः । हिन्वानः । अर्षति ।
रुजत् । दृळ्हा । वि । ओजसा ॥ १ ॥

पदार्थः—(इन्दुः) परमैश्वर्यवान् स परमात्मा (दृळ्हा विरुजत्) अज्ञानानि नाशयन्, (धारया, प्रसुवानः) स्वाधिकरणसत्तया सर्वमुत्पादयन्, (हिन्वानः) सर्वं प्रेरयन् (तना अर्षति) एतद्विस्तृतं ब्रह्माण्डं व्याप्नोति ॥ १ ॥

पदार्थ—(इन्दुः) वह परमैश्वर्य वाला परमात्मा (ओजसा) अपने पराक्रम से (दृळ्हा, विरुजत्) अज्ञानों को नाश करता हुआ (धारया, प्रसुवानः) अपनी अधिकरणरूपसत्ता से सब को उत्पन्न करता हुआ (हिन्वानः) सब की प्रेरणा करता हुआ (तना, अर्षति) इस विस्तृत ब्रह्माण्ड में व्याप्त हो रहा है ॥ १ ॥

भावार्थ—परमात्मा की ऐसी अद्भुत सत्ता है कि वह निराकार होकर भी संपूर्ण सावयव पदार्थों का अधिष्ठान है, उसी के आधार

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यह चराचर जगत् स्थिर है, और वह सर्व प्रेरक होकर कर्म रूपी चक्र द्वारा सब की प्रेरणा करता है ॥ १ ॥

सुत इंद्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः ।
सोमो अर्षति विष्णवे ॥२॥

सुतः । इंद्राय । वायवे । वरुणाय । मरुत्ऽभ्यः । सोमः । अर्षति । विष्णवे ॥ २ ॥

पदार्थः—(सुतः, सोमः (स्वयम्भूः परमात्मा) इन्द्राय) ज्ञानयोगिने; (वायवे) कर्मयोगिने; (वरुणाय) उपदेशकाय; (मरुद्भ्यः) विद्वद्गणेभ्यः (विष्णवे) अनेकशास्त्रप्रविष्टविदुषे च (अर्षति) आगत्य तत्रभवतामन्तःकरणेषु आविर्भवति ।

पदार्थ—(सुतः, सोमः) स्वयम्भू परमात्मा (इन्द्राय) ज्ञानयोगी के लिये (वायवे) कर्मयोगी के लिये (वरुणाय) उपदेशक के लिये (मरुद्भ्यः) विद्वद्गणों के लिये (विष्णवे) अनेक शास्त्रों में प्रविष्ट विद्वान् के लिये (अर्षति) आकर उनके अन्तः करण में प्राप्त होता है ।

भावार्थ—यद्यपि परमात्मा व्यापक होने के कारण सर्वत्र विद्यमान है तथापि उसकी अभिव्यक्ति कर्मयोग, ज्ञानयोग तथा अन्य साधनों द्वारा जिन लोगों ने अपने अन्तःकरण को निर्मल किया है उनके हृदय में विशेष रूप से होती है ॥ २ ॥

वृषाणं वृषभिर्यतं सुन्वन्ति सोममद्रिभिः ।
दुहन्ति शक्मना पयः ॥ ३ ॥

वृषाणं । वृषऽभिः । यतं । सुन्वंति । सोमं । अद्रिऽभिः । दुहन्ति । शक्मना । पयः ॥ ३ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—विद्वांसः (वृषाणं) सर्वकामदं (सोमं) प
मात्मानं (यतं) बुद्धिविषयं विधाय (वृषभिः, अद्रिभिः) अखि
लकामसाधिकाभिः इन्द्रियवृत्तिभिः (शक्मना) ज्ञानयोगेन क
योगेन च (सुन्वन्ति) प्रेरयन्तः (पयः) ब्रह्मानन्दं (दुहन्ति
अनुभवन्ति ।

पदार्थ—विद्वान् लोग (वृषाणम्) सब कामनाओं के देने
(सोमम्) परमात्मा को (यतम्) ज्ञान का विषय बना कर (वृषभि
अद्रिभिः) अखिलकामनाओं की साधक इन्द्रिय वृत्तियों द्वारा (शक्म
ज्ञानयोग और कर्म योगद्वारा (सुन्वन्ति) प्रेरणा करते हुये (प
ब्रह्मानन्द को (दुहन्ति) दुहते हैं ।

भावार्थ—जो लोग कर्मयोगी तथा ज्ञानयोगी बन कर अभ्या
करते हैं वे ही लोग ब्रह्मामृतरूप दुग्ध को परमात्मरूपकामधेनु
दोहन करते हैं अन्य नहीं ॥ ३ ॥

भुवत्त्रितस्य मर्ज्यो भुवदिन्द्राय मत्सरः ।
सं रूपैरज्यते हरिः ॥ ४ ॥

भुवत् । त्रितस्य । मर्ज्यः । भुवत् । इन्द्राय । मत्सरः । सं
रूपैः । अज्यते । हरिः ॥ ४ ॥

पदार्थः—परमात्मा (त्रितस्य) श्रवणमनननिदिध्यासनरू
त्रिभिः साधनैः (मर्ज्यः, भुवत्) उपासनीयः (इन्द्राय, मत्सरः
भुवत्) विज्ञानिभ्यः आह्लादजनकश्चास्ति तथा (हरिः, रू
समज्यते) पापशमकः परमात्मा ब्रह्माण्डरूपैः स्वकार्यैः
भिव्यक्तो भवति ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—परमात्मा (त्रितस्य) श्रवण, मनन, निदिध्यासन इन तीनों साधनों से (अर्ज्यः, भुवत्) उपासनीय है, और (इन्द्राय, मत्सरः, भुवत्) विज्ञानियों के लिये आह्लादकारक है तथा (हरिः, रूपैः समज्यते) पाप नाशक परमात्मा अपने ब्राह्माण्डरूप कार्यों से अभिव्यक्त होता है ॥

भावार्थ—परमात्मा की रचना से उसकी सत्ता का स्पष्ट प्रमाण मिलता है अर्थात् जो नियम इस ब्राह्माण्ड में पाये जाते हैं उनका नियन्ता वही अवश्य मानना पड़ता है उस नियन्ता का साक्षात्कार यम नियमादिसाधनों द्वारा होता है अन्यथा नहीं ॥ ४ ॥

अभीमृतस्य विष्टपं दुहते पृश्निमातरः ।
चारुं प्रियतमं हविः ॥ ५ ॥

अभि । ईं । ऋतस्य । विष्टपं । दुहते । पृश्निऽमातरः । चारुं । प्रियऽतमं । हविः ॥ ५ ॥

पदार्थः—(पृश्निमातरः) कर्मयोगिनो विद्वांसः (ऋतस्य विष्टपम्, ईम्) सत्यास्पदं परमात्मानम् (चारु) सुन्दरम् (प्रियतमम्) अतिप्रियम् (हविः) शुभकर्म (अभिदुहते) अभ्यर्थयन्ते ।

पदार्थ—(पृश्निमातरः) कर्मयोगी विद्वान् (ऋतस्य, विष्टपं, ईम्) सत्य के स्थान परमात्मा से (चारु) सुन्दर (प्रियतमम्) अतिप्रिय (हविः) शुभकर्म की (अभिदुहते) भली प्रकार प्रार्थना करते हैं ।

भावार्थ—कर्मयोगी पुरुष अपने कर्मों से उसका साक्षात्कार अर्थात् उपासनाकर्मद्वारा उसकी सत्ता को लाभ करते हैं ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

समेनमद्भुता इमा गिरो अर्षन्ति सस्रुतः ।
धेनूर्वाश्रो अवीवशत् ॥ ६ ॥ २४ ॥

सं । एनं । अद्भुताः । इमाः । गिरः । अर्षति । सस्रुतः ।
धेनूः । वाश्रः । अवीवशत् ॥ ६ ॥

पदार्थः—(सस्रुतः) व्योम्नि विस्तृताः (अद्भुताः) निष्कपटं कृताः (इमाः, गिरः) एताः कर्मयोगिनां स्तुतयः (एनं समर्षन्ति) इमं परमात्मानं प्राप्नुवन्ति (वाश्रः) स च परमात्मा तेभ्यः कर्मयोगिभ्यः (धेनूः) अभीष्टमनोरथं दातुं सदोद्यतस्तिष्ठति ।

पदार्थ—(सस्रुतः) आकाश में फैलती हुई (अद्भुताः) निष्कपटभाव से की हुई (इमाः, गिरः) कर्मयोगियों द्वारा की हुई स्तुतियें (एनम्, समर्षन्ति) इस परमात्मा को प्राप्त होती हैं (वाश्रः) और वह वेदोत्पादक परमात्मा (धेनूः, अवीवशत्) उन कर्मयोगियों के लिये अभीष्ट कामनाओं के देने को उद्यत रहता है ॥ ६ ॥

भावार्थ—शुभ सङ्कल्पों के मन में उत्पन्न हो जाने से परमात्मा उनका फल अवश्यमेव देता है ।

तात्पर्य्य यह है कि उपासना, प्रार्थना भी एक प्रकार के कर्म हैं उनका फल उनको अवश्य मिलता है । इसलिये प्रार्थना केवल मांगना ही नहीं, किन्तु एक प्रकार का कर्म्म है वह निष्फल कदापि नहीं जा सकता ॥ ६ ॥

इति चतुस्त्रिंशत्तमं सूक्तं चतुर्विंशो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ३४वां सूक्त और २४वां वर्ग समाप्त हुआ ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ षड्चस्य पञ्चत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य—

१—६ प्रभूवसुर्ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः—
१, २, ४—६ गायत्री । ३ विराड्गायत्री ॥
षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मा धर्मादिदातृत्वेन वर्ण्यते—

अब परमात्मा का धर्मादिदातृत्वेन वर्णन करते हैं:—

आ नः पवस्व धारया पवमान रयिं पृथुम् ।
यया ज्योतिर्विदासि नः ॥१॥

आ । नः । पवस्व । धारया । पवमान । रयिं । पृथुं ।
यया । ज्योतिः । विदासि । नः ॥१॥

पदार्थः—(पवमान) हे सर्वस्य पवितः परमात्मन्, (नः, धारया, आपवस्व) अस्मान् आनन्दस्य धारया सुष्ठु पुनातु (रयिं, पृथुं) महदैश्वर्यं च देहि (यया, नः, ज्योतिः, विदासि) यथानन्दधारया भवान् ज्ञानप्रदोऽस्ति ।

पदार्थ—(पवमान) हे सबको पवित्र करनेवाले परमात्मन् ! (नः, धारया, आपवस्व) हमको आप आनन्द की धारा से भली प्रकार पवित्र करिये (रयिम्, पृथुम्) और बड़े भारी ऐश्वर्य को दीजिये (यया, नः, ज्योतिः, विदासि) उसी आनन्द की धारा से आप ज्ञान-प्रद हैं ।

भावार्थ—जो पुरुष अपने आप को परमात्मज्ञान का पात्र बनाते हैं परमात्मा उन्हें आनन्द की वृष्टि से सिञ्चित करते हैं ॥१॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इन्दो समुद्रमीङ्खय पवस्व विश्वमेजय ।
रायो धर्ता न ओजसा ॥२॥

इन्दो इति । समुद्रंऽईङ्खय । पवस्व । विश्वंऽएजय । रायः । धर्ता । नः । ओजसा ॥२॥

पदार्थः—(इन्दो) हे परमैश्वर्यशालिन् (समुद्रमीङ्खय) हे अन्तरिक्षादौ व्याप्त, (विश्वमेजय, ओजसा) हे स्वप्रतापेन लोकमाश्चर्ययन् ! परमात्मन्, त्वं (रायः, धर्ता) सम्पूर्णधनादैश्वर्याणां धारकोऽसि (नः, पवस्व) भवान् अस्मभ्यं धनादैश्वर्यं दत्त्वा पवित्रयतु ।

पदार्थ—(इन्दो) हे परमैश्वर्यशाली परमात्मन् ! (समुद्रमीङ्खय) हे अन्तरिक्षादि लोकों में व्याप्त ! (विश्वमेजय, ओजसा) हे अपने प्रताप से संसार को चकित करनेवाले ! (रायः, धर्ता) आप सम्पूर्ण धनादि ऐश्वर्यों को धारण करनेवाले हैं (नः, पवस्व) आप हमको धनादि ऐश्वर्य का दान करके पवित्र करिये ।

भावार्थ—परमात्मा की कृपा से ही धनादि सब ऐश्वर्य पुरुष को प्राप्त होते हैं इस लिये पुरुष को सदैव परमात्मपरायण होने का यत्न करना चाहिये ॥ २ ॥

त्वया वीरेण वीरवोऽभि ष्याम पृतन्यतः ।
क्षरा णो अभि वार्यम् ॥३॥

त्वया । वीरेण । वीरऽवः । अभि । स्याम । पृतन्यतः । क्षर । नः । अभि । वार्यं ॥३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(वीरवः) हे वीराणामधिपते परमात्मन्, (वीरेण, त्वया) सर्वोत्तमपराक्रमवता भवता वयं (पृतन्यतः, अभिष्याम) संग्राममिच्छतः शत्रून् पराजयेम (नः वार्यम्, अभिक्षर) त्वमस्मभ्यं प्रार्थनीयं पदार्थं देहि ।

पदार्थ—(वीरवः) हे वीरों के अधिपति परमात्मन् ! (वीरेण, त्वया) सर्वोपरि पराक्रमवाले आप के द्वारा हम (पृतन्यतः, अभिष्याम) संग्राम की इच्छा करनेवाले शत्रुओं को पराजित करें (नः, वार्यम्, अभिक्षर) आप हमको अभिलषितपदार्थों को दीजिये ॥३॥

भावार्थ—जो लोग अन्यायकारी शत्रुओं के विजय करने का सङ्कल्प रखते हैं, परमात्मा उन्हें अन्यायकारियों के दमन का बल प्रदान करता है ताकि अन्यायकारियों को मर्दन करके वे संसार में न्याय का प्रचार करें ॥३॥

प्र वाजमिन्दुरिष्यति सिषासन्वाजसा ऋषिः ।
व्रता विदान आयुधा ॥४॥

प्र । वाजं । इन्दुः । इष्यति । सिसासन् । वाजऽसाः ।
ऋषिः । व्रता । विदानः । आयुधा ॥४॥

पदार्थः—(इन्दुः) सर्वैश्वर्यः (सिषासन्) स्वभक्तेभ्य स्पृहयन् (वाजसाः) अखिलैश्वर्ययुक्तः (ऋषिः) सर्वब्रह्माण्डस्य द्रष्टा (व्रता, आयुधा, विदानः) सर्वैः कर्मभिः आयुधैश्च सम्पन्नः परमात्मा (वाजं, प्रेष्यति) स्वभक्तेभ्यः सर्वप्रकारमैश्वर्यं ददाति ।

पदार्थ—(इन्दुः) सर्वैश्वर्यवाला (सिषासन्) अपने भक्तों को

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चाहनेवाला (वाजसाः) अखिल ऐश्वर्यों से युक्त (ऋषिः) सर्व ब्रह्माण्डों का साक्षी (व्रता, आयुधा, विदानः) सम्पूर्ण कर्मों तथा आयु से सम्पन्न परमात्मा (वाजम्, प्रेष्यति) अपने भक्तों को सब प्रकार ऐश्वर्य को देता है ।

भावार्थ—परमात्मा सन्मार्गगामी पुरुषों को सम्पूर्ण ऐश्वर्यों प्रदान करता है जो लोग परमात्मा की आज्ञा मान कर उसका अनु करते हैं वही परमात्मा के भक्त व श्रद्धाचारी कहलाते हैं अन्य नहीं ॥

तं गीर्भिर्वाचमीङ्खयं पुनानं वासयामसि ।
सोमं जनस्य गोपतिम् ॥५॥

तं । गीःऽभिः । वाचंऽईंखयं । पुनानं । वासयामसि ।
सोमं । जनस्य । गोऽपतिं ॥५॥

पदार्थः—(वाचमीङ्खयम्) वेदवाक्षु निवसन्तम् (पुनानम्) सर्वं पवित्रयन्तम् (जनस्य, गोपतिम्) मानुषेन्द्रिय वृत्तीः प्रेरयन्तम् (तं, सोमम्) तं परमात्मानम् (गीर्भिः) स्तुतिभिः (वासयामसि) स्वान्तःकरणे निवासयामः ।

पदार्थ—(वाचमीङ्खयम्) वेदवाणी में निवास करने वा (पुनानम्) सब को पवित्र करने वाले (जनस्य, गोपतिम्) मनु की इन्द्रिय वृत्तियों की प्रेरणा करने वाले (तं, सोमम्) उस परमात्मा को (गीर्भिः) स्तुतियों द्वारा (वासयामसि) अपने अन्तःकरण बसाते हैं ।

भावार्थ—परमात्मा के स्वअन्तःकरण में धारण करने उपाय यह है कि पुरुष उस के सद्गुणों का चिन्तन करके उसके स्व में मग्न हो जाय इसी का नाम परमात्मप्राप्ति वा परमात्मयोग है ॥५॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विश्वो यस्य व्रते जनो दाधार धर्मणस्पतेः।
पुनानस्य प्रभूवसोः ॥६॥२५॥

विश्वः। यस्य। व्रते। जनः। दाधार। धर्मणः। पतेः। पुनानस्य। प्रभुऽवसोः। ॥६॥२५॥

पदार्थः—(यस्य) यस्य (धर्मणस्पतेः) धर्मरक्षकस्य (पुनानस्य) लोकस्य पवित्रयितुः (प्रभूवसोः) अनन्तैश्वर्यस्य परमात्मनः (व्रते) भक्तौ (विश्वः) सर्वैश्वर्याभिलाषिणः (मनः, दाधार) स्वस्वमनांसि धारयन्ति तं परमात्मानं स्वहृदि धारयामः।

पदार्थ—(यस्य) जिस (धर्मणस्पतेः) धर्म को पालन करने वाले (पुनानस्य) संसार को पवित्र करने वाले (प्रभूवसोः) अनन्त ऐश्वर्य वाले परमात्मा की (व्रते) भक्ति में (विश्वः) सम्पूर्ण ऐश्वर्याभिलाषियों का गण (मनः, दाधार) अपने २ मन को धारण करता है उस परमात्मा को अपने हृदय में बसाते हैं।

भावार्थ—परमात्मा के नियम में ही सब सूर्य्यादि पदार्थ अपने अपने धर्मों को धारण करते हैं अर्थात् उसके नियमों का कोई भी उल्लङ्घन नहीं कर सकता। उस परमात्मा के महत्व को स्वहृदय में धारण करना प्रत्येक पुरुष का कर्त्तव्य है ॥६॥

इति पंचत्रिंशतमं सूक्तं पञ्चविंशो वर्गश्च समाप्तः।

यह ३५ वां सूक्त और २५ वां वर्ग समाप्त हुआ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ षड्ऋचस्य षट्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य—

१—६ प्रभूवसुर्ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः १ पाद निचृद्गायत्री । २, ६ गायत्री । ३—५ निचृद्गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मनः शक्तिद्वयाश्रयत्वं वर्ण्यते—

अब परमात्मा को रै और प्राण रूप शक्ति का आधार रूप से वर्णन करते हैं:—

असर्जि रथ्यो यथा पवित्रे चम्वोः सुतः ।
कार्ष्मन्वाजी न्यक्रमीत् ॥१॥

असर्जि । रथ्यः । यथा । पवित्रे । चम्वोः । सुतः । कार्ष्मन् । वाजी । नि । अक्रमीत् ॥१॥

पदार्थः—(रथ्यः) सर्वगतिशीलपदार्थेभ्यो गति परमात्मा (चम्वोः, सुतः) रैप्राणरूपयोर्द्वयोः शक्त्योः प्रसि किंच सः (यथा, असर्जि) पूर्ववत् सर्वं लोकं समजीजनत् च (वाजी) प्रबलः सः (पवित्रे, कार्ष्मन्, न्यक्रमीत्) अर्चन स्वाकर्षणसमर्थानां भक्तानां पवित्रे हृदय आगत्य विराजते ।

पदार्थ—(रथ्यः) सब गति शील पदार्थों को गति देने वा वह परमात्मा (चम्वोः, सुतः) रै और प्राणरूप दोनों शक्तियों में प्रसि है । और उसने (यथा, असर्जि) पूर्ववत् सब संसार को पैदा कि और (वाजी) अप्रतिम बलवाला वह परमात्मा (पवित्रे, कार्ष्मन्, न्यक्रमी भजन द्वारा उसको आकर्षण करने वाले भक्तों के पवित्र हृदय में आ विराजमान होता है ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—यद्यपि परमात्मा अपनी व्यापकता से प्रत्येक पुरुष के हृदय में विद्यमान है तथापि जो पुरुष अपने अन्तःकरण को निर्मल रखते हैं उनके हृदय में उसकी स्फुट प्रतीति होती है इसी अभिप्राय से कथन किया है कि वह भक्तों के हृदय में विराजमान है ॥१॥

स वह्निः सोम जागृविः पवस्व देववीरति ।
अभि कोशं मधुश्चुतम् ॥२॥

सः । वह्निः । सोम । जागृविः । पवस्व । देवऽवीः । अति ।
अभि । कोशं । मधुऽश्चुतं ॥२॥

पदार्थः—(सोम) हे भगवन्, (सः) पूर्वोक्तगुणवान् त्वम् (वह्निः) सर्वप्रेरकः (जागृविः) नित्यः शुद्धो बुद्धो मुक्तस्वरूपश्चासि, किंच (देववीः, अति) सद्गुणसम्पन्नान् विदुषोऽतिकामयसे (मधुश्चुतम्, कोशम्, अभिपवस्व) त्वमानन्दप्रवाहं स्यन्दय ।

पदार्थ—(सोम) हे भगवन् ! (सः) वह पूर्वोक्त गुणसम्पन्न आप (वह्निः) सब के प्रेरक हैं और (जागृविः) नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वरूप हैं (देववीः, अति) सद्गुणसम्पन्न विद्वानों को अति चाहने वाले हैं (मधुश्चुतम्, कोशम्, अभिपवस्व) आप आनन्द के स्रोत को बहाइये ।

भावार्थ—सम्पूर्ण वस्तुओं में से परमात्मा ही एकमात्र आनन्दरूप है । उसी के आनन्द को उपलब्ध करके जीव आनन्दित होते हैं । इसलिये उसी आनन्दरूप सागर से सुख की प्रार्थना करनी चाहिये ।

स नो ज्योतींषि पूर्व्य पवमान वि रोचय ।
क्रत्वे दक्षाय नो हिनु ॥३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सः । नः । ज्योतींषि । पूर्व्य । पवमान । वि । रोचय
ऋत्वे । दक्षाय । नः । हिनु ॥३॥

पदार्थः—(पूर्व्य, पवमान) हे सर्वस्य पवित्रकर्तः अनादे परमात्मन्, त्वम् (नः, ज्योतींषि) अस्माकं बुद्धी (विरोचय) प्रकाशिताः कुरु (नः) अस्मान् (ऋत्वे, दक्षाय हिनु (बलदाने यज्ञायोद्यताँश्चविधेहि ।

पदार्थ—(पूर्व्य, पवमान) हे सब को पवित्र करने वा अनादि परमात्मन् ! (नः, ज्योतींषि) आप हमारे ज्ञान को (वि चय) प्रकाशित कीजिये (नः) और हमको (ऋत्वे, दक्षाय, हि बलप्रद यज्ञ के लिये उद्यत कीजिये ।

भावार्थ—जो लोग परमात्मज्योति का ध्यान करते हैं, पवित्र होकर सदैव शुभ कामों में प्रवृत्त रहते हैं ।

शुम्भमान ऋतायुभिर्मृज्यमानो गभस्त्योः ।
पवते वारे अव्यये ॥४॥

शुम्भमानः । ऋतयुऽभिः । मृज्यमानः । गभस्त्योः । पवते वारे । अव्यये ॥४॥

पदार्थः—हे परमात्मन्, भवान् (ऋतायुभिः) सत्य प्रियैर्विद्वद्भिः (गभस्त्योः) स्वशक्तिभिः स्थितः (मृज्यमानः उपास्यो भवति किंच (शुम्भमानः) अत्यर्थं शोभमानः (अव्ये वारे, पवते) स्वभक्तेभ्यः अविनाशिमुक्तिपदं ददाति ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (ऋतायुभिः) सत्य को चाहने वाले विद्वानों से (गभस्त्योः) अपनी शक्तियों द्वारा स्थित होते हुए आप (मृज्यमानः) उपास्य हो (शुंभमानः) सर्वोपरि शोभा को प्राप्त होते हुये (अव्यये, वारे, पवते) अपने उपासकों के लिये अव्यय मुक्ति पद का प्रदान करते हैं ।

भावार्थ—जो पुरुष शुभ काम करते हुए श्रवण, मनन निदिध्यासनादि साधनों में युक्त रहते हैं वे मुक्ति पद के अधिकारी होते हैं ।

स विश्वा दाशुषे वसु सोमो दिव्यानि पार्थिवा ।
पवतामान्तरिक्ष्या ॥५॥

सः । विश्वा । दाशुषे । वसु । सोमः । दिव्यानि । पार्थिवा । पवतां । आ । अन्तरिक्ष्या ॥५॥

पदार्थः—(सः, सोमः,) ससौम्यो भवान् (दाशुषे) स्वभक्ताय (दिव्यानि) दिव्यानि (अन्तरिक्ष्या) अन्तरिक्षोद्भवानि तथा (पार्थिवानि) भौमानि (विश्वा, वसु) सर्वाणि रत्नाद्यैश्वर्याणि (आपवताम्) ददातु ।

पदार्थ—(सः, सोमः) वह सौम्यस्वभाव वाले आप (दाशुषे) अपने उपासक के लिये (दिव्यानि) दिव्य (अन्तरिक्ष्या) अन्तरिक्ष में होने वाले तथा (पार्थिवानि) पृथिवीलोक में होने वाले (विश्वा, वसु) सम्पूर्ण रत्नादि ऐश्वर्यों को (आपवताम्) दीजिये ॥

भावार्थ—जो लोग अपने स्वभाव को सौम्य बनाते हैं अर्थात् ईश्वर के गुण, कर्म, स्वाभाव, को लक्ष्य रख कर अपने गुण कर्म स्वभाव को भी उसी प्रकार का पवित्र बनाते हैं वे सब ऐश्वर्यों को प्राप्त होते हैं।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आ दिवस्पृष्ठमश्वयुर्गव्ययुः सोम रोहसि ।
वीरयुः शवसस्पते ॥६॥२६॥

आ । दिवः । पृष्ठं । अश्वऽयुः । गव्यऽयुः । सोम । रोहसि ।
वीरऽयुः । शवसः । पते ॥६॥

पदार्थः—(सोम, शवसस्पते) हे अन्नाद्यैश्वर्याधिपते परमात्मन्, भवान् स्वोपासकाय (वीरयुः) वीरस्पृहः (अश्वयुः गव्ययुः) अश्वेभ्यो गोभ्यश्च स्पृहयति (दिवः, पृष्ठम् आरोहसि) किंच द्युलोकस्यापि पृष्ठे विराजत ।

पदार्थ—(सोम, शवसस्पते) हे अन्नादि ऐश्वर्यों के स्वामिन् परमात्मन् ! आप अपने उपासक के लिये (वीरयुः) वीरों की इच्छा करने वाले तथा (अश्वयुः, गव्ययुः) अश्व, गौ आदिकों की इच्छा करने वाले हैं (दिवः, पृष्ठम्, आरोहसि) और द्युलोक के भी पृष्ठ पर आप विराजमान हैं ।

भावार्थ—ईश्वर सदाचारी और न्यायकारी लोगों के लिये वीरत्व वीरत्वादि धर्मों को धारण करता है । और गो, अश्वादि नाना प्रकार के धनों से उन्हें सम्पन्न करता है ।

इति षट्त्रिंशत्तमं सूक्तं षड्विंशो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ३६ वां सूक्त और २६ वां वर्ग समाप्त हुआ ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ षड्ऋचस्य सप्तत्रिंशतमस्य सूक्तस्य—

१-६ रहूगण ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः—१-३ गायत्री । ४-६ निचृद्गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मना राक्षसेभ्यो रक्षणमुपदिश्यते:—

अब परमात्मा दुराचारियों से रक्षा का कथन करते हैं:—

स सुतः पीतये वृषा सोमः पवित्रे अर्षति ।
विघ्नन्रक्षांसि देवयुः ॥१॥

सः । सुतः । पीतये । वृषा । सोमः । पवित्रे । अर्षति । विघ्नन् । रक्षांसि । देवऽयुः ॥१॥

पदार्थः—(सुतः) स्वयम्भूः (वृषा) सर्वकामप्रदः (सः, सोमः) सः परमात्मा (रक्षांसि, विघ्नन्) राक्षसान् विनाशयन् (देवयुः) देवान् इच्छन् च (पीतये) विदुषां तृप्तये (पवित्रे, अर्षति) तेषामन्तःकरणेषु विराजते ।

पदार्थ—(सुतः) स्वयम्भू (वृषा) सर्व कामप्रद (सः, सोमः) वह परमात्मा (रक्षांसि, विघ्नन्) राक्षसों को हनन करता हुआ और (देवयुः) देवताओं को चाहता हुआ (पीतये) विद्वानों की तृप्ति के लिये (पवित्रे, अर्षति) उनके अन्तःकरण में विराजमान होता है ॥

भावार्थ—परमात्मा दैवी सम्पति वाले पुरुषों के हृदय में आकर विराजमान होता है । और उनके सब विघ्नों को दूर करके उनको कृतकार्य बनाता है । यद्यपि परमात्मा सर्वत्र विद्यमान है तथापि वह

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

देवभाव को धारण करने वालें मनुष्यों को ज्ञान द्वारा प्रतीत होता अन्यों को नहीं। इस अभिप्राय से यहां देवताओं के हृदय में उसका निवास कथन कियागया है, अन्यों को नहीं ॥१॥

स पवित्रे विचक्षणो हरिरर्षति धर्णसिः।
अभि योनिं कनिक्रदत् ॥२॥

सः। पवित्रे। विऽचक्षणः। हरिः। अर्षति। धर्णसिः। अभि। योनिं। कनिक्रदत् ॥२॥

पदार्थः—(अभियोनिम्) प्रकृतिं सर्वामवष्टभ्य (कनिक्रदत्) शब्दायमानः (सः) सः परमात्मा (पवित्रे, अर्षति) शुचिषु हृदयेषु निवसति किंच (विचक्षणः) सर्वद्रष्टा; (हरिः) पापापनुदः (धर्णसिः) सर्वेषां धाता चास्ति।

पदार्थ—(अभियोनिम्) प्रकृति में सर्वत्र व्याप्त होकर (कनिक्रदत्) शब्दायमान (सः) वह परमात्मा (पवित्रे, अर्षति) पवित्रहृदय में निवास करता है और (विचक्षणः) सर्व द्रष्टा है (हरिः) पापों को हरने वाला तथा (धर्णसिः) सबको धारण करने वाला है॥

भावार्थ—परमात्मा ही इन सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों का अधिष्ठान तथा विधाता है।

स वाजी रोचना दिवः पवमानो वि धावति।
रक्षोहा वारमव्ययम् ॥३॥

सः। वाजी। रोचना। दिवः। पवमानः। वि। धावति। रक्षःऽहा। वारं। अव्ययं ॥३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(सः) सः परमात्मा (वाजी) प्रबलः, (दिवः, रोचना) अन्तरिक्षस्य प्रकाशकः, (रक्षोहा) असत्कर्मिणां विहन्ता, (वारम्) सर्वेषां सेव्यः (अव्ययम्) अविनाशी चास्ति (पवमानः) एवम्भूतः परमात्मा सर्वं पवित्रयन् (विधावति) सर्वत्र व्यापकत्वेन वर्तते ।

पदार्थ—(सः) वह परमात्मा (वाजी) अत्यन्तबल वाला (दिवः, रोचना) तथा अन्तरिक्ष का प्रकाशक है (रक्षोहा) असत्कर्मियों का हनन करने वाला (वारं) सब का भजनीय और (अव्ययम् अविनाशी है (पवमानः) एवम्भूत परमात्मा, सबको पवित्र करता हुआ (विधावति) सर्वत्र व्याप्त हो रहा है ॥

भावार्थ—सूर्य चन्द्रमादि सब लोक लोकान्तर उसी के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं । स्वयंप्रकाश एक मात्र वही परमात्मा है । अन्य कोई वस्तु स्वतःप्रकाश नहीं ।

स त्रितस्याधि सानवि पवमानो अरोचयत् ।
जामिभिः सूर्यं सह ॥४॥

सः । त्रितस्य । अधि । सानवि । पवमानः । अरोचयत् ।
जामिऽभिः । सूर्यं । सह ॥४॥

पदार्थः—(सः) सः परमात्मा (त्रितस्य, अधिसानवि) सर्वोपरि निपुणः, (पवमानः) लोकस्य पविता, (जामिभिः, सह) तेजोभिः सहितं (सूर्यम्, अरोचयत) सूर्यम् अदिदीपत् ।

पदार्थ—(सः) वह परमात्मा (त्रितस्य, अधिसानवि) नीतिशास्त्रों में सर्वोपरि नेता है (पवमानः) लोकों को शुद्ध करने वाले उसी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परमात्मा ने (जामिभिः, सह) तेजों के सहित (सूर्यम्, अरोचयत्) सूर्य को देदीप्यमान किया।

भावार्थ—सब प्रकार की विद्यायें उसी परमात्मा से सिद्ध है। और वही परमात्मा राजनीति से राजधर्मों का निर्माता तथा धाता हैं।

स वृत्रहा वृषा सुतो वरिवोविददभ्यः।
सोमो वाजमिवासरत् ॥५॥

सः। वृत्रऽहा। वृषा। सुतः। वरिवःऽवित्। अदाभ्यः। सोमः। वाजंऽइव। असरत् ॥५॥

पदार्थः—(वृत्रहा) अज्ञानच्छेदकः (वृषा) सर्व कामदः (सुतः) स्वयंसिद्धः, (वरिवोवित्) विभूतिप्रदः, (अदाभ्यः) अदम्भनीयः (सः, सोमः) सः परमात्मा (वाजम् इव, असरत्) शक्तिरिव व्याप्नोति।

पदार्थ—(वृत्रहा) अज्ञानों का नाशक (वृषा) कामनाओं की वर्षा करने वाला (सुतः) स्वयं सिद्ध (वरिवोवित्) ऐश्वर्यों को देने वाला (अदाभ्यः) अदम्भनीय (सः, सोमः) वह परमात्मा (वाजम्, इव असरत्) शक्ति की नाईं व्याप्त हो रहा है।

भावार्थ—जिस प्रकार सूर्य (वृत्र) मेघों को छिन्न भिन्न करके धरातल को जल से सुसिंचित कर देता है, इसी प्रकार परमात्मा सब प्रकार के आवरणों को छिन्न भिन्न करके अपने ज्ञान का प्रकाश कर देता है॥

स देवः कविनेषितोऽभि द्रोणानि धावति।
इन्दुरिन्द्राय मंहना ॥६॥२७॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सः । देवः । कविना । इषितः । अभि । द्रोणानि । धावति । इन्दुः । इन्द्राय । मंहना ॥६॥

पदार्थः—(सः) सः परमात्मा (देवः) दिव्य गुणसम्पन्नः, (कविना, इषितः) विद्वद्भिः प्रार्थितः, (इन्दुः) परमेश्वरः (मंहना) महान् चास्ति सः (इन्द्राय, अभि, द्रोणानि) विदुषामन्तःकरणेषु (धावति) विराजते ।

पदार्थ—(सः) वह परमात्मा (देवः) दिव्यगुणसम्पन्न है (कविना, इषितः) विद्वानों द्वारा प्रार्थित होता है (इन्दुः) परम ऐश्वर्य सम्पन्न है (मंहना) महान् है (इन्द्राय, अभि, द्रोणानि) विद्वानों के अन्तःकरणोंमें (धावति) विराजमान होता है ।

भावार्थ—यद्यपि परमात्मा सर्वत्र विद्यमान है तथापि विद्यादीपसे जो लोग अपने अन्तःकरणोंको देदीप्यमान करते हैं उनके हृदयमें उसकी अभिव्यक्ति होती है । इस अभिप्रायसे यहां परमात्मा का विद्वानों के हृदय में निवास करना कथन किया गया है ॥६॥

इति सप्तत्रिंशत्तमं सूक्तं सप्तविंशो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ३७ वां सूक्त और २७वां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ षट्त्रिंशस्य अष्टात्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य—

१—८ रहूगण ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः—१, २, ४, ६, निचृद्गायत्री । ३ गायत्री । ५ ककुम्मती गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ प्रकारान्तरेण ईश्वरस्य गुणा उपदिश्यन्ते ।

अब प्रकारान्तरसे ईश्वरके गुण वर्णन करते हैं—

एष उ स्य वृषा रथोऽव्यो वारेभिरर्षति ।
गच्छन्वाजं सहस्रिणम् ॥१॥

एषः । ऊँइति । स्यः । वृषा । रथः । अव्यः । वारेभिः । अर्षति । गच्छन् । वाजं । सहस्रिणं ॥१॥

पदार्थः—(एषः, स्यः) अयं परमात्मा (रथः) गतिशीलः, (वृषा) सर्वाभिलाषसाधकः, (अव्यः) सर्वस्य रक्षकः (सहस्रिणं, वाजम् अनन्ताः शक्तीः (गच्छन्) सम्पादयन् (वारेभिः, अर्षति) माननीयैर्विबुधैः प्रकाशितो भवति ।

पदार्थ—(एषः, स्यः) यह परमात्मा (रथः) गतिशील और (वृषा) सब कामनाओंका देनेवाला (अव्यः) तथा सबका रक्षक है (सहस्रिणम्, वाजम्) अनन्तशक्तिसम्पन्न (गच्छन्) होता हुआ (वारेभिः, अर्षति) वरणीय विद्वानों द्वारा प्रकाशित होता है ।

भावार्थ—परमात्माका ज्ञान विद्वानों द्वारा इस संसारमें प्राप्त पाता है, इस अभिप्राय से परमात्मा ने उक्तमंत्र में विद्वानोंकी महत्ता निरूपण की है ॥१॥

एतं त्रितस्य योषणो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः ।
इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥२॥

एतं । त्रितस्य । योषणः । हरिं । हिन्वन्ति । अद्रिऽभिः । इंदुं । इन्द्राय । पीतये ॥२॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(त्रितस्य, योषणः, हरिम्) त्रिगुणायाः प्रकृतेः प्रभुम् (एतम्, इन्दुम्) परमैश्वर्यसम्पन्नमिमं परमात्मानम् (इन्द्राय, पीतये) जीवस्य तृप्तये (अद्रिभिः) इन्द्रियवृत्तिभिः (हिन्वन्ति) विद्वांसः ध्यानविषयीकुर्वन्ति ।

पदार्थ—(त्रितस्य, योषणः, हरिम्) "हरति प्रापयति स्वस्वशमानयतीति हरिः स्वामी" तीनोंगुणवाली मायाके अधिपति (एतम्, इन्दुम्) परमैश्वर्यसम्पन्न परमात्माको (इन्द्राय पीतये) जीवकी तृप्तिकेलिये (अद्रिभिः) इन्द्रियवृत्तिद्वारा (हिन्वन्ति) विद्वान् लोग ध्यानविषय करते हैं ।

भावार्थ—सत्व, रज, और तम, इन तीनों गुणोंवाली माया जो प्रकृति है उसका एकमात्र अधिपति परमात्मा ही है कोई अन्य नहीं । जो जो पदार्थ इन्द्रियगोचर होते हैं वे सब मायिक हैं अर्थात् मायारूपी उपादानकारणसे बनेहुए हैं । परमात्मा माया रहित होनेसे अदृश्य है। उसका साक्षात्कार केवल बुद्धिवृत्ति से होता है । बाह्य-चक्षुरादि इन्द्रियोंसे नहीं । इसी अभिप्रायसे यहां परमात्माको बुद्धिवृत्तिका विषय कहा गया है ॥२॥

एतं त्यं हरितो दश मर्मृज्यन्ते अपस्युवः ।
याभिर्मदाय शुम्भते ॥३॥

एतं । त्यं । हरितः । दश । मर्मृज्यन्ते । अपस्युवः ।
याभिः । मदाय । शुंभते ॥३॥

पदार्थः—(हरितः, दश, अपस्युवः) परमात्मस्तुत्यापापापहारकाणि दशेन्द्रियाणि (एतं, त्यम्) इमं परमात्मानं

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(मर्मृज्यन्ते) ज्ञानविषयीकुर्वन्ति (याभिः) यदिन्द्रियैः परमात्मा (मदाय, शुम्भते) आनन्दं दातुं प्रकटति ।

पदार्थ—(हरितः, दश, अपस्युवः) परमात्मस्तुतिद्वारा पाप को हरणकरनेवाली दश इन्द्रियें (एतम्, त्यम्,) इस परमात्माको (मर्मृज्यन्ते) ज्ञानका विषय बनाती हैं (याभिः) जिन इन्द्रियोंसे (मदाय, शुंभते) आनन्द देनेकेलिये परमात्मा प्रकाशित होता है।

भावार्थ—जो लोग योगादिसाधनों द्वारा अपने मनका संयम करते हैं, अथवा यों कहिये कि, जिन्होंने पापवासनाओंको अपने मन की पवित्रतासे नाश कर दिया है, परमात्मा उन्हींके ज्ञानका विषय होता है। मलिनात्माओंका कदापि नहीं ॥३॥

एष स्य मानुषीष्वा श्येनो न विक्षु सीदति।
गच्छञ्जारो न योषितम् ॥४॥

एषः। स्यः। मानुषीषु। आ। श्येनः। न। विक्षु। सीदति। गच्छन्। जारः। न। योषितं ॥४॥

पदार्थः—(एषः, स्यः) अयं परमात्मा (श्येनः, न) शीघ्रगामिविद्युदादिशक्तिरिव (जारः, योषितं, गच्छन्, न) रात्रिं प्राप्नुवन् प्रकाशमानः चन्द्रइव च (मानुषीषु, विक्षु सीदति) मानुषीः प्रजाः प्राप्नोति ।

पदार्थ—(एषः, स्यः) यह परमात्मा (श्येनः, न) शीघ्रगामी विद्युदादिशक्तियोंके समान (जारः, योषितं, गच्छन्, न) जैसे चन्द्रमा रात्रिको प्रकाशित करताहुआ प्राप्तहोता है, उसीप्रकार (मानुषीषु, विक्षु सीदति) मानुषीप्रजाओंमें प्राप्तहोता है।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—जिस प्रकार चन्द्रमा अपने शीतस्पर्श और आह्लादको देता हुआ प्रजाको प्रसन्न करता है, उसी प्रकार परमात्मा अपने शान्त्यादि और आनन्दादिगुणोंसे सब प्रजाओंको प्रसन्न करता है

कई एक टीकाकार इसके ये अर्थ करते हैं, कि जिस प्रकार (जार) यार अपनी प्रिय स्त्रीको शीघ्रतासे आकर प्राप्त होता है, इस प्रकार वह हमको आकर प्राप्त हो। "जार" के अर्थ स्त्रीलम्पट पुरुषके उन्होंने भ्रान्तिसे समझे हैं। क्योंकि (जारयति जारः) इस व्युत्पत्तिसे रात्रिका स्वाभाविक धर्म जो अन्धकार है, उसको नाश करने वाला चन्द्रमा ही हो सकता है। इस अभिप्रायसे "जार" शब्द यहां चन्द्रमाको कहता है। किसी पुरुषविशेषको नहीं। स्त्रीलम्पटपुरुषविशेषके अर्थ-करके यहां अल्पश्रुतटीकाकारों ने वेदको कलङ्कित किया है ॥४॥

एष स्य मद्यो रसोऽव चष्टे दिवः शिशुः।
य इन्दुर्वारमाविशत् ॥५॥

एषः। स्यः। मद्यः। रसः। अव। चष्टे। दिवः। शिशुः। यः। इंदुः। वारं। आ। अविशत् ॥५॥

पदार्थः—(मद्यः) आह्लादजनकः, (रसः) आनन्दरूपः, (दिवः, शिशुः) द्युलोकस्य शास्ता (एषः, स्यः) अयं परमात्मा (अवचष्टे) सर्वं पश्यति (यः, इन्दुः) परमैश्वर्ययुक्तो यः परमात्मा (वारम्, आविशत्) स्तोतुर्विदुषोऽन्तःकरणे प्रविशति।

पदार्थ—(मद्यः) आह्लादजनक (रसः) आनन्दरूप (दिवः, शिशुः) द्युलोकका शासक (एषः, स्यः) यह परमात्मा (अवचष्टे)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सबको देखता है (यः, इन्दुः) जो परमैश्वर्यवाला परमात्मा (वायुम् आविशत्) स्तोता विद्वान्के अन्तःकरणमें प्रविष्ट होता है ।

भावार्थ—इस संसार में सर्वद्रष्टा एकमात्र परमात्माही है । उससे भिन्न सब जीव अल्पज्ञ हैं । योगी पुरुष भी अन्योंकी अपेक्षा सर्वज्ञ कहे जाते हैं, वास्तव में सर्वज्ञ नहीं ॥५॥

एष स्य पीतये सुतो हरिरर्षति धर्णसिः ।
क्रन्दन्योनिमभि प्रियम् ॥६॥२८॥

एषः । स्यः । पीतये । सुतः । हरिः । अर्षति । धर्णसिः ।
क्रन्दन् । योनिं । अभि । प्रियं ॥६॥२८॥

पदार्थः—(एषः, स्यः) अयं परमात्मा (सुतः) स्वयम्भूः, (धर्णसिः) धाता (क्रन्दन्) शब्दरूपं वेदमाविर्भावयन् च (पीतये) लोकस्य तृप्तये (योनिं, प्रियम्) प्रियप्रकृतिम् (अभ्यर्षति) व्याप्नोति ।

पदार्थ—(एषः, स्यः) यह परमात्मा (सुतः) स्वयम्भू (धर्णसिः) धारण करनेवाला (क्रन्दन्) शब्दमयवेदको आविर्भाव करता हुआ (पीतये) संसारकी तृप्तिकेलिये (योनिम्, प्रियम्) प्रियप्रकृति में (अभ्यर्षति) व्याप्त होरहा है ।

भावार्थ—इस प्रकृतिरूपी ब्राह्माण्डके रोमरोममें व्याप्त, वेदादि विद्याओंका आविर्भावकर्ता एकमात्र परमात्मा ही है ॥६॥

इति अष्टत्रिंशत्तमंसूक्तमष्टाविंशोवर्गश्च समाप्तः ॥

यह ३८ वां सूक्त और २८ वां वर्ग समाप्त हुआ ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ षड्ऋचस्यैकोनचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य—

१—६ बृहन्मतिर्ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः-१, ४, ६, निचृद् गायत्री ॥ २, ३, ५, गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ यज्ञविषये परमात्मनो ज्ञानरूपेणाह्वानं कथ्यते ।

अब यज्ञमें ज्ञानरूपसे परमात्माका आवाहन कथन करते हैं ।

आशुर्ऋषे बृहन्मते परि प्रियेण धाम्ना ।
यत्र देवा इति ब्रवन् ॥१॥

आशुः । अर्ष । बृहत्ऽमते । परि । प्रियेण । धाम्ना । यत्र । देवाः । इति । ब्रवन् ॥१॥

पदार्थः—(बृहन्मते) हे सर्वज्ञ परमात्मन्, (आशुः) भवान् शीघ्रगतिरस्ति (यत्र, देवाः, इति, ब्रवन्) यत्र दिव्यगुणसम्पन्ना ऋत्विगादयो भवन्तमावाहयन्ति तत्र यज्ञस्थले भवान् (प्रियेण, धाम्ना पर्यर्ष) स्वसर्वहितसम्पादकेन तेजोरूपेण विराजताम् ॥

पदार्थ—(बृहन्मते) हे सर्वज्ञ परमात्मन् । (आशुः) आप शीघ्रगतिशील हैं .(यत्र देवाः, इति, ब्रवन्) जहां दिव्यगुणसम्पन्न ऋत्विगादि आपका आवाहन करते हैं, उस यज्ञस्थलमें आप (प्रियेण, धाम्ना, पर्यर्ष) अपने सर्वहितकारक तेजस्वरूपसे विराजमान होयँ ।

भावार्थ—यज्ञादिशुभकर्मोंमें परमात्माके भाव वर्णन कियेजाते हैं, इस लिये परमात्माकी अभिव्यक्ति यज्ञादिस्थलोंमें मानी गई है। वास्तवमें परमात्मा सर्वत्र परिपूर्ण है ॥१॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परिष्कृण्वन्ननिष्कृतं जनाय यातयन्निषः ।
वृष्टिं दिवः परि स्रव ॥२॥

परिऽकृण्वन् । अनिःऽकृतं । जनाय । यातयन् । इषः ।
वृष्टिं । दिवः । परि । स्रव ॥२॥

पदार्थः—(अनिष्कृतम्, परिष्कृण्वन्) हे परमात्मन् ! भवान् स्वज्ञानोपासकेषु ज्ञानं जनयन् (जनाय, इषः, यातयन्) भक्तान् ऐश्वर्यप्राप्तिं कारयँश्च (दिवः, वृष्टिम्, परिस्रव) द्युलोकाद् वृष्टिं स्रावय ।

पदार्थ—(अनिष्कृतम्, परिष्कृण्वन्) हे परमात्मन् ! आप अपने अज्ञानी उपासकोंको ज्ञान देते हुए (जनाय, इषः, यातयन्) और अपने भक्तोंको ऐश्वर्य प्राप्त कराते हुए (दिवः, वृष्टिम्, परिस्रव) द्युलोकसे वृष्टिको उत्पन्न कीजिये ।

भावार्थ—परमात्माके, संसारमें अद्भुत कर्म ये हैं कि उसने द्युलोकको वर्षणशील बनाया है, और सूर्यादिलोकों को तेजोमय तथा पृथिवीलोक को दृढ़, इत्यादिविचित्रभावोंका कर्त्ता एकमात्र परमात्मा ही है ॥२॥

सुत एति पवित्र आ त्विषिं दधान ओजसा ।
विचक्षाणो विरोचयन् ॥३॥

सुतः । एति । पवित्रे । आ । त्विषिं । दधानः । ओजसा ।
विऽचक्षाणः । विऽरोचयन् ॥३॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(विरोचयन्) सर्वं वस्तु प्रकाशयन्, (विचक्षाणः) अखिलब्रह्माण्डस्य द्रष्टा (सुतः) स स्वयम्भूः परमात्मा (ओजसा, त्विषिं, दधानः) स्वप्रतापेन ज्ञानं धारयन् (पवित्रे, एति) विदुषांपवित्रेऽन्तःकरणे विराजितो भवति ।

पदार्थ—(विरोचयन्) सब प्रकाशितवस्तुओंको प्रकाशमान करता हुआ (विचक्षाणः) और अखिलब्रह्माण्डका द्रष्टा (सुतः) वह स्वयम्भू परमात्मा (ओजसा, त्विषिं, दधानः) अपने प्रतापसे ज्ञानको धारण कराता हुआ (पवित्रे, एति) विद्वानोंके पवित्र अन्तःकरणमेंप्राप्तहोता है ॥

भावार्थ—यद्यपि परमात्मा सर्वव्यापक है, तथापि उसका स्थान विद्वानों के हृदयको इसलिये वर्णन किया गया है, कि विद्वान् लोग अपने हृदयको उसके ज्ञानका पात्र बनाते हैं ॥३॥

अयं स यो दिवस्परि रघुयामा पवित्र आ ।
सिन्धोरूर्मा व्यक्षरत् ॥४॥

अयं । सः । यः । दिवः । परि । रघुऽयामा । पवित्रे । आ ।
सिंधोः । ऊर्मा । वि । अक्षरत् ॥४॥

पदार्थः—(अयम्, सः) अयं स परमात्मास्ति (यः) (दिवस्परि) द्युलोकादप्यूर्ध्वभागे वर्तमानः, (रघुयामा) शीघ्रगामी, (पवित्रे, आ) ज्ञानयोगिनामन्तःकरणे निवासी (सिन्धोः, ऊर्मा, व्यक्षरत्) स्यन्दनशीलनद्यादिषु स्यन्दनशक्तिं जनयति ।

पदार्थ—(अयम्, सः) यह वह परमात्मा है (यः) जोकि

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(दिवस्परि) अन्तरिक्षके भी ऊर्ध्वभागमें वर्तमान है (रघुयामा) शीघ्रगतिवाला है (पवित्रे, आ) और ज्ञानयोगियों के अन्तःकरणमें निवास करता है तथा (सिन्धोः ऊर्मा, व्यक्षरत्) जो स्यन्दन शक्ति उत्पन्न करता है।

भावार्थ—उसी परमात्माकी अद्भुतशक्तिसे सूर्यचन्द्रमादिकोंका परिभ्रमण और नदियोंका प्रवहन इत्यादि सम्पूर्णगतियें उसी अद्भुतसत्तासे उत्पन्न होती हैं॥४॥

आविवासन्परावतो अथो अर्वावतः सुतः।
इन्द्राय सिच्यते मधु ॥५॥

आऽविवासन्। पराऽवतः। अथोइति। अर्वाऽवतः। सुतः। इन्द्राय। सिच्यते। मधु ॥५॥

पदार्थः—(सुतः) स स्वयम्भूः परमात्मा (परावतः) दूरस्थान् (अथो, अर्वावतः) अथ च समीपस्थान् पदार्थान् (आविवासन्) सुष्ठु प्रकाशयन् (इन्द्राय, सिच्यते, मधु) जीवात्मने आनन्दं वर्षति।

पदार्थ—(सुतः) वह स्वयम्भू परमात्मा (परावतः) दूर (अथो, अर्वावतः) और समीपस्थवस्तुओंको (आविवासन्) भलीभांति प्रकाशित करता हुआ (इन्द्राय, सिच्यते, मधु) जीवात्माके लिये आनन्दकी वृष्टि करता है।

भावार्थ—जीवात्माकेलिये आनन्दका स्रोत, एकमात्र परमात्मा है॥५॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

समीचीना अनूषत हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः।
योनावृतस्य सीदत ॥६॥२९॥

संऽईचीनाः। अनूषत। हरिं। हिन्वन्ति। अद्रिऽभिः।
योनौ। ऋतस्य। सीदत ॥६॥२९॥

पदार्थः—हे परमात्मन्! (हरिम्) पापानां विनाशयितारं भवन्तम् (समीचीनाः) सत्कर्मिण ऋत्विगादयः (अनूषत) स्तुवन्ति, (अद्रिभिः, हिन्वन्ति) इन्द्रियवृत्तिभिः ज्ञानविषयीकुर्वन्ति। (ऋतस्य, योनौ सीदत) हे भगवन् सत्यस्य योनौयज्ञे तिष्ठ।

पदार्थ— हे परमात्मन्! (हरिम्) पापोंको नाशकरने वाले आपकी (समीचीनाः) सत्कर्मी ऋत्विगादि लोग (अनूषत) स्तुति करते हैं। तथा (अद्रिभिः, हिन्वन्ति) इन्द्रियवृत्तियों द्वारा ज्ञानका विषय बनाते हैं (ऋतस्य, योनौ, सीदत) हे परमात्मन्! आप सत्यकी योनि, यज्ञमें स्थित होयँ।

भावार्थ—याज्ञिकपुरुष अपने अन्तःकरणको यज्ञवेदिस्थानी बनाकर परमात्मज्ञानको अवनेय बनाकर इस ज्ञानमययज्ञ से प्रजा को सुगन्धित करते हैं, तात्पर्य यह है कि अध्यात्मयज्ञ ही एकमात्र परमात्मप्राप्तिका मुख्यसाधन है, अन्य जलस्थलादि कोई वस्तु भी परमात्मप्राप्तिका मुख्यसाधन नहीं ॥६॥

इति एकोनचत्वारिंशत्तमं सूक्तमेकोनत्रिंशत्तमो वर्गश्च समाप्तः।

यह ३९ वां सूक्त और २९ वां वर्ग समाप्त हुआ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ षड्ऋचस्य चत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य-

१-६ बृहन्मतिर्ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता छन्दः-१, गायत्री । ३-६ निचृद्गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ ईश्वरस्य सकाशात्शीलंप्रार्थ्यते ।

पुनानो अक्रमीदभि विश्वा मृधो विचर्षणिः ।
शुम्भन्ति विप्रं धीतिभिः ॥१॥

पुनानः । अक्रमीत् । अभि । विश्वाः । मृधः । विऽचर्षणिः । शुम्भन्ति । विप्रं । धीतिऽभिः ॥१॥

पदार्थः—(विचर्षणिः) यः सर्वद्रष्टा परमात्मा (पुनानः) सत्कर्मिणः पवित्रयन् (विश्वा, मृधः, अभ्यक्रमीत्) अखिलान् दुराचारान् नाशयति (विप्रम् धीतिभिः) तं परमात्मानम् विद्वांसः वेदवाग्भिः (शुम्भन्ति स्तुत्वा) विभूषयन्ति ।

पदार्थ—(विचर्षणिः) सर्वद्रष्टा परमात्मा (पुनानः) सत्कर्मियोंको पवित्र करता हुआ (विश्वा, मृधः, अभ्यक्रमीत्) अखिल दुराचारियोंका नाश करता है (विप्रं, धीतिभिः) उस परमात्माको विद्वान् लोग वेदवाणियोंसे (शुम्भन्ति) स्तुति करके विभूषित करते हैं

भावार्थ— परमात्मा सत्कर्मी पुरुषोंको शुभस्वभाव प्रदान करता है ! तात्पर्य यह है कि सत्कर्मियों को उनके शुभकर्मानुसार शुभफल देताहै और दुष्कर्मियोंको दुष्कर्मानुसार अशुभफल देता है ॥१॥

आ योनिमरुणो रुहद्गमदिन्द्रं वृषा सुतः ।
ध्रुवे सदसि सीदति ॥२॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आ । योनिं । अरुणः । रुहत् । गमत् । इन्द्रं । वृषा । सुतः । ध्रुवे । सदसि । सीदति ॥२॥

पदार्थः—(अरुणः) सर्वव्यापकः, (सुतः) स्वयम्भुः स परमात्मा (आयोनिम् रुहत्) अखिलां प्रकृतिं व्याप्नोति किंच (वृषा) सर्वाभिलाषदः सः (सदसि) यज्ञस्थले (इन्द्रम्, गमत्) ज्ञानयोगिनं प्राप्नुवन् (ध्रुवे, सीदति) तदीये दृढविश्वासेऽन्तःकरणे विराजते ।

पदार्थः—(अरुणः) सर्वव्यापी (सुतः) स्वयंसिद्ध वह परमात्मा (आयोनिम् रुहत्) सम्पूर्णप्रकृतिमें व्याप्त होरहा है और (वृषा) सर्वकामनाओंका देनेवाला वह परमात्मा (सदसि) यज्ञस्थलमें (इन्द्रम्, गमत्) ज्ञानयोगीको प्राप्तहोकर (ध्रुवे, सीदति) उसके दृढविश्वासी अन्तःकरणमें विराजमान होता है ।

भावार्थ—कर्मयोगिपुरुषोंको परमात्मा सदैव उत्साह देकर सत्कर्मोंमें प्रवृत्त करता है ॥२॥

नू नो रयिं महामिन्दोऽस्मभ्यं सोम विश्वतः ।
आ पवस्व सहस्रिणम् ॥३॥

नु । नः । रयिं । महां । इंदोइति । अस्मभ्यं । सोम । विश्वतः । आ । पवस्व सहस्रिणं ॥३॥

पदार्थः—(इन्दो) हे परमैश्वर्यसम्पन्न परमात्मन् ! (सोम) हे सौम्य ! (नः) अस्मभ्यम् (नु) ध्रुवम् (विश्वतः) सर्वतः (सहस्रिणम्) विविधम् (महां) महत् (रयिम्) ऐश्वर्यम् (आपवस्व) देहि ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(इन्दो) हे परमैश्वर्यसम्पन्न परमात्मन् ! (सोम) हे सौम्यस्वभाववाले (नः) हमारे लिये (नु) निश्चय करके (विश्वतः) सब ओरसे (सहस्रिणम्) अनेकप्रकारके (महि) बहुत (रयिम्) ऐश्वर्यको (आपवस्व) दीजिये ।

भावार्थ—सत्कर्मी पुरुष भी जबतक परमात्मासे अपने ऐश्वर्यकी वृद्धिकी प्रार्थना नहीं करते तबतक उनका अभ्युदय नहीं होता यद्यपि अभ्युदय पूर्वकृत शुभकर्मोंका फल है तथापि जबतक मनुष्यका अभ्युदयशालीशील नहीं बनता तबतक वह अभ्युदयको कदाचित् भी नहीं चाहता, इसलिये अभ्युदयशालीशील बनानेकेलिये अभ्युदयकी प्रार्थना अवश्य करनी चाहिये ॥३॥

विश्वा सोम पवमान द्युम्नानीन्दवा भर ।
विदाः सहस्रिणीरिषः ॥४॥

विश्वा । सोम । पवमान । द्युम्नानि । इंदोइति । आ ।
भर । विदाः । सहस्रिणीः । इषः ॥४॥

पदार्थः— (सोम, पवमान) हे जगतां पवित्रयितः परमात्मन् ! (इन्दो) हे परमैश्वर्यसम्पन्न ! भवान् (विश्वा द्युम्नानि, आभर) निखिलदिव्यरत्नं मह्यं देहि किंच (सहस्रिणीः, इषः) अनेकधा अन्नाद्यैश्वर्यान् देहि ।

पदार्थ— (सोम, पवमान) हे जगत्को पवित्र करने वाले परमात्मन् ! (इन्दो) हे परमैश्वर्यसम्पन्न ! (विश्वा, द्युम्नानि, आभर) आप मेरेलिये सम्पूर्ण दिव्यरत्नोंको दीजिये तथा (सहस्रिणीः, इषः विदाः) और अनेकप्रकारके अन्नादि ऐश्वर्योंको दीजिये ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—सबप्रकारके ऐश्वर्योंका दाता एकमात्र परमात्मा ही है इसलिये उससे ऐश्वर्योंकी प्रार्थना करनी चाहिये ॥४॥

स नः पुनान आ भर रयिं स्तोत्रे सुवीर्यम् ।
जरितुर्वर्धय गिरः ॥५॥

सः । नः । पुनानः । आ । भर । रयिं । स्तोत्रे । सुऽवीर्यं । जरितुः । वर्धय । गिरः ॥५॥

पदार्थः—(सः) हे परमात्मन्, स पूर्वोक्तो भवान् (नः, स्तोत्रे) भवतः स्तुतिकर्त्रे मह्यम् (पुनानः) पवित्रयन् (सुवीर्यम्, रयिम्) सुपराक्रमेण सहैश्वर्यम् (आभर) ददातु (जरितुः, गिरः, वर्धय) उपासकस्य मम वाक्शक्तिं च वर्द्धय ।

पदार्थ—(सः) हे परमात्मन् ! वह पूर्वोक्त आप (नः, स्तोत्रे) आपकी स्तुति करनेवाले मुझको (पुनानः) पवित्र करते हुये (सुवीर्यम्, रयिम्) सुन्दरपराक्रमके साथ ऐश्वर्यको (आभर) दीजिये (जरितुः, गिरः, वर्धय) और मुझ उपासककी वाक्शक्तिको बढ़ाइये ॥

भावार्थ—जो लोग परमात्मापरायण होकर अपनी वाक्शक्तिको बढ़ाते हैं परमात्मा उन्हे वाग्मी अर्थात् सुन्दर वक्ता बनाता है ॥५॥

पुनान इन्दवा भर सोम द्विवर्हसं रयिम् ।
वृषन्निन्दो न उक्थ्यम् ॥६॥३०॥

पुनानः । इंदोइति । आ । भर । सोम । द्विऽवर्हसं । रयिं । वृषन् । इंदोइति । नः । उक्थ्यं ॥६॥३०॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(इन्दो, सोम) हे परमैश्वर्यशालिन् परमात्मन् (पुनानः) मत्स्वभावं पवित्रयन् (द्विबर्हसम्, रयिम्, आभ द्युलोकपृथिवीद्वयस्यैश्वर्यं देहि (इन्दो) हे प्रकाशरूप, (वृषन् सर्वेष्टदस्त्वम् (नः, उकथ्यम्) मम स्तुतिमयीं वाचं च स्वीकरोतु

पदार्थ—(इन्दो, सोम) हे परमैश्वर्यशालि परमात्मन्! (पुनानः आप मेरे स्वभावको पवित्र करते हुये (द्विबर्हसम्, रयिम्, आभ द्युलोक तथा पृथिवीलोक सम्बन्धी दोनों ऐश्वर्योंको दीजिये (इन्दो हे प्रकाशरूप! (वृषन्) सब कामनाओंकी वर्षा करनेवाले आप (न उकथ्यम्) मेरी स्तुतिरूप वाणीका स्वीकार करिये ॥

भावार्थ—जो लोग परमात्माके गुणकर्मानुसार अपने स्वभाव बनाते हैं परमात्मा उन्हें ऐहिक और पारलौकिक दोनों प्रकारके सु प्रदान करता है ॥६॥

इति चत्वारिंशत्तमं सूक्तं त्रिंशो वर्गश्च समाप्तः ॥

४० वां सूक्त और ३० वां वर्ग समाप्त हुआ।

अथ षड्ऋचस्यैकचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य—

१-६ मेध्यातिथिर्ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः १, ३, ४, ५ गायत्री । २ ककुम्मती गायत्री । ६ निचृद्गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मनो रचनामहत्त्वं वर्ण्यते—

अब परमात्माकी रचनाका महत्त्व वर्णन करते हैं:—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्र ये गावो न भूर्णयस्त्वेषा अयासो अक्रमुः ।
घ्नन्तः कृष्णामप त्वचम् ॥१॥

प्र । ये । गावः । न । भूर्णयः । त्वेषाः । अयासः । अक्रमुः । घ्नंतः । कृष्णां । अप । त्वचं ॥१॥

पदार्थः—(ये, गावः, न) पृथिव्यादिलोकसदृशा ये लोकाः (भूर्णयः) शीघ्रगामिनः, (त्वेषाः) दीप्तिमन्तः, (अयासः) वेगवन्तः, (कृष्णाम्, त्वचम्) नीरन्ध्रान्धकारम् (अपघ्नन्तः, प्राक्रमुः) नाशयन्तः प्रक्राम्यन्ति ।

पदार्थ—(ये, गावः, न) पृथिव्यादिलोकोंके समान जो लोक (भूर्णयः) शीघ्रगतिशील हैं (त्वेषाः) जो दीप्तिमान और (अयासः) वेगवाले (कृष्णाम्, त्वचम्) महागूढ़ अन्धकारको (अपघ्नंतः, प्राक्रमुः) नष्ट करते हुये प्रक्रमण करते हैं ।

भावार्थ—परमात्मा सब लोकलोकान्तरोंको उत्पन्न करता है उसीकी सत्तासे सब पृथिव्यादिलोक गति कररहे है ॥१॥

सुवितस्य मनामहेऽति सेतुं दुराव्यम् ।
साह्वांसो दस्युमव्रतम् ॥२॥

सुवितस्य । मनामहे । अति । सेतुं । दुःऽआव्यं । सह्वांसः । दस्युं । अव्रतं ॥२॥

पदार्थः—(सुवितस्य, दुराव्यम्, सेतुम्) एवंविधपूर्वोक्तलोकानां जनयितारं दुःसहसंसारस्य सेतुरूपं परमात्मानम् (मना-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

महे) स्तुमः यः परमात्मा (अव्रतम्, दस्युम्, साह्वांसः) वेदधर्मविमुखान् दुराचारान् शमयितास्ति ।

पदार्थ—(सुवितस्य, दुराव्यम्, सेतुम्) ऐसे पूर्वोक्त कोंके उत्पन्न करनेवाले दुखसे प्राप्तकरनेयोग्य संसारके सेतुरूप ईश्वर (मनामहे) स्तुति करते हैं जो परमात्मा (अव्रतम्, दस्युम् साह्वांसः) वेदधर्मको नहीं पालन करनेवाले दुराचारियोंका शमन करनेवाला है ।

भावार्थ—परमात्मा इस चराचर जगत्का सेतु है, अर्थात् मर्य्यादा है, उसीकी मर्य्यादामें सूर्य्यचन्द्रादि सबलोक परिभ्रमण करते हैं । मनुष्यको चाहिये कि उस मर्य्यादापुरुषोत्तमको सदैव अपना लक्ष्य बनावें ॥

शृण्वे वृष्टेरिव स्वनः पवमानस्य शुष्मिणः ।
चरन्ति विद्युतो दिवि ॥३॥

शृण्वे । वृष्टेःऽइव । स्वनः । पवमानस्य । शुष्मिणः । चरन्ति । विऽद्युतः । दिवि ॥३॥

पदार्थः—(वृष्टेः, इव, स्वनः, शृण्वे) यस्यानुशासनं मेघवृष्टिरिव निःशङ्कम् श्रूयते तस्य (पवमानस्य, शुष्मिणः) संसारस्य पवितुः सर्वोत्कृष्टबलस्य च परमात्मनः (विद्युतः, दिवि चरन्ति) विद्युदादिशक्तयः खे भ्राम्यन्त्यो दृश्यन्ते ।

पदार्थ—(वृष्टेः, इव, स्वनः, शृण्वे) जिसका अनुशासन मेघवृष्टिके समान निस्सन्देह सुना जाता है उसी (पवमानस्य, शुष्मिणः) संसारको पवित्र करनेवाले तथा सर्वोपरि बलवाले परमात्माकी (विद्युतः, दिवि चरन्ति) विद्युदादिशक्तियें आकाशमें भ्रमणकरती हुई दिखायी देती हैं

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्माकी विद्युदादि अनेकशक्तियें हैं, इसलिये उसे अनन्तशक्तिमद्ब्रह्म कहा जाता है ॥३॥

आ पवस्व महीमिषं गोमदिन्दो हिरण्यवत् ।
अश्वावद्वाजवत्सुतः ॥४॥

आ । पवस्व । महीं । इषं । गोऽमत् । इंदोइति । हिरण्यऽवत् ।
अश्वऽवत् । वाजऽवत् । सुतः ॥४॥

पदार्थः—(इन्दो) हे परमात्मन्, (सुतः) स्वयम्भूर्भवान् (गोमत्, हिरण्यवत्, अश्वावत्, वाजवत्) गोस्वर्णाश्वबलपराक्रमादियुक्तम् (महीम्, इषम्, आपवस्व) महदैश्वर्यम् मह्यं वितर ।

पदार्थ—(इन्दो) हे परमात्मन् ! आप (सुतः) स्वयंसिद्ध हैं (गोमत्, हिरण्यवत्, अश्वावत्, वाजवत्) गौ हिरण्य अश्व बल पराक्रमादि से युक्त (महीम्, इषम्, आपवस्व) बड़ेभारी ऐश्वर्यको मेरेलिये उत्पन्न करिये ।

भावार्थ—परमात्मा अपनी स्वसत्तासे विराजमान है । अर्थात् परमात्मा सबका अधिष्ठान होकर सबवस्तुओंको प्रकाशित कररहा है और वह स्वयंप्रकाश है ॥४॥

स पवस्व विचर्षण आ मही रोदसी पृण ।
उषाः सूर्यो न रश्मिभिः ॥५॥

सः । पवस्व । विऽचर्षणे । आ । महीइति । रोदसीइति ।
पृण । उषाः । सूर्यः । न । रश्मिऽभिः ॥५॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(विचर्षण) हे सर्वद्रष्टः परमात्मन् ! (उषः सूर्यः, न, रश्मिभिः) स्वतेजोभिः उषःकालस्य प्रकाशयिता सूर्य इव (मही, रोदसी) महत्यौ द्यावापृथिव्यौ (आपृण) स्वकीयेन प्रकाश्य पूरय (पवस्व) स्वान्सत्कर्मिण उपासकांश्च पुनीहि ।

पदार्थ—(विचर्षण) हे सर्वद्रष्टा परमात्मन् ! (उषाः, सूर्यः, न रश्मिभिः) जिसप्रकार सूर्य अपनी किरणोंसे उषःकालको प्रकाशित कर देते हैं उसीप्रकार (मही, रोदसी) इस महान् पृथिवीलोक और द्युलोकको (आपृण) अपने ऐश्वर्यसे पूरित करिये । और (पवस्व) उस ऐश्वर्यसे अपने सत्कर्मी उपासकोंको पवित्र करिये ।

भावार्थ—परमात्मा ही एकमात्र पवित्रताका केन्द्र है, पवित्र चाहनेवालोंको चाहिये कि पवित्रहोनेकेलिये उसी परमात्माकी उपासना करके अपने आपको पवित्र बनायें ॥६॥

परि णः शर्मयन्त्या धारया सोम विश्वतः ।
सरा रसेव विष्टपम् ॥६॥३१॥

परि । नः । शर्मऽयन्त्या । धारया । सोम । विश्वतः । सरा रसाऽइव । विष्टपम् ॥६॥३१॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन्, (रसेव, विष्टपम्) लोकं व्यापकतयाधिष्ठित ब्रह्मेव (शर्मयन्त्या, धारया) प्रयच्छन्त्यानन्दधारया (नः, विश्वतः, परिसर) मम हृदयं सर्वतो व्याप्नुहि ।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (रसेव, विष्टपम्) जिसप्रकार रससे अर्थात् ब्रह्मसे लोक व्याप्त होरहा है उसीप्रकार

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यन्त्या, धारया) सुख देनेवाली आनन्दकी धारा सहित (नः, विश्वतः, परिसर) मेरे हृदय में आप भली प्रकार निवास कीजिये ।

भावार्थ—आनन्दका स्रोत एकमात्र परमात्माही है । इसलिये आनन्दाभिलाषीजनोंको चाहिये कि उसी आनन्दाम्बुधिका रस पान करके अपने आपको आनन्दित करैं ॥६॥

इति एकचत्वारिंशत्तमंसूक्तमेकत्रिंशो वर्गश्च समाप्तः ॥

यह ४१ वां सुक्त और ३१ वां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ षड्चस्य द्वाचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य—

१-६ मेध्यातिथिर्ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः—१, २ निचृद्गायत्री । ३, ४, ६ गायत्री । ५ ककुम्मती गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मनः सूर्यादीनां कर्तृत्वं वर्ण्यते ।

अब परमात्माको सूर्यादिकोंके कर्तारूपसे वर्णन करते हैं ।

जनयन्रोचना दिवो जनयन्नप्सु सूर्यम् ।
वसानो गा अपो हरिः ॥१॥

जनयन् । रोचना । दिवः । जनयन् । अप्ऽसु । सूर्यं ।
वसानः । गाः । अपः । हरिः ॥१॥

पदार्थः—(हरिः) किल्विषविनाशकः सपरमात्मा (दिवः, रोचना, जनयन्) आकाशे प्रकाशितानि ग्रहनक्षत्रादीनि

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जनयन् (अप्सु, सूर्यं, जनयन्) अन्तरिक्षे सूर्यं समुत्पादयन् (गाः, अपः) भूमिं द्यावं च (वसानः) आच्छादयन् सर्वत्र व्याप्तो भवति ।

पदार्थ—(हरिः) पापोंका हरनेवाला वह परमात्मा (दिवि, रोचना, जनयन्) आकाशमें प्रकाशित होनेवाले ग्रहनक्षत्रादिकोंको उत्पन्न करता हुआ और (अप्सु, सूर्यम्, जनयन्) अन्तरिक्षमें सूर्यको उत्पन्न करता हुआ (गाः, अपः) भूमि तथा द्युलोकको (वसानः) आच्छादित करता हुआ सर्वत्र व्याप्त हो रहा है ।

भावार्थ—उसी परमात्माने सूर्य्यादि सबलोकोंको उत्पन्न किया । और उसीकी सत्ता से स्थिर होकर सब लोकलोकान्तर अपनी अपनी स्थितिको लाभ कर रहेहैं ॥१॥

एष प्रत्नेन मन्मना देवो देवेभ्यस्परि ।
धारया पवते सुतः ॥२॥

एषः । प्रत्नेन । मन्मना । देवः । देवेभ्यः । परि । धारया । पवते । सुतः ॥२॥

पदार्थः—(प्रत्नेन, मन्मना) प्राक्तनया वेदमयस्तुत्या (देवः) प्रकाशमानः (एषः, सुतः) अयं स्वयंसिद्धः परमात्मा (देवेभ्यः) दिव्यगुणसम्पन्नान् विदुषः (धारया) आनन्दस्रोतसा (परि, पवते) सुष्ठु आह्लादयति ।

पदार्थ—(प्रत्नेन, मन्मना) प्राचीन वेदरूपस्तोत्रसे (देवः) प्रकाशमान (एषः, सुतः) यह स्वयंसिद्ध परमात्मा (देवेभ्यः) दिव्य

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गुणसम्पन्न विद्वानोंको (धारया) आनन्दकी धारासे (परि, पवते) भलीप्रकार आह्लादित करता है ।

भावार्थ—परमात्मा अपने वैदिकज्ञानसे सबलोगोंको ज्ञानी विज्ञानी बनाकर आनन्दित करता है ॥२॥

वावृधानाय तूर्वये पवन्ते वाजसातये ।
सोमाः सहस्रपाजसः ॥३॥

वावृधानाय । तूर्वये । पवंते । वाजऽसातये । सोमाः । सहस्रऽपाजसः ॥३॥

पदार्थः—(सहस्रपाजसः सोमाः) अनन्तशक्तिः परमात्मा (वावृधानाय) स्वाभ्युदयाभिलाषिभ्यः (तूर्वये) दक्षेभ्यः कर्मयोगिभ्यः (वाजसातये) ऐश्वर्यं प्राप्तुम् (पवन्ते) हृदये ज्ञानमुत्पाद्य तान् पवित्रयति ।

पदार्थ—(सहस्रपाजसः, सोमाः) अनन्तशक्तिसपम्पन्न परमात्मा (वावृधानाय) अपनी अभ्युन्नतिकी इच्छा करनेवाले (तूर्वये) दक्षतायुक्त कर्मयोगियोंकी (वाजसातये) ऐश्वर्यप्राप्तिकेलिये (पवन्ते) उनके हृदयोंमें ज्ञान उत्पन्न करके उनको पवित्र करता है ।

भावार्थ—इस संसारमें सर्वशक्तिमान् एकमात्र परमात्मा से सबप्रकारके अभ्युदयकी प्रार्थना करनी चाहिये । जो लोग उक्त परमात्मासे अभ्युदयकी प्रार्थना करके उद्योगी बनते हैं वे अवश्यमेव अभ्युदयको प्राप्त होते हैं ॥३॥

दुहानः प्रत्नमित्पयः पवित्रे परि षिच्यते ।
क्रन्दन्देवाँ अजीजनत् ॥ ४ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दुहानः । प्रत्नं । इत् । पयः । पवित्रे । परि । सिच्यते । क्रंदन् । देवान् । अजीजनत् ॥४॥

पदार्थः—(प्रत्नम्, इत्) प्राक्तनीषु वेदवाक्षु (पयः दुहानः) ब्रह्मानन्दं जनयन् सपरमात्मा (पवित्रे, परिषिच्यते) उपासकानां पवित्रहृदयेषु ध्यानगोचरो भवति (क्रन्दन्) शब्दायमानः सः (देवान्, अजीजनत्) अत्यर्थं दीप्यमानान् चन्द्रादीन् समुत्पादयामास ।

पदार्थ—(प्रत्नम्, इत्) प्राचीन वेदवाणियोंमें (पयः, दुहानः) ब्रह्मानन्दको उत्पन्न करता हुआ वह परमात्मा (पवित्रे, परिषिच्यते) उपासकोंके पवित्रहृदयमें ध्यानका विषय होता है (क्रन्दन्) और उसी शब्दायमान परमात्माने (देवान्, अजीजनत्) देदीप्यमान चन्द्रादिकोंको उत्पन्न किया ।

भावार्थ— परमात्माने वेदवाणीरूपी कामधेनुको ब्रह्मानन्दसे परिपूर्ण कर दिया है । जो लोग इस अमृतरसको पान करना चाहें हों, वे उक्तामृतप्रदायिनी ब्रह्मविद्यारूपी वेदवाग्धेनुको वत्सवत् उसके प्रेमपात्र बनकर इस दुग्धामृतको पान करें ॥४॥

अभि विश्वानि वार्याभि देवाँ ऋतावृधः ।
सोमः पुनानो अर्षति ॥ ५ ॥
अभि । विश्वानि । वार्या । अभि । देवान् । ऋतावृधः ।
सोमः । पुनानः । अर्षति ॥५॥

पदार्थः—(सोमः) सर्वोत्पादकः परमात्मा (ऋतावृधः देवान्) सत्यस्य वर्धयितॄन् सत्कर्मणः (अभि, पुनानः) सर्वथा

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पवित्रयन् (वार्या, विश्वानि) सम्पूर्णान् स्पृहणीयपदार्थान् (अभ्यर्षति) तान् प्रापयति ।

पदार्थ—(सोमः) सर्वोत्पादकः परमात्मा (ऋतावृधः, देवान्) सत्यको बढ़ानेवाले सत्कर्मियोंको (अभिपुनानः) सर्वथा पवित्र करके (वार्या, विश्वानि) सम्पूर्ण वाञ्छनीयपदार्थोंको (अभ्यर्षति) उनके लिये प्राप्त करता है ।

भावार्थ—यद्यपि परमात्मा दयामय और सर्वहितकारी है, तथापि उद्योगीपुरुषोंको पवित्र करता हुआ, अभ्युदयरूप फल देता है। अनुद्योगियों को नहीं ॥५॥

गोमन्नः सोम वीरवदश्वावद्वाजवत्सुतः ।
पवस्व बृहतीरिषः ॥ ६ ॥ ३२ ॥

गोऽमत् । नः । सोम । वीरऽवत् । अश्वऽवत् । वाजऽवत् । सुतः । पवस्व । बृहतीः । इषः ॥६॥३२॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन्, भवान् (गोमत्) गवाद्यैश्वर्येणयुक्तः, (वीरवत्) वीरैः सहितः, (अश्वावत्, वाजवत्) अश्वादिभिः अन्नादिभिश्च युक्तोऽस्ति त्वम् (बृहतीः, इषः) स्वोपासकेभ्यो महत् धनम् (पवस्व) देहि ।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! आप (गोमत्) गवादि ऐश्वर्योंसे युक्त तथा (वीरवत्) वीरयुक्त (अश्वावत्, वाजवत्) अश्वादियुक्त और अन्नादि ऐश्वर्ययुक्त हैं (बृहतीः, इषः, पवस्व) आप अपने उपासकोंको महान् ऐश्वर्य दीजिये ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थः--परमात्मा ही वीरधर्मका दाता है । उसकी कृपा वीरपुरुष उत्पन्न होकर दुष्टोंका दलन, और श्रेष्ठोंका परिपालन करते हैं ॥६॥३३॥

इति द्व्याचत्वारिंशत्तमं सूक्तं, द्वात्रिंशो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ४२वां सूक्त और ३२वां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ षड्ऋचस्य त्रिचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य-

१-६ मेध्यातिथिर्ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः १, २, ४, ५ गायत्री । ३, ६ निचृद्गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मनो दातृत्वं वर्ण्यते--

अब परमात्माका दातृत्व वर्णन करते हैं—

यो अत्य इव मृज्यते गोभिर्मदाय हर्यतः ।
तं गीर्भिर्वासयामसि ॥ १ ॥

यः । अत्यःऽइव । मृज्यते । गोभिः । मदाय । हर्यतः ।
तं । गीःऽभिः । वासयामसि ॥ १ ॥

पदार्थः—(हर्यतः यः) अतिक्रमनीयो यः परमात्मा (अत्यः, इव) विद्युदिव दुर्ग्राह्यः (गोभिः, मदाय, मृज्यते) यश्च ब्रह्मानन्दप्राप्तय इन्द्रियैः साक्षात्क्रियते (तम्) तं परमात्मानम् (गीर्भिः) स्तुतिभिः (वासयामसि) हृदयाधिष्ठितं कुर्मः ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(हर्यतः, यः) सर्वोपरि कमनीय जो परमात्मा (अत्यः, इव) विद्युत्के समान दुर्ग्राह्य है (गोभिः मदाय, मृज्यते) और जो परमात्मा ब्रह्मानन्दप्राप्तिके लिये इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष किया जाता है (तम्) उस परमात्माको (गीर्भिः) अपनी स्तुतियों द्वारा (वासयामसि) हृदयाधिष्ठित करते हैं ।

भावार्थ—जो लोग परमात्माकी प्रार्थना, उपासना, और स्तुति करते हैं वे अवश्यमेव परमात्माके स्वरूपको अनुभव करते हैं ॥१॥

तं नो विश्वा अवस्युवो गिरः शुम्भन्ति पूर्वथा ।
इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥ २ ॥

तं । नः । विश्वाः । अवस्युवः । गिरः । शुंभंति । पूर्वऽथा ।
इंदुं । इंन्द्राय । पीतये ॥२॥

पदार्थः—(तम्, इन्दुम्) तं प्रकाशमानं परमात्मानम् (अवस्युवः, नः, विश्वाः, गिरः) रक्षेच्छवोऽस्माकं सर्वा गिरः (इन्द्राय, पीतये) जीवात्मनः तृप्तये (पूर्वथा) प्राग्वत् (शुम्भन्ति) स्तुतिभिर्विराजयन्ति ।

पदार्थ—(तम्, इन्दुम्) उस प्रकाशमान परमात्माको (अवस्युवः, नः, विश्वाः, गिरः) रक्षा को चाहनेवाली मेरी सम्पूर्ण वाणियें (इन्द्राय, पीतये) जीवात्मा की तृप्तिकेलिये (पूर्वथा) पहलेकी तरह (शुम्भन्ति) स्तुतियोंसे विराजमान करती हैं ।

भावार्थ— वही परमात्मा मनुष्यकी पूर्णतृप्तिकेलिये, पर्याप्त होता है । अन्य शब्दस्पर्शादिविषय इसको कदाचित् भी तृप्त नहीं कर सकते ॥ २ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पुनानो याति हर्यतः सोमो गीर्भिः परिष्कृतः।
विप्रस्य मेध्यातिथेः ॥ ३ ॥

पुनानः। याति। हर्यतः। सोमः। गीःऽभिः। परिऽकृतः।
विप्रस्य। मेध्यऽअतिथेः ॥३॥

पदार्थः—(गीर्भिः, परिष्कृतः) वेदवाग्भिः स्तुतः (हर्यतः, सोमः) दर्शनीयः परमात्मा (पुनानः) पवित्रयन् (मेध्यातिथेः, विप्रस्य) ज्ञानयोगिनो विदुषो हृदये (याति) निवसति।

पदार्थ—(गीर्भिः, परिष्कृतः) वेदवाणियोंसे स्तुति किया गया (हर्यतः, सोमः) दर्शनीय परमात्मा (पुनानः) पवित्र करता हुआ (मेध्यातिथेः, विप्रस्य) ज्ञानयोगी विद्वान्के हृदयमें (याति) निवास करता है।

भावार्थ—जो लोग ज्ञानयोगी बनकर ज्ञानप्रदीपसे अपना हृदयमन्दिरको प्रदीप्त करते हैं उनके हृदयरूपी मन्दिर में परमात्मा पूर्णतया अवभास होता है ॥३॥

पवमान विदा रयिमस्मभ्यं सोम सुश्रियम्।
इन्दो सहस्ववर्चसम् ॥ ४ ॥

पवमान। विदाः। रयिं। अस्मभ्यं। सोम। सुऽश्रियं।
इंदोइति। सहस्ऽवर्चसं ॥४॥

पदार्थः—(पवमान) हे सर्वस्य पवितः! (इन्दो) प्रकाशमान (सोम) सौम्य, परमात्मन्, त्वम् (अस्मभ्यं

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(सहस्रवर्चसम्) विविधदीप्तिमन्तम्, (सुश्रियम) सुशोभम् (रयिम्) विभवम् (विदाः) प्रापय ।

पदार्थ— (पवमान) हे सर्वपावकपरमात्मन् ! (इन्दो) हे प्रकाशमान ! (सोम) हे सौम्यस्वभाववाले ! (अस्मभ्यम्) आप मेरे लिये (सहस्रवर्चसम्) अनेकप्रकारकी दीप्तिवाले (सुश्रियम्) सुन्दरशोभासे युक्त (रयिम्) ऐश्वर्य को (विदाः) प्राप्त कराइये ।

भावार्थ— वही परमात्मा अनन्त प्रकारके अभ्युदयोंका दाता है । अर्थात् ब्रह्मवर्चसादि सब तेज उसीकी सत्तासे उपलब्ध होते हैं ॥४॥

इन्दुरत्यो न वाजसृत्कनिक्रंति पवित्र आ ।
यदक्षारति देवयुः ॥५॥

इंदुः । अत्यः । न । वाजऽसृत् । कनिक्रंति । पवित्रे । आ । यत् । अक्षाः । अति । देवऽयुः ॥५॥

पदार्थः—(इन्दुः) स प्रकाशमानः परमात्मा (अत्यः, न, वाजसृत्) विद्युदिव स्वशक्तिभिर्व्याप्नुवन् (कनिक्रंति) शब्दायते (यत्) यः परमात्मा (देवयुः) दिव्यगुणयुक्तान् विदुषः अत्यर्थं स्पृहयन् (पवित्रे, आ) तदीयपवित्रहृदयेषु सुष्ठु (अति, अक्षाः) ब्रह्मानन्दं वर्षति ।

पदार्थ— (इन्दुः) वह प्रकाशमान परमात्मा (अत्यः न वाजसृत्) विद्युत्के सदृश अपनी शक्तियोंसे व्याप्त होता हुआ (कनिक्रंति) शब्दायमान हो रहा है (यत्) जो परमात्मा (देवयुः) दिव्यगुण-सम्पन्न विद्वानोंको चाहता हुआ (पवित्रे, आ) उनके पवित्र हृदयोंमें भलीप्रकार (अति, अक्षाः) ब्रह्मानन्दका अत्यन्त क्षरण करता है ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—दैवी सम्पत्तिवाले पुरुषोंके हृदयमें परमात्माकी ज्योति सदैव देदीप्यमान रहती है। मलिनान्तःकरण, आसुरी सम्पत्तिवालोंका हृदय उस दैवी दिव्यज्योतिसे सर्वथैव वञ्चित रहते हैं ॥५॥

पवस्व वाजसातये विप्रस्य गृणतो वृधे ।
सोम रास्वं सुवीर्यम् ॥ ६ । ३३ । ८ । ६ ॥

पवस्व । वाजऽसातये । विप्रस्य । गृणतः । वृधे । सोम । रास्व । सुऽवीर्यं ॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन्, (वाजसातये) अन्नैश्वर्यलाभाय (वृधे) अभ्युदयाय च (गृणतः, विप्रस्य, पवस्व) भवन्तं स्तुवतः कर्मयोगिनो विदुषः पवित्रयित्वा योग्यान् विधाय (सुवीर्यं, रास्व) तेभ्यः शत्रुभ्योऽलं पराक्रमं देहि ।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (वाजसातये) अन्नादि ऐश्वर्यकी प्राप्तिके लिये और (वृधे) अभ्युन्नतिके लिये (गृणतः, विप्रस्य, पवस्व) आपकी स्तुति करनेवाले जो कर्मयोगी विद्वान् हैं उनको पवित्र करके योग्य बनाइये और (सुवीर्यं, रास्व) उनके शत्रुओंको दमन करनेके लिये पर्याप्त पराक्रमको दीजिये ॥

भावार्थ—कर्मयोगी पुरुष जो अपने उद्योगसे सदैव अभ्युदयाभिलाषी रहते हैं, उनको परमात्मा अनन्तप्रकारके ऐश्वर्यप्रदान करता है ।

इति श्रीमदार्यमुनिनोपनिबद्धे ऋक्संहिताभाष्ये
षष्ठाष्टकेऽष्टमोध्यायः
समाप्तः ।
समाप्तं चेदं षष्ठाष्टकम् ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ चतुश्चत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य—

१-६ अयास्य ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः-१ निचृद्गायत्री । २-६ गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मनः, मेधाविबुद्धिविषयत्वं वर्ण्यते ।

अब परमात्मा मेधावी लोगोंकी बुद्धिका विषय है, यह वर्णन करतेहैं ।

प्र णं इन्दो महे तनं ऊर्मिं न विभ्रदर्षसि ।
अभि देवाँ अयास्यः ॥१॥

प्र । नः । इंदो इति । महे । तने । ऊर्मिं । न । विभ्रत् । अर्षसि । अभि । देवान् । अयास्यः ॥१॥

पदार्थः—(इन्दो) हे परमात्मन्, (ऊर्मिम्, विभ्रत्) भवान् आनन्दतरङ्गान् धारयन् (महे, तने) महत ऐश्वर्याय (नः, न, प्रार्षसि) अस्मान् द्रुतं प्राप्नोति (अभिदेवान्) कर्मयोगिनः (अयास्यः) विना प्रयत्नं संगच्छति ।

पदार्थ—(इन्दो) हे परमात्मन् ! (ऊर्मिम्, विभ्रत्) आप आनन्दकी तरङ्गोंको धारण करते हुए (महे, तने) बड़े ऐश्वर्यके लिये (नः, न, प्रार्षसि) हमको शीघ्रही प्राप्त होते हैं और (अभिदेवान्) कर्मयोगियोंको (अयास्यः) विना प्रयत्न प्राप्त होते हैं ।

भावार्थ—जो पुरुष अनुष्ठानशील नहीं अर्थात् उद्योगी बनकर कर्म्मयोगमें तत्पर नहीं है वह पुरुष कदाचित् भी परमात्माको नहीं प्राप्तकता इस लिये उद्योगी बनकर कर्म्ममें तत्पर होना प्रत्येक मनुष्यका कर्त्तव्य होना चाहिये ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मती जुष्टो धिया हितः सोमो हिन्वे परावति।
विप्रस्य धारया कविः ॥२॥

मती। जुष्टः। धिया। हितः। सोमः। हिन्वे। परावति।
विप्रस्य। धारया। कविः ॥२॥

पदार्थः—(कविः, सोमः) वेदरूपकाव्यानां प्रणयिता [illegible] परमात्मा (परावति) स्वल्पप्रयत्नेन ध्यानाविषयीभूतः (मती, जुष्टः) स्तुतिभिः प्रसीदन् (विप्रस्य, धिया, हितः) ज्ञानयोगिबुद्ध्या [illegible] क्षात्कृतः (धारया, हिन्वे) स्वब्रह्मानन्दस्रोतसा प्रीणयति।

पदार्थ—(कविः, सोमः) वेदरूप काव्योंका निर्माता वह [illegible] मात्मा (परावति) अल्पप्रयत्नसे ध्यानविषयी न होनेके कारण दूर [illegible] (मती, जुष्टः) स्तुतियों द्वारा प्रसन्न होता हुआ (विप्रस्य, धिया, हितः) ज्ञान योगियोंकी बुद्धिसे साक्षात्कार किया गया (धारया, हिन्वे) आत्म ब्रह्मानन्दकी धारासे तृप्त करता है।

भावार्थ—वेद यद्यपि परमात्माका ज्ञान है तथापि उस ज्ञानका आविर्भाव परमात्मा करता है। इसी अभिप्रायसे उसे वेदोंका निर्माता वा कर्त्ता कथन किया है वास्तवमें वेद नित्य है॥

अयं देवेषु जागृविः सुत एति पवित्र आ।
सोमो याति विचर्षणिः ॥३॥

अयं। देवेषु। जागृविः। सुतः। एति। पवित्रे। आ।
सोमः। याति। विऽचर्षणिः ॥३॥

पदार्थः—(जागृविः, सुतः, अयम्, सोमः) स्वयम्भू [illegible]

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गरूकोऽयं परमात्मा (विचर्षणिः) सर्वं पश्यन् (आ, याति) सर्वत्र व्याप्तो भवति (देवेषु) विदुषाम् (पवित्रे) पवित्र-हृदये (एति) आविर्भवति ।

पदार्थ—(जागृविः, सुतः, अयम्, सोमः) स्वयंसिद्ध जागरूक यह परमात्मा (विचर्षणिः) सबको देखता हुआ (आ, याति,) सर्वत्र व्याप्त है। और (देवेषु) विद्वानोंके (पवित्रे) हृदय में (एति) आविर्भूत होता है ।

भावार्थ—अन्य लोगोंकी जागृति नैमित्तिकी होती है अर्थात् स्वतः-सिद्ध नहीं होती । एकमात्र परमात्माकी जागृति ही स्वतःसिद्ध है अर्थात् परमात्मा ही ज्ञानस्वरूप है, अन्य सब जीव पराधीनज्ञानवाले हैं ।

स नः पवस्व वाजयुश्चक्राणश्चारुमध्वरम् ।
बर्हिष्माँ आ विवासति ॥४॥

सः । नः । पवस्व । वाजऽयुः । चक्राणः । चारुं । अध्वरं । बर्हिष्मान् । आ । विवासति ॥४॥

पदार्थः—यः परमात्मा (बर्हिष्मान्, आ, विवासति) व्यापकतारूपेण सर्वान् लोकान् आच्छादयति (सः) स (अध्वरम्, चारुम्, चक्राणः) अस्माकं यज्ञं शोभमानं कुर्वाणः (नः पवस्व) अस्मान् पुनातु ।

पदार्थ—जो परमात्मा (बर्हिष्मान्, आ, विवासति) व्यापकता-रूपसे सबलोकोंको आच्छादन कर रहा है (सः) वह परमात्मा (अध्वरं, चारुं, चक्राणः) हमारे यज्ञको शोभायमान करता हुआ (नः, पवस्व) हमको पवित्र करे ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा अपनी व्यापकसत्तासे सब लोकलोकान्तरों को एकदेशी बनाकर व्यापकरूपसे स्थिर है उक्त यज्ञमें उसकी प्रकाशक भावसे प्रकाशित होनेकी प्रार्थना की गई है।

स नो भगाय वायवे विप्रवीरः सदावृधः।
सोमो देवेष्वा यमत् ॥५॥

स। नः। भगाय। वायवे। विप्रऽवीरः। सदाऽवृधः। सोमः। देवेषु। आ। यमत् ॥५॥

पदार्थः—(सदावृधः) यः सर्वदैव सर्वोत्कृष्टः (विप्रवीरः) यश्च मेधाविपुरुषान् शक्तिमतः कर्तुं प्रेरयति (सः, सोमः) स परमात्मा (नः, भगाय, वायवे) अस्माकं वृद्धिं गच्छतां ऐश्वर्याय (देवेषु, आयमत्) ज्ञानक्रियाकुशलेषु विद्वत्सु शक्तिं वर्धयतु

पदार्थ—(सदावृधः) जो सदैव सर्वोपरि रहता है और (विप्रवीरः) 'वीरयति यद्वा विशेषेण-इर्ते-ईरयति वा इतिवीरः" जो मेधावी पुरुषोंको वीर अर्थात् शक्ति प्रदान करके प्रेरणा करता है (सः, सोमः) वह परमात्मा (नः भगाय, वायवे) हमारे व्याप्तिशील ऐश्वर्यके लिये (देवेषु, आयमत्) ज्ञानक्रियाकुशल विद्वानोंकी शक्तियोंको बढ़ावे।

भावार्थ—कर्म्मयोगी तथा ज्ञानयोगी पुरुषोंकी शक्तियोंके बढ़ाने के लिये परमात्मा सदैव उद्यत रहता है।

स नो अद्य वसुत्तये क्रतुविद्गातुवित्तमः।
वाजं जेषि श्रवो बृहत् ॥६॥१॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सः। नः। अद्य। वसुत्तये। क्रतुऽवित्। गातुवित्ऽतमः। वाजं। जेषि। श्रवः। बृहत् ॥६॥१॥

पदार्थः—(क्रतुवित्) सर्वकर्मज्ञः, (गातुवित्तमः) कवीनामुत्तमः कविः (सः) स भवान् (वसुत्तये) रत्नाद्यैश्वर्यप्राप्तये (नः) अस्माकम् (बृहत्, वाजम्, श्रवः) महत् बलं कीर्तिञ्च (अद्य) सपदि (जेषि) वर्द्धयतु।

पदार्थ—(क्रतुवित्) सबके कर्मोंको जाननेवाले और (गातुवित्तमः) कवियोंमें उत्तम कवि (सः) वह आप (वसुत्तये) रत्नादि ऐश्वर्योंकी प्राप्तिके लिये (नः) हमारे (बृहत्, वाजम्, श्रवः) बड़े बल तथा कीर्त्तिको (अद्य) तत्काल ही (जेषि) बढ़ाइये।

भावार्थ—कवि शब्दके अर्थ यहां सर्वज्ञके हैं। ज्ञानी विज्ञानी सबमें से एकमात्र परमात्मा ही सर्वोपरि कवि सर्वत्र है अन्य कोई नहीं।

इति चतुश्चत्वारिंशत्तमं सूक्तं प्रथमोवर्गश्च समाप्तः।

यह ४४वां सूक्त और १ला वर्ग समाप्त हुआ।

अथ षड्चस्य पञ्चचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य—

१-६ अयास्य ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता॥ छन्दः-१, ३-५ गायत्री। २ विराड्गायत्री। ६ निचृद्गायत्री॥ षड्जः स्वरः॥

अथ परमात्मा न्यायकारी इति वर्ण्यते।

अब परमात्मा न्याय करता है यह वर्णन करते हैं।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स पवस्व मदाय कं नृचक्षा देववीतये।
इन्दविन्द्राय पीतये ॥१॥

सः। पवस्व। मदाय। कं। नृऽचक्षाः। देवऽवीतये। इति। इंद्राय। पीतये ॥१॥

पदार्थः—(इन्दो) प्रकाशमान, परमात्मन्! (सः) भवान् (नृचक्षाः) सर्वमनुष्यसाक्षी (मदाय) आनन्दाय (देववीतये) यज्ञाय (इन्द्राय, पीतये) जीवात्मनस्तृप्तये च (कम् पवस्व) सुखं वितरतु।

पदार्थ—(सः) पूर्वोक्तगुणसम्पन्न (इन्दो) प्रकाशमान! आप (नृचक्षाः) सब मनुष्योंके द्रष्टा हैं (मदाय) आह्लादके लिये और (देववीतये) यज्ञके लिये तथा (इन्द्राय, पीतये) जीवात्माकी तृप्तिके लिये (कम्, पवस्व) आप सुखप्रदान करिये।

भावार्थ—जीवात्माके हृदय मन्दिरको एकमात्र परमात्मा ही प्रकाशित करता है अन्य कोई भी जीवको सत्यज्ञानके प्रकाशका दाता नहीं

स नो अर्षाभि दूत्यं १ त्वमिन्द्राय तोशसे।
देवान्त्सखिभ्य आ वरम् ॥२॥

सः। नः। अर्ष। अभि। दूत्यं। त्वं। इंद्राय। तोशसे। देवान्। सखिऽभ्यः। आ। वरं ॥२॥

पदार्थः—हे परमात्मन्, (सः) स त्वम् (नः, दूत्यं अभ्यर्ष) अस्मभ्यं कर्मयोगं प्रदेहि (त्वम्, इन्द्राय, तोशसे)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यतस्त्वं परमैश्वर्यसंप्राप्तये स्तूयसे अथ च (देवान्, सखिभ्यः) सत्कर्मिभ्यो विद्वद्भ्यः (आवरम्) सुष्ठु तन्मनोऽभीष्टं देहि ।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (सः) वह आप (नः इत्यम्, अभ्यर्ष) हमारे लिये कर्मयोग प्रदान करिये (त्वम्, इन्द्राय, तोशसे) क्योंकि आप परमैश्वर्यसम्पन्न होनेके लिये स्तुति किये जाते हैं (देवान्, सखिभ्यः) और सत्कर्मी विद्वानों के लिये (आवरम्) भली प्रकार उनके अभीष्ट-को दीजिये ।

भावार्थ—परमात्मा सदाचारियोंको सुख और दुष्कर्मियोंको दुःख देता है । परमात्माके राज्यमें किसीके साथभी अन्याय नहीं होता। इस बातको ध्यानमें रखकर मनुष्यको सदैव सदाचारी बनने का यत्न करना चाहिये ॥२॥

उत त्वामरुणं वयं गोभिरञ्ज्मो मदाय कम् ।
वि नो राये दुरो वृधि ॥३॥

उत । त्वां । अरुणं । वयं । गोभिः । अञ्ज्मः । मदाय । कं । वि । नः । राये । दुरः । वृधि ॥३॥

पदार्थः—हे परमात्मन्, (अरुणम्, उत, त्वाम्) गति-शीलं भवन्तम् (मदाय) आह्लादलाभाय (गोभिः, अञ्ज्मः) इन्द्रियैः प्रत्यक्षीकुर्मः (नः, रायं) भवान् अस्माकं विभवाय (दुरः, विवृधि) कल्मषं विनाशयतु (कम्) सुखं च ददातु ।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (अरुणम्, उत, त्वाम्) गतिशील आपको (मदाय) आह्लादप्राप्तिके लिये (गोभिः, अञ्ज्मः) इन्द्रियों द्वारा ज्ञानका विषय करते हैं (नः, राये) आप हमारे ऐश्वर्यके लिये (दुरः, विवृधि) पापोंको नष्ट करिये तथा (कम्) सुखप्रदान करिये ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—जो लोग अपनी इन्द्रियोंका संयम करते हैं वे उस परमात्माके शुद्धस्वरूपको अनुभव कर सकते हैं अन्य नहीं ॥३॥

अत्यूं पवित्रमक्रमीद्वाजी धुरं न यामनि ।
इन्दुर्देवेषु पत्यते ॥४॥

अति । ऊं इति । पवित्रं । अक्रमीत् । वाजी । धुरं । न । यामनि । इंदुः । देवेषु । पत्यते ।

पदार्थः—(वाजी, इन्दुः) उत्तमबलः स परमात्मा (धुरम्, अत्यक्रमीत्) सम्पूर्णब्रह्माण्डस्य भारं सोढुं समर्थः (न, यामनि) ध्यानेन द्रुतम् (देवेषु, पवित्रम्, पत्यते) हि ज्ञानिनां हृदयानि अधितिष्ठति ।

पदार्थ—(वाजी, इन्दुः) उत्तमबलवाला वह परमात्मा (धुरम् अत्यक्रमीत्) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डके भारके सहनेमें समर्थ है और (यामनि, न) ध्यान करनेसे शीघ्र ही (देवेषु, पवित्रम्, पत्यते) विज्ञानियों के हृदयमें अधिष्ठित होता है ।

भावार्थ—यद्यपि प्रकृति, जीव यह दोनों पदार्थ भी अपनी सत्ता से विद्यमान हैं तथापि अधिकरण अर्थात् सब का आधार बन कर एक मात्र परमात्मा ही स्थिर है । इसलिये उसको (धुर) रूप अर्थात् सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के आधाररूपसे कथन किया गया है ॥४॥

समी सखायो अस्वरन्वने क्रीळन्तमत्यविम् ।
इन्दुं नावा अनूषत ॥५॥

सं । ईमिति । सखायः । अस्वरन् । वने । क्रीळंतं । अतिऽअविं । इंदुं । नावाः । अनूषत ॥५॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(अत्यविम्) सर्वस्यातिरक्षकम् (वने, क्रीडन्तम्) अखिलब्रह्माण्डरूपे वने क्रीडन्तम् (इम्, इन्दुम्) अमुं परमात्मानम् (सखायः) तदीयप्रियस्तोतारः (अस्वरन्) शब्दायमाना अभवन् भूत्वा च (नावाः, समनूषत) तद्रचितवेदवाग्भिः उपतस्थिरे ।

पदार्थ—(अत्यविम्) अतिशय सबकी रक्षा करनेवाले (वने, क्रीडन्तम्) अखिलब्रह्माण्डरूप वनमें क्रीडा करते हुए (ईम्, इन्दुम्) इस परमात्मा की (सखायः) उसके प्रिय स्तोता लोग (अस्वरन्) शब्दायमान होते हुए (नावाः, समनूषत) उसकी रचित वेदवाणियोंसे स्तुति करते हैं ।

भावार्थ—परमात्माके ज्ञानका साधन मनुष्यके पास एकमात्र उसका स्तोत्र वेद ही है अन्य कोई ग्रन्थ उसके पूर्णज्ञानका साधन नहीं ।

तया पवस्व धारया यया पीतो विचक्षसे ।
इन्दो स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥६॥२॥

तया । पवस्व । धारया । यया । पीतः । विऽचक्षसे ।
इंदोइति । स्तोत्रे । सुऽवीर्यं ॥६॥२॥

पदार्थः—(इन्दो) हे परमात्मन् (यया, पीतः) यया ज्ञानधारया सेवितो भवान् (विचक्षसे, स्तोत्रे) स्वस्मै विदुषे स्तुतिकर्त्रे (सुवीर्यम्) सुन्दरकर्मशालिशक्तिं ददाति (तया, धारया, पवस्व) तयैवानन्दोत्पादिकया ज्ञानधारया अस्मान् पवित्रय ।

पदार्थ—(इन्दो) हे परमात्मन् ! (यया, पीतः) जिस ज्ञान की धारासे सेवन किये गये आप (विचक्षसे, स्तोत्रे) अपने विद्वान्

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्तोताके लिये (सुवीर्यम्) सुन्दर ज्ञानकर्मशालिनी शक्तिको देते (तया, धारया, पवस्व) उसी आनन्दोत्पादक ज्ञानकी धारासे मुझे पवित्र करिये।

भावार्थ—परमात्मा अपनी ज्ञानरूप धारासे सबके करणोंको सिञ्चित करता है। तात्पर्य्य यह है कि उसका ज्ञानरूप प्रत्येक पुरुषके हृदयमें पड़ता है। परन्तु सुपात्र पुरुष ही पात्र बन उसका ग्रहण कर सकते हैं अन्य नहीं ॥६॥

इति पञ्चचत्वारिंशत्तमं सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः।

यह ४५ वां सूक्त और २ सरा वर्ग समाप्त हुआ।

अथ षड्ऋचस्य षट्चत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य-

१-६ अयास्य ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता। छन्दः ककुम्मती गायत्री। २, ४, ६ निचृद्गायत्री। ३, ५ गायत्री॥ षड्जः स्वरः॥

अथ पदार्थविद्याविदां विदुषां गुणा उपदिश्यन्ते-

अब पदार्थविद्याके जाननेवाले विद्वानोंके गुणोंका उपदेश करते हैं।

असृग्रन्देववीतयेऽत्यासः कृत्व्या इव।
क्षरन्तः पर्वतावृधः ॥१॥

असृग्रन्। देवऽवीतये। अत्यासः। कृत्व्याःऽइव। क्षरंतः पर्वतऽवृधः।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—तेन परमात्मना (पर्वतावृधः) ज्ञानेन कर्मणा च वृद्धाः, (क्षरन्तः) उपदेशं ददानाः (कृत्व्याः, इव) कर्मयोगिनः इव (अत्यासः) सर्वस्मिन् कर्मणि व्यापका विद्वांसः (देववीतये) देवानां तर्पकाय यज्ञाय (असृग्रन्) सृज्यन्ते ।

पदार्थ—उस परमात्मा द्वारा (पर्वतावृधः) ज्ञान और कर्मसे बढ़े हुए (क्षरन्तः) उपदेशको देनेवाले (कृत्व्याः, इव) कर्मयोगियोंके समान (अत्यासः) सर्वकर्मोंमें व्यापक विद्वान् (देववीतये) देवोंके तृप्तिकारक यज्ञके लिये (असृग्रन्) पैदा किये जाते हैं ।

भावार्थ—परमात्मा ज्ञानरूपयज्ञके लिये ज्ञानीविज्ञानी पुरुषोंको उत्पन्न करता है। इसलिये सब मनुष्योंको चाहिये कि वे कर्मयोगी तथा ज्ञानयोगी विद्वानोंको बुलाकर अपने यज्ञादि कर्मोंका आरम्भ किया करें।

परिष्कृतास इन्दवो योषेव पित्र्यावती ।
वायुं सोमा असृक्षत ॥२॥

परिऽकृतासः । इंदवः । योषाऽइव । पित्र्यऽवती । वायुं । सोमाः । असृक्षत ॥२॥

पदार्थः—(पित्र्यावती, योषेव) पितृमती कन्यकेव (परिष्कृतासः) ब्रह्मविद्ययालङ्कृताः, (इन्दवः) परमैश्वर्यसम्पन्नाः (सोमाः) ते विद्वांसः (वायुम्) सूक्ष्मभावमापन्नान् पदार्थान् (असृक्षत) साधयन्ति ।

पदार्थ—(पित्र्यावती, योषेव) पितावाली कन्याके समान (परिष्कृतासः) ब्रह्मविद्यासे अलङ्कृत होनेसे (इन्दवः) परम ऐश्वर्य-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सम्पन्न होकर (सोमाः) वे विद्वान् लोग (वायुम्) सूक्ष्मभावको प्राप्त हुए पदार्थोंको (असृक्षत) सिद्ध करते हैं ।

भावार्थ—कर्म्मयोगी पुरुष उक्त पदार्थोंमेंसे अतिसूक्ष्मभाव [illegible] कालकर प्रजाओंमें प्रचार करते हैं । इसलिये प्रत्येक पुरुषको चाहिये कि वह कर्म्मयोगी विद्वानोंका सत्कार करें । ताकि विज्ञानकी वृद्धि होकर प्रजाओंमें सुखका सञ्चार हो ॥२॥

एते सोमास इन्दवः प्रयस्वन्तश्चमू सुताः ।
इन्द्रं वर्धन्ति कर्मभिः ॥३॥

एते । सोमासः । इंदवः । प्रयस्वंतः । चमू इति । सुताः ।
इंद्रं । वर्धंति । कर्मंऽभिः ॥३॥

पदार्थः—(सुताः, एते, इन्दवः, सोमासः) इमे उत्पादिताः परमैश्वर्यशालिनो विद्वांसः (चमू, प्रयस्वन्तः) सेनासु प्रयत्नमानाः (कर्मभिः) विविधाभिः क्रियाभिः (इन्द्रम्) स्वामिनम् (वर्धयन्ति) जयेन समृद्धं कुर्वन्ति ।

पदार्थ—(सुताः, एते, इन्दवः, सोमासः) ये उत्पन्न किये हुए परमैश्वर्यशाली विद्वान् लोग (चमू, प्रयस्वन्तः) सेनाओंमें प्रयत्न करते हुए (कर्मभिः) अनेक प्रकारकी क्रियाओंसे (इन्द्रम्) अपने स्वामीको (वर्धन्ति) जययुक्त करके समृद्ध बनाते हैं ।

भावार्थ—कर्म्मयोगियोंके प्रभावसे ही सैनिक बलकी वृद्धि होती है । और कर्म्मयोगियोंके प्रभावसे ही सम्राट् सम्पूर्ण देशदेशान्तरोंमें शासन करता है इसलिये परमात्माने इन मन्त्रोंमें कर्म्मयोगियोंके सत्कार का वर्णन किया है ॥३॥

CC-0. Kanhi Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आ धावता सुहस्त्यः शुक्रा गृभ्णीत मन्थिना ।
गोभिः श्रीणीत मत्सरम् ॥ ४ ॥

आ । धावत । सुऽहस्त्यः । शुक्रा । गृभ्णीत । मंथिना ।
गोभिः । श्रीणीत । मत्सरं ॥४॥

पदार्थः—(सुहस्त्यः) हे कर्मकुशलहस्ता विद्वांसः ! यूयम् (आ, धावत) ज्ञाने सन्नद्धा भवत (मन्थिना) यन्त्रैः (शुक्रा, गृभ्णति) बलवतः पदार्थान् साधयत (गोभिः) रश्मिमद्भिर्विद्युदादिपदार्थैः (मत्सरम्) आह्लादकारकान् पदार्थान् (श्रीणीत) सुदृढान् कृत्वा प्रकाशयत ।

पदार्थ—(सुहस्त्यः) हे क्रियाकुशलहस्तोंवाले विद्वानों ! आप (आ, धावत) ज्ञानकी ओर लगकर (मन्थिना) यन्त्र द्वारा (शुक्रा, गृभ्णीत) बलवाले पदार्थोंको सिद्ध कीजिये (गोभिः) और रश्मियुक्त विद्युदादिपदार्थों द्वारा (मत्सरम्) आह्लादकारक पदार्थोंको (श्रीणीत) सुदृढ करके प्रकाशित कीजिये ।

भावार्थ—मनुष्योंको चाहिये कि वे कर्म्मयोगियोंसे प्रार्थना करके अपने देशके क्रिया कौशलकी वृद्धि करें ॥४॥

स पवस्व धनञ्जय प्रयन्ता राधसो महः ।
अस्मभ्यं सोम गातुवित् ॥ ५ ॥

सः । पवस्व । धनंऽजय । प्रऽयंता । राधसः । महः । अस्मभ्यं ।
सोम । गातुऽवित् ॥५॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(धनञ्जय) हे स्वोपासकधनानां वर्धयितः (गातुवित्) हे उपदेशकेषूत्तम ! (सः) एवम्भूतानां विदुषामुत्पादको भवान् (महः, राधसः) महत ऐश्वर्यस्य (प्रयन्ता) प्रदातास्ति । (सोम) हे परमात्मन् ! (अस्मभ्यम्) अस्मभ्यम् (पवस्व) सर्वमभीष्टं देहि ।

पदार्थ—(धनञ्जय) हे अपने उपासकोंके धनको बढ़ानेवाले (गातुवित्) हे उपदेशकोंमें श्रेष्ठ ! (सः) ऐसे ऐसे विद्वानोंके उत्पादक आप (महः, राधसः) बड़े भारी ऐश्वर्यके (प्रयन्ता) प्रदाता (सोम) हे परमात्मन् ! (अस्मभ्यम्) आप हमारे लिये (पवस्व) सब अभीष्टका प्रदान कीजिये ।

भावार्थ—परमात्माकी कृपासे सदुपदेशक उत्पन्न होकर देश सदुपदेश देकर देशका कल्याण करते हैं ॥५॥

एतं मृजन्ति मर्ज्यं पवमानं दश क्षिपः ।
इन्द्राय मत्सरं मदम् ॥ ६ ॥ ३ ॥

एतं । मृजंति । मर्ज्यं । पवमानं । दश । क्षिपः । इंद्राय । मत्सरं । मदं ॥६॥

पदार्थः—(पवमानम्) सर्वपवित्रकर्तारं (मर्ज्यम् एतम्) संसेवनीयमिमं परमात्मानम् (दश, क्षिपः, मृजन्ति) दश इमानि इन्द्रियाणि ज्ञानविषयं कुर्वन्ति । यः परमात्मा (इन्द्राय, मत्सरम्) जीवात्मने आनन्ददायको मदोऽस्ति ।

पदार्थ—(पवमानम्) सबको पवित्र करने वाले (मर्ज्यम्

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एतम्) संभजनीय उस परमात्माको (दश, क्षिपः, मृजन्ति) दश इन्द्रियें ज्ञानगोचर करती है। जो परमात्मा (इन्द्राय, मत्सरम्, मदम्) जीवात्माके लिये आह्लादकारक मद है।

भावार्थ—परमात्मा ही जीवात्माके लिये एकमात्र आनन्दका स्रोत है। उसीके आनन्दका लाभ करके जीव आनन्दित होता है ॥६॥३॥

इति षट्चत्वारिंशत्तमं सूक्तं तृतीयो वर्गश्च समाप्तः।

यह ४६वां सूक्त और ३सरा वर्ग समाप्त हुआ।

अथ पञ्चर्चस्य सप्तचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य—

१ ५ कविर्भार्गव ऋषिः पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः १, ३, ४ गायत्री। २ निचृद्गायत्री। ५ विराड् गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मा उद्योग मुपदिशति।

अब परमात्मा उद्योगका उपदेश करते हैं।

अया सोमः सुकृत्यया महश्चिदभ्यवर्धत।
मन्दान उद्बृषायते ॥ १ ॥

अया। सोमः। सुऽकृत्यया। महः। चित्। अभि। अवर्धत। मंदानः। उत्। वृषऽयते ॥१॥

पदार्थः—(सोमः) परमात्मा (अया, सुकृत्यया) विद्वांसं शुभकर्मणा (मन्दानः) प्रहृष्यन् (महश्चित्, अभ्यवर्धत)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तेभ्यः पण्डितेभ्यः अभ्युदयं प्रापयति । अथच (उदवृषायते) तेभ्योबलं प्रददाति ॥

पदार्थ—(सोमः) परमात्मा (अथा, सुकृत्यया) विद्वानोंके शुभकर्म्मोंसे (मन्दानः) हर्षको प्राप्त होता हुआ (महश्चित्, अभ्यवर्धत) उनको अत्यन्त अभ्युदयको प्राप्त कराता है । और (उद् वृषायते) उन विद्वानोंके लिये बलप्रदान करताहै ।

भावार्थ—हे अभ्युदयाभिलाषीजनों ! यदि आप अभ्युदयको चाहते हैं तो एकमात्र परमात्माकी शरणको प्राप्त होकर उद्योगी बनो ॥१॥

कृतानीदस्य कर्त्वा चेतन्ते दस्युतर्हणा ॥
ऋणा च धृष्णुश्चयते ॥ २ ॥

कृतानि । इत् । अस्य । कर्त्वा । चेतन्ते । दस्युऽतर्हणा । ऋणा । च । धृष्णुः । चयते ॥२॥

पदार्थः—विद्वज्जनाः (अस्य, इत्) अस्य परमात्मनः (दस्युतर्हणा, कृतानि, कर्त्वा) दुष्टहननरूपाणि कर्माणि (चेतन्ते) संस्मरन्ति । (धृष्णुः) अथच स्वयंशास्ता स जगदाधारः (ऋणा, च, चयते) देवर्षिपितृणां ऋणोद्धारमुपादिशति ॥

पदार्थ—विद्वान् लोग (अस्य इत्) इस परमात्मा के (दस्युतर्हणा, कृतानि, कर्त्वा) दुष्टनाशन रूप किये हुये कर्म्मोंका (चेतन्ते) स्मरण करतेहैं (धृष्णुः) और स्वयंशासक वह परमात्मा (ऋणा, च, चयते) देवऋणादि तीनों ऋणोंके उद्धारका उपदेश करता है ॥

भावार्थ—देवऋण पितृऋण ऋषिऋण इन तीन ऋणोंको उतार

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वे योग्य वही पुरुष हो सकता है जो परमात्माज्ञापालन करता हुआ उद्योगी बनता है ॥२॥

आत्सोम इन्द्रियो रसो वज्रः सहस्रसा भुवत् ।
उक्थं यदस्य जायते ॥ ३ ॥

आत् । सोमः । इन्द्रियः । रसः । वज्रः । सहस्रऽसाः ।
भुवत् । उक्थं । यत् । अस्य ॥३॥

पदार्थः--(यत्, अस्य, उक्थम्, जायते) यदास्य परमात्मनः वेदरूपिणी स्तुति राविर्भवति (आत्) तदा (सोमः) स परमात्मा (इन्द्रियः, रसः) जीवात्मनस्तृप्तिकारकं मोदमयरसं, तथा (वज्रः) दुष्टेभ्योरक्षणाय शस्त्ररूपः, तथा (सहस्रसाः) अनन्तशक्तिप्रदाता (भुवत्) भवति ।

पदार्थ--(यत्, अस्य, उक्थम्, जायते) जब इस परमात्माकी वेदरूपी स्तुतिका आविर्भाव होताहै (आत्) तब (सोमः) वह परमात्मा (इन्द्रियः, रसः,) जीवात्माका तृप्तिकारक आनन्दमयरस तथा (वज्रः) दुष्टोंसे रक्षा करनेके लिये शस्त्ररूप, और (सहस्रसाः) अनन्तशक्तियोंका प्रदाता (भुवत्) होताहै ।

भावार्थ--जीवात्माके लिये परमात्माने अनन्तशक्तियें प्रदान की है । परन्तु उन सबका आविर्भाव तभी होता है जब जीवात्मा वेदोंद्वारा उन शक्तियोंका ज्ञाता बनता है ॥३॥

स्वयं कविर्विधर्तरि विप्राय रत्नमिच्छति ।
यदी मर्मृज्यते धियः ॥ ४ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्वयं । कविः । विऽधर्तरि । विप्राय । रत्नं । इच्छति । यदि मर्मृज्यते । धियः ॥४॥

पदार्थः—(यदि, धियः, मर्मृज्यते) यद्यसौ परमेश्व बुद्ध्या ध्यानविषयः क्रियते, तर्हि (स्वयं, कविः) आर्ष वेदादिकाव्यानां विरचयिता स परमेश्वरः (विधर्तरि) रत्न विरुद्धधारणकर्तृभिः असत्कर्मिभिः (विप्राय, रत्नं, इच्छति सत्कर्मिणं विद्वांसं रत्नाद्यैश्वर्यं दातु मिच्छति ॥

पदार्थ—(यदि, धियः, मर्मृज्यते) यदि यह परमात्मा बु द्वारा ध्यानविषय किया जाताहै तो (स्वयं, कविः) स्वयं वेदादि व्योंका रचयिता वह परमात्मा (विधर्तरि) रत्नादिकोंको विरुद्ध धार करनेवाले असत्कर्मियोंसे (विप्राय, रत्नम्, इच्छति) सत्कर्मी विद्वान् रत्नादि ऐश्वर्य दिलानेकी इच्छा करता है ॥४॥

भावार्थ—परमात्मा किसीको बिना कारण ऊंच नीच बनाता, किन्तु कर्म्मानुकूल फल देताहै । इस लिये उद्योगी और सदाचारियोंको ही ऐश्वर्य्य मिलताहै अन्योंको नहीं ।

सिषासतू रयीणां वाजेष्वर्वतामिव ।
भरेषु जिग्युषामसि ॥ ५ ॥ ४ ॥

सिसासतुः । रयीणाम् । वाजेषु । अर्वतांऽइव । भरेषु । जिग्युषां । असि ॥५॥

पदार्थः—(वाजेषु, अर्वताम्, इव) हे सर्वरक्षकपरमात्मन् ! भवान् सर्वशक्तिषु व्यापक इव (भरेषु, जिग्युषाम्

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रणे जयमिच्छुभ्यः कर्मयोगिभ्यः (रयीणाम्, सिषासतुरसि) संपूर्णोपयोगिपदार्थप्रदाता चाऽस्ति ।

पदार्थ—(वाजेष्वर्वतामिव) हे परमात्मन् ! आप सर्वशक्तियोंमें व्यापकके समान (भरेषु जिग्युषाम्) संग्राममें जयको चाहनेवाले कर्मयोगियोंको (रयीणां सिषासतुरसि) सम्पूर्ण उपयोगी पदार्थोंके देनेवाले हैं ।

भावार्थ—जो संग्रामोंमें कर्मयोगी बनकर विजयकी इच्छा करते हैं परमात्मा उन्हींको विजयी बनाता है ॥५॥

इति सप्तचत्वारिंशत्तमं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ४७ वां सूक्त और ४था वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ पञ्चर्चस्य अष्टाचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य—

१, ५ कविर्भार्गव ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः १, ५ गायत्री । २ ४ निचृद्गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ जगत्कर्तुः गुणकर्मस्वभावा उच्यन्ते ।

अब परमात्माके गुण, कर्म, और स्वभाव कहे जाते हैं—

तं त्वा नृम्णानि बिभ्रतं सधस्थेषु महो दिवः ।
चारुं सुकृत्ययेमहे ॥ १ ॥

तं । त्वा । नृम्णानि । बिभ्रतं । सधऽस्थेषु । महः । दिवः ।
चारुं । सुऽकृत्यया । ईमहे ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(नृम्णानि बिभ्रतम्) बहुरत्नधारणकर्ता (दिवो महः) द्युलोकप्रकाशकं (सुकृत्यया चारुम्) सुष्ठु हरकृत्यैः शोभायमानं (तं त्वा) पूर्वोक्तं भवन्तं (सधस्थेषु) यज्ञस्थलेषु (ईमहे) स्तुमः ॥

पदार्थ—(नृम्णानि बिभ्रतम्) अनेक रत्नोंको धारण करने वाले (दिवो महः) द्युलोकके प्रकाशक (सुकृत्यया चारुम्) सुन्दर कर्मोंसे शोभायमान (तं त्वा) पूर्वोक्त आपकी (सधस्थेषु) यज्ञ स्थलोंमें (ईमहे) स्तुति करते हैं ।

भावार्थ—सम्पूर्ण ऐश्वर्योंका धारण करनेवाला एकमात्र परमात्मा ही है ॥१॥

संवृक्तधृष्णुमुक्थ्यं महामहिव्रतं मदम् ।
शतं पुरो रुरुक्षणिम् ॥ २ ॥
संवृक्तऽधृष्णुं । उक्थ्यं । महाऽमहिव्रतं । मदं । शतं पुरः । रुरुक्षणिं ॥

पदार्थः—(संवृक्तधृष्णुम्) धर्मपथमपहायाधर्मपथमाश्रितानां दुराचारिणां नाशकं (उक्थ्यम्) स्तुत्यं (महामहिव्रतम्) महाश्रेष्ठव्रतकर्तारं (मदम्) आनन्दकारकं (शतं पुरो रुरुक्षणिम्) दुष्टपुरनाशकं भवन्तं स्तुमः ॥

पदार्थ—(संवृक्तधृष्णुम्) धर्मपथको छोड़ अधर्मपथको प्राप्त करनेवाले दुराचारियोंको नाश करनेवाले (उक्थ्यम्) स्तुति करने योग्य (महामहिव्रतम्) बड़े श्रेष्ठ व्रतोंको धारण करनेवाले (मदम्) आनन्द

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जनक (शतं पुरो रुरुक्षणिम्) दुष्कर्मियोंके अनेक पुरोंको नाश करनेवाले आपकी स्तुति करते हैं।

भावार्थ--परमात्मा सत्यके विरोधीअनन्तदलोंका भी नाश करनेवाला है। इसलिये सत्यव्रती होनेके लिये उसी प्रकाशस्वरूप परमात्माके उपासनाकी आवश्यकता है; क्योंकि, सम्पूर्ण अज्ञानोंको दूर करके एकमात्र अपने सच्चे ज्ञानका प्रकाश करे॥२॥

अतस्त्वा रयिमभि राजानं सुक्रतो दिवः।
सुपर्णो अव्यथिर्भरत्॥ ३॥

अतः। त्वा। रयिं। अभि। राजानं। सुक्रतो इति सुऽक्रतो। दिवः। सुऽपर्णः। अव्यथिः। भरत्॥३॥

पदार्थः--(सुक्रतो) हे शुभकर्मशोभायमान परमात्मन्! (रयिं अभि राजानम्) भवान् यदखिलधनाद्यैश्वर्यस्वाम्यस्ति, तथा (दिवः सुपर्णः) द्युलोकेऽपि चैतन्यतया प्रतिष्ठितोऽस्ति, अथच (अव्यथिर्भरत्) विनाप्रयासतस्संसारस्य संरक्षकोऽस्ति (अतस्त्वा) अतो वयं भवतः स्तुतिं कुर्मः॥

पदार्थ--(सुक्रतो) हे शोभनकर्मोंसे विराजमान! (रयिं अभि राजानम्) आप जो कि सम्पूर्ण धानाद्यैश्वर्यके स्वामी है और (दिवः सुपर्णः) द्युलोकमें भी चेतनरूपसे विराजमान हैं और (अव्यथिर्भरत्) अनायास संसारको पालन करने वाले हैं, (अतः त्वा) इससे आपकी स्तुति करते हैं।

भावार्थ--सम्पूर्ण लोकलोकान्तरोंका अधिपति एकमात्र परमात्मा ही है। इस लिए उसी परमात्माकी उपासना करनी चाहिए जिससे बढ़कर जीवका कोई अन्य स्वामी नहीं हो सकता।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वस्मा इत्स्वर्दृशे साधारणं रजस्तुरम् ।
गोपामृतस्य विर्भरत् ॥ ४ ॥

विश्वस्मै । इत् । स्वः । दृशे । साधारणं । रजःऽतुरं । गोपां ऋतस्य । विः । भरत् ।

पदार्थः—(विश्वस्मै इत् स्वर्दृशे) हे जगदीश्वर ! आप दिव्यगुणसम्पन्नाय सर्वस्मै विदुषे (साधारणम्) समानोऽसि अथ च (रजस्तुरम्) प्रधानतया रजोगुणप्रेरकस्त्वम् । (ऋतस्य गोपाम्) तथा यज्ञरक्षकोऽसि । अथ च (विः) सर्वव्यापकतया (भरत्) जगतः पालनं करोषि ॥

पदार्थ—(विश्वस्मै, इत् स्वर्दृशे) हे परमात्मन् ! आप सभी दिव्यगुणसम्पन्नविद्वानोंके लिये (साधारणम्) समान हैं, और (रजस्तुरम्) प्रधानतया रजोगुणके प्रेरक हैं (ऋतस्य गोपाम्) यज्ञके रक्षिता हैं और (विः) सर्वव्यापक होकर (भरत्) संसारका पालन करते हैं ।

भावार्थ—जिसप्रकार प्रकृतिके तीनों गुणोंमेंसे रजोगुणकी प्रधानता है अर्थात् रजोगुण, सत्वगुण, और तमोगुणको धारण किये रहता है इसीप्रकारसे परमात्माके सत्, चित्, और आनन्द इन तीनों गुणोंसे चित् की प्रधानता है । अर्थात् चित् ही सत् और आनन्दका प्रकाशक है । इसीप्रकार परमात्माके तेजोमय गुणको प्रधान समझ उसके उपलब्ध करनेकी चेष्टा करनी चाहिए ।

अधा हिन्वान इन्द्रियं ज्यायो महित्वमानशे ।
अभिष्टिकृद्विचर्षणिः ॥ ५ ॥ ५ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अध । हिन्वानः । इंद्रियं । ज्यायः । महिऽत्वं । आनशे । अभिष्टिऽकृत् विऽचर्षणिः ।

पदार्थः—(अधा) भवान् (इन्द्रियं हिन्वानः) इन्द्रियप्रेरकोऽस्ति (ज्यायः) सर्वोपरि स्थिततया (महित्वमानशे) स्वतेजसा सर्वत्र व्याप्तो भवसित्वम् । (अभिष्टिकृत) तथा स्वभक्तेभ्योऽभीष्टदाताऽसि । (विचर्षणिः) अथ च सर्वेषां कर्मणां प्रेक्षकोऽसि ॥

पदार्थ—(अधा) आप (इन्द्रियं, हिन्वानः) इन्द्रियके प्रेरक हैं (ज्यायः) सर्वोपरि विराजमान होनेसे (महित्वमानशे) अपनी महिमासे सर्वत्र व्याप्त होरहे हैं (अभिष्टिकृत) तथा अपने भक्तोंके लिये कामनाओंके प्रदाता हैं (विचर्षणिः) सबके कर्मोंके द्रष्टा हैं ।

भावार्थ—जीवोंके अन्तर्यामी रूपसे एकमात्र परमात्मा ही है कोई अन्य देव नहीं ।

इति अष्टचत्वारिंशत्तमं सूक्तं पञ्चमो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ४८ वां सूक्त और ५ वां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ पञ्चर्चस्य ऊनपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य—

१-५ कविर्भार्गव ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः १, ४, ५ निचृद्गायत्री । २, ३ गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मनः शक्तिर्वर्ण्यते—

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अब परमात्माकी शक्तिका वर्णन करते हैं—

पवस्व वृष्टिमा सु नोऽपामूर्मिं दिवस्परि ।
अयक्ष्मा बृहतीरिषः ॥ १ ॥

पवस्व । वृष्टिं । आ । सु । नः । अपां । ऊर्मिं । दिवः परि । अयक्ष्माः । बृहतीः । इषः ।

पदार्थः—हे जगदीश ! (नः) भवानस्मभ्यं (दिवस्परि) द्युलोकात् (अपामूर्मिम्) जलतरङ्गिणीं (सुवृष्टिम्) सुन्दरवृष्टिम् (आपवस्व) सम्यगुत्पादयतु तथा (अयक्ष्माः बृहतीः इषः) रोगरहितान्महान्नाद्यैश्वर्यांश्चोत्पादयतु ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (नः) आप हमारे लिये (दिवस्परि) द्युलोकसे (अपामूर्मिम्) जलकी तरङ्गोंवाली (सुवृष्टिम्) सुन्दरवृष्टि (आ पवस्व) सम्यक् उत्पन्न करिये । तथा । (अयक्ष्माः बृहतीः इषः) रोगरहित महान् अन्नादि ऐश्वर्यको उत्पन्न करिये ।

भावार्थ—परमात्माने ही द्युलोकको वर्षणशील और पृथिवीलोकको नानाविध अन्नादि औषधियोंकी उत्पत्तिका स्थान बनाया ॥१॥

तया पवस्व धारया यया गावं इहागमन् ।
जन्यासं उप नो गृहम् ॥ २ ॥

तया । पवस्व । धारया । यया । गावः । इह । आऽगमन् ।
जन्यासः । उप । नः । गृहं ।

पदार्थः—(तया धारया पवस्व) हे जगदीश्वर !

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तया आनन्दधारया पवित्रय (यया) यया धारया (गावः) दशेन्द्रियाणि (जन्यासः) सर्वजनहितत्वमुत्पाद्य (इह नः गृहम्) स्वसदनरूपशरीराभ्यन्तरे एव (उपागमन्) आयान्तु ।

पदार्थ—(तया धारया पवस्व) हे परमात्मन् ! आप मुझे उस आनन्दकी धारासे पवित्र करिये (यया) जिस धारासे (गावः) सम्पूर्ण इन्द्रियें (जन्यासः) सब जनोंका हितकारक होकर (इह नः गृहम्) अपने गृहरूप शरीरके अभ्यन्तर ही में (उपागमन्) आयें ।

भावार्थ—हे परमात्मन् ! आप हमारी इन्द्रियोंको अन्तर्मुखी बनाकर हमको संयमी बनाइये ॥२॥

घृतं पवस्व धारया यज्ञेषु देववीतमः ।
अस्मभ्यं वृष्टिमा पव ॥ ३

घृतं । पवस्व । धारया । यज्ञेषु । देवऽवीतमः । अस्मभ्यम् । वृष्टिं । आ । पव ॥३॥

पदार्थः—हे करुणानिधान जगद्रक्षकपरमात्मन् ! त्वं (यज्ञेषु) सत्रेषु (देववीतमः) देवानामतितृप्तिकारकोऽसि । (धारया घृतं पवस्व) त्वं स्वज्ञानधारया मद्हृदये स्नेहमुत्पादय । तथा (अस्मभ्यं, वृष्टिमापवस्व) अस्माकं सर्वमभीष्टं वर्षय ।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (यज्ञेषु) यज्ञोंमें (देववीतमः) देवताओंके अत्यन्त तृप्ति कारक है (धारया घृतं पवस्व) आप अपनी ज्ञानकी धारासे हमारे हृदयमें स्नेहको उत्पन्न करिये) और (अस्मभ्यम्) वृष्टिमापवस्व) हमारे लिये सब कामनाओंकी वर्षा करिये ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—जो लोग ज्ञानयज्ञ, या कर्ममें तत्पर होकर परमात्मा यजन करते हैं परमात्मा उनको सर्वैश्वर्यसम्पन्न बनाता है।

स न ऊर्जे व्य१ व्ययँ पवित्रं धाव धारया।
देवासः शृणवन्हि कम् ॥ ४ ॥

सः। नः। ऊर्जे। वि। अव्ययँ। पवित्रं। धाव। धारया।
देवासः। शृणवन्। हि। कं ॥४॥

पदार्थः—हे परमात्मन् (सः) स त्वम् (ऊर्जे) बल तथा क्रियायां च बलप्राप्तये (नोऽव्ययं पवित्रम्) ममान्तः करणं निश्चलं कृत्वा (धारया धाव) ज्ञानस्य धारया शुद्ध कुरु। अथ च हे जगदीश्वर! (कम्) भवदुच्चारितां वेदवाणी (देवासः हि) दिव्यगुणयुक्ता विद्वांस एव (शृणवन्) शृण्वन्तु

पदार्थ—हे परमात्मन्! (सः) वह आप (ऊर्जे) ज्ञान और क्रियामें बलप्राप्तिके लिये (नः, अव्ययं पवित्रम्) हमारे अन्तः करणको निश्चल करके (धारया धाव) ज्ञानकी धारासे शुद्ध कर और हे भगवन्। (कम्) आपकी उच्चारित वेदवाणीको (देवासः हि) दिव्यगुणवाले विद्वान् ही (शृणवन्) सुनें।

भावार्थ—जो लोग दिव्यशक्तिवाले होते हैं वही परमात्मा वेदरूपी वाणीका श्रवण मनन आदि करसकते हैं अन्य नहीं।

पवमानो असिष्यदद्रक्षांस्यपजङ्घनत्।
प्रलवद्रोचयन्नचः ॥ ५ ॥ ६ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पवमानः। असिस्यदत्। रक्षांसि। अपऽजंघनत्। प्रऽवत्। रोचयन्। रुचः।

पदार्थः—(पवमानः) सर्वपवित्रकर्ता परमात्मा (रक्षांसि, अपजंघनत्) असत्कर्मिणां नाशं कुर्वन्, तथा (प्रवत् रुचः रोचयन्) पूर्ववदेव संपूर्णब्रह्माण्डे स्वतेजो विस्तारयन् (असिस्यदत्) सर्वत्र व्याप्नोति।

पदार्थ—(पवमानः) सबको पवित्र करनेवाला परमात्मा (रक्षांसि, अपजंघनत्) असत्कर्मियोंको नष्ट करता हुआ और (प्रवत् रुचः रोचयन्) पहलेहीके समान संम्पूर्ण ब्रह्माण्डमें अपने प्रकाशको फैलाता हुआ (असिस्यदत्) सर्वत्र व्याप्त होरहा है।

भावार्थ—परमात्मा चराचरके हृदयमें स्थिर है इस लिए उसकी स्थितिको अत्यन्त सन्निहित मानकर सदैव परमात्मपरायण होना चाहिए।

इति ऊनपञ्चाशत्तमं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

यह ४९ वां सूक्त और ६ वां वर्ग समाप्त हुआ।

अथ पञ्चर्चस्य पञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य—

१ ५ उचथ्य ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता॥ छन्दः १, २, ४, ५ गायत्री। ३ निचृद्गायत्री॥ षड्जः स्वरः॥

अथ परमात्मनः शक्तेर्नैरन्तर्यं वर्ण्यते—

अब परमात्माकी शक्तियोंकी निरन्तरताका वर्णन करतेहैं।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उत्ते शुष्मास ईरते सिन्धोरूर्मेरिव स्वनः।
वाणस्य चोदया पविम् ॥ १ ॥

उत्। ते। शुष्मासः। ईरते। सिंधोः। ऊर्मेःऽइव। स्वनः। वाणस्य। चोदय। पविं।

पदार्थः—हे दीनपरिपालक ! (सिन्धोः ऊर्मेः स्वनः इव) यथा समुद्रस्य वीचीनामनवरताः शब्दा भवन्ति तथैव (ते शुष्मासः ईरते) भवच्छक्तिवेगा निरन्तरं व्याप्ता भवन्ति भवान् (वाणस्य पविं चोदय) वाण्याः शक्तिं प्रेरयतु। "वाण इति वाङ्नामसु पठितं निघण्टौ" ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (सिन्धोः, ऊर्मेः, स्वनः, इव) जिस प्रकार समुद्रकी तरङ्गों के शब्द अनवरत होते रहते हैं उसीप्रकार (ते शुष्मास ईरते) आपकी शक्तियोंके वेग निरन्तर व्याप्त होते रहते हैं आप (वाणस्य पविं चोदय) वाणीकी शक्तीको प्रेरित करें।

भावार्थ—परमात्माकी शक्तियें अनन्त हैं और नित्य हैं। यद्यपि प्रकृति जीवात्माकी शक्तियें अनादि अनन्त होने से नित्य हैं तथापि, वे अन्य आश्रित होनेसे अल्प और परिणामी नित्य हैं। कूटस्थ नित्य नहीं।

तात्पर्य यह है कि जीव और प्रकृतिके भाव उत्पत्तिविनाशशील हैं और ईश्वरके भाव सदा एकरस हैं।

प्रसवे त उदीरते तिस्रो वाचो मखस्युवः।
यदव्य एषि सानवि ॥ २ ॥

प्रऽसवे। ते। उत्। ईरते। तिस्रः। वाचः। मखस्युवः। यत्। अव्ये। एषि। सानवि।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(यत्) यदा भवान् (मखस्युवः अव्ये सानवि, एषि) यज्ञकारिणां गोपनीयोच्चयज्ञस्थलेषु प्राप्तो भवति तदा ते ऋत्विजः (ते प्रसवे) भवदाविर्भावेन (तिस्रः वाचः, उदीरते) ज्ञानकर्मोपासनाविषयिणीनां तिसृणां वाचामुच्चारणं कुर्वन्ति ॥

पदार्थ—(यत्) जब आप (मखस्युवः, अव्ये सानवि, एषि) यज्ञकर्ताओंकी रक्षणीय उच्च यज्ञस्थलोंमें प्राप्त होते हैं, तो वह ऋत्विग्लोग (ते प्रसवे) आपके प्रादुर्भूत होनेसे (तिस्रः वाचः, उदीरते) ज्ञान, कर्म, और उपासनाविषयक तीनों वाणियोंका उच्चारण करते हैं।

भावार्थ—परमात्माका आविर्भाव और तिरोभाव वास्तवमें नहीं होता; क्योंकि वह कूटस्थ नित्य अर्थात् एकरस सदा अविनाशी है। उसका आविर्भाव तिरोभाव उसके कीर्तनप्रयुक्त कहा जासकता है। अर्थात् जहां उसका कीर्तन होता है उसका नाम, आविर्भाव है, और जहां उसका अकीर्तन है वहां तिरोभाव है। उक्त आविर्भाव तिरोभाव मनुष्यके ज्ञानके अभिप्रायसे है। अर्थात् ज्ञानियोंके हृदयमें उसका आविर्भाव है और अज्ञानियोंके हृदयमें तिरोभाव है।

अव्यो वारे परि प्रियं हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः।
पवमानं मधुश्चुतम् ॥ ३ ॥

अव्यः। वारे। परि। प्रियं। हरिं। हिन्वंति। अद्रिऽभिः। पवमानं। मधुऽश्चुतं।

पदार्थः—हे जगदीश्वर! भवान् (मधुश्चुतम्) परमानन्दस्य कारकोऽस्ति। तथा (पवमानम्) सर्वपवित्रकर्ताऽस्ति। अथ च (हरिम्) सर्वदुःखहर्ताऽस्ति। अतः (परि प्रियम्) परमप्रियं भवन्तं (अव्यः)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri Gyaan Kosha

भवतो रक्षोत्सुका उपासका (वारे) भवद्भक्तियुक्ताः सन्तः (अद्रिभिः) इन्द्रियवृत्त्या (हिन्वन्ति) प्रेरयन्ति ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (मधुश्चुतम्) परम आनन्द क्षरण करनेवाले हैं और (पवमानम्) सबके पवित्रकारक हैं और (हरि सबके दुःखोंके हरने वाले हैं इससे (परि, प्रियम्) परमप्रिय आपकी (अ आपसे रक्षाको चाहने वाले आपके उपासक (वारे) आपकी भक्तिसे पू अपने हृदयोंमें (अद्रिभिः) इन्द्रियवृत्तियों द्वारा (हिन्वन्ति) प्रेरणा करते

भावार्थ—कर्मयोगी या ज्ञानयोगी विद्वान् दोनों अपने शुद्ध करणसे परमात्माका साक्षात्कार करते हैं ।

आ पवस्व मदिन्तम पवित्रं धारया कवे ।
अर्कस्य योनिमासदम् ॥ ४ ॥

आ। पवस्व। मदिन्ऽतम। पवित्रं। धारया। कवे। अर्कस्य योनिं। आऽसदं।

पदार्थः—(अर्कस्य योनिमासदम्) तेजस्विनां योनिं प्राप्तुम् तेजस्वी भवनाये तियावत् (मदन्तिम) हे आनन्दवर्धक (कवे) हे वेदरूपकाव्यरचयितः ! (धारया) स्वज्ञानधारा (पवित्रं आपवस्व) ममान्तःकरणं पवित्रय ॥

पदार्थ—(अर्कस्य योनिमासदम्) तेजकी योनिको प्राप्त होने लिये अर्थात् तेजस्वी बननेके लिये (मदिन्तम) हे आनन्दके बढ़ाने वाले (कवे) हे वेदरूप काव्यके रचने वाले ! (धारया) अपनी ज्ञानकी धारा से (पवित्रं, आ पवस्व) मेरे अन्तःकरणको पवित्र करिये ।

भावार्थ—परमात्माही अपने ज्ञानप्रदीपसे उपासकोंके हृदयरूपी मन्दिरको प्रकाशित करता है ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स पवस्व मदिन्तम गोभिरञ्जानो अक्तुभिः ।
इन्दविन्द्राय पीतये ॥ ५ ॥ ७ ॥

सः । पवस्व । मदिन्ऽतम । गोभिः । अञ्जानः । अक्तुऽभिः ।
इंदोइति । इंद्राय । पीतये ।

पदार्थः--(इन्दो) हे जगदीश्वर! (मदिन्तम) उत्कृष्टानन्दजनकः (अक्तुभि गोभिरञ्जानः) साधनभूतेन्द्रियैर्ध्यानविषयीभूतः (सः) सकलभुवनप्रसिद्धस्त्वम् (इन्द्राय पीतये) जीवात्मनः परमतृप्तये (पवस्व) ब्रह्मानन्दक्षरणं कुरु ॥

पदार्थ--(इन्दो) हे परमात्मन्! (मादिन्तम) सर्वोपरि आनन्दके जनयिता । (अक्तुभि गोभिरञ्जानः) साधनभूत इन्द्रियों द्वारा ध्यानविषय किये गये (सः) सकलभुवनप्रसिद्ध वह आप (इन्द्राय पीतये) जीवात्माकी परमतृप्तिके लिये (पवस्व) ब्रह्मानन्दका क्षरण कीजिये ।

भावार्थ—जीवकी सच्ची तृप्ति परत्मानन्दसे ही होती है, अन्यथा नहीं।

इति पञ्चाशत्तमं सूक्तं सप्तमो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ५०वां सूक्त और ७वां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ पञ्चर्चस्यैकपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य-

१ ५ उचथ्यः ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः १, २ गायत्री । ३ ५ निचृद्गयत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ सौम्यस्वभावोत्पादनं वर्ण्यते ।

अब सौम्यस्वभावके उत्पादनका वर्णन करते हैं ।

अध्वर्यो अद्रिभिः सुतं सोमं पवित्र आ सृज ।
पुनीहीन्द्राय पातवे ॥ १ ॥

अध्वर्यो इति । अद्रिऽभिः । सुतं । सोमं । पवित्रे । आ । सृज । पुनीहि । इंद्राय । पातवे ।

पदार्थः—(अध्वर्यो) हे अध्वर्युगणाः ! (सोमम्) परमात्मानम् (अद्रिभिः सुतं) स्वेन्द्रियद्वारेण ज्ञानविषं (सृज) कुर्वन्तु (इन्द्राय पातवे) जीवात्मतर्पणाय (पवित्रे पुनीहि) स्वकीयमन्तःकरणं पवित्रं कुर्वन्तु ॥

पदार्थ—(अध्वर्यो) हे अध्वर्युलोगों ! (सोमम्) परमात्मा (अद्रिभिः सुतम्) अपनी इन्द्रियोंद्वारा ज्ञानका विषय (सृज) करो (इन्द्राय पातवे) और जीवात्माकी तृप्तिके लिये (पवित्रे पुनीहि) अपने अन्तःकरणको पवित्र करिये ।

भावार्थ—परमात्माकी प्राप्तिके लिए अन्तःकरणका पवित्र होना अत्यावश्यक है, इसलिए प्रत्येक जिज्ञासुको चाहिये कि पहले अपने अन्तःकरणको पवित्र करे ।

दिवः पीयूषमुत्तमं सोममिन्द्राय वज्रिणे ।
सुनोता मधुमत्तमम् ॥ २ ॥

दिवः । पीयूषं । उत्ऽतमं । सोमं । इंद्राय । वज्रिणे । सुनोत । मधुमत्ऽतमं ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—हे अध्वर्यवः । यो हि (मधुमत्तमम्) सर्वरसेषूत्तमोऽस्ति (दिवः, पीयूषम्) अथ च द्युलोकस्य यदमृतमस्ति, एवंभूतम् (उत्तमं, सोमम्) उत्तमं परमात्मानम् (इन्द्राय पातवे) स्वस्य जीवात्मनस्तृप्तये (सुनोत) ध्यानविषयं कुरुत ॥

पदार्थ—हे अध्वर्युलोगो ! जोकि (मधुमत्तमम्) सबरसोंमें उत्तम है (दिवः पीयूषम्) और द्युलोकका अमृतहै ऐसे (उत्तमं सोमम्) उत्तम परमात्माको (इन्द्राय पातवे) अपने जीवात्माकी तृप्तिके लिये (सुनोत) ध्यानका विषय बनाओ ।

भावार्थ—जो अपनी तृप्तिके लिए एकमात्र परमात्माको ध्यानका विषय बनाते हैं, वे ही उस ब्रह्मामृतका पान करते हैं अन्य नहीं ।

तव॒ त्य इ॑न्दो अन्ध॒सो दे॒वा मधो॒र्व्य॑श्नते ।
पव॑मानस्य म॒रुतः॑ ॥३॥

तव॑ । त्ये । इ॒न्दो॒ इति॑ । अन्ध॑सः । दे॒वाः । मधोः॑ । वि । अ॒श्न॒ते॒ ।
पव॑मानस्य । म॒रुतः॑ ।

पदार्थः—(इन्दो) हे जगद्रक्षक परमात्मन् ! (पवमानस्य) सर्वपवित्रकारकस्य (तव) भवतः (मधोः) मधुरस्य (अन्धसः) रसस्य (देवाः त्ये मरुतः) दिव्यगुणसम्पन्ना विद्वांसः (व्यश्नते) पानं कुर्वन्ति ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे परमात्मन् ! (पवमानस्य) सबको पवित्र करने वाले) तव) आपके (मधोः) मधुर (अन्धसः) रसका (देवाः त्ये मरुतः) दिव्यगुणसम्पन्न विद्वान् (व्यश्नते) पान करते हैं ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—ब्रह्मामृतरसास्वादके लिए दिव्यशक्तियोंको उपलब्ध करना अत्यावश्यक है; इसलिए उक्त मन्त्रमें परमात्माने दिव्यशक्तियोंका उपदेश किया है।

त्वं हि सोम वर्धयन्त्सुतो मदाय भूर्णये।
वृषन्त्स्तोतारमूतये ॥४॥

त्वं। हि। सोम। वर्धयन्। सुतः। मदाय। भूर्णये। वृषन्। स्तोतारं। ऊतये।

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन्! (त्वं हि) तुम ही (सुतः) विद्वद्भिः साक्षात्कृतो भवसि तदा (मदाय) आनन्दके (भूर्णये) दक्षताय (ऊतये) रक्षायै च (स्तोतारम्) उपासकम् (वर्धयन्) समृद्धयन् (वृषन्) सर्वान् कामान् पूरयसि।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्! (त्वं हि) आप जब (सुतः) विद्वानों द्वारा साक्षात्कार किये जाते हैं तो (मदाय) आनन्दके लिये और (भूर्णये) दक्षताके लिये तथा (ऊतये) रक्षाके लिये (स्तोतारम्) उपासकको (वर्धयन्) समृद्ध बनाते हुये (वृषन्) सब कामनाओंको पूर्ण करते हैं।

भावार्थ—सर्वोपरि नीति और व्यवहारकुशलताकी नीति एकमात्र परमात्मा द्वारा उपदिष्ट वेदोंसे ही मिल सकती है अन्यत्र नहीं।

अभ्यर्ष विचक्षण पवित्रं धारया सुतः।
अभि वाजमुत श्रवः ॥५॥८॥

अभि। अर्ष। विऽचक्षण। पवित्रं। धारया। सुतः। अभि। वाजं। उत। श्रवः।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(विचक्षण) हे सम्पूर्णवित्परमात्मन्! (सुतः) सम्यग्ध्यातो भवान् (धारया, पवित्रं अभ्यर्ष) आनन्द धारया पूतीभूतेऽन्तःकरणे निवसतु। अथ च (वाजम्) अन्नाद्यैश्वर्यम् एवं (उत, श्रवः) सुयशांसि च (अभि) प्रददातु।

पदार्थ—(विचक्षण) हे सर्वज्ञ परमात्मन्! (सुतः) ध्यानविषय किये गये आप (धारया पवित्रमभ्यर्ष) आनन्दकी धारासे पवित्र हुये अन्तःकरणमें निवास करिये और, (वाजम्) अन्नादिऐश्वर्य तथा (उत श्रवः) सुन्दरकीर्तिका (अभि) प्रदान करिये॥

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्मासे ऐश्वर्यप्राप्तिकी प्रार्थना की गई है।

इति एकपञ्चाशत्तमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्तः।

यह ५१ वां सूक्त और ८ वां वर्ग समाप्त हुआ।

अथ पञ्चर्चस्य द्वापञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य—

१-५ उचथ्यः ऋषिः। पवमानः सोमो देवता। छन्दः—१ भुरिग्गायत्री। २ गायत्री। ३, ५ निचृद्गायत्री। ४ विराड्गायत्री॥ षड्जः स्वरः॥

अथ सदुपदेशं वर्णयति।

अब सदुपदेशका वर्णन करते हैं।

परि द्युक्षः सनद्रयिर्भरद्वाजं नो अन्धसा।
सुवानो अर्ष पवित्र आ॥१॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परि॑ । द्यु॒क्षः । स॒नत्ऽर॑यिः । भर॑त् । वाजं॑ । नः॒ । अंध॑सा । सु॒वा॒नः । अ॒र्ष॒ । प॒वित्रे॑ । आ ।

पदार्थः—हे जगदीश । भवान् (परि द्युक्षः) सर्वोपरि विराजते । स त्वं (नः) अस्मभ्यं (सनद्रयिः) धनानि ददत् (अन्धसा) सहान्नाद्यैश्वर्यैः (वाजम्) बलं (भरत्) परिपूरय तथा (सुवानः) स्तवनानन्तरं भवान् (पवित्रे आ अर्ष) शुद्धान्तःकरणे निवासं करोतु ।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (परि द्युक्षः) सर्वोपरि प्रकाशमान है । आप (नः) हमारे लिये (सनद्रयिः) धनादिकोंको देते हुये (अन्धसा) अन्नादि ऐश्वर्यके सहित (वाजं भरत्) बलको परिपूर्ण करिये और (सुवानः) स्तुति किये जाने पर, आप (पवित्रे आ अर्ष) पवित्र अन्तःकरणमें निवास करिये ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि, हे जिज्ञासु जनो ! तुम लोग जब अपने अन्तःकरणको पवित्र बनाकर सम्पूर्ण ऐश्वर्योंको उपलब्ध करनेकी जिज्ञासा अपने हृदयमें उत्पन्न करोगे तब तुम ऐश्वर्यको उपलब्ध करोगे ।

तव॑ प्र॒त्नेभि॒रध्व॑भि॒रव्यो॒ वारे॒ परि॑ प्रि॒यः ।
स॒हस्र॑धारो या॒त्तना॑ ॥२॥

तव॑ । प्र॒त्नेभिः॑ । अध्व॑ऽभिः । अव्यः॑ । वारे॑ । परि॑ । प्रि॒यः । स॒हस्र॑ऽधारः । या॒त् । तना॑ ।

पदार्थः—(जगदाधार परमात्मन् ! (तव, प्रियः, अव्यः) भवत्प्रियो रक्षणीय उपासकः (प्रत्नेभिरध्वभिः) भवत् प्राचीनं

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दाविहितमार्गेण (सहस्रधारः) स्वदनेकामोदधाराभिश्च युतत्वात् (तना) समृद्धीभूय (वारे परियात्) भवतः, प्रार्थनीयं पदं प्राप्नोतु॥

पदार्थ—(तव प्रियः, अव्ययः) हे भगवन्! आपका प्रिय रक्षणीय उपासक (प्रत्नेभिरध्वभिः) आपके प्राचीन वेदविहितमार्गों द्वारा (सहस्रधारः) आपकी अनेकप्रकारकी धाराओंसे युक्त होनेसे (तना) समृद्ध होकर (वारे परियात्) आपके प्रार्थनीय पदको प्राप्त हो।

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्मा वेदमार्गके आश्रयणका उपदेश करते हैं।

चरुर्न यस्तमीङ्खयेन्दो न दानमीङ्खय।
वधैर्वधस्नवीङ्खय॥ ३॥

चरुः। न। यः। तं। ईङ्खय। इंदो इति। न। दानं। ईङ्खय। वधैः। वधस्नो इति वधऽस्नो। ईङ्खय।

पदार्थः—(इन्दो) हे परमेश्वर! (यः चरुः) यस्त्वं चराचरग्रहणकर्तासि (तम्, न, ईङ्खय) स त्वम् आशु स्वरूपतां नय। अथच (दानम्, न, ईङ्खय,) मह्यं दातव्यमपि वस्तु झटिति प्रापय। (वधैः, वधस्नो, ईङ्खय) हे प्रबलशक्त्याराति नाशकर्त्तः! परमात्मन्! माम् शुभकर्मणि नियोजय॥

पदार्थ—(इंदो) हे परमात्मन्! (यः, चरुः) जो आप चराचरको ग्रहण करने वाले हैं (तम्, न, ईङ्खय) वह आप अपने रूपको शीघ्र प्राप्त कराइये। और (दानम्, न, ईङ्खय) मुझको दातव्य वस्तुको शीघ्र प्राप्त कराइये। (वधैः, वधस्नो, ईङ्खय) हे अपनी प्रबलशक्तियोंसे शत्रुओंके नाश करने वाले आप मुझको सत्कर्मकी ओर प्रेरित कीजिये।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्माने सत्कर्म्मी बनानेका उपदेश दिया है।

नि शुष्ममिन्दवेषां पुरुहूत जनानाम् ।
यो अस्माँ आदिदेशति ॥ ४ ॥

नि । शुष्मं । इन्दोइति । एषां । पुरुऽहूत । जनानां । यः । अस्मान् । आऽदिदेशति ।

पदार्थः—(इन्दो) हे सर्वनियन्तः परमेश्वर ! (पुरुहूत) हे बुधगणस्तुत ! (एषां, जनानां, बलं, नि) विदुषां मे तेषां मोजो वर्धय । (यः, अस्मान्, आदिदेशति) यो भवान् अस्माकमनुशास्तास्ति ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे परमात्मन् ! (पुरुहूत) हे अखिल विद्वानों से स्तुति किये गये ! (एषां, जनानाम्, बलम्, नि) इन विद्वानोंके बलोंको बढ़ाइये (यः, अस्मान्, आदिदेशति) जो कि आप हम लोगों का अनुशासन करते हैं।

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्माने इस बातका उपदेश दिया है कि जो पुरुष विद्या, तथा बलको उपलब्ध करके सत्कर्मी तथा विनीत बनते हैं उन्हींसे संसार शिक्षाका लाभ करता है।

शतं न इन्द ऊतिभिः सहस्रं वा शुचीनाम् ।
पवस्व मंहयद्रयिः ॥ ५ ॥ ९ ॥

शतं । नः । इन्दोइति । ऊतिऽभिः । सहस्रं । वा । शुचीनां ।
पवस्व । मंहयत्ऽरयिः ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(इन्दो) हे विश्वकर्तः । (मंहयद्रयिः) त्वम् मदैश्वर्यादीन् वर्धयन् (ऊतिभिः) रक्षार्थं अत्र, "चतुर्थ्यर्थे तृतीया भवति" (शुचीनां शतम्, न, सहस्रं, वा) पूताः शतसहस्रशक्तीः (पवस्व) उत्पादय ।

पदार्थ—(इन्दो) हे परमात्मन् ! (मंहयद्रयिः) आप हमारे धनादि ऐश्वर्यको बढ़ाते हुये (ऊतिभिः) रक्षाके लिये (शुचीनां शतम्, न, सहस्रं, वा) पवित्र सैकड़ों तथा सहस्रों शक्तियोंको (पवस्व) उत्पन्न करिये ।

भावार्थ—परमात्माने मनुष्यके ऐश्वर्यके लिए सैकड़ों और सहस्रों शक्तियोंको उत्पन्न किया है—मनुष्यको चाहिए कि कर्मयोगी बन कर उन शक्तियोंका लाभ करे ।

इति द्विपञ्चाशत्तमं सूक्तं नवमो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ५२ वां सूक्त और ९ वां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ चतुर्ऋचस्य त्रिपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य—

१ ४ अवत्सार ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः १, ३ निचृद्गायत्री । २, ४ गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

उत्ते शुष्मासो अस्थू रक्षो भिन्दन्तो अद्रिवः ।
नुदस्व याः परिस्पृधः ॥ १ ॥

उत् । ते । शुष्मासः । अस्थुः । रक्षः । भिंदंतः । अद्रिऽवः ।
नुदस्व । याः । परिऽस्पृधः ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(अद्रिवः) हे शस्त्रधारिन्! (ते शुष्मासः) भवतः शत्रुशोषिकाः शक्तयः (रक्षः भिन्दन्तः) रक्षांसि भिन्दन् (उदस्थुः) सदोद्यता भवन्ति। (नुदस्व याः परिस्पृधः) ये भवद्द्वेषिण स्तेषां शक्तीः स्तम्भय॥

पदार्थ—(अद्रिवः) हे शस्त्रोंको धारण करने वाले! (ते शुष्मासः) आपकी शत्रुशोषक शक्तियें (रक्षः भिन्दन्तः) राक्षसोंका नाश करती हुयीं (उदस्थुः) सदा उद्यत रहती हैं (नुदस्व याः परिस्पृधः) जो आपके द्वेषी हैं उनकी शक्तियोंको वेगरहित करिये।

भावार्थ—परमात्मामें रागद्वेषादि भावोंका गन्ध भी नहीं है। जो लोग परमात्मोपदिष्ट मार्गको छोड़कर यथेष्टाचारमें रत हैं उनके लिये योग्य फल देनेके कारण परमात्मा उनका द्वेष्टा कथन किया गया है।

अया निजघ्निरोजसा रथसङ्गे धने हिते।
स्तवा अबिभ्युषा हृदा॥ २॥

अया। निऽजघ्निः। ओजसा। रथऽसंगे। धने। हिते। स्तवै। अबिभ्युषा। हृदा।

पदार्थः—हे परमात्मन्। भवान् (अया ओजसा निजघ्निः) अनेन स्वशत्रुदलनशीलमहाबलेन स्वशत्रुशक्तिशमकोत्थि एतेन (रथसङ्गे धने हिते) शरीररूपरथस्य हितकारकधन ऐश्वर्यनिमित्तं (अबिभ्युषा हृदा स्तवै) निवृत्तभयान्तःकरणे भवन्तं स्तुमः॥

पदार्थ—हे परमात्मन्! आप (अया ओजसा निजघ्निः) अपने इस शत्रुनाशनशील पराक्रमसे शत्रुकी शक्तियोंको शमन

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वाले हैं। इस से (रथसङ्गे धने हिते) शरीररूप रथके हितकारक धनादि ऐश्वर्यके निमित्त (अविभ्युषा हृदा स्तवै) अन्तःकरणोंसे आपकी स्तुति करते हैं।

भावार्थ—जो पुरुष शुभकार्य करते हुए परमात्माके उपासनासमय निर्भयतासे उसकी समक्षता लाभ करते हैं वे सदैव तेजस्वी और ब्रह्मवर्चस्वी आदि दिव्यभावोंको उपलब्ध करते हैं ॥२॥

अस्य व्रतानि नाधृषे पवमानस्य दूड्या ।
रुज यस्त्वा पृतन्यति ॥ ३ ॥

अस्य । व्रतानि । न । आऽधृषे । पवमानस्य । दुःऽध्या । रुज । यः । त्वा । पृतन्यति ॥३॥

पदार्थः—(पवमानस्य, अस्य) जगत्पावित्रयितुरनुशासनं (दूड्या) कश्चिदपि दुश्चरित्रः (नाधृषे) बाधितुं न शक्नोति । यतः (यः त्वा पृतन्यति) यो, भवत ईर्ष्यति तं (रुज) अशक्ततां नयसि ।

पदार्थ—(पवमानस्य अस्य) जगत्पावक आपके नियमानुशासनको (दूड्या) कोई भी दुराचारी (नाधृषे) बाधित नहीं कर सकता, क्योंकि (यः त्वा पृतन्यति) जो आपसे ईर्ष्या करता है उसको (रुज) आप शक्तिहीन कर देते हैं।

भावार्थ—परमात्मा दुराचारियोंका अधःपतन करते है और सदाचारियोंको सदैव उन्नतिशील बनाते हैं ॥३॥

तं हिन्वन्ति मदच्युतं हरिं नदीषु वाजिनम् ।
इन्दुमिन्द्राय मत्सरम् ॥ ४ ॥ १० ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तं । हिन्वंति । मदच्युतं । हरिं । नदीषु । वाजिनं । इंदुं इंद्राय । मत्सरं ॥४॥

पदार्थः—(मदच्युतम्) आनन्दक्षरणकर्तारं (हरिं) सर्वदुःखोपहर्तारं (नदीषु वाजिनम्) समस्तशब्दायमानविद्युदादिशक्तिषु बलाविर्भावकर्तारं (इंदुं) सम्पूर्णब्रह्माण्डे देदीप्यमानं (इन्द्राय मत्सरम्) विद्वद्भ्यो गर्वजनकधनरूपं त्वां (हिन्वन्ति) विद्वांसो बुद्ध्या प्रेरयन्ति ।

पदार्थ—(मदच्युतम्) आनन्दको क्षरण करनेवाले (हरिं) सब दुःखोंके हरनेवाले (नदीषु वाजिनम्) सब शब्दायमान विद्युदादि शक्तियोंमें बलको निवेश करनेवाले (इन्दुम्) अखिल ब्रह्माण्डमें प्रकाशमान (इन्द्राय मत्सरम्) विद्वानोंके लिये गर्वजनक धनरूप आपको विद्वान् लोग (हिन्वन्ति) बुद्धिद्वारा प्रेरित करते हैं ।

भावार्थ—आनन्दका स्रोत परमात्मा ही सेवका प्रकाशक है उसीके प्रकाशसे सम्पूर्ण विश्व प्रकाशित होता है ॥४॥

इति त्रिपञ्चाशत्तमं सूक्तं दशमोवर्गश्च समाप्तः ।

यह ५३ वां सूक्त और १० वां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ चतुर्ऋचस्य चतुःपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य—

१ ४ अवत्सार ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः
१ २, ४ गायत्री । ३ निचृद्गायत्री ॥
षड्जः स्वरः ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ सर्वथा परमात्मसेवनहेतु वर्ण्यते ।

अब केवल परमात्माके सेवनमें हेतु कहते हैं ।

अस्य प्रत्नामनु द्युत शुक्रं दुदुह्रे अह्रयः ।
पयः सहस्रसामृषिम् ॥ १ ॥

अस्य । प्रत्नां । अनु । द्युतं । शुक्रं । दुदुह्रे । अह्रयः । पयः । सहस्रऽसां । ऋषिं ।

पदार्थः—(अह्रयः) विज्ञानिनः पुरुषाः (अस्य) अमुष्य परमात्मनः (प्रत्नाम् ऋषिम् अनु) विरचितप्रत्नवेदेन (द्युतम् शुक्रम् सहस्रसाम्) दीप्तिमत् पूतामितशक्त्युत्पादकं (पयः दुदुह्रे) ब्रह्मानन्दरूपं रसं दुहन्ति ।

पदार्थ—(अह्रयः) विज्ञानी लोग (अस्य) इस परमात्माके (प्रत्नाम् ऋषिम् अनु) रचित प्राचीन वेदसे (द्युतम्) दीप्तिमान् (शुक्रम्) पवित्र (सहस्रसाम्) अपरिमितशक्तियोंको उत्पन्न करनेवाले (पयः दुदुह्रे) ब्रह्मानन्दरूप रसको दुहते हैं ।

भावार्थ—उक्त कामधेनुरूप परमात्मासें विद्वान् सदाचारी लोग दुग्धामृतके दोग्धा बनकर संसारमें ब्रह्मामृतका संचार करते हैं ।

अयं सूर्य इवोपदृगयं सरांसि धावति ।
सप्त प्रवत आ दिवम् ॥ २ ॥

अयं । सूर्यःऽइव । उपऽदृक् । अयं । सरांसि । धावति । सप्त । प्रऽवतः । आ । दिवं ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(अयम्) असौ परमात्मा (सूर्यःइव, उप दृग्) सूर्यइव सर्वकर्मद्रष्टास्ति। यथा सूर्यः सर्वकर्मावलोकनतत्पर स्तथासावपीत्यर्थः। अथच (अयं सरांसि धावति) अयं परमेश्वरः अधिकाधिकज्ञानेन सर्वत्र व्याप्तोस्ति। (सप्त प्रवतः आदिवम्) यः परमात्मा, सप्तकिरणवन्तं सूर्यमात्मनिकृत्वा तथा द्युलोकमप्येकदेशिनं विधाय स्थिरो वर्तते।

पदार्थ—(अयम्) यह परमात्मा (सूर्यः इव उपदृग्) सूर्य के समान सबके कर्मोंका द्रष्टा है और (अयं सरांसि धावति) यह परमात्मा ज्ञानद्वारा सर्वत्र व्याप्त है (सप्त प्रवतः आदिवम् जो यह परमात्मा सातकिरण वाले सूर्यको अपने भीतर लेकर और द्युलोकको भी एक देशी बना कर स्थिर हो रहा है।

भावार्थ—जिस प्रकार अन्य ग्रह उपग्रहोंकी अपेक्षासे सूर्य स्वयं प्रकाश है इसी प्रकार सूर्य आदिकोंकी अपेक्षासे परमात्मा स्वयं प्रकाश है। उस स्वयंप्रकाश स्वयंज्योतिकी उपासना करके सबको पवित्र बनानेका यत्न करना चाहिए।

अयं विश्वानि तिष्ठति पुनानो भुवनोपरि।
सोमो देवो न सूर्यः॥ ३॥

अयं। विश्वानि। तिष्ठति। पुनानः। भुवना। उपरि। सोमः। देवः। न। सूर्यः।

पदार्थः—(सूर्यः न) रविरिव जगत्प्रेरकः (अयम्) असौ परमात्मा (सोमः देवः) सौम्यस्वभावशीलोस्ति तथा जगत्प्रकाशकोप्यस्ति। अथच (विश्वानि पुनानः) सर्वं जगत्

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पवित्रयन् (भुवनोपरि तिष्ठति) अखिलब्रह्माण्डोर्ध्वभागे अपि विराजमानो वर्तते ॥

पदार्थ—(सूर्यः, न) सूर्यके समान जगत्प्रेरक (अयम्) यह परमात्मा (सोमः, देवः) सौम्यस्वभाववाला और जगत्प्रकाशक है। और (विश्वानि, पुनानः) सब लोकोंको पवित्र करता हुआ (भुवनोपरि, तिष्ठति) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डोंके ऊर्ध्वभागमें भी वर्तमान है।

भावार्थ—उसी सर्वपावन परमात्माकी उपासना करनी चाहिये।

परि णो देववीतये वाजाँ अर्षसि गोमतः।
पुनान इन्दविन्द्रयुः ॥ ४ ॥ ११ ॥

परि। नः। देवऽवीतये। वाजान्। अर्षसि। गोऽमतः। पुनानः। इंदोऽइति। इंद्रऽयुः।

पदार्थः—(इन्दो) हे सर्वलोकस्वामिन्! (नः) अस्मान् (परि पुनानः) सर्वतः पवित्रयन्, भवान् (देववीतये) देवतानां तर्पणाय (गोमतः वाजान्) गवाद्यैश्वर्यान् (अर्षसि) ददाति (इंदवयुः) यतो भवान् दिव्यगुणयुक्तसमर्चनिकर्मकुर्वतामभिलाषुकोस्ति ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे परमात्मन् (नः) हमको (परिपुनानः) सब ओरसे पवित्र करते हुए आप (देववीतये) देवोंकी तृप्तिके लिये (गोमतः वाजान्) गवादि ऐश्वर्यको (अर्षसि) देते हैं (इंदवयुः) क्योंकि आप देवों अर्थात् दिव्यगुणसम्पन्न सत्कर्मियोंको चाहने वाले हैं।

भावार्थ—परमात्माकी कृपासे ही मनुष्यको दिव्यशक्तियें मिलती हैं। परमात्मा ही अपनी अपार दयासे मनुष्योंको देवभाव-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

को प्रदान करता है। हे देवत्वके अभिलाषीजनो! आपको चाहिए कि आप सदैव उस दिव्यगुण परमात्माकी उपासना करते रहें।

इति चतुःपञ्चाशत्तमं सूक्तमेकादशो वर्गश्च समाप्तः॥

यह ५४ वां सूक्त और ११ वां वर्ग समाप्त हुआ।

अथ चतुर्ऋचस्य पञ्चपंचाशत्तमस्य सूक्तस्य-

१ ४ अवत्सार ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता॥ छन्दः १, २ गायत्री। ३, ४ निचृद्गायत्री॥ षड्जः स्वरः॥

अथ परमात्मनः अनन्तत्वविविधवस्तूत्पादकत्वादिगुणा वर्ण्यन्ते

अब परमात्माके अनन्तत्व, अनेकवस्तुजनकत्व आदि गुणोंका वर्णन करते हैं

यवैयवं नो अन्धसा पुष्टम्पुष्टं परि स्रव।
सोम विश्वा च सौभगा॥ १॥

यवैऽयवं। नः। अंधसा। पुष्टंऽपुष्टं। परि। स्रव। सोम। विश्वा। च। सौभगा।

पदार्थः—(सोम) हे जगदीश! भवान् (नः) अस्मभ्यं (अंधसा) सहान्नादिभिः (पुष्टम् पुष्टम्) अतिबलप्रदान् (यवं यवं) साञ्चितानेकपदार्थान् तथा (विश्वा च सौभगा) समग्राणि सौभाग्यानि (परिस्रव) समुत्पादयतु॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! आप (नः) हमारे लिये (अन्धसा) अन्नादिकोंके सहित (पुष्टम् पुष्टम्) अतिबलप्रद (पवम् पवम्) सञ्चित अनेक पदार्थोंको तथा (विश्वा च सौभगा) सम्पूर्ण सौभाग्यको (परिस्रव) उत्पन्न करिये ।

भावार्थ—सम्पूर्ण ऐश्वर्य और सम्पूर्ण सौभाग्यको देने वाला एकमात्र परमात्मा ही है कोई अन्य नहीं ।

इन्दो यथा तव स्तवो यथा ते जातमन्धसः ।
नि बर्हिषि प्रिये सदः ॥ २ ॥

इन्दोइति । यथा । तव । स्तवः । यथा । ते । जातं । अन्धसः । नि । बर्हिषि । प्रिये । सदः ।

पदार्थः—(इन्दो) हे परमेश्वर ! (यथा तव स्तवः) येन प्रकारेण भवद्यशः सर्वस्मिन् संसारे व्याप्नोति अथच (यथा ते अन्धसः जातम्) येन प्रकारेणान्नादिपदार्थानां राशि र्भवतैव निर्मितः तेनैव प्रकारेण (निषदः प्रिये बर्हिषि) यद्हि भवतः प्रियं यज्ञपदं तस्मिन् आगत्य विराजताम् ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे परमात्मन् ! (यथा तव स्तवः) जिस प्रकार आपका यश संसार भरमें व्याप्त है और (यथा ते अन्धसः, जातम्) जिस प्रकार अन्नादि पदार्थोंका समूह आपहीने रचा है उसी प्रकार (निषदः प्रिये बर्हिषि) जो आपका प्रिय यज्ञस्थल है उसमें आकर आप विराजमान होयँ ।

भावार्थ—परमात्मा यज्ञादिस्थानोंको अपने विचित्र भावोंसे विभूषित करता है ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उत नो गोविदश्वित्पवस्व सोमान्धसा ।
मक्षूतमेभिरहभिः ॥ ३ ॥

उत । नः । गोऽवित् । अश्वऽवित् । पवस्व । सोम । अन्धसा मक्षुऽतमेभिः । अहऽभिः ।

पदार्थः—(उत नः) योह्यस्मभ्यम् (गोवित् अश्ववित्) गवाद्यैश्वर्यप्रापको भवानेव । अतः-(सोम) हे जगदाधार (मक्षुतमेभिः अहभिः) अचिरेणैव कालेन (अन्धसा पवस्व) समस्तान्नादिसमृद्ध्या पवित्रय ॥

पदार्थ—(उत नः) जो कि हमारे लिये (गोवित् अश्ववित्) गवाश्वादि ऐश्वर्यके प्रापक आपही हैं इस लिये (सोम) हे परमात्मन् (मक्षुतमेभिः अहभिः) अति अल्पकाल ही में (अन्धसा पवस्व) सम्पूर्ण अनादि समृद्धिसे पवित्र करिये ।

भावार्थ—सम्पूर्ण ऐश्वर्योंका अधिपति एकमात्र परमात्मा है । इसलिए उसीकी उपासना और प्रार्थना करनी चाहिये ।

यो जिनाति न जीयते हन्ति शत्रुमभीत्य ।
स पवस्व सहस्रजित् ॥ ४ ॥ १२ ॥

यः । जिनाति । न । जीयते । हंति । शत्रुं । अभिऽइत्य ।
सः । पवस्व । सहस्रऽजित् ।

पदार्थः—(यः जिनाति) योहि भवान् सकलब्रह्माण्डान्तर्गतपदार्थानायुरहितान्करोति अथच (न जीयते) [illegible]

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मायुरहितः कदापि न भवति। तथा (शत्रुम् अभीत्य हन्ति) योहि स्वव्यापनशीलशक्त्या बैरिबल मपहरति, परं स्वयमहरणीय-शक्तिमानस्ति (सहस्रजित्) सः सर्वोपरिशक्तिसम्पन्न स्त्वं (पवस्व) मां सुरक्षय॥

पदार्थ—(यः जिनाति) जो आप सकल ब्रह्माण्डगत पदार्थों-को आयुरहित कर देते हैं और (न जीयते) स्वयं कदापि निरायुष नहीं होते तथा (शत्रुम् अभीत्य हन्ति) जो आप अपनी व्याप्ति द्वारा शत्रुओंकी शक्तियोंको हर लेते हैं और स्वयं अहार्य शक्ति वाले हैं (सहस्र-जित्) वह सर्वोपरिशक्तिसम्पन्न आप (पवस्व) हमको सुरक्षित करिये।

भावार्थ—काल सब पदार्थोंके आयुको क्षय करके आप स्वयं अविनाशी बना रहता है। परन्तु कालको अविनाशित्व भी सापेक्ष है अर्थात् अनित्यपदार्थोंकी अपेक्षा काल को नित्य कहा जाता है परन्तु परमात्माकी अपेक्षासे काल भी अनित्य है। इसलिए परमात्मा सर्वोपरि कूटस्थ नित्य है, उसीकी उपासना मनुष्यको शुद्ध हृदयसे करनी चाहिए।

इति पञ्चपञ्चाशत्तमं सूक्तं द्वादशो वर्गश्च समाप्तः।

यह ५५ वां सूक्त औ १२ वां वर्ग समाप्त हुआ।

अथ चतुर्ऋचस्य षट्पञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य।

१ ४ अवत्सार ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता॥ छन्दः १, ३, गायत्री। ४ यवमध्या गायत्री॥ षड्जः स्वरः॥

सम्प्रति सदाचारिभिरेव परमात्मा लभ्य इति वर्ण्यते।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अब परमात्मा सदाचारियोंको ही ज्ञानगोचर हो सकता है-यह कहते हैं।

परि सोम ऋतं बृहदाशुः पवित्रे अर्षति।
विघ्नन्रक्षाँसि देवयुः॥ १॥

परि। सोमः। ऋतं। बृहत्। आशुः। पवित्रे। अर्षति। विघ्नन्। रक्षाँसि। देवऽयुः।

पदार्थः—(सोम) हे जगदीश्वर! भवान् (ऋतं बृहत् आशुः) सत्यस्वरूपवानस्ति। तथा सर्वस्मादपि महान् अथ च शीघ्रगतिशीलोस्ति (देवयुः) सत्कर्मिणोवाञ्छन् तथा (रक्षांसि विघ्नन्) दुष्टान् घातयन् (पवित्रे अर्षति) पवित्रान्तःकरणे निवसति।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्! आप (ऋतम् बृहत् आशुः) सत्यस्वरूप और सबसे महान् तथा शीघ्रगतिवाले हैं (देवयुः) सत्कर्मियोंको चाहते हुये और (रक्षांसि विघ्नन्) दुष्कर्मियोंको नष्ट करते हुये (पवित्रे अर्षति) पवित्र अन्तःकरणोंमें निवास करते हैं।

भावार्थ—परमात्मा कर्मोंका यथायोग्य फलप्रदाता है। इसलिए उसके उपासकको चाहिए कि वह सत्कर्म करता हुआ उसका उपासक बने, ताकि उसे परमात्माके दंडका फल न भोगना पड़े। तात्पर्य यह है कि प्रार्थना उपासनासे केवल हृदयकी शुद्धि होती है पापोंकी क्षमा नहीं होती।

यत्सोमो वाजमर्षति शतं धारा अपस्युवः।
इन्द्रस्य सख्यमाविशन्॥ २॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यत् । सोमः । वाजं । अर्षति । शतं । धाराः । अपस्युवः । इन्द्रस्य । सख्यं । आऽविशन् ।

पदार्थः--(यत्, सोमः, वाजम्, अर्षति) योहि जगदीश्वरः बलं प्रददाति, अतः (अपस्युवः) कर्मयोगिजनाः (इन्द्रस्य, सख्यम्, आविशन्) परमैश्वर्यवत स्तस्य परमात्मनो मैत्रीभावं प्राप्नुवन्तः (शतम् धाराः) तैनैव प्रदत्तानि बलानि, आमोदधाराश्चोपभुञ्जन्ते ।

पदार्थ--(यत्, सोमः, वाजम्, अर्षति) जो परमात्मा बलका प्रदान करता है इससे (अपस्युवः) कर्मयोगी लोग (इन्द्रस्य, सख्यम्, आविशन्) परमैश्वर्य वाले उस परमात्माके मैत्रीभावको प्राप्त होते हुये (शतम् धाराः) उसके दिये हुये बल और आनन्दकी अनेक धाराओंका उपभोग करते हैं ।

भावार्थ—वास्तवमें परमात्माका कोई मित्र या अमित्र नहीं । जो लोग परमात्माके उसकी आज्ञापालन करनेसे उसके अनुकूल चलते हैं उनसे वह स्नेह करता हैं इसलिए वे मित्र कहलाते हैं और प्रतिकूलवर्ती लोग स्नेहके पात्र नहीं होते, इसलिए अमित्र कहलाते हैं इसी लिए यहां मित्र शब्द आया है । कुछ मानुषी मैत्रीके भावसे नहीं ।

अभि त्वा योषणो दश जारं न कन्यानूषत ।
मृज्यसे सोम सातये ॥ ३ ॥

अभि । त्वा । योषणः । दश । जारं । न । कन्या । अनूषत । मृज्यसे । सोम । सातये ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(कन्या, जारम्, न) यथा दीपन मग्नेः प्र
वति तथैव (दश, योषणः) दशेन्द्रियवृत्तयः (त्वा अभ्यनूषत
भवन्नुतिद्वारेण प्राप्ता भवंति । (सोम) हे नारायण । (सातये
भवानिष्टप्राप्तये (मृज्यसे) ध्यानगोचरः क्रियते ।

पदार्थ—(कन्या, जारम्, न) जिस प्रकार दीप्ति अग्निको प्र
होती है उसी प्रकार (दश, योषणः) दश इन्द्रियवृत्तियें (त्वा, अभ
नूषत) आपको स्तुति द्वारा प्राप्त होती है (सोम) हे परमात्म
(सातये) आप इष्टप्राप्तिके लिये (मृज्यसे) ध्यानगोचर किये जाते

भावार्थ—संस्कारी पुरुषोंकी इन्द्रियवृत्तियें उसको विषय क
हैं असंस्कारियोंकी नहीं ।

त्वमिन्द्राय विष्णवे स्वादुरिन्दो परि स्रव ।
नृन्स्तोतॄन्पाह्यंहसः ॥ ४ ॥ १३ ॥

त्वं । इंद्राय । विष्णवे । स्वादुः । इंदो इति । परि । स्र
नृन् । स्तोतॄन् । पाहि । अंहसः ।

पदार्थः—(इन्दो) हे परमात्मन् ! (त्वम्) आ
(इन्द्राय विष्णवे) व्याप्तिशीलज्ञानयोगिने (स्वादुः) परमा
दनीयः रसोस्ति । तदर्थं (परिस्रव) त्वं समस्ताभीष्टप्रदानं कु
(नृन् स्तोतॄन् पाहि अंहसः) स्वोपासकान् पापतस्त्रायस्व

पदार्थ—(इन्दो) हे परमात्मन् ! (त्वम्) आप (
विष्णवे) व्याप्तिशील ज्ञानयोगीके लिये (स्वादुः) परम आस्वा
रस हैं । उनके लिये (परिस्रव) आप सकल अभीष्टका प्रदान
(नृन् स्तोतॄन् पाहि अंहसः) अपने उपासकोंको पापसे बचाइये ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—ज्ञानयोगी अपने ज्ञानके प्रभावसे ईश्वरका साक्षात्कार करता है और अनिष्ट कर्मोंसे बचता है ।

इति षट्पञ्चाशत्तमं सूक्तं त्रयोदशो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ५६ वां सूक्त और १३ वां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ चतुर्ऋचस्य सप्तपंचाशत्तमस्य सूक्तस्य—

१ ४ अवत्सारः ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः १, ३ गायत्री । २ निचृद्गायत्री । ४ ककुम्मती गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मा स्वभक्तान् विविधानन्दैर्योजयति असतश्च-दरिद्रयतीति वर्ण्यते ।

परमात्मा अपने भक्तोंको विविध आनन्दोंसे और दुराचारियों को दारिद्र्यसे युक्त करता है, यह कहते हैं ।

प्र ते धारा असश्चतो दिवो न यन्ति वृष्टयः ।
अच्छा वाजं सहस्रिणम् ॥ १ ॥

प्र । ते । धाराः । असश्चतः । दिवः । न । यंति । वृष्टयः । अच्छ । वाजं । सहस्रिणं ।

पदार्थः—(दिवः, वृष्टयः न) द्युलोकतो वृष्टिरिव (ते, धाराः) ब्रह्मानन्दाय भवतो धाराः (असश्चतः) अनेकप्रकाराः (यन्ति) विद्वज्जनानां मन्तःकरणे प्रादुर्भवंति । भवान् स्वोपास-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कस्य (सहस्रिणं, वाजम्) बहुप्रकारैश्वर्यान् (अच्छ) अभि-मुखं करोतु ।

पदार्थ—(दिवः वृष्टयः न) द्युलोकसे वृष्टिके समान (ते धाराः) आपके ब्रह्मानन्दकी धारायें (असश्चतः) अनेक प्रकारसे (यन्ति) विद्वानोंके हृदयोंमें प्रादुर्भूत होती है, आप अपने उपासकों को (सहस्रिणम् वाजम्) अनेक प्रकारके ऐश्वर्यके (अच्छ) अभि-मुख करिये ।

भावार्थ—जिन लोगोंने सत्कर्मों द्वारा अपने आपको ज्ञान-का पात्र बनाया है उनके अन्तःकरणमें परमात्माकी सुधामयी वृष्टि सदैव होती रहती है ।

अभि प्रियाणि काव्या विश्वा चक्षाणो अर्षति ।
हरिस्तुञ्जान आयुधा ॥ २ ॥

अभि । प्रियाणि । काव्या । विश्वा । चक्षाणः । अर्षति । हरिः । तुञ्जानः । आयुधा ।

पदार्थः—(हरिः) स परमात्मा (आयुधा, तुञ्जानः) स्वश-स्त्रैः शत्रून् व्यथयन् (विश्वा काव्या चक्षाणः) सम्पूर्णकर्माणि पश्यन् (प्रियाणि अभि अर्षति) प्रियान् स्वोपासकानभिगच्छति ॥

पदार्थ—(हरिः) वह परमात्मा (आयुधा तुञ्जानः) अपने शस्त्रोंसे शत्रुओंको व्यथित करता हुआ (विश्वा काव्या चक्षाणः) सम्पूर्ण कर्मोंको देखता हुआ (प्रियाणि अभि अर्षति) अपने प्रिय उपासकोंकी ओर जाता है ।

भावार्थ—उसका दण्डरूप वज्र दुष्टोंके लिए सदैव उद्यत रहता है और सत्कर्मी सदैव उससे निर्भय रहते हैं ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स मर्मृजान आयुभिरिभो राजेव सुव्रतः ।
श्येनो न वंसु षीदति ॥ ३ ॥

सः । मर्मृजानः । आयुऽभिः । इभः । राजाऽइव । सुऽव्रतः ।
श्येनः । न । वंसु । सीदति ।

पदार्थः—(सुव्रतः, इभः, राजा, इव) शोभनानुशासनकर्तृनिर्भीकनृपतिरिव (सः) असौ परमात्मा (आयुभिः मर्मृजानः) ऋत्विग्भिः स्तुतः- (श्येनः वंसु, न) यथा विद्युदादयः सूक्ष्मेषु पदार्थेषु तिष्ठन्ति, तथैव (सीदति) स ईश्वरस्तेषा मन्तःकरणे अधितिष्ठति ॥

पदार्थ—(सुव्रतः, इभः, राजा, इव) सुन्दर अनुशासन वाले निर्भीक राजाके समान (स) वह परमात्मा (आयुभिः, मर्मृजानः) ऋत्विजों द्वारा स्तुति किया गया (श्येनः, वंसु, न) जिस प्रकार विद्युदादिशक्तियें सूक्ष्म पदार्थोंमें रहती है उस प्रकार (सीदति) वह उनके हृदयमें अधिष्ठित होता है ।

भावार्थ—जैसे ब्रह्माण्डगत प्रत्येक पदार्थमें विद्युत् व्याप्त है इसी प्रकार परमात्मशक्ति भी सर्वत्र व्याप्त है ।

स नो विश्वा दिवो वसूतो पृथिव्या अधि ।
पुनान इन्दवा भर ॥ ४ ॥ १४ ॥

सः । नः । विश्वा । दिवः । वसु । उतोइति । पृथिव्याः । अधि ।
पुनानः । इंदो इति । आ । भर ।

पदार्थः—(इन्दो) हे परमात्मन् ! (सः) स त्वम् (नः)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अस्मदर्थं (दिवः, विश्वा, वसु) द्युलोकसम्बन्धिसकलसम्प
(उतो) तथा (पृथिव्याः, अधि) भूमिसम्बन्धिसमस्तसम्प
(आभर) आहर । अथच (पुनानः) मां पवित्रं कुरु ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे परमात्मन् ! (सः) वह आप (नः) हम
लिये (दिवः, विश्वा, वसु) द्युलोकसम्बन्धी सकल सम्पत्तियें (हम
तथा (पृथिव्याः, अधि) पृथिवीसम्बन्धी सम्पूर्ण सम्पत्तियें (आ
आहरण कीजिये और (पुनानः) मुझको पवित्र करिये ।

भावार्थ—सम्पूर्ण संपत्तियोंका स्वामी एकमात्र परमात्म
है। इसलिए ऐश्वर्य प्राप्तिके लिए उसीकी शरणागत होना आवश्य

इति सप्तपञ्चाशत्तमं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ५७वां सूक्त और १४वां वर्ग समाप्त हुआ ॥

अथ चतुर्ऋचस्य अष्टपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य—

१ ४ अवत्सार ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ अ
१, ३ निचृद्गायत्री । २ विराड्गायत्री ।
४ गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मनो विभुत्वं वर्ण्यते ।

अब परमात्माका सर्वव्यापक होना वर्णन करते हैं—

तरत्स मन्दी धावति धारा सुतस्यान्धसः ।
तरत्स मन्दी धावति ॥ १ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तरत् । सः । मंदी । धावति । धारा । सुतस्य । अंधसः ।
तरत् । सः । मंदी । धावति ।

पदार्थः—(मन्दी सः) उत्कृष्टानन्दयुक्तः स परमात्मा (तरत्) पापिन स्तारयन् (सुतस्य अन्धसः धारा) उत्पन्नेन ब्रह्मानन्दरसेन सह (धावति) स्तोतृणां हृदि विराजमानो भवति । (तरत् सः मन्दी धावति) अथच स परमात्मा निश्चयेन सम स्तपापकारिण स्तारयन् परमानन्दरूपेण व्याप्तो भवति ॥

पदार्थ—(मन्दी सः) परम आनन्दमय यह परमात्मा (तरत्) पापियोंको तारता हुआ (सुतस्य अन्धसः धारा) उत्पन्न किये हुए ब्रह्मानन्दके रस सहित (धावति) स्तोताओंके हृदयमें विराजमान होता है । (तरत् सः मन्दी धावति) और वह परमात्मा निश्चय सब पापियोंको तारता हुआ परमानन्दरूपसे संसारमें व्याप्त हो रहा है ।

भावार्थ—पापियोंको तारनेका अभिप्राय यह है कि जो लोग पापका प्रायश्चित्त करके उसकी शरणको प्राप्त होते हैं वे फिर कदापि पापपङ्कसे पीड़ित नहीं होते । अथवा यों कहो कि पापमयसंचित कर्मों की स्थिति उनके हृदयसे दूर हो जाती है । अन्य पापोंकी क्षमा ईश्वर कदापि नहीं करता ।

उस्रा वेद वसूनां मर्तस्य देव्यवसः ।
तरत्स मन्दी धावति ॥ २ ॥

उस्रा । वेद । वसूनां । मर्तस्य । देवी । अवसः । तरत् ।
सः । मंदी । धावति ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(वसूनाम् उस्रा) अनेकविधरत्नाद्यैश्वर्यस्य (देवी) तस्य परमात्मनो दिव्यशक्तिः (मर्तस्य अवसः वेद) जीवरक्षायां जागरूका भवति । (तरत् सः मन्दी धावति) तथाच स परमात्मा सर्वांस्तारयन् आनन्दरूपेण सर्वत्र व्याप्तोऽस्ति

पदार्थ—(वसूनाम् उस्रा) सर्वविध रत्नादि ऐश्वर्योंकी भण्डार (देवी) उस परमात्माकी दिव्यशक्ति (मर्तस्य अवसः वेद) जीवोंकी रक्षा करनेमें जागरूक रहती है (तरत् सःमन्दी धावति) और वह परमात्मा सबको तारता हुआ आनन्दरूपसे सर्वत्र व्याप्त है ।

भावार्थ—परमात्माके आनन्दसे ही आनन्दित होकर सब प्राणी सुखको उपलब्ध करते हैं । अर्थात् आनन्दमय एकमात्र परमात्मा है कोई अन्य नहीं ।

ध्वस्रयोः पुरुषन्त्योरा सहस्राणि दद्महे ।
तरत्स मन्दी धावति ॥ ३ ॥

ध्वस्रयोः । पुरुऽसंत्योः । आ । सहस्राणि । दद्महे । तरत् सः । मंदी । धावति ।

पदार्थः—हे परमात्मन् (ध्वस्रयोः पुरुषन्त्योः) भवतो व्याप्तिशाला या ज्ञानशक्तिस्तथा कर्मशक्तिश्च (सहस्राणि) अनेकप्रकारिकास्ति, ताः (आदद्महे) प्राप्नवाम (तरत् सः मन्दी धावति) भवान् सर्वान् तारयन् हर्षरूपेण सर्वस्मिन् व्याप्तो विराजते

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (ध्वस्रयोः पुरुषन्त्योः) आपकी व्याप्तिशील जो ज्ञानशक्ति और कर्मशक्ति (सहस्राणि) अनेक प्रकारकी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उनको (आदद्महे) हम प्राप्त करें (तरत् सः मन्दी धावति) आप सबको तारते हुये हर्षरूपसे सर्वत्र विराजित हैं ।

भावार्थ—परमात्माकी ज्ञानशक्ति और कर्मशक्तिको लाभ करके कर्मयोगी और ज्ञानयोगी अपने कर्तव्यमें तत्पर रहते हैं ।

आ ययोस्त्रिंशतं तना सहस्राणि च दद्महे ।
तरत्स मन्दी धावति ॥ ४ ॥ १५ ॥

आ । ययोः । त्रिंशतं । तना । सहस्राणि । च । दद्महे । तरत् । सः । मंदी । धावति ।

पदार्थः—(ययोः) याभिः शक्तिभिः (त्रिंशतं तना) वयं शतत्रयवत्सरपर्यन्तं दीर्घायुषः तथा (सहस्राणि च आदद्महे) सहस्रशक्त्युत्पादनं कर्तुं शक्नुमः । एतादृक्छक्तिसम्पन्नः (मन्दी) आनन्दकारकः (सः) स परमात्मा (तरत्) सर्वपापिनस्तारयन् (धावति) अखिलसंसारं व्याप्तो भवति ।

पदार्थ—(ययोः) जिन शक्तियोंसे (त्रिंशतम् तना) हम तीनसौवर्ष तक दीर्घायु और (सहस्राणि च आदद्महे) सहस्रों शक्तियोंको उत्पन्न कर सकते हैं । ऐसी शक्तियों वाला (मन्दी) आह्लादजनक (सः) वह परमात्मा (तरत्) सब पापियोंको तारता हुआ (धावति) सम्पूर्ण संसारमें व्याप्त हो रहा है ।

भावार्थ—यद्यपि साधारणतया मनुष्यके आयुकी अवधि सौवर्ष तक है, तथापि कर्मयोगी अपने उग्रकर्मों द्वारा अपनी आयुको बढ़ा सकते हैं । इसी लिए " भूयश्च शरदः शतात् " इस वाक्यमें सौ से अधिककी प्रार्थना की गई है । और जो इस मंत्रमें पापोंके नाश-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

का कथन है वह पापवासनाके क्षयके अभिप्रायसे है। प्रारब्धकर्मोंके नाश के अभिप्रायसे नहीं।

इति अष्टपञ्चाशत्तमं सूक्तं पञ्चदशो वर्गश्च समाप्तः।

यह ५८वां सूक्त और १५ वां वर्ग समाप्त हुआ।

अथ चतुर्ऋचस्यैकोनषष्ठितमस्य सूक्तस्य-

१ ४ अवत्सार ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता॥ छन्दः १ गायत्री २ आर्चीस्वराड्गायत्री। ३, ४ निचृद्गायत्री॥ षड्जः स्वरः॥

अथ स्वाभ्युन्नतिं वाञ्छन्निः अवन्ध्यशासनः परमात्मैव प्रार्थनीय इत्युच्यते।

अभ्युन्नतिको चाहने वाला केवल परमात्माकी ही प्रार्थना करे, यह कहते हैं।

पवस्व गोजिदश्वजिद्विश्वजित्सोम रण्यजित्।
प्रजावद्रत्नमा भर॥ १॥

पवस्व। गोऽजित्। अश्वऽजित्। विश्वऽजित्। सोम। रण्यऽजित्। प्रजाऽवत्। रत्नं। आ। भर॥ १॥

पदार्थः--हे परमात्मन्! (गोजित, अश्वजित) भ गवाश्वाद्यैश्वर्यैर्युक्त स्तथा (रण्यजित्) रणे दुष्टेभ्यः पराजयक ता अथ च (विश्वजित) संसारे सर्वोपर्यस्ति भवान्,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मां (पवस्व) पवित्रयतु। तथा (प्रजावद्रत्नमाभर) सन्तानादि-युक्तरत्नैः परिपूर्णं करोतु।

पदार्थ—हे परमात्मन्! (गोजित्, अश्वजित्) आप गवादि ऐश्वर्योंसे विराजमान तथा (रण्यजित्) संग्राममें दुराचारियोंको पराजय प्राप्त करानेवाले और (विश्वजित्) संसारमें सर्वोपरि हैं। आप हमको (पवस्व) पवित्र करिये। और (प्रजावद्रत्नम् आभर) सन्तानादियुक्त रत्नोंसे परिपूर्ण करिये।

भावार्थ—परमात्माकी दयासे ही पुरुषको विविध प्रकारके रत्नोंका लाभ होता है।

पवस्वाद्भ्यो अदाभ्यः पवस्वौषधीभ्यः।
पवस्व धिषणाभ्यः ॥ २ ॥

पवस्व। अत्ऽभ्यः। अदाभ्यः। पवस्व। ओषधीभ्यः। पवस्व। धिषणाभ्यः ॥२॥

पदार्थः—हे परमात्मन्! त्वम् (अदाभ्यः) अदम्भनीयोसि (अद्भ्यः) जलैः (ओषधिभ्यः) औषधैः (धिषणाभ्यः) तथा बुद्धिभिः (पवस्व) मां सुरक्षय।

पदार्थ—हे परमात्मन्! आप (अदाभ्यः) अदम्भनीय हैं (अद्भ्यः) जलोंसे (औषधिभ्यः) औषधियोंसे (धिषणाभ्यः) तथा बुद्धिओंसे (पवस्व) हमको सुरक्षित कीजिये।

भावार्थ—तात्पर्य यह है कि परमात्मा सब शक्तियोंके ऊपर विराजमान है। उसका शासन करनेवाली कोई अन्य शक्ति नहीं।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्वं सोम पवमानो विश्वानि दुरिता तर ।
कविः सीद नि बर्हिषि ॥ ३ ॥

त्वं । सोम । पवमानः । विश्वानि । दुःऽइता । तर । कविः । सीद । नि । बर्हिषि ॥३॥

पदार्थः—(सोम) हे भगवन् (त्वम्) भवान् (विश्वानि दुरिता तर) समस्तपापान् दूरीकरोतु (कविः) सम्पूर्णकर्माभिज्ञो भवान् (बर्हिषि) यज्ञस्थलेषु (निषीद) बिराजताम् ।

पदार्थ—(सोम) हे भगवन् ! (त्वम्) आप (विश्वानि दुरिता तर) सम्पूर्ण पापोंको दूर करिये (कविः) सर्वकर्माभिज्ञ आप (बर्हिषि) यज्ञस्थलोंमें (निषीद) बिराजमान होयँ ।

भावार्थ—मलिनवासनाओंके क्षयके लिए परमात्मासे सदैव प्रार्थना करनी चाहिए ।

पवमान स्वर्विदो जायमानोऽभवो महान् ।
इन्दो विश्वाँ अभीदसि ॥ ४ ॥ १६ ॥

पवमान । स्वः । विदः । जायमानः । अभवः । महान् । इंदोइति । विश्वान् । अभि । इत् । असि ॥४॥

पदार्थः—(पवमान) हे सर्वपावक ! (इन्दो) हे जगदीश्वर भवान् (अभवः) अनादिरस्ति । अथच (महान्) पूजनीयोऽस्ति तथा (विश्वान् अभि इदसि) सर्वानधःकुर्वन् सर्वोपरिविराजमानोस्ति । (जायमानः) भवान् विज्ञानिनामन्तःकरणे प्रादुर्भवन् (स्वः विदः) समस्तप्रकाराभीष्टस्य प्रदानं करोतु ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(पवमान) हे सर्वपावक ! (इन्दो) परमात्मन् ! आप (अभवः) अनादि हैं और (महान्) पूजनीय है तथा (विश्वान्, अभि, इदसि) सबको नीचे किये हुये आप सर्वोपरि विराजमान है । (जायमानः) आप विज्ञानियोंके हृदयमें प्रादुर्भूत होते हुये (स्वः, विदः) सर्वविध अभीष्टोंको प्रदान करिये ।

भावार्थ—उसी परमात्माकी उपासनासे सब इष्ट फलोंकी प्राप्ति होती है ।

इति एकोनषष्टितमं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ५९वां सूक्त और १६वां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ चतुर्ऋचस्य षष्टितमस्य सूक्तस्य—

१ ४ अवत्सार ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः १, २, ४ गायत्री । ३ निचृदुष्णिक् ॥ स्वरः १, २, ४ षड्जः । ऋषभः ॥

अत्र तद्गुणकीर्तनेन परमात्मा स्तूयते—

अब उसके गुणोंके कीर्तनसे परमात्माकी स्तुति करते हैं ।

प्र गायत्रेण गायत पवमानं विचर्षणिम् ।
इन्दुं सहस्रचक्षसम् ॥ १ ॥

प्र । गायत्रेण । गायत । पवमानं । विऽचर्षणिं । इन्दुं । सहस्रऽचक्षसं ॥ १ ॥

पदार्थः—हे होतारो जनाः ! यूयम् (इन्दुम्) परमैश्वर्यसम्पन्नं (पवमानम्) सर्वपवितारं (सहस्रचक्षसम्) बहुविध-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वेदादिशब्दवन्तं (विचर्षणिम्) सर्वद्रष्टारं परमात्मानं (गायत्रेण) गायत्रादिछन्दसा (प्रगायत) गानं कुरुत ॥

पदार्थ—हे होता लोगो ! तुम (इन्दुम्) परमैश्वर्यसम्पन्न (पवमानम्) सबको पवित्र करने वाले (सहस्रचक्षसम्) अनेकविध वेदादि वाणी वाले (विचर्षणिम्) सर्वद्रष्टा परमात्माको (गायत्रेण) गायत्रादि छन्दोंसे (प्रगायत) गान करो ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि हे मनुष्यो ! तुम वेदाध्ययनसे अपने आप को पवित्र करो ।

तं त्वा सहस्रचक्षसमथो सहस्रभर्णसम् ।
अति वारमपाविषुः ॥ २ ॥

तं । त्वा । सहस्रऽचक्षसं । अथोइति । सहस्रऽभर्णसं । अति । वारं । अपाविषुः ॥ २ ॥

पदार्थः—हे परमात्मन् (तम्, त्वा) लोकप्रसिद्धं त्वां स्तोतारो जनाः (अति) अत्यन्तं (अपाविषुः) स्तुतिद्वारा प्रकाशितं कुर्वन्ति । यो भवान् (सहस्रचक्षसम्) अनेकवेदवाग्रचयितास्ति तथा (सहस्रभर्णसम्) सर्वेषां जीवानां पोषकः, अथ (वारम्) भजनीयोस्ति ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (तम्, त्वा) लोकप्रसिद्ध उन आपको स्तोता लोग (अति) अत्यन्त (अपाविषुः) स्तुतिद्वारा प्रकाशित करते हैं। जो आप (सहस्रचक्षसम्) अनेक वेदवाक्के रचयिता हैं तथा (सहस्रभर्णसम्) सम्पूर्ण जीवोंके पोषक हैं और (वारम्) भजनीय हैं

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्माकी सर्वज्ञताका वर्णन किया गया है और एकमात्र उसीको उपास्यदेव वर्णन किया है ।

अति वारान्पवमानो असिष्यदत्कलशाँ अभि धावति ।
इन्द्रस्य हार्द्याविशन् ॥ ३ ॥

अति । वारान् । पवमानः । असिस्यदत् । कलशान् । अभि । धावति । इन्द्रस्य । हार्दि । आऽविशन् ॥ ३ ॥

पदार्थः—हे जगदीश्वर ! भवान् (इन्द्रस्य, हार्दि, आविशन्) विज्ञानिनां हृदये निवसन् (वारान् अतिपवमानः) स्वोपासकानतिपवित्रयन् (कलशान्, अभि, धावति) तेषा मन्तःकरणेषु स्वयं प्रादुर्भवन् (असिष्यदत्) सर्वत्र स्वस्यन्दनशीलशक्तिभिः पूरितोस्ति ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (इन्द्रस्य, हार्दि, आविशन्) विज्ञानीके हृदयमें निवास करते हुये (वारान् अतिपवमानः) अपने उपासकोंको अत्यन्त पवित्र करते हुये (कलशान्, अभि, धावति) उनके अन्तःकरणोंमें आप प्रादुर्भूत होते हुये (असिष्यदत्) सर्वत्र अपनी स्यन्दनशील शक्तियोंसे पूरित हैं ।

भावार्थ—परमात्मा ज्ञानप्रद होकर शुद्धान्तःकरणोंमें सदैव विराजमान रहता है । इस लिये परमात्मज्ञानके लिये बुद्धिका निर्मल करना अत्यावश्यक है ।

इन्द्रस्य सोम राधसे शं पवस्व विचर्षणे ।
प्रजावद्रेत आ भर ॥ ४ ॥ १७ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इन्द्रस्य । सोम । राधसे । शं । पवस्व । विऽचर्षणे । प्रऽजावत् । रेतः । आ । भर ॥ ४ ॥

पदार्थः—(सोम) हे जगदीश्वर ! (इन्द्रस्य, राधसे) कर्मयोगिनामैश्वर्याय भवान् (शं, पवस्व) आमोदस्य क्षरणं करोतु । अथच (प्रजावत्, रेतम्, आभर) प्रजादिभिर्युतमैश्वर्यं परिपूर्णं करोतु ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (इन्द्रस्य, राधसे) कर्मयोगियोंके ऐश्वर्यके लिये आप (शं, पवस्व) आनन्दका क्षरण कीजिये । और (प्रजावत्, रेतम्, आभर) प्रजादिकोंसे सम्पन्न ऐश्वर्यको परिपूर्ण करिये ।

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्मासे अभ्युदयकी प्रार्थना की गई है कि हे परमात्मन् ! आप हमको कर्मयोगी बनाकर अभ्युदयशील बनावें ।

इति षष्ठितमं सूक्तं सप्तदशो वर्गश्च समाप्तः ।

यह ६०वां सूक्त और १७वां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ त्रिंशदृचस्यैकषष्ठितमस्य सूक्तस्य—

१–३० अमहीयुर्ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः १, ४, ५, ८, १०, १२, १५, १८, २२–२४, २९, ३० निचृद्गायत्री । २, ३, ६, ७, ९, १३, १४, १६, १७ २०, २१, २६ २८ गायत्री । ११, १९ विराड्गायत्री । २५ ककुम्मती गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथेश्वरेण क्षात्रधर्म उपदिश्यते ।

अब ईश्वर क्षात्र धर्मका उपदेश करते हैं ।

CC-0. Pandit Nityanand Vidya Vachaspati Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अया वीती परि स्रव यस्त इन्दो मदेष्वा।
अवाहन्नवतीर्नव ॥ १ ॥

अया। वीती। परि। स्रव। यः। ते। इन्दो इति। मदेषु।
आ। अवऽअहन्। नवतीः। नव ॥ १ ॥

पदार्थः—(इन्दो) हे सेनाधीश! (यः) यो वैरी (ते) तव (मदेषु) सर्वसुखकारकप्रजारक्षणेषु (आ) विघ्नं करोतु तं (अया, वीती, परिस्रव) स्वकीयाभिः क्रियाभिः रभिभूतं कुरु। अथ च (अवाहन्, नवतीः, नव) नवनवतिविधदुर्गाणां विध्वंसनं कुरु ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे सेनापते! (यः) जो शत्रु (ते) तुम्हारे (मदेषु) सर्वसुखकारक प्रजापालनमें (आ) विघ्न करे, उसको (अया, वीती, परिस्रव) अपनी क्रियाओंसे अभिभूत करो। और (अवाहन्, नवतीः, नव) निन्यानवे प्रकारके भी दुर्गोंका ध्वंसन करो ॥

भावार्थ—इस मन्त्रमें क्षात्रधर्म्मका वर्णन है। और परमात्मासे इस विषयका बल मांगा गया है कि हम सब प्रकारसे शत्रुओंका नाश करके संसारमें न्यायका प्रचार करें।

पुरः सद्य इत्थाधिये दिवोदासाय शम्बरम्।
अध त्यं तुर्वशं यदुम् ॥ २ ॥

पुरः। सद्यः। इत्थाऽधिये। दिवःऽदासाय। शंबरं। अध।
त्यं। तुर्वशं। यदुं ॥२॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—हे कर्मयोगिन् ! यः (इत्थाधिये, दिवोदासाय सत्यधीमतस्तथा द्युलोकसम्बन्धिकर्माणि कुशलस्य भवतः (शम्बरम्) शत्रुरस्ति (त्यम् तुर्वशम् यदुम्) तं घातकमनुष्यं (अथ च तस्य (पुरः) पुरं ध्वंसय ॥

पदार्थ—हे कर्मयोगिन् ! जो (इत्थाधिये, दिवोदासाय) बुद्धिवाले और द्युलोक सम्बन्धी कर्मोंमें कुशल आपके (शम्बर शत्रु है (त्यम्, तुर्वशम्, यदुम्) इस हिंसक मनुष्यको (अथ) उसके (पुरः) पुरको ध्वंसन करो)

भावार्थ—कर्म्मयोगीलोग शत्रुओंके पुरोंको सर्व प्रकारसे कर सकते हैं अन्य नहीं ।

परि णो अश्वमश्वविद्गोमदिन्दो हिरण्यवत् ।
क्षरा सहस्रिणीरिषः ॥ ३ ॥

परि । नः । अश्वं । अश्वऽवित् । गोऽमत् । इन्दो इति हिरण्यऽवत् । क्षर । सहस्रिणीः । इषः ॥३॥

पदार्थः—(इन्दो) हे कर्मयोगिन् ! (अश्ववित् अश्वादिभिर्युतो भवान् (नः) अस्मभ्यम् (परि) सर्वतः सकल द्वारेण (अश्वमत्, गोमत्, हिरण्यवत्) घोटकगोहिरण्या युतान् (सहस्रिणीः इषः) बहुविधैश्वर्यान् (क्षर) उत्पादयतु ।

पदार्थ—(इन्दो) हे कर्मयोगिन् ! (अश्ववित्) अश्वादि से युक्त आप (नः) हमारे लिये (परि) सब ओरसे अपने कर्म द्वारा (अश्वमत्, गोमत्, हिरण्यवत्) अश्व, गो, हिरण्यादि युक्त (सहस्रिणीः, इषः) अनेक प्रकारके ऐश्वर्योंको (क्षर) उत्पन्न करिये ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—इस मन्त्रमें कर्म्मयोगियोंके द्वारा अनन्त प्रकारके ऐश्वर्य्योंकी उपलब्धिका वर्णन किया गया है।

पवमानस्य ते वयं पावत्रमभ्युन्दतः ।
सखित्वमा वृणीमहे ॥ ४ ॥१७॥

पवमानस्य । ते । वयं । पवित्रं । अभिऽउंदतः । सखिऽत्वं । आ । वृणीमहे ॥४॥

पदाथः—(पवमानस्य) स्वाश्रितजनान्पवित्रयन् (पवित्रम्) पूतमनुष्यस्य (अभ्युन्दतः) उत्साहकर्तुः (ते) तव (सखित्वम्) मैत्रीकरणाय (वयं) वयम् (आवृणीमहे) प्रार्थयामः ॥

पदार्थ—(पवमानस्य) अपने आश्रितजनोंको पवित्र करते हुये (पवित्रम्, अभ्युन्दतः) और पवित्र किये हुये मनुष्यको उत्साहित करने वाले (ते) तुम्हारे (सखित्वम्) मैत्रीभावके लिये (वयम्) हम लोग (आवृणीमहे) प्रार्थना करते हैं।

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्माके सद्गुणोंको धारण करके परमात्माके साथ मैत्रीभावका वर्णन किया गया है।

ये ते पवित्रमूर्मयोऽभिक्षरन्ति धारया ।
तेभिर्नः सोम मृळय ॥५॥१८॥

ये । ते । पवित्रं । ऊर्मयः । अभिऽक्षरंति । धारया । तेभिः । नः । सोम । मृळय ॥५॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(सोम) हे सौम्यप्रकृते कर्मयोगिन् ! (ते, ऊर्मयः) याः शरणागतरक्षिका भवतः शक्तयः (पवित्रम्) शुद्धान्तःकरणवंतं मनुष्यं (धारया) प्रवाहरूपेण (अभिक्षरन्ति) अभिगता भवन्ति । (तेभिः) ताभिः शक्तिभिः (नः) अस्मान् (मृळय) सुरक्षिता न्विधाय सुखय ॥

पदार्थ—(सोम) हे सौम्यस्वभाव कर्मयोगिन् ! (ये, ते, ऊर्मयः) जो आपकी शरणरक्षक शक्तियें (पवित्रम्) शुद्ध हृदय वाले मनुष्य ओर (धारया) प्रवाहरूपसे (अभिक्षरन्ति) अभिगत होती हैं (तेभिः) उन शक्तियोंसे (नः) हमको (मृळय) सुरक्षित करके सुखी करिये ।

भावार्थ—कर्म्मयोगीके उद्योगादि भावोंको धारण करके उद्योगी बननेका उपदेश इस मन्त्रमें किया गया है ।

स नः पुनान आ भर रयिं वीरवतीमिषम् ।
ईशानः सोम विश्वतः ॥ ६ ॥

सः । नः । पुनानः । आ । भर । रयिं । वीरऽवतीं । इषं ।
ईशानः । सोम विश्वतः ॥६॥

पदार्थः—(सोम) हे बुधवर ! (सः) स त्वं परमात्मा (विश्वतः, ईशानः) सर्वतः स्वाधिकारं स्थापयन् (नः, पुनानः) अस्मान् पवित्रयन् (वीरवतीम्) महावीरयुताभिः (इषम्) अन्नधनादिसंपत्तिभिः (आ, भर) आत्मजनस्थानानि परिपूरय

पदार्थ—(सोम) हे विद्वन् ! (सः) वह आप (विश्व ईशानः) सारे ओरसे अपना अधिकार जमाते हुए (नः पुना

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हम लोगोंको पवित्र करते हुये (वीरवतीम्) बड़े बड़े वीरोंसे युक्त (इषम्, रयिम्) अन्नधनादि सम्पत्तिसे (आ, भर) अपने जनस्थानोंको परिपूर्ण करिये ।

भावार्थ—विद्वान् लोग अपने विद्याबलसे अपने देशको एश्वर्य्योंसे परिपूर्ण करते हैं। इसलिये विद्वानोंका सत्कार करना परम कर्तव्य है।

एतमु त्यं दश क्षिपो मृजन्ति सिन्धुमातरम् ।
समादित्येभिरख्यत ॥ ७ ॥

एतं । ऊं इति । त्यं । दश । क्षिपः । मृजन्ति । सिन्धुमातरं । सं । आदित्येभिः । अख्यत ॥७॥

पदार्थः—(एतम्, त्यम्, उ) तं भवन्तं (दश, क्षिपः, मृजन्ति) दशेन्द्रियाणि नियततया ज्ञानक्रियायां दक्षतां सम्पादयन्ति । यतो भवान् (सिन्धुमातरम्) सामुद्रिकपदार्थज्ञाता, तथा (आदित्येभिः समख्यत) विद्युदादिशक्त्या सूक्ष्मातिसूक्ष्मपदार्थज्ञाता भवति। "आदित्यः कस्मादादत्ते रसानादत्ते भासं ज्योतिषा मादीप्तो भासेति " नि. अ०. २ । खं. १३ ।

पदार्थ—(एतम्, त्यम्, उ) उन आपको (दश, क्षिपः, मृजन्ति) दसों इन्द्रियें नियत होनेसे ज्ञानक्रियादक्ष बनाती हैं । जिससे आप (सिन्धुमातरम्) समुद्रविषयक पदार्थोंके ज्ञाता तथा (आदित्येभिः, समख्यत) विद्युदादिशक्तियों द्वारा सूक्ष्मसे सूक्ष्म पदार्थोंके ज्ञाता हो जाते हैं "आदित्यः कस्मादादत्ते रसानादत्ते भासं ज्योतिषा मादीप्तो भासेति" नि अ. २ । खं. १३ ।

भावार्थ—ईश्वरका साक्षात्कार बुद्धिकी वृत्तियोंके द्वारा होता है ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

समिन्द्रेणोत वायुना सुत एति पवित्र आ ।
सं सूर्यस्य रश्मिभिः ॥ ८ ॥

सं । इन्द्रेण । उत । वायुना । सुतः । एति । पवित्रे । आ ।
सं । सूर्यस्य । रश्मिऽभिः ॥८॥

पदार्थः—(सुतः) सुसंस्कृतः कर्मयोगी (सूर्यस्य, रश्मिभिः सम्) तैजसपदार्थाश्रयेण (इन्द्रेण, उत, वायुना) विद्युत, अग्नि संमिल्य (पवित्रे, आ समेति) महापवित्रकार्यसिद्धिं करोति ।

पदार्थ—(सुतः) सुसस्कृत कर्मयोगी (सूर्यस्य, रश्मिभिः सम्) तैजस पदार्थोंके आश्रयसे (इन्द्रेण, उत, वायुना) विद्युत, अग्नि से मिल कर (पवित्रे, आ समेति) बड़े बड़े पवित्र कार्योंको सिद्ध करता है।

भावार्थ—कर्म्मयोगी सूक्ष्मसे सूक्ष्म पदार्थोंकी सिद्धि कर लेता है। अर्थात् उससे कोई काम भी अशक्य नहीं। कर्म्मयोगीके सामर्थ्यमें सब काम है। इस बातका बर्णन इस मन्त्रमें किया गया है।

स नो भगाय वायवे पूष्णे पवस्व मधुमान् ।
चारुर्मित्रे वरुणे च ॥ ९ ॥

सः । नः । भगाय । वायवे । पूष्णे । पवस्व । मधुऽमान् ।
चारुः । मित्रे । वरुणे । च ॥९॥

पदार्थः—(मधुमान्) मधुरानन्दोत्पादकः (चारुः) सर्वत्रगतिशीलः (सः) स भवान् (नः) मह्यं (मित्रे) उचितकर्मकर्त्रे, तथा (वरुणे) यः सत्कारार्हस्तस्मै (भगाय

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ऐश्वर्याय (वायवे) सुन्दरगतये च (पूष्णे) तथा पुष्टिप्राप्तये (पवस्व) उद्योगसहितो भवतु ॥

पदार्थ—(मधुमान्) मधुर आनन्दके उत्पादक (चारुः) सर्वत्र गति वाले (सः) वह आप (नः) मुझको (मित्रे) और उचित कर्म करने वालेको तथा (वरुणे) जो सत्कार करने योग्य है उसको (भगाय) ऐश्वर्य (वायवे) सुन्दरगति (पूष्णे) तथा पुष्टि प्राप्त होनेके लिये (पवस्व) सोद्योग होयँ ।

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्मासे उद्योगकी प्रार्थना की गई है परमात्माकी परमकृपासे ही पुरुष उद्योगी बन कर परम ऐश्वर्यको प्राप्त होता है ।

उच्चा ते जातमन्धसो दिवि षद्भूम्या ददे ।
उग्रं शर्म महि श्रवः ॥१०॥१९॥

उच्चा । ते । जातं । अंधसः । दिवि । सत् । भूमिः । आ । ददे । उग्रं । शर्म । महि । श्रवः ॥१०॥

पदार्थः—(ते, अंधसः) हे कर्मयोगिन् ! भवदुत्पादित-पदार्थानाम् (उच्चा, जातम्) उच्चसमूहं (भूमिः, आददे) समस्ताः पृथिवीस्था जना गृह्णन्ति (उग्रम् शर्म) यो ह्यत्यन्त-सुखस्वरूपोस्ति तथा (महि, श्रवः) भवतो महायशः (दिवि-षत्) द्युलोकेपि व्याप्तम् ॥

पदार्थ—(ते, अंधसः) हे कर्मयोगिन् ! तुम्हारे पैदा किये हुये पदार्थोंके (उच्चा, जातम्) उच्च समूहको (भूमिः आददे) सम्पूर्ण

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पृथिवी भरके लोग ग्रहण करते हैं (उग्रम्, शर्म) जो कि अत्यन्त सुख स्वरूप है तथा (महि श्रवः) आपका महत् यश (दिविषत्) द्युलोक भी व्याप्त है ।

भावार्थ—कर्म्मयोगी पुरुषके उत्पन्न किये हुए कलाकौशल सम्पूर्ण लोग लाभ उठाते हैं ।

एना विश्वान्यर्य आ द्युम्नानि मानुषाणाम् ।
सिषासन्तो वनामहे ॥ ११ ॥

एना । विश्वानि । अर्यः । आ । द्युम्नानि । मानुषाणां । सिसासंतः । वनामहे ॥११॥

पदार्थः—(अर्यः) प्रजास्वामी (एना) स्वक्रियाभिः (मानुषाणाम्) मनुष्याणाम् (विश्वा, द्युम्नानि) सम्पूर्णसम्पदः (आ) आहरति "संचयंकरोतीतियावत्" । (सिषासन्तः) एतादृशस्य प्रभो र्भक्तौ तत्परा भवन्तो वयम् (वनामहे) तत्र प्रार्थनां कुर्मः ॥

पदार्थ—(अर्यः) प्रजाओंका स्वामी (एना) अपनी क्रियाओं से (मानुषाणाम्) मनुष्योंकी (विश्वा, द्युम्नानि) सम्पूर्ण सम्पत्तियों का (आ) आहरण अर्थात् संचय करता है (सिषासन्तः) ऐसे स्वामी की भक्तिमें तत्पर रहते हुए हम (वनामहे) उसकी प्रार्थना करते हैं ।

भावार्थ—इस मन्त्रमें स्वामिभक्तिका वर्णन किया गया है। तात्पर्य यह है कि स्वामिभक्तिसे पुरुष उच्च पदवीको प्राप्त होता है ।

स न इन्द्राय यज्यवे वरुणाय मरुद्भ्यः ।
वरिवोवित्परि स्रव ॥ १२ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सः । नः । इन्द्राय । यज्यवे । वरुणाय । मरुत्ऽभ्यः । वरिवःऽवित् । परि । स्रव ॥१२॥

पदार्थः—(सः) स कर्मयोगी (वरिवोवित्) समस्तधनप्रापको भवान् (नः) अस्माकम् (यज्यवे) प्रशंसनीयानां (इन्द्राय, वरुणाय, मरुद्भ्यः) तैजसजलीयवायवीयपदार्थानां संसिद्धये (परिस्रव) उद्यतो भवतु ॥

पदार्थ—(सः) वह कर्मयोगी (वरिवोवित्) सम्पूर्ण धनोंका प्रापयिता आप (नः) हमारे (यज्यवे) प्रशंसनीय (इन्द्राय, वरुणाय, मरुद्भ्यः) तैजस, जलीय तथा वायवीय पदार्थोंकी सिद्धिके लिये (परिस्रव) उद्यत होयँ ।

भावार्थ—अग्नि तथा जलादि सब पदार्थ कर्मयोगी पुरुषोंके द्वारा सब प्रकारके सुखोंको उत्पन्न करते हैं ।

उपो षु जातमप्तुरं गोभिर्भङ्गं परिष्कृतम् ।
इन्दुं देवा अयासिषुः ॥ १३ ॥

उपोहितिं । सु । जातं । अप्ऽतुरं । गोभिः । भंगं । परिऽकृतं । इंदुं । देवाः । अयासिषुः ॥ १३ ॥

पदार्थः—(सुजातं) सुसंस्कारयुक्तः (अप्तुरम्) अनेकविधकर्मणां प्रेरकः, (गोभिः परिष्कृतम्) शुद्धेन्द्रियवान् (भंगम्) शत्रुभंजकः, यः (इन्दुम्) परमप्रकाशवान् कर्मयोग्यस्ति, तस्य (देवाः) स्वाभ्युदयेच्छुका जनाः (अयासिषुः) अनुसरणं कुर्वन्ति ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ--(सुजातं) सुन्दर संस्कार युक्त (अप्तुरम्) अनेक कर्मों का प्रेरक (गोभिः परिष्कृतम्) शुद्ध इन्द्रियों वाला (मंगम्) शत्रुओं का भञ्जक जो (इन्दुम्) परम प्रकाश वाला कर्मयोगी है उसका (देवाः) अभ्युन्नति चाहने वाले लोग (आयासिषुः अनुसरण करते हैं।

भावार्थ--अभ्युदयाभिलाषी जनोंको चाहिये कि वे उक्तगुण वाले कर्मयोगीका आश्रयण करें।

तमिद्वर्धन्तु नो गिरो वत्सं संशिश्वरीरिव।
य इन्द्रस्य हृदंसनिः॥ १४॥

तं। इत्। वर्धंतु। नः। गिरः। वत्सं। संशिश्वरीःऽइव। यः। इंद्रस्य। हृदंऽसनिः॥ १४॥

पदार्थः--(यः) योहि राष्ट्रजनः (इन्द्रस्य, हृदंसनिः) स्वकीयप्रभोर्भक्तोस्ति (तम्) तं (इत्) निश्चयेन (नः, गिरः) उपदेशप्रयुक्ता मदीया वाण्यः (वर्धन्तु) वर्धयन्तु। (वत्सम्, संशिश्वरीः, इव) यथा दुग्धपरिपूर्णा गौः स्ववत्सं वर्धयति, तथैव

भावार्थ--(यः) जो राष्ट्र (इन्द्रस्य, हृदंसनिः) अपने स्वा का भक्त है (तम्) उसको (इत्) निश्चय (नः, गिरः) उपदेश म मेरी वाणियें (वर्धन्तु) बढ़ायें (वत्सम्, संशिश्वरीः इव) जिस प्र दुग्धसे परिपूर्ण गौ अपने बच्चेको बढ़ाती है उसी प्रकार।

भावार्थ—इस मन्त्रमें स्वामिभक्तिका उपदेश किया गया है

अर्षा णः सोम शं गवे धुक्षस्व पिप्युषीमिषम्।
वर्धा समुद्रमुक्थ्यम्॥ १५॥ २०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अर्ष। नः। सोम। शं। गवे। धुक्षस्व। पिप्युषीं। इषं। वर्ध। समुद्रं। उक्थ्यं ॥१५॥२०॥

पदार्थः—(सोम) हे कर्मयोगिन् ! त्वम् (नः) अस्माकं (गवे) वाण्यै (शं, अर्ष) सुखं वधय। (पिप्युषीम्, इषम्, धुक्षस्व) अथ च तृप्तये अन्नादिपदार्थानुत्पादय (समुद्रम्, उक्थ्यम्, वर्ध) समुद्रइवाचलैश्वर्यान्वर्धय॥

पदार्थ—(सोम) हे कर्मयोगिन् ! आप (नः) हमारी (गवे) वाणीके लिये (शम्, अर्ष) सुखको बढ़ाइये (पिप्युषीम्, धुक्षस्व) और तृप्ति करनेमें पर्याप्त अन्नादि पदार्थोंको उत्पन्न करिये (समुद्रम्, उक्थ्यम्, वर्ध) समुद्रके समान अचल ऐश्वर्यको बढ़ाइये।

भावार्थ—हे मनुष्यों ! यदि, आप ऐश्वर्यको बढ़ाना चाहते हैं तो कर्मयोगियोंसे प्रार्थना करके उद्योगी बनिये।

पवमानो अजीजनद्दिवश्चित्रं न तन्यतुम्।
ज्योतिर्वैश्वानरं बृहत् ॥ १६ ॥

पवमानः। अजीजनत्। दिवः। चित्रं। न। तन्यतुं। ज्योतिः। वैश्वानरं। बृहत् ॥ १६ ॥

पदार्थः—(पवमानः) सर्वपवित्रकर्ता कर्मयोगी (दिवः, तन्यतुम्, न) द्युलोकस्य शस्त्ररूपविद्युदिव (बृहत्, वैश्वानरम्, ज्योतिः) विद्युदादितैजसमहापदार्थान् (अजीजनत्) उत्पादयति॥

पदार्थ—(पवमानः) सबको पवित्र करनेवाला कर्मयोगी (दिवः, तन्यतुम्, न) द्युलोककी शस्त्ररूप विद्युत्के समान (बृहत्, वैश्वानरम्, ज्योतिः) बड़े विद्युदादि तैजस पदार्थको (अजीजनत्) पैदा करता है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—कर्मयोगी द्वारा ही विद्युदादि पदार्थ उपयोगमें आ सक्ते हैं। इसलिये हे मनुष्यों! तुमको चाहिये कि तुम कर्मयोगियोंको उत्पन्न करके अपने देशको अभ्युदयशाली बनाओ।

पवमानस्य ते रसो मदो राजन्नदुच्छुनः।
वि वारमव्यमर्षति ॥ १७ ॥

पवमानस्य। ते। रसः। मदः। राजन्। अदुच्छुनः। वि। वारं। अव्यं। अर्षति ॥ १७ ॥

पदार्थः—हे कर्मकुशल! (पवमानस्य, ते) सर्वसुखदातुर्भवतः (रसः) उत्पादितं सुखम् अथच (मदः) आनन्दः (राजन्) हे स्वामिन्! (अदुच्छुनः) योहि विघ्नविघातैः रहितोस्ति, सः (वारम्, अव्यम्) यो भवतः दृढभक्तोस्ति तं (वि) विशेषरूपेण (अर्षति, गच्छति॥

पदार्थ—हे कर्मदक्ष! (पवमानस्य, ते) सबको सुख देने वाले आपको (रसः) पैदा किया हुआ सुख और (मदः) आनन्द (राजन्) हे स्वामिन्! (अदुच्छुनः) जो विघ्नकारियोंसे रहित है वह (वारम्, अव्यम्) जो आपका दृढ़ भक्त है उसकी ओर (वि) विशेष रूपसे (अर्षति) जाता है।

भावार्थ—इस मंत्रमें ईश्वरकी भक्तिका उपदेश किया गया है। ईश्वरके गुण, कर्म, स्वभावको समझ कर जो पुरुष ईश्वर परायण होता है उसको सब प्रकारके ऐश्वर्य प्राप्त होते है।

पवमान रसस्तव दक्षो वि राजति द्युमान्।
ज्योतिर्विश्वं स्वर्दृशे ॥ १८ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पवमान । रसः । तव । दक्षः । वि । राजति । द्युऽमान् । ज्योतिः । विश्वं । स्वः । दृशे ॥ १८ ॥

पदार्थः—(पवमान) हे जनरक्षक ! (तव) भवतः (रसः) रक्षाजनितसुखम् (द्युमान्) सुन्दरं (दक्षः) अप्रयासलभ्यम् (विराजति) विराजितमस्ति । अथच (स्वः) सर्वान् (दृशे) पदार्थान्द्रष्टुं, त्वम् (विश्वम्, ज्योतिः) समस्तजगद्व्यापिनीः सूक्ष्मशक्तीः उत्पादयसि ।

पदार्थ—(पवमान) हे प्रजारक्षक ! (तव) तुम्हारा (रसः) रक्षाजनित सुख (द्युमान्) सुन्दर (दक्षः) अनायासलभ्य (विराजित है । और (स्वः) सब (दृशे) पदार्थोंके देखनेके लिये आप (विश्वम्, ज्योतिः) सर्वव्यापिनी सूक्ष्मशक्तियोंको पैदा करते हैं ।

भावार्थ—परमात्माकी कृपासे मनुष्यमें दिव्यशक्तियें उत्पन्न होती हैं । जिससे मनुष्य देवभावको धारण करता है ।

यस्ते मदो वरेण्यस्तेना पवस्वान्धसा ।
देवावीरघशंसहा ॥ १९ ॥

यः । ते । मदः । वरेण्यः । तेन । पवस्व । अंधसा । देवऽअवीः । अघशंसऽहा ॥ १९ ॥

पदार्थः—हे स्वामिन् ! त्वम् (देवावीः, अघशंसहा) सदाचारिणां रक्षकोसि, तथा दुष्टानां घातकोसि (यः) यत् (ते) तव (वरेण्यः, रसः) भजनीयं सुखमस्ति (तेन, अंधसा) तेन तृप्तिकारकेण सुखेनास्मान् (पवस्व) पवित्रय ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—हे स्वामिन् ! आप (देवावीः अघशंसहा) मनुष्यों के रक्षक तथा दुष्टोंको मारने वाले हैं (यः) जो (ते) आपका (वेरेण्यः, रसः) भजनीय सुख है (तेन, अन्धसा) उस दिव्य सुखसे हम लोगोंको (पवस्व) पवित्र करिये ।

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्मासे आनन्दोपलब्धिकी प्रार्थना गई है ।

जघ्निर्वृत्रममित्रियं सस्निर्वाजं दिवेदिवे ।
गोषा उ अश्वसा असि ॥ २० ॥ २१ ॥

जघ्निः । वृत्रं । अमित्रियं । सस्निः । वाजं । दिवेऽदिवे ।
गोऽसाः । ऊं इति । अश्वऽसाः । असि ॥२०॥

पदार्थः—(अमित्रियम्, वृत्रम्, जघ्निः) भवतां भवदाज्ञाप्रतिकूलस्तं पापिनं हन्ति तथा (वाजम्, दिवे दिवे, सस्निः) प्रतिदिनं संग्रामाय सैनिकविभागे तत्परोस्ति (गोषाः उ, अश्वसाः, असि) गवाश्वादिहितकृज्जीवानां वर्धकोसि ।

पदार्थ—(अमित्रियम्, वृत्रम्, जघ्निः) आप जो आपकी आज्ञा के प्रतिकूल है उस पापीके हन्ता है । तथा (वाजम्, दिवेदिवे, सस्निः) प्रतिदिन संग्रामके लिये सैनिक विभागमें तत्पर रहते हैं (गोषाः, अश्वसाः, असि) गो, अश्व आदि हितकारक जीवोंके बढ़ाने वाले हैं ।

भावार्थ—परमात्माका वज्र दुष्टोंके दमनके लिये सदैव उद्यत रहता है । इस मंत्रमें परमात्माकी दंडशक्तिका वर्णन किया गया है ।

संमिश्लो अरुषो भव सूपस्थाभिर्न धेनुभिः ।
सीदच्छ्येनो न योनिमा ॥ २१ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संऽमिश्लः । अरुषः । भव । सुऽउपस्थाभिः । न । धेनुऽभिः सीदन् । श्येनः । न । योनिं । आ ॥२१॥

पदार्थः—भवान् (श्येनः, न, योनिम्, आसीदन्) विद्युदिव स्वस्थाने तिष्ठन् (न) तत्काल एव रणे (सूपस्थाभिः, धेनुभिः संमिश्लः,) दृढस्थितिमद्भिरिन्द्रियैर्मिश्रितः " सावधानीभूयेत्यर्थः " (अरुषः, भव) देदीप्यमानो भवतु ॥

पदार्थ—आप (श्येनः, न, योनिम्, आसीदन्) विद्युत्के समान अपने स्थानमें स्थित होते हुये (न) तत्काल ही युद्धमें (सूपस्थाभिः, धेनुभिः, संमिश्लः) दृढ़ स्थिति वाली इन्द्रियोंसे मिश्रित अर्थात् सावधान होकर (अरुषः, भव) देदीप्यमान होयँ ।

भावार्थ—परमात्माकी शक्तियें विद्युत्के समान सदैव उग्ररूपसे विद्यमान रहतीं है । जो पुरुष उनके विरुद्ध करता है उसको आत्मिक सामाजिक और शारीरिक रूपसे अवश्यमेव दण्ड मिलता है ।

स पवस्व य आविथेन्द्रं वृत्राय हन्तवे ।
वज्रिवांसं महीरपः ॥२२॥

सः । पवस्व । यः । आविथ । इंद्रं । वृत्राय । हंतवे । वज्रिऽवांसं । महीः । अपः ॥२२॥

पदार्थः—(यः) येन भवता (वृत्राय, हन्तवे) दुष्टाचारिप्रतिपक्षिहननाय (महीः, अपः, वाज्रिवांसम्) सर्वास्ववस्थासु अप्रतिहताः (इन्द्रम्, आविथ) शक्तयः सुरक्षिताः (सः) एवं भूतो भवान् (पवस्व) मम रक्षां करोतु ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(यः) जो आप (वृत्राय, हन्तवे) दुष्टाचारी प्रतिपक्षी के हनन करनेके लिये (महीः, अपः, वाव्रिवांसम्) सब अवस्थाओंमें अप्रतिहत (इन्द्रम्, आविथ) शक्तियोंको सुरक्षित रखते हैं (सः) एवं भूत आप (पवस्व) मेरी रक्षा करें ।

भावार्थ—इस मन्त्रमें सर्वशक्तिसम्पन्न परमात्मासे रक्षाकी प्रार्थना की गई है ।

सुवीरासो वयं धना जयेम सोम मीढ्वः ।
पुनानो वर्ध नो गिरः ॥ २३ ॥

सुऽवीरासः । वयं । धना । जयेम । सोम । मीढ्वः । पुनानः । वर्ध । नः । गिरः ॥२३॥

पदार्थः—(मीढ्वः) हे सुखवर्षक ! (नः) अस्माकम् (गिरः) वाक्छक्तिं (पुनानः) वर्धयन् (वर्ध) अस्मानपि आनन्दय, यतः (सोम) हे प्रभो (वयम्) वयम् (सुवीरासः) सुवीरैः संगता भवन्तः (धनं जयेम) अनेकविधसंपत्तीनां लाभं कुर्मः ॥

पदार्थ—(मीढ्वः) हे सुखकी वर्षा करने वाले ! (नः) हमारी (गिरः) वाक्शक्तिको (पुनानः) बढ़ाते हुये (वर्ध) हमको भी अभिनन्दित करिये । जिससे (सोम) हे स्वामिन् (वयम्) हम (सुवीरासः) सुन्दर वीरोंसे संगत होकर (धनम्, जयेम) अनेक प्रकारकी सम्पत्तिका लाभ करें ।

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्मासे प्रगल्भवक्ता बननेकी प्रार्थना की गई है ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्वोतासस्तवावसा स्याम वन्वन्त आमुरः ।
सोम व्रतेषु जागृहि ॥ २४ ॥

त्वाऽऊतासः । तव । अवसा । स्याम । वन्वंतः । आऽमुरः । सोम । व्रतेषु । जागृहि ॥२४॥

पदार्थः—(त्वोतासः, तव अवसा) हे प्रभो ! तवरक्षया रक्षिताः सन्तो वयम् (वन्वन्तः) भवत्सेवायां तत्परा भवन्तः (आमुरः, स्याम) तव विरोधिनां विनाशका भवेम । (सोम) हे सौम्यस्वभाव ! त्वम् (व्रतेषु, जागृहि) स्वकीयेषु नियमेषु जागृतो भव ।

पदार्थ—(त्वोतासः, तव, अवसा) हे प्रभो ! तुम्हारी रक्षासे सुरक्षित होकर हम (वन्वन्तः) आपकी सेवामें तत्पर होते हुये (आमुरः, स्याम) आपके विरोधियोंके विनाशक हो जांय (सोम) हे सौम्यचित्त-वाले । आप (व्रतेषु, जागृहि) अपने नियमोंमें सदैव जागृत हैं ।

भावार्थ—जो परमात्मा अपने नियमोंमें सदैव जागृत है अर्थात् जिसके नियम सदैव अटल हैं उन नियमोंके अनुयायी होकर हम ईश्वर-नियम विरोधियोंको दलन करें ।

अपघ्नन्पवते मृधोऽप सोमो अराव्णः ।
गच्छन्निन्द्रस्य निष्कृतम् ॥२५॥२२॥

अपऽघ्नन् । पवते । मृधः । अप । सोमः । अराव्णः । गच्छन् । इंद्रस्य । निःऽकृतम् ॥२५॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(सोमः) रक्षाकर्ता प्रभुः (मृधः, अपकर्म घातकान्निघ्नन्, अथच (अराव्णः) येचेमं देयं धनं न दद्युः तान् (इन्द्रस्य) स्वकर्माधिकारिणः (निष्कृतम्) अधिकं (अपगच्छन्) दुर्गतिरूपेण स्थापयन् (पवते) संसारं निर्विघ्नं करोति ॥

पदार्थ—(सोमः) रक्षा करने वाला स्वामी (मृधः, अपकर्म हिंसकोंको मारता हुआ (अराव्णः) जो लोग इसको देय धन नहीं देते उनको (इन्द्रस्य) अपने कर्माधिकारीके (निष्कृतम्) अधिकार (अपगच्छम्) दुर्गति रूपसे स्थापन करता हुआ (पवते) संसारको निर्विघ्न करता है।

भावार्थ—जो अपने रक्षक स्वामी अर्थात् राजाको देयधन (कर) नहीं देते वे राजनियमसे दण्डनीय होते हैं।

महो नो राय आ भर पवमान जही मृधः।
रास्वेन्दो वीरवद्यशः ॥ २६ ॥

महः। नः। रायः। आ। भर। पवमान। जहि। मृधः। रास्व। इंदो इति। वीरऽवत्। यशः।

पदार्थः—(इन्दो) हे ऐश्वर्यसम्पन्न ! भवान् (नः) अस्मान् (महः, रायः, आभर) पवित्रधनैः परिपूरयतु (पवमान) हे जगत्त्रातः ! (मृधः, जहि) हिंसकान्नाशयतु (वीरवत्, यशः रास्व) वीरसहितं यशः प्रकटयतु ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे ऐश्वर्यसम्पन्न ! भवान् (नः) हमको (महः, रायः आभर) पवित्र धनसे परिपूर्ण करिये (पवमान) हे

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रक्षक ! (मृधः, जहि) हिंसकोंको नष्ट करिये (वीरवत्, यशः, रास्व) वीरोंके सहित यशको प्रकट करिये ।

भावार्थ—इस मंत्रमें राजधर्मका उपदेश है । जो पुरुष राजधर्मको पालन करते हैं, वे वीरपुरुषोंको उत्पन्न करके प्रजाको सर्वथा सुरक्षित करते हैं ।

न त्वा शतं चन ह्रुतो राधो दित्सन्तमा मिनन् ।
यत्पुनानो मखस्यसे ॥ २७ ॥

न । त्वा । शतं । चन । ह्रुतः । राधः । दित्सन्तं । आ । मिनन् । यत् । पुनानः । मखस्यसे ॥२७॥

पदार्थः—(यत्, पुनानः मखस्यसे) यो भवान् स्वप्रजाः सुखीकर्तुं धनं जिघृक्षति अतः (राधः) धनम् (आदित्सन्तम्) गृह्णन् (त्वा) त्वां (शतं, चन, हुताः) शतशोदुष्टजनाः (न, मिनन्) बाधितुं न शक्नुवन्ति ॥

पदार्थ—(यत्, पुनानः, मखस्यसे) आप जो कि अपनी प्रजाओंको सुखी करनेके लिये धन ग्रहण करनेकी इच्छा करते हैं इससे (राधः) धनको (आदित्सन्तम्) ग्रहण करते हुये (त्वा) तुमको (शतम्, चन, हुताः) सैकड़ों कुटिल दुष्ट (न, मिनन्) बाधित नहीं कर सकते ।

भावार्थ—जो राजा प्रजाकी रक्षाके निमित्त 'कर' लेता है उसे कोई दूषित नहीं कर सक्ता है । और उसकी रक्षासे सुरक्षित होकर प्रजा सर्वथैव निर्विघ्न रहती है, उसमें दुष्ट दस्यु आदि कोई विघ्न उत्पन्न नहीं कर सकते ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पवस्वेन्दो वृषा सुतः कृधी नो यशसो जने ।
विश्वा अप द्विषो जहि ॥ २८ ॥

पवस्व । इन्दो इति । वृषा । सुतः । कृधि । नः । यशसः । जने ।
विश्वाः । अप । द्विषः । जहि ॥२८॥

पदार्थः—(इन्दो) हे प्रभो ! भवान् (वृषा) सर्वकामान् पूरकोस्ति (सुतः, पवस्व) त्वम् सेवितानां सेवकानां रक्षां कु (नः, यशसः, कृधि, जने) तथा मनुष्येषु मां यशस्विनं कुरु (विश्व अपद्विषः जहि) समस्तनिषिद्धकर्मतत्परान् शत्रून् घातय।

पदार्थ—(इन्दो) हे स्वामिन् ! आप (वृषा) सब कामनाओं के प्रापण करनेमें समर्थ हैं (सुतः, पवस्व) आप सेवन किये गये आप सेवकोंकी रक्षा कीजिये (नः, यशसः, कृधि, जने) और मनुष्यों मुझको यशस्वी बनाइये (विश्वा अपद्विषः, जहि) सम्पूर्ण बुरे कामों तत्परशत्रुओंको मारिये।

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्मासे यशस्वी बननेकी प्रार्थना की गई है

अस्य ते सख्ये वयं तवेन्दो द्युम्न उत्तमे ।
ससह्याम पृतन्यतः ॥ २९ ॥

अस्य । ते । सख्ये । वयं । तव । इन्दो इति । द्युम्ने ।
उत्ऽतमे । ससह्याम । पृतन्यतः ॥२९॥

पदार्थः—(अस्य, ते, सख्ये) तव मित्रतां प्राप्य (इन्दो हे सुयशःप्रकाशित ! (तव, उत्तमे, द्युम्ने) तवोत्तमयशो निधि

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वयं (पृतन्यत, ससह्याम) रणे युद्धनिमित्तमागतान् शत्रून् अभिभवेमः ॥

पदार्थ—(अस्य, ते, सख्ये) तुम्हारे मित्र भावको प्राप्त होकर (इन्दो) हे सुन्दर यशसे प्रकाशित ! (तव, उत्तमे, द्युम्ने) तुम्हारे उत्तम यशके निमित्त हम (पृतन्यतः, ससह्याम) संग्राममें युद्धके निमित्त आये हुये प्रतिपक्षियोंको अभिभूत करें ।

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्माने राजधर्ममें साहाय्यका उपदेश किया है ।

या ते भीमान्यायुधा तिग्मानि सन्ति धूर्वणे ।
रक्षा समस्य नो निदः ॥ ३० ॥ २३ ॥

या । ते । भीमानि । आयुधा । तिग्मानि । सन्ति । धूर्वण रक्ष । समस्य । नः । निदः ॥३०॥

पदार्थः—हे सेनापते (धूर्वणे) शत्रुघातनाय (या) यानि (ते) तव (भीमानि, तीग्मानि, आयुधा सन्ति) भयंकराणि तीक्ष्णशस्त्राणि तैः (नः) अस्मान् (समस्य निदः) सर्वविधैरपयशोभिः (रक्ष) त्रायस्व ॥

पदार्थ—और हे सेनापते ! (धूर्वणे) शत्रुओंके नाशके लिये (या) जो (ते) आपके (भीमानि, तिग्मानि, आयुधा, सन्ति) भयंकर तीक्ष्ण शस्त्र हैं तिनसे (नः) हमको (समस्य, निदः) सबप्रकारके अपयशोंसे (रक्ष) बचाइये ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—तीक्ष्ण शस्त्रों वाले सेनापति प्रजाओंको सब प्रकार की विपत्तियोंसे बचाते है।

इति इत्येकाष्टितमं सूक्तं त्रयोविंशो वर्गश्च समाप्तः।

यह ६१ वां सुक्त और २३ वां वर्ग समाप्त हुआ।

अथ त्रिंशदृचस्य द्विषष्टितमस्य सूक्तस्य-

१-३० जमदग्निर्ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता॥ छन्दः १, ६, ७, ९, १०, २३, २५, २८, २९ निचृद्गायत्री। ५, ५, ११-१९, २१-२४, २७, ३०-गायत्री। ३ ककुम्मती गायत्री। ४ पिपीलिकामध्या गायत्री। ८, २०, २६ विराड्गायत्री॥ षड्जः स्वरः॥

अथ सेनाधीशः प्रशस्यते।

अब सेनापतिकी प्रशंसा की जाती है।

एते असृग्रमिन्दवस्तिरः पवित्रमाशवः।
विश्वान्यभि सौभगा॥ १॥

राते। असृग्र। इंदवः। तिरः। पविंत्रै। आशवः। विश्वानि अभि। सौभगा॥१॥

पदार्थः—(एत) अयम् (आशवः) क्रियादक्षः (इन्दवः) सेनापतिः (पवित्रे, अभि) स्वकीयप्रजार्थं (विश्वानि) सर्वविधान् (तिरः) द्विगुणान् (सौभगा) भोग्यपदार्थान् (असृग्रम्) उत्पादयति

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(एते) यह (आशवः) क्रियादक्ष (इन्दवः) सेनाधीश (पवित्रम् अभि) अपनी पवित्र प्रजाके लिये (विश्वानि) सब प्रकारके (तिरः) द्विगुण (सौभगा) भोग्य पदार्थोंको (असृग्रम्) पैदा करता है ।

भावार्थ—इस मंत्रमें सेनापतिके गुणोंका वर्णन किया है।

विघ्नन्तो दुरिता पुरु सुगा तोकाय वाजिनः ।
तना कृण्वन्तो अर्वते ॥ २ ॥

विऽघ्नंतः । दुःऽइता । पुरु । सुऽगा । तोकाय । वाजिनः । तना । कृण्वंतः । अर्वत ॥२॥

पदार्थः—(वाजिनः) परिपूर्णबलवान् अयं सेनापतिः (पुरु, दुरिता, विघ्नन्तः) गुर्वापत्तीरपघ्नन् (तोकाय) अस्मत्संतानानां (अर्वते) व्यापकीभवनाय (सुगा) सर्वविधसुखानि तथा (तना) धनानि (कृण्वंतः) संचयं कुर्वन् भोग्यपदार्थानुत्पादयति ॥

पदार्थ—(वाजिनः) पर्याप्त बल वाला सेनापति (पुरु, दुरिता, विघ्नन्तः) बड़ी बड़ी आपत्तियोंको हनन करते हुये (तोकाय) हमारी सन्तानोंको (अर्वते) व्यापक होनेके लिये (सुगा) सब प्रकारके सुखों तथा (तना) धनोंका (कृण्वन्तः) संचय करते हुये भोग्यपदार्थोंको उत्पन्न करते हैं ।

भावार्थ—जो सेनापति प्रजाकी सन्तानोंको व्यापक होने के लिये सब रास्तोंको निष्कंटक बनाता है। उक्तगुणों वाला सेनापति राजका अंग होकर राज्यकी रक्षा करता है ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कृण्वन्तो वरिवो गवेऽभ्यर्षन्ति सुष्टुतिम्।
इळामस्मभ्यं संयतम् ॥ ३ ॥

कृण्वंतः। वरिवः। गवे। अभि। अर्षति। सुऽस्तुतिं
इलां। अस्मभ्यं। संऽयतं ॥३॥

पदार्थः—(गवे, वरिवः, कृण्वन्तः)—मम गवादि बहुविधपदार्थानुत्पादयन् अथ च (अस्मभ्यम्) अस्मभ्यं (संयतम्) सुदृढम् (इलाम्) अन्नं संचयन् (सुष्टुतिम्) अस्मत्सुन्दरप्रार्थनां (अभ्यर्षति) दत्तचिताः सन्तः शृण्वन्ति।

पदार्थः—(गवे, वरिवः, कृण्वन्तः) हमारे गवादिकोंके लिये अनेक पदार्थोंको उत्पन्न करते हुये और (अस्मभ्यम्) हमारे लिये (संयतम्) सुदृढ़ (इलाम्) अन्नको संचित करते हुये (सुष्टुतिम्) हमारी सुन्दर प्रार्थनाको (अभ्यर्षन्ति) दत्तचित्त होकर सुनते हैं।

भावार्थ—जो सेनापति प्रजाके लिये ऐश्वर्य उत्पन्न करता और प्रजाकी प्रार्थनाओं पर ध्यान देता है, वह धर्मका पालन करता हुआ भलीभांति प्रजाओंकी रक्षा करता है।

असाव्यंशुर्मदायाप्सु दक्षो गिरिष्ठाः।
श्येनो न योनिमासदत् ॥ ४ ॥

असावि। मदाय। अपूऽसु। दक्षः। गिरिऽस्थाः। श्येनः
न। योनिं। आ। असदत्।

पदार्थः—(अप्सु, दक्षः) क्रियाकुशलः (गिरिष्ठा, श्येनः

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त) मेघस्थितविद्युदिव शीघ्रकारी (अंशुः) तेजस्वी सेनाधीशः (असावि) ईश्वरत उत्पन्नः (योनिम्, आसदत्) स्वपदवीं गृह्णाति ॥

पदार्थ—(अप्सु, दक्षः) क्रियाओंमें कुशल (गिरिष्ठाः, श्येनः, न) मेघमें स्थित विद्युत्के समान शीघ्रकारी (अंशुः) तेजस्वी सेनापति (असावि) ईश्वरसे पैदा किया गया (योनिम्, आसदत्) अपनी पदवीको ग्रहण करता है ।

भावार्थ—उक्त गुणसम्पन्न सेनापति ईश्वरकी आज्ञासे उत्पन्न होता है । तात्पर्य यह है कि ईश्वर उपदेश करता है कि हे मनुष्यो ! तुम उक्तगुणों वाले पुरुषको सेनापति मानो । और ऐसे सेनापतियोंसे राजधर्मका दृढ़ प्रबन्ध करके प्रजामें रक्षाका प्रचार करो ।

शुभ्रमन्धो देववातमप्सु धूतो नृभिः सुतः ।
स्वदन्ति गावः पयोभिः ॥ ५ ॥ २४ ॥

शुभ्रं । अंधः । देवऽवातं । अप्ऽसु । धूतः । नृऽभिः सुतः । स्वदन्ति । गावः । पयःऽभि ॥५॥

पदार्थः—(देववातम्) दिव्यगुणसम्पन्नस्य रक्षयोत्पन्नम् तथा (नृभिः, सुतः) प्रजाभिरुत्पादितम् (अप्सु, धूतः) जलैः शुद्धम् च (शुभ्रम् अन्धः) वीर्यबुद्धिवर्धनेन उज्वलम् अन्नं (गावः पयोभिः) गोदुग्धसंस्कृतम् (स्वदंति) प्रजा उपभुञ्जन्ते ।

पदार्थ—(देववातम्) उस दिव्यगुणसम्पन्न सेनाधिपकी रक्षासे सुरक्षित तथा (नृभिः, सुतः) प्रजाओं द्वारा पैदा किये गये जो अन्न

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(अप्सु, भूतः) और जो जलसे शुद्ध किया गया है (शुभ्रम्, अन्न वीर्य और बुद्धिके बर्धक उस उज्ज्वल अन्नको (गावः, पयोभिः) भा भांति जो कि गऊके दुग्धसे संस्कृत है ऐसे अन्नको (स्वदन्ति) भ गण उपभोग करते हैं।

भावार्थ—जिस देशमें प्रजाकी रक्षा करने वाले सेनाप होते हैं, उस देशकी प्रजा, नाना प्रकारके अन्नोंको दुग्धसे मिश्रित क उपभोग करती है।

तात्पर्य यह है कि राजधर्मसे सुरक्षित ही ऐश्वर्यको भोग सक्ते हैं, नहीं। इसलिये परमात्माने इस मंत्रमें राजधर्मका उपदेश किया है।

आदीमश्वं न हेतारोऽशूशुभन्नमृताय।
मध्वो रसं सधमादे ॥ ६ ॥

आत्। ईं। अश्वं। न। हेतारः। अशूशुभन्। अमृताय। मध्वः। रसं। सधऽमादे।

पदार्थः—(सधमादे) यज्ञस्थलेषु (आत) आनन्दि सति (हेतारः) प्रार्थयितृप्रजाः (अश्वं न) आशु राष्ट्रव्याप (मध्वो रसः) मधुरस इवास्वादनीयम्-आनन्दम् (अमृताय) सुगोप्तुं (अशूशुभन्) नुतिपूर्वकं सुभूषयन्ति।

पदार्थ—(सधमादे) यज्ञस्थलोंमें (आत) आनन्दित हो अनन्तर (हेतारः) प्रार्थयिता प्रजालोग (अश्वम्, न) शीघ्रही राष्ट्र में व्यापक (मध्वः, रसम्) मधुरसके समान आस्वादनीय आनन्द (अमृताय) फिरभी सुरक्षित होनेके लिये (अशूशुभन्) स्तुतिप सुभूषित करते हैं।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—जो लोग कर्मकाण्डी बनकर यज्ञ करते हैं, वेलोग अपने शुभ कर्मोंसे प्रजाको विभूषित करते हैं।

यास्ते धारा मधुश्चुतोऽसृग्रमिन्द ऊतये।
ताभिः पवित्रमासदः॥ ७॥

याः। ते। धाराः। मधुऽश्चुतः। असृग्रं। इंदो इति। ऊतये। ताभिः। पवित्रं। आ। असदः।

पदार्थः—(इन्दो) हे कर्मप्रधानसेनापते! (याः) याः (मधुश्चुतः) मोदवृष्टिकारिण्यो भवदीयाः (धाराः) बह्व्यः शाखाः (ऊतये) जनरक्षणाय (असृग्रम्) इतस्ततो व्याप्ताः सन्ति (ताभिः) ताभिः (पवित्रम्) सत्कर्म कुर्वाणम् (आसदः) अनुगृहाण।

पदार्थ—(इन्दो) हे कर्मप्रधान सेनापते! (याः) जो (मधुश्चुतः) आनन्दकी वर्षा करनेवाली आपकी (धाराः) अनेक शाखाएँ (ऊतये) प्रजाओंके रक्षणार्थ (असृग्रम्) इधर उधर फैली हुई हैं (ताभिः) उनसे (पवित्रम्) सत्कर्मीको (आसदः) अनुगृहीत करिये।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि सेनाधीश अपनी सुरक्षारूप वृष्टिसे प्रजाओंको आनन्दसे सुसिञ्चित करे।

सो अर्षेन्द्राय पीतये तिरो रोमाण्यव्यया।
सीदन्योना वनेष्वा॥ ८॥

सः। अर्ष। इंद्राय। पीतये। तिरः। रोमाणि। अव्यया। सीदन्। योना। वनेषु। आ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—हे प्रभो (सः) पूर्वोक्तस्त्वम् (योना आसीद) स्वपदे तिष्ठन् (वनेषु) स्वराष्ट्रे (इन्द्राय, पीतये) विज्ञानिनां तृप्त (अर्ष) व्यापको भव (तिरः, रोमाणि, अव्यया) अथचान्तर्हितजीवात्मनां समस्तरोमाणि रक्षय ॥

पदार्थ—हे स्वामिन् ! (सः) पूर्वोक्त आप (योना, आसीद) अपने पदपर स्थित होते हुये (वनेषु) अपने राष्ट्रमें (इन्द्राय पीतये) विज्ञानीकी तृप्तिके लिये (अर्ष) व्याप्तिशील होयँ (तिरः, रोमाणि अव्यया) और अन्तर्हित जीवोंको भी रोमरोम प्रति अव्यय रूप दृढ़ रक्षित करिये ।

भावार्थ—इस मंत्रमें यह प्रतिपादन किया गया है कि राजाकी रक्षा द्वारा देश में ज्ञान और विज्ञानकी वृद्धि होती है ।

त्वमिन्दो परि स्रव स्वादिष्ठो अङ्गिरोभ्यः ।
वरिवोविद्घृतं पयः ॥ ९ ॥

त्वं । इन्दो इति । परि । स्रव । स्वादिष्ठः । अंगिरःभ्यः । वरिवःवित् । घृतं । पयः ।

पदार्थः—(इन्दो) हे तेजस्विन् ! (त्वम्) आप (स्वादिष्ठः) परमप्रियोस्ति अथच । (वरिवोवित्) सर्वप्रजाके धनप्रापकोस्ति । (अङ्गिरोभ्यः) भवान् विद्वद्भ्यः (घृतम्, पयः) घृतदुग्धादिपदार्थान् (परिस्रव) उत्पादयतु ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे तेजस्विन् ! (त्वम्) आप (स्वादिष्ठ) परमप्रिय हैं । और (वरिवोवित्) सब प्रजाओंके धनोंके प्रापक हैं

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(अङ्गिरोभ्यः) आप विद्वानोंके लिये (घृतम्, पयः) घृत दुग्धादि पदार्थ (परिस्रव) उत्पन्न करिये ।

भावार्थ—प्रजाओंको चाहिये कि वे सदैव अपने राजपुरुषोंसे ऐश्वर्यकी प्रार्थना करके संसारमें ऐश्वर्य बढ़ानेका यत्न करें ।

अयं विचर्षणिर्हितः पवमानः स चेतति ।
हिन्वान आप्यं बृहत् ॥ १० ॥ २५ ॥

अयं । विऽचर्षणिः । हितः । पवमानः । सः । चेतति । हिन्वानः । आप्यं । बृहत् ।

पदार्थः—(सः, अयम्) असौ सेनापतिः (विचर्षणिः प्रजाहितदृष्टिः (हितः) तथा सर्वहितकारकः (पवमानः) दुष्टान् दण्डेन शोधयन् (बृहत् आप्यम् हिन्वानः) अनेकविधभोज्यपदार्थमुत्पादयन् (चेतति) सर्वथा जागरणावस्थया विराजते ।

पदार्थ—(सः, अयम्) यह सेनापति (विचर्षणिः) प्रजाओंको विशेष रूपसे देखने वाला (हितः) और सबका हितकारक (पवमानः) दुष्टोंको दण्ड द्वारा शुद्ध करता हुआ (बृहत् आप्यम् हिन्वानः) बहुतसे भोग्य पदार्थको उत्पन्न कराता हुआ (चेतति) सर्वथा जागृतावस्थासे विराजमान है ।

भावार्थ—जो सेनापति अपने कर्ममें तत्पर रहता है अर्थात् राजधर्मका यथाविधि पालन करता है वह प्रजामें सब प्रकारसे सुख उत्पन्न करता है ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एष वृषा वृषव्रतः पवमानो अशस्तिहा।
करद्वसूनि दाशुषे॥ ११॥

एषः। वृषा। वृषऽव्रतः। पवमानः। अशस्तिऽहा। करत्। वसूनि। दाशुषे।

पदार्थः—(वृषा) कामना वर्षकः (वृषव्रतः) अभीष्ट पूर्तिरूपव्रतधारी (पवमानः) सर्वपावकः (अशस्तिहा) दुरा घातकः (एषः) अयं सेनापतिः (दाशुषे) भागदात्रे (वसूनि करत्) अनेकविध धनप्राप्त्यै प्रयत्नं करोति।

पदार्थ—(वृषा) कामनाओंकी वर्षा करने वाला (वृषव्रतः) कामनापूर्त्तिरूप ही व्रत धारण करने वाला (पवमानः) सर्वपावक (अशस्तिहा) दुराचारियोंका नाशक (एषः) यह सेनापति (दाशुषे) भाग देने वालेके लिये (वसूनि, करत्) प्रत्येक प्रकारके धनोंकी प्राप्तिका यत्न करता है।

भावार्थ—उक्तगुणसम्पन्न सेनापति सब प्रकारके ऐश्वर्यको करके प्रजामें सुख बढ़ाता है।

आ पवस्व सहस्रिणं रयिं गोमन्तमश्विनम्।
पुरुश्चन्द्रं पुरुस्पृहम्॥ १२॥

आ। पवस्व। सहस्रिणं। रयिं। गोऽमंतं। अश्विनं। पुरुऽचंद्रं। पुरुऽस्पृहं।

पदार्थः—हे सेनाधिपते! (सहस्रिणम्) भवान् अनेक विधैः (गोमन्तम्, अश्विनम्) गवाश्वादिभिः सह (चन्द्रम्

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आनन्दजनकं (पुरुस्पृहम्) सर्वजनप्रार्थनीयं (पुरु, रयिम्) अधिकं धनम् (आ पवस्व) सर्वथा संचिनोतु ॥

पदार्थ—हे सेनाधीश ! (सहस्रिणम्) आप प्रत्येक प्रकारके (गोमन्तम् अश्विनम्) गो अश्वादिके सहित (चन्द्रम्) हर्षोत्पादक (पुरुस्पृहम्) अनेक लोगोंसे प्रार्थनीय (पुरु, रयिम्) बहुतसे धनको (आ पवस्व) सर्वथा सञ्चित करिये ।

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्माने सेनाधीशके गुणोंका वर्णन किया है कि सेनाधीश सहस्र प्रकारके ऐश्वर्योंको प्रजाजनोंके लिये उत्पन्न करे ।

एष स्य परि षिच्यते मर्मृज्यमान आयुभिः ।
उरुगायः कविक्रतुः ॥ १३ ॥

एषः । स्यः । परि । सिच्यते । मर्मृज्यमानः । आयुऽभिः ।
उरुऽगायः । कविऽक्रतुः ।

पदार्थः—(एषः स्यः) सोऽसौ (कविक्रतुः) योहि विद्वत्सु श्रेष्ठः तथा (उरुगायः) सर्वजनैः प्रशंसितः एवं भूतः सेनापतिः (आयुभिः) समस्तप्रजाभिः (मर्मृज्यमानः) शुद्धाचरणेन सिद्धः (परिषिच्यते) नेतृत्वपदे अभिषिच्यते ।

पदार्थ—(एषः स्यः) वह यह (कविक्रतुः) जो कि विद्वानोंमें श्रेष्ठ और (उरु गायः) सब लोगोंसे प्रशंसित है, ऐसा सेनापति (आयुभिः) सब प्रजाओं द्वारा (मर्मृज्यमानः) शुद्धाचरण रूपसे सिद्ध किया गया (परिषिच्यते) नेतृत्वपद पर अभिषिक्त किया जाता है ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि जो उक्तगुणसम्पन्न पुरुष है वही सेनापतिके पद पर नियुक्त करना चाहिये ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सहस्रौतिः शतामघो विमानो रजसः कविः ।
इन्द्राय पवते मदः ॥ १४ ॥

सहस्रऽऊतिः । शतऽमघः । विऽमानः । रजसः । कविः । इन्द्राय । पवते । मदः ।

पदार्थः—(इन्द्राय) स सेनापतिः महदैश्वर्यप्राप्तये (सहस्रौतिः) सहस्रशःशक्तीर्दधाति । तथा (शतामघः) अनेकप्रकारेण धनं संचिनुते । तथा (विमानः, रजसः) प्रजा रक्षणाय रजोगुणप्रधानो भवति । अथ च (कविः) सर्वशास्त्र मर्मवित् तथा (इन्द्राय मदः) विज्ञानिनां सत्कारकर्ता तृप्ति कर्ता च (पवते) विशेषं गोपायति ॥

पदार्थ—(इन्द्राय) वह सेनापति इन्द्र अर्थात् सर्वोपरि ऐश्वर्य सम्पन्न होनेके लिये (सहस्रौतिः) सहस्रों प्रकारकी रक्षण शक्तिको धारण करता है और (शतामघः) सैकड़ों प्रकारके धनोंका सञ्चय करता है (विमानः रजसः) और प्रजारक्षणार्थ रजोगुणप्रधान होता है (कविः) सब शास्त्रोंका प्राज्ञ तथा) इन्द्राय मदः) विज्ञानियोंका सत्कर्ता और तृप्तिकर्ता तथा (पवते) उनको विशेष रूपसे रक्षा करता है ।

भावार्थ—जो विद्वानोंका रक्षक तथा सत्कार करने वाला और विद्याके प्रचारमें प्रेमी होता है वही सेनापति प्रशंसित कहा जाता है ।

गिरा जात इह स्तुत इन्दुरिन्द्राय धीयते ।
विर्योना वसतावि व ॥ १५ ॥ २६ ॥

गिरा । जातः । इह । स्तुतः । इंदुः । इन्द्राय । धीयते । विः । योना । वसतौऽइव ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(विः वसतौ इव) "विरिति शकुनिनाम वेतेर्गतिकर्मणः, अथापि इषुनामेह भवत्येतस्मादेव" नि. अ. २ । ६ । यथा शत्रुत आत्मरक्षणाय बाणो ज्यायां स्थाप्यते तथैव (इह, जातः, इन्दुः) अस्मिन्लोके सर्वैश्वर्यतां प्राप्तः सेनापतिः (गिरा, स्तुतः) सर्वजनवाचा स्तुतः (इन्द्राय) रक्षानिर्भीकतायै (योना, धीयते) उच्चपदोपरि प्रतिष्ठितः क्रियते ॥

पदार्थः—(विः, वसतौ, इव) "विरिति शकुनिनाम वेतेर्गतिकर्मणः अथापि इषुनामेह भवत्येतस्मादेव" नि. अ. २ । ६ । जिस प्रकार शत्रुसे रक्षाके लिये बाण ज्यामें स्थापित किया जाता है उसी प्रकार (इह, जातः इन्दुः) इस लोकमें सब ऐश्वर्यको प्राप्त सेनापति (गिरा, स्तुतः) सबकी वाणियों द्वारा स्तुत (इन्द्राय) रक्षा करनेसे निर्भीक होनेके लिये (योना, धीयते) उच्च पद पर स्थापित किया जाता है ।

भावार्थ—जिस प्रकार शस्त्र अपने नियत स्थानोंमें स्थित होकर राजधर्मकी रक्षा करते हैं, इसी प्रकार सेनापति अपने पद पर स्थिर होकर राजधर्मकी रक्षा करता है ।

पवमानः सुतो नृभिः सोमो वाजमिवासरत् ।
चमूषु शक्मनासदम् ॥ १६ ॥

पवमानः । सुतः । नृऽभिः । सोमः । वाजऽइव । असरत् । चमूषु । शक्मना । आऽसदं ।

पदार्थः—(नृभिः सुतः) विद्वद्भिः प्रजाभिरभिषिक्तः (सोमः) सौम्यगुणपूर्णः सेनापतिः (पवमानः) समस्तजनान् पवित्रयन् (चमूषु) सेनासु (शक्मना) स्वपराक्रमेण (आसदम्)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्वशत्रोरभिमुखं गन्तुं (वाजम्, इव) विद्युदादिशक्तिरिव (असरत्) गच्छति।

पदार्थ—(नृभिः स्रुतः) विदुषी प्रजाओंके द्वारा अभिषिक्त (सोमः) सौम्य सेनाधीश (पवमानः) सबको पवित्र करता हुआ (चमूषु) सेनाओंमें (शक्मना) अपने पराक्रमसे (आसदत्) प्राप्त शत्रुकी ओर अभिगमन करनेके लिये (वाजम्, इव) विद्युदादि अस्त्र शक्तिके समान (असरत्) गमन करता है।

भावार्थ—सोम यहां सेनाधीशका नाम है क्योंकि सेनाधीशमें भी धीरताके लिये सौम्यस्वभावकी आवश्यकता है। इस लिये उसे सोम रूपसे वर्णन किया है।

तं त्रिपृष्ठे त्रिवन्धुरे रथे युञ्जन्ति यातवे।
ऋषीणां सप्त धीतिभिः॥ १७॥

तं। त्रिऽपृष्ठे। त्रिऽवंधुरे। रथे। युजंति। यातवे। ऋषीणां। सप्त। धीतिऽभिः॥१७॥

पदार्थः—(ऋषीणाम्, सप्त, धीतिभिः) योहि ऋषिभिः "विज्ञानिशिल्पिभिरितियावत्" रचितः सप्तविधकर्मपरिपूर्णः तथा (त्रिपृष्ठे) उपवेशनस्थानत्रययुक्तः (त्रिवन्धुरे) त्रिषु उच्चैः नीचैः वर्तते (रथे) एवंभूते रथे (तम्) तं सेनापतिम् (यातवे युञ्जन्ति) यात्रार्थं प्रयुञ्जन्ति।

पदार्थ—(ऋषीणाम्, सप्त, धीतिभिः) जो कि ऋषियों अर्थात् विज्ञानी शिल्पियोंके द्वारा रचित है तथा सात प्रकारके आकर्षणादि युक्त

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संयुक्त है तथा (त्रिपृष्ठे) तीन उपवेशनस्थानोंसे युक्त तथा (त्रिबन्धुरे) तीन जगह ऊँचा नीचा है (रथे) ऐसे रथमें (तम्) उस सेनापतिको (यातवे, युञ्जन्ति) यात्रा करनेके लिये प्रयुक्त करते हैं।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि हे पुरुषो! तुम अपने सेनापतिओंके लिये ऐसे यान बनाओ, जो अनन्त प्रकारके आकर्षण-विकर्षणादि गुणोंसे युक्त हों। और जल स्थल तथा नभो मंडलमें सर्वत्रैव अव्याहतगति होकर गमन कर सकें।

तं सोतारो धनस्पृतमाशुं वाजाय यातवे।
हरिं हिनोत वाजिनम्॥ १८॥

तं। सोतारः। धनऽस्पृतं। आशुं। वाजाय। यातवे। हरिं। हिनोत। वाजिनं॥१८॥

पदार्थः—(सोतारः) हे अभिषेक्तारोऽमात्यादयः! (धनस्पृतम्) योहि धनसञ्चयकर्तास्ति तथा (आशुं) बहुव्यापनशीलोस्ति अथ च (हरिम्) शत्रुघातकोस्ति (वाजिनम्) तथा बलवानास्ति, तं (वाजाय) शक्तिवर्धनाय (यातवे) यात्रां कर्तुं (हिनोत) यूयं प्रेरयत।

पदार्थ—(सोतारः) हे अमात्यादि अभिषेक्ता लोगो! (धनस्पृतम्) जो कि धनोंका सञ्चय करने वाला है तथा (आशुं) बहुव्यापी है (हरिम्) और शत्रुओंका विघातक (वाजिनम्) सुन्दर बल वाला है उसको (वाजाय) शक्ति बढ़ानेको (यातवे) यात्रा करनेके लिये (हिनोत) प्रेरणा करो।

भावार्थ—हे प्रजाजनों! तुम लोग जो उक्तगुण सम्पन्न पुरुष है-उसको अपने अभ्युदयके लिये सेनाधीशादि पदों पर नियुक्त करो।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आविशन्कलशं सुतो विश्वा अर्षन्नभि श्रियः।
शूरो न गोषु तिष्ठति ॥ १९ ॥

आऽविशन्। कलशं। सुतः। विश्वाः। अर्षन्। अभि। श्रियः। शूरः। न। गोषु। तिष्ठति ॥१९॥

पदार्थः—(सुतः) अभिषिक्तः सेनाधीशः (कलशं, आविशन्) शब्दायमानशस्त्रेषु प्रविशन् शस्त्रविद्यां शिक्षन् इत्यर्थः (विश्वाः श्रियः अभ्यर्षन्) समस्तां लक्ष्मीं प्रापयन् (गोषु) इन्द्रियेषु (शूरः, न) वीर इव जितेन्द्रिय इवेति यावत् (तिष्ठति) स्थितो भवति ॥

पदार्थ—(सुतः) अभिषिक्त सेनापति (कलशम्, आविशन्) शब्दायमान शस्त्रोंमें प्रवेश करता हुआ अर्थात् शस्त्रविद्याको सीखता हुआ (विश्वाः श्रियः अभ्यर्षन्) सम्पूर्ण लक्ष्मीको प्राप्त करता हुआ (गोषु) इन्द्रियोंमें (शूरः, न) शूरके समान अर्थात् जितेन्द्रियकी तरह (तिष्ठति) स्थित होता है।

भावार्थ—जो पुरुष जितेन्द्रिय और दृढव्रती होते हैं वेही राजधर्मके लिये उपयुक्त होते हैं, अन्य नहीं।

आ त इन्द्रो मदाय कं पयो दुहन्त्यायवः।
देवा देवेभ्यो मधु ॥ २० ॥ २७ ॥

आ। ते। इंदो इति। मदाय। कं। पयः। दुहंति। आयवः। देवाः। देवेभ्यः। मधु ॥२०॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(इन्दो) हे परमैश्वर्यशालिन् ! (ते) भवतः (मदाय) आनन्दाय (आयवः, देवाः) दिव्यशक्तिमन्तो-ऽवदनुयायिनोजनाः (देवेभ्यः) ज्ञानक्रियाशालिभिः विद्वद्भिः (मधु) सुभोग्यं (पयः) दुग्धरूपं (कं) सुखम् (आ) समन्तात् (दुहन्ति) दुहते ।

पदार्थ—(इन्दो) हे परमैश्वर्यशालिन् ! (ते) आपके (मदाय) आनन्दके लिये (आयवः, देवाः) दिव्य शक्ति वाले आपके अनुयायी-लोग (देवेभ्यः) ज्ञानक्रियाशाली विद्वानोंसे (मधु) सुन्दर भोग-योग्य (पयः) दूध रूपी (कम्) सुखको (आ) भलीभांति (दुहंति) दुहते हैं ।

भावार्थ—हे परमात्मन् ! आपके अनुयायी लोग कामधेनु रूप पृथिव्यादिलोकलोकान्तरोंसे अनन्तप्रकारके अमृतोंको दुहते हैं ।

आ नः सोमं पवित्र आ सृजता मधुमत्तमम् ।
देवेभ्यो देवश्रुत्तमम् ॥ २१ ॥

आ । नः । सोमं । पवित्रे । आ । सृजत । मधुमत्ऽतमं ।
देवेभ्यः देवश्रुत्ऽतमं ॥२१॥

पदार्थः—हे पण्डिताः ! यूयं (नः) अस्माकं (सोमम्) सौम्यस्वभाववन्तं स्वामिनं (आ, सृजत) इत्थं साधयत, यथा (मधुमत्तमम्) मधुरप्रकृतिषूत्तमो भवतु । अथ च देवेभ्यः (देवश्रुत्तमम्) विद्वज्जनप्रार्थनां शृणोतु ।

पदार्थ—हे विद्वानो ! तुम (नः) हम लोगोंके (सोमम्)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सौम्य स्वभाव वाले स्वामीको (आ,सृजत) इस प्रकार सिद्ध करो जिससे (मधुत्तमम्) मधुर स्वभाव वालोंमे उत्तम हो। और (देवेभ्यः, देवशुत्तमम्) सब देवों अर्थात् विद्वानोंकी प्रार्थना सुनने वाला हो।

भावार्थ—हे प्रजाजनों! तुम ऐसे सेनापतिको वरण करो जो मधुर स्वभाव वाला हो और सबकी प्रार्थनाओं पर ध्यान देने वाला हो।

एते सोमा असृक्षत गृणानाः श्रवसे महे।
मदिन्तमस्य धारया ॥ २२ ॥

एते। सोमाः। असृक्षत। गृणानाः। श्रवसे। महे। मदिन्ऽतमस्य। धारया ॥२२॥

पदार्थः—(एते, सोमाः) इमे सेनाधीशाः (महे, श्रवसे, गृणानाः) महायशसे संस्तुताः (मदिन्तमस्य, धारया) आनन्ददायकशौर्य्यादिशक्तिधारासहिताः (असृक्षत) उत्पाद्यन्ते ॥

पदार्थ—(एते, सोमाः) ये सेनापति (महे, श्रवसे गृणानाः) महायशके लिये स्तुति किये गये (मदिन्तमस्य, धारया) आह्लादक शौर्य-वीर्यादि शक्तियोंकी धाराके सहित (असृक्षत) पैदा किये जाते हैं।

भावार्थ—उक्त गुणों वाले सेनापति संसारमें यश और बल बढ़ानेके लिये उत्पन्न किये जाते हैं।

अभि गव्यानि वीतये नृम्णा पुनानो अर्षसि।
सनद्वाजः परि स्रव ॥ २३ ॥

अभि। गव्यानि। वीतये। नृम्णा। पुनानः। अर्षसि। सनत्ऽवाजः। परि। स्रव।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—हे विभो ! (वीतये) उपभोगाय (गव्यानि, गृणा) गोधनानि (अभिपुनानः) निर्विघ्नानि कुर्वन् (अर्षसि) भवान् गमनं करोति (सनद्वाजः) सर्वासां शक्तीनां विभागं कुर्वन्, (परिस्रव) भवान् सर्वत्र व्यापको भवतु ॥

पदार्थ—हे स्वामिन् ! (वीतये) उपभोगके लिये (गव्यानि, गृणा) गोसम्बन्धी धनोंको (अभि पुनानः) निर्विघ्न करते हुए (अर्षसि) आप गमन करते हैं (सनद्वाजः) सब शक्तियोंको सर्वत्र विभक्त करते हुए आप (परिस्रव) सर्वत्र व्यापक होयँ ।

भावार्थ—जो सेनापति पृथिव्यादि रत्नोंको निर्विघ्न करनेके लिये अपनी जीवनयात्रा करते हैं वे, सेनाधीशादि पदोंके लिये उपयुक्त होते हैं ।

उत नो गोमतीरिषो विश्वा अर्ष परिष्टुभः ।
गृणानो जमदग्निना ॥ २४ ॥

उत । नः । गोऽमतीः । इषः । विश्वाः । अर्ष । परिऽस्तुभः ।
गृणानः । जमत्ऽअग्निना ।

पदार्थः—(उत) तथा (जमदग्निना गृणानः) समिद्धज्वलितप्रतापतया सर्वैः स्तूयमानो भवान् (नः) अस्मभ्यं (परिष्टुभः) निश्चलाः (विश्वाः) बहुविधाः (गोमतीः इषः) गवादिपदार्थयुक्ताः शक्तीः (अर्ष) प्रापयतु ।

पदार्थ—(उत) और (जमदग्निना, गृणानः) प्रज्वलित प्रतापसे सब लोगोंसे स्तूयमान आप (नः) हमारे लिये (परिष्टुभः) जो कि किसीप्रकार नहीं चलनेवाली ऐसी (विश्वाः) सब प्रकारकी (गोमतीः इषः) गवादिपदार्थ युक्त शक्तिको (अर्षः) प्राप्त कराइये ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करताहै कि हे प्रजाननो ! तुम लोग उक्तगुणसम्पन्न राजपुरुषोंके सदैव अनुयायी बने रहो, ताकि वे तुम्हारे लिये पृथिव्यादिलोकलोकान्तरोंके ऐश्वर्योंसे तुम्हें विभूषित करें।

पवस्व वाचो अग्रियः सोम चित्राभिरूतिभिः।
अभि विश्वानि काव्या ॥ २५ ॥ २८ ॥

पवस्व । वाचः । अग्रियः । सोम । चित्राभिः । ऊतिऽभिः । अभि । विश्वानि । काव्या ॥२५॥

पदार्थः—(सोम) हे सौम्यस्वभावशालिन् ! (अग्रियः) यतोस्मास्वग्रणीर्भवान्, अतः (चित्राभिः ऊतिभिः) बहुविध-विचित्ररक्षाभिः (वाचः) स्वाज्ञाविषयिणीं वाचं, तथा (विश्वानि काव्या) समस्तवेदादिकाव्यानि (अभिरक्ष) सुरक्षयतु ।

पदार्थ—(सोम) हे सौम्य ! (अग्रियः) आप जोकि इन लोगोंमें अग्रणी हैं इससे (चित्राभिः, ऊतिभिः) अनेकप्रकारकी विचित्र रक्षाओंसे (वाचः) अपनी आज्ञाविषयक वाणीको तथा (विश्वानि काव्या) सम्पूर्ण वेदादि काव्योंको (अभिरक्ष) सुरक्षित कीजिये ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें परमेश्वरसे रक्षार्थ प्रार्थना की गई है।

त्वं समुद्रिया अपोऽग्रियो वाचं ईरयन् ।
पवस्व विश्वमेजय ॥ २६ ॥

त्वं । समुद्रियाः । अपः । अग्रियः । वाचः । ईरयन् । पवस्व । विश्वंऽएजय ॥२६॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(विश्वमेजय) भयङ्करतयाखिलजगद्वशकर्त्तः ! ईश्वरात्मन् ! भवान् (अग्रियः) मुख्योस्ति (वाचः ईरयन्) स्वानुशासनेन (समुद्रियाः अपः) सागरसम्बंधिजलानि (पवस्व) बाधारहितानि करोतु ॥

पदार्थ—(विश्वमेजय) हे सब संसारको भयसे अपने वशमें रखने-वाले ! आप (अग्रियः) प्रधान हैं (वाचः ईरयन्) अपने अनुशासन द्वारा (समुद्रियाः, अपः) समुद्र सम्बन्धी जलोंको (पवस्व) निर्बाध करिये ।

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्माकी कृपासे ही सब पदार्थ निर्विघ्न रह सकते हैं, अन्यथा नहीं । इसीका वर्णन किया गया है ।

तुभ्येमा भुवना कवे महिम्ने सोम तस्थिरे ।
तुभ्यमर्षन्ति सिन्धवः ॥ २७ ॥

तुभ्य । इमा । भुवना । कवे । महिम्ने । सोम । तस्थिरे ।
तुभ्यं । अर्षति । सिंधवः ।

पदार्थः—(कवे) हे विद्वन् ! (इमा भुवना) अयं लोकः (तुभ्य महिम्ने) भवतोमाहात्म्याय (तस्थिरे) ईश्वरद्वारेण-स्थितो वर्तते । तथा (सोम) हे सौम्य ! (सिन्धवः) समस्ता-नद्यः (तुभ्यम्) भवत उपभोगाय (अर्षन्ति) ईश्वरद्वारा बहन्ति ।

पदार्थ—(कवे) हे विद्वन् ! (इमा भुवना) यह लोक (तुभ्य-महिम्ने) तुम्हारी ही महिमाके लिये (तस्थिरे) ईश्वरद्वारा स्थित है और (सोम) हे सौम्य ! (सिन्धवः) सब नदियाँ (तुभ्यम् अर्षन्ति) तुम्हारे-उपभोगके लिये ही ईश्वर द्वारा स्यन्दमान हो रहीं हैं ।

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्माके महत्वका वर्णन कियागया है-कि अनेक प्रकारके भुवनोंकी रचना और समुद्रोंकी रचना उसके-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महत्वको वर्णन करती है। अर्थात् सम्पूर्ण प्रकृतिके कार्य उसके एकदेशमें है। परमात्मा सर्वत्र परिपूर्ण हो रहा है। अर्थात् परमात्मा अनन्त है और प्रकृति तथा प्रकृतिके कार्य शान्त हैं।

प्र ते दिवो न वृष्टयो धारा यंत्यसश्चतः।
अभि शुक्रामुपास्तिरम् ॥ २८ ॥

प्र। ते। दिवः। न। वृष्टयः। धाराः। यंति। असश्चतः। अभि। शुक्रां। उपऽस्तिरँ।

पदार्थः—हे चमूपते ! (दिवः वृष्टयः न) यथा नभस्तोऽनेकजलधारापातस्तथा (ते) भवतः (धाराः) रक्षाकर्त्र्यः सेनाः (असश्चतः) पृथक् पृथक् (प्रयन्ति) इतस्ततोविचरन्ति तथा (शुक्राम् अभि) स्वपवनीयप्रजाः (उपस्तिरम्) वाढमनुगृह्णन्ति ॥

पदार्थ—हे सेनापते ! (दिवः वृष्टयः न) जिस प्रकार आकाशसे जलकी अनेक धाराओंका पात होता है उसी प्रकार (ते) आपकी (धाराः) रक्षक सेनायें (असश्चतः) पृथक् पृथक् (प्रयन्ति) इधर उधर विचरती हैं और (शुक्राम्, अभि) अपनी रक्षणीय पवित्र प्रजाको (उपस्तिरम्) भलीभाँति अनुगृहीत करती हैं।

भावार्थ—जिसप्रकार सेनापतिकी सेनायें इतस्ततः विचरती हुई उसके महत्वको बतलाती है उसी प्रकार अनन्त ब्रह्माण्ड परमात्माके महत्वको सेनाओंकी नाईं सुशोभित करते हैं।

इन्द्रायेन्दुं पुनीतनोग्रं दक्षाय साधनं।
ईशानं वीतिरावसं ॥ २९ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इन्द्राय। इंदुं। पुनीतन। उग्रं। दक्षाय। साधनं। ईशानं। वीतिऽराधसं।

पदार्थः—हे प्रजावर्ग! योहि (उग्रम्) अत्यन्ततेजस्वी-अस्ति अथच (दक्षाय साधनम्) येन भवन्तः समस्तकृत्येषु-कौशलं प्राप्तुं शक्नुवन्ति अथच यः (ईशानम्) स्वयमैश्वर्यप्रापणे प्रभुरस्ति, तथा (वीतिराधसम्) यश्च सर्वविधैश्वर्यदातास्ति एवं भूतं (इन्दुं) ऐश्वर्यशालिनं स्वकीयं सेनाधिपतिं (इन्द्राय) सर्वैश्वर्य-सम्पन्नतायै (पुनीतन) संघीभूय यथाशक्त्युपसेवनं कुर्वन्तु।

पदार्थ—हे प्रजालोगो! जोकि (उग्रम्) महातेजस्वी है और (दक्षाय साधनम्) जिसके द्वारा तुम लोग दक्ष अर्थात् सब कार्योंमें-कुशल हो सकते हो और जो (ईशानम्) स्वयं परमैश्वर्यको प्राप्त करने-में समर्थ है और (वीतिराधसम्) जो सब प्रकारके ऐश्वर्योंका दाता है-ऐसे (इन्दुम्) अपने ऐश्वर्यशाली सेनाधीशको (इन्द्राय) ऐश्वर्य सम्पन्न-होनेके लिये (पुनीतन) सब संमिलित होकर यथाशक्ति उपसेवन करो।

भावार्थ—इस मन्त्रमें सेनापतिकी आज्ञाका पालन करना-कथन किया गया है, कि जो लोग ऐश्वर्यशाली होना चाहें वे अपने-सेनाधीशकी आज्ञाका पालन करें।

पवमान ऋतः कविः सोमः पवित्रमासदत्।
दधत्स्तोत्रे सुवीर्यं ॥ ३० ॥ २९ ॥

पवमान। ऋतः। कविः। सोमः। पवित्रे। आ। असदत्। दधत्। स्तोत्रे। सुऽवीर्यं ॥ ३० ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(पवमान) हे जगद्रक्षक ! भवान् (ऋतः) सत्यशीलः (कविः) पण्डितः (सोमः) उदारचित्तोस्ति। अथ-च (स्तोत्रे सुवीर्यम् दधत्) स्वीयस्तोतॄन् अनुयायिवर्गांश्च पराक्रमशीलान् कुर्वन् (पवित्रे आसदत्) सत्कर्मी करोति सुरक्षति च ॥

इति द्विषष्टितमं सूक्तमूनत्रिंशो वर्गश्च समाप्तः ।

पदार्थ—(पवमान) हे सबके रक्षक ! आप (ऋतः) सत्यता-को धारण करने वाले (कविः) विद्वान् (सोमः) उदार है। और (स्तोत्रे सुवीर्यम् दधत्) अपने स्तोताओं तथा अनुयायियोंके लिये सुन्दर पराक्रम-को धारण करते हुए (पवित्रम् आसदत्) सत्कर्मी तथा सुरक्षित करते हैं।

भावार्थ—इस मन्त्रमें राजधर्मकी रक्षार्थ परिश्रमी बननेके लिये ईश्वरसे प्रार्थना की गई है।

यह ६२ वां सूक्त और २९ वां वर्ग समाप्त हुआ।

अथ त्रिषष्टितमस्य सूक्तस्य—

१–३० निधुविः काश्यप ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्द–१, २, ४, १२, १७, २०, २२, २३, २५, २७, २८, ३० निचृद्गायत्री । ३, ७–११, १६, १८, १९, २१, २४, २६ गायत्री । ५, १३, १५ विराड्गायत्री । ६, १४, २९ ककुम्मती गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ प्रकारान्तरेण राजधर्म उपदिश्यते—

आ पवस्व सहस्रिणं रयिं सोम सुवीर्यं ।
अस्मे श्रवांसि धारय ॥ १ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आ । पवस्व । सहस्रिणं । रयिं । सोम । सुऽवीर्यं । अस्मे इति । श्रवांसि । धारय ॥१॥

पदार्थः—(सोम) सूते चराचरं जगदिति सोमः हे परमात्मन् ! भवान् (सहस्रिणं स्ववीर्यम्) मह्यम् बहुविधबलप्रदानं करोतु । तथा (रयिं) सर्वविधैश्वर्यं प्रददातु च (अस्मे) अस्मासु (श्रवांसि) अखिलप्रकारकविज्ञानानि (धारया) धारयतु (आपवस्व) सर्वतः पवित्रयतु च ॥

अब दूसरी तरहसे राजधर्मका उपदेश करते हैं ।

पदार्थ—(सोम) हे जगदीश्वर ! आप (सहस्रिणं स्ववीर्यं) अनन्त प्रकारका बल हमको प्रदान करें (रयिं) और अनन्त प्रकारका ऐश्वर्य (अस्मे) हममें (श्रवांसि) सब प्रकारके विज्ञान (धारया) प्रदान करें । (आपस्व) सब तरहसे पवित्र करें ।

भावार्थ—राजधर्मकी पूर्तिके लिये इस मन्त्रमें अनेक प्रकारके बलोंकी परमात्मासे याचना की गई है ।

इषमूर्जं च पिन्वस इंद्राय मत्सरिन्तमः ।
चमूष्वा नि षीदसि ॥ २ ॥

इषे । ऊर्जे । च । पिन्वसे । इंद्राय । मत्सरिन्ऽतमः । चमूषु । आ । नि । सीदसि ॥२॥

पदार्थः—हे जगदीश्वर ! (चमूषु) सर्वासु सेनासु (आनिषीदसि) नियामकरूपेणास्थितोऽसि । भवान् (इन्द्राय)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परमैश्वर्यशालिने शूराय (मत्सरितमः) अतिमदकारकं वीरभावमुत्पादयतु। (इषं च) ऐश्वर्यं (ऊर्जं) बलं च (पिन्वसे) धारयतु॥

पदार्थ—हे परमात्मन्! (चमूषु) आप सब सेनाओंमें (आनिषीदसि) नियामक रूपसे स्थित है। आप (इन्द्राय) शूरवीरके लिये (मत्सरितमः) अत्यन्त मद करने वाला वीरताका भाव उत्पन्न करें। (इषं च) ऐश्वर्य (ऊर्जं) बल (पिन्वसे) धारण करांइये।

भावार्थ—राजधर्मके लिये अनन्तप्रकारके ऐश्वर्यकी आवश्यकता होती है। इस लिये परमात्मासे इस मन्त्रमें अनन्त सामर्थ्यकी प्रार्थनाकी गई है।

सुत इन्द्राय विष्णवे सोमः कलशे अक्षरत्।
मधुमाँ अस्तु वायवे॥ ३॥

सुतः। इंद्राय। विष्णवे। सोमः। कलशे। अक्षरत्। मधुमान्। अस्तु। वायवे॥३॥

पदार्थः—हे जगदीश्वर! (सुतः सोमः) साधनैः सिद्धः सौम्यस्वभावः (इन्द्राय) ज्ञानयोगिने (विष्णवे) बहुव्यापकाय (वायवे) कर्मयोगिने (मधुमान् अस्तु) सशीलमाधुर्यादिभावप्रदातास्तु। अथ च (कलशे) तेषामन्तःकरणेषु (अक्षरत्) निरन्तरं प्रवाहितो भवतु॥

पदार्थ—हे परमात्मन्! (सुतः सोमः) साधनोंसे सिद्ध किया हुआ सौम्यस्वभाव (इन्द्राय) ज्ञानयोगीके लिये (विष्णवे) जो बहु

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

व्यापक है (वायवे) कर्मयोगीके लिये (मधुमाँ अस्तु) सुशीलतायुक्त-मधुर्यादि भावोंको देने वाला हो। और (कलशे) उनके अन्तःकरणोंमें (अक्षरत् सदैव प्रवाहित होता रहे।

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्माने सर्वोपरि शीलकी शिक्षा दी है-कि हे पुरुषो! तुम अपने अन्तःकरणको शुद्ध बनाओ ताके तुमारा अन्तः-करण धृत्यादि धर्मके लक्षणोंको धारण करके राजधर्मके धारणके योग्य बने।

एते असृग्रमाशवोऽति ह्वरांसि बभ्रवः।
सोमा ऋतस्य धारया ॥ ४ ॥

एते। असृग्रं। आशवः। अति। ह्वरांसि। बभ्रवः। सोमाः। ऋतस्य। धारया ॥४॥

पदार्थः—(एते) इमे (सोमाः) सौम्यस्वभावाः (बभ्रवः) ये दृढाः सन्ति ते (ऋतस्य) सत्यतायाः (धारया) धाराभिः (अतिह्वरांसि) राक्षसानतिक्रमन्तः (आशवः) येऽत्यन्त-तेजस्विनः सन्ति, हे परमेश्वर! तान् त्वं (असृग्रम्) उत्पादय।

पदार्थ—(एते) ये (सोमाः) सौम्यस्वभाव (बभ्रवः) जो-दृढता युक्त हैं वे (ऋतस्य) सचाईकी (धारया) धारासे (अतिह्व-रांसि) राक्षसोंको अतिक्रमण करते हुए (आशवः) जो अत्यन्त तेजस्वी-हैं हे परमात्मन्! आप (असृग्रम्) उनको उत्पन्न करें।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि राजधर्मानुयायीपुरुषो! तुम लोग उग्र स्वभावको बनाओ ताके दुष्ट दस्यु और राक्षस तुम्हारे रौद्र स्वभावसे भयभीत होकर कोई अत्याचार न फैला सकें।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इन्द्रं॒ वर्ध॑तो अ॒प्तुरः॑ कृ॒ण्वंतो॒ विश्व॒मार्यं॑ ।
अ॒प॒घ्नंतो॒ अरा॑व्णः ॥५॥

इन्द्रं॑ । वर्ध॑तः । अ॒प्ऽतुरः॑ । कृ॒ण्वंतः॑ विश्वं॑ । आर्यं॑ । अ॒प॒ऽघ्नंतः । अरा॑व्णः ॥५॥

पदार्थः—(इन्द्रं वर्धन्तः) शूरमहत्वं वर्धयन् तथा तत् (अप्तुरः) गत्वरं (कृण्वन्तः) कुर्वन् (अराव्णः) समस्तान् शत्रून् (अपघ्नन्तः) नाशयन् (विश्वं) सर्वविधं (आर्यम्) आर्यत्वं ददातु ।

पदार्थ—(इन्द्रं) शूरवीरके महत्वको (वर्धन्तः) बढ़ाते हुए और उसको (अप्तुरः) गतिशील (कृण्वन्तः) करते हुए और (अराव्णः) सब शत्रुओंको (अपघ्नन्तः) नाश करते हुए (विश्वं) सब प्रकारके (आर्यं) आर्यत्वको दें ।

भावार्थ—परमात्मासे प्रार्थना है कि परमात्मा श्रेष्ठस्वभावका प्रदान करे, ताके आर्यताको धारण करके पुरुष राजधर्मका शासन करे ।

सु॒ता अनु॒ स्वमा रजो॒ऽभ्य॑र्षंति ब॒भ्रवः॑ ।
इंद्रं॒ गच्छं॑त॒ इंद॑वः ॥६॥

सु॒ताः । अनु॑ । स्वं । आ॒ । रजः॑ । अ॒भि । अ॒र्ष॒ंति॒ । ब॒भ्रवः॑ । इंद्रं॑ । गच्छं॑तः । इंद॑वः ॥६॥

पदार्थः—(सुताः) संस्कृतास्तथा (स्वं रजः) स्वकीयं स्थानं (आगच्छन्तः) प्राप्तवन्तः (इन्द्रं) परमात्मानं प्राप्य

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(इन्दवः) ये प्रकाशस्वरूपसंकल्पाः (बभ्रवः) स्थिराः सन्ति ते (अन्वभ्यर्षन्ति) परमात्मानं प्राप्नुवन्ति ।

पदार्थ—(सुताः) संस्कार किये हुए और (स्वं) अपने (रजः) स्थानको (आगच्छन्तः) प्राप्त होते हुए (इन्द्रं) परमात्माको प्राप्त होकर (इन्दवः) प्रकाशस्वरूपसंकल्प (बभ्रवः) जो स्थिर हैं वे (अन्वभ्यर्षन्ति) परमात्माको प्राप्त होते हैं ।

भावार्थ—जो लोग अपनी चित्तवृत्तियोंको निर्मल करते हैं वे एक प्रकारसे व्यवसायात्मक बुद्धिको बनाते हैं । अथवा यों कहो कि तदा "द्रष्टुः स्वरूपे ऽवस्थानम्" यो. १ । ३ । इस योगसूत्रमें वर्णित किये हुए आत्मस्वरूपमें स्थिति पाकर शुद्ध होते हैं । चित्तवृत्ति, संकल्प ये पर्याय शब्द हैं । परमात्माने इस मन्त्रमें इस बातका उपदेश किया है कि हे मनुष्यो ! आप शुद्ध संकल्प होकर मेरी ओर आयें ।

अया पवस्व धारया यया सूर्यमरोचयः ।
हिन्वानो मानुषीरपः ॥७॥

अया । पवस्व । धारया । यया । सूर्यं । अरोचयः । हिन्वानः । मानुषीः । अपः ।

पदार्थः—हे जगदीश ! भवान् (अया धारया) तेन प्रकाशेन प्रकाशयन् (यया) येन (सूर्यमरोचयः) सूर्यप्रकाशयति मां प्रकाशयतु । अथ च (मानुषीः) मनुष्याणां (अपः) कर्माणि (हिन्वानः) यथायोग्यं प्रेरयन् (पवस्व) मां पवित्रयतु ।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (अया) उस (धारया) प्रकाश-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

से प्रकाशित करते हुए (यया) जिससे (सूर्यमरोचयः) सूर्यको आप प्रकाशित करते है, उससे मुझे भी प्रकाशित कीजिये । और (मानुषीः) मनुष्योंके (अपः) कर्मोंकी (हिन्वानः) यथायोग्य प्रेरणा करते हुए (पवस्व) आप हमको पवित्र करें ।

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्मासे यथायोग्य न्यायकी प्रार्थना है । यद्यपि परमात्मा स्वभावसिद्ध न्यायकारी है, तथापि परमात्माने इस मंत्रमें "हिन्वानः मानुषीरपः" इस वाक्यसे यथायोग्य कर्मोंका फलप्रदाता कथनकरके यह सिद्ध किया कि तुम परमात्माके न्याय तथा नियमके अनुकूल काम करो ।

अयुक्त सूर एतशं पवमानो मनावधि ।
अन्तरिक्षेण यातवे ॥८॥

अयुक्त । सूरः । एतशं । पवमानः । मनौ । अधि । अंतरिक्षेण । यातवे ॥८॥

पदार्थः—(पवमानः) सर्वपावकः परमात्मा (मनावधि) यः खलु नरमात्राधिपोऽस्ति स ईश्वरः (अन्तरिक्षेण) अविज्ञेयमार्गेण (यातवे) गन्तुं (सूरः) सरतीति सूरः योऽन्तरिक्षेण मार्गेण गतिं करोति (एतशं) एतादृशशक्तिविशेषं सूर्यम् (अयुक्त) योजयति ।

पदार्थ—(पवमानः) सबको पवित्र करने वाला परमात्मा (मनावधि) जो मनुष्यमात्रका स्वामी है, वह (अन्तरिक्षेण) अन्तरिक्ष मार्ग द्वारा (यातवे) जानेके लिये (सूरः) जो अन्तरिक्ष मार्गसे गमन करता है (एतशं) ऐसे शक्ति सम्पन्न सूर्यको (अयुक्त) जोड़ता है ।

भावार्थ—परमात्माने अपने सामर्थ्यसे अनन्त शक्तिउत्पन्न किये हैं।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उत त्या हरितो दश सूरो अयुक्त यातवे ।
इन्दुरिन्द्र इति ब्रुवन् ॥९॥

उत । त्याः । हरितः । दश । सूरः । अयुक्त । यातवे ।
इन्दुः । इन्द्रः । इति । ब्रुवन् ॥९॥

पदार्थः—(उत) अपिच (इन्दुः) उनत्ति प्रेमातिशयेन प्रसन्नं करोतीतिइन्दुः सर्वाह्लादकः (इन्द्रः) सम्पूर्णैश्वर्ययुक्तः परमात्मा (इति) उक्तनामभिः (ब्रुवन्) कथनं कुर्वन् यः पुरुषः (यातवे) स्वीय-शारीरिकयात्रायै (त्याः) ताः (हरितः) पाप नाशिनीः (दश) दश-विधाः (सूरः) वृत्तीः (अयुक्त) योजयति स परमानन्दतां याति ।

पदार्थ—(उत और (इन्दुः) जो पुरुष अपने प्रेमसे सब पुरुषोंके हृदयोंको स्निग्ध करे उसका नाम यहाँ इन्दु है (इन्द्रः) जो सर्वऐश्वर्य युक्त परमात्मा है (इति) उसको ऐसे नामोंसे (ब्रुवन्) कथनकरता हुआ जो पुरुष (यातवे) अपनी शारीरिक यात्राके लिये (त्याः) उन (हरितः) पापको नष्टकर नेवाली (दशसूरः) दश प्रकारकी वृत्तियोंको (अयुक्त) जोड़ता है वह परमानन्दको प्राप्त होता है ।

भावार्थ—जो पुरुष अपनी इन्द्रियवृत्तियोंको सब ओरसे हटा कर एक परमात्मामें लगाते हैं वे परमानन्दको प्राप्त होते हैं । इस मन्त्रमें परमात्माने इन्द्रियवृत्तियोंको रोक कर ईश्वरमें लगानेका उपदेश किया है । इसका नाम ईश्वरयोग है "पराञ्चिखानि व्यतृणत् स्वयम्भू तस्मात् पराङ्पश्यति नान्तरात्मन्" परमात्माने इन्द्रियोंको बहिर्मुखी बनाया है इसलिये वे बाहरकी ओर जातीं हैं । इनके रोकनेका उपाय उक्त मन्त्रमें बतलाया है ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परीतो वायवे सुतं गिर इन्द्राय मत्सरम् ।
अव्यो वारेषु सिञ्चत ॥१०॥३१॥

परि । इतः । वायवे । सुतं । गिरः । इन्द्राय । मत्सरं । अव्यः । वारेषु । सिंचत ॥१०॥

पदार्थः—(गिरः) हे स्तोतारो जनाः ! भवन्तः (इन्द्राय) कर्मयोगिने तथा (वायवे) ज्ञानयोगिने (इतः) कर्मभूमौ (मत्सरं सुतं) आह्लादजनकं शीलं वर्षयन्तु । तथा (वारेषु) समस्तवरणीयपदार्थेषु (अव्यः परिषिंचत) परितोरक्षावृष्टिं कुर्वन्तु ।

पदार्थ—(गिरः) हे स्तोता लोगो ! आप (इन्द्राय) कर्मयोगीके लिये और (वायवे) ज्ञानयोगीके लिये (इतः) इस कर्मभूमिमें (मत्सरं) आह्लादजनक (सुतं) शीलकी वृष्टि करें । और (वारेषु) सब वरणीय पदार्थोंमें (अव्यः) रक्षाकी (परिषिंचत) सब ओरसे वृष्टि करें ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि वेदवेत्ता लोग ज्ञानयोग तथा कर्मयोगका उपदेश करते हैं वे मानों अमृतकी वृष्टिसे अकर्मण्यतारूप मृत्युसे मृत लोगोंका पुनरुज्जीवन करते हैं ।

पवमान विदा रयिमस्मभ्यं सोम दुष्टरम् ।
यो दूणाशो वनुष्यता ॥११॥

पवमान । विदाः । रयिं । अस्मभ्यं । सोम । दुस्तरं । यः । दुःऽनशः । वनुष्यता ॥११॥

पदार्थः—(पवमान) पवित्रः हे परमात्मन् ! (सोम)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हे सौम्यस्वभाव ! भवान् (अस्मभ्यं) अस्मभ्यम् तं (रयिं) धनं (विदाः) ददातु (यः) यत् (वनुष्यता) शत्रुभिः (दूणाशः) अजेयम् तथा (दुष्टरम्) दुष्प्राप्यमस्ति ।

पदार्थ—(पवमान) हे सबको पवित्र करने वाले परमात्मन् ! (सोम) हे सौम्यस्वभाव ! (अस्मभ्यं) हमारे लिये उस (रयिं) धनको (विदाः) दें (यः) जो (वनुष्यता) शत्रुओंसे (दूणाशः) अजेय है (दुष्टरम्) और अप्राप्य है ।

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्मानें उस अलभ्य लाभका उपदेश किया है जो ज्ञान विज्ञान रूपी धन है । ज्ञान विज्ञान रूप धनको कोई-पुरुष बलात्कारसे छीन वा चुरा नहीं सक्ता । इसी लिये कहा है कि हे-वेदानुयायियो ! आप उक्त धनका संचय करें ।

अभ्यर्ष सहस्रिणं रयिं गोमन्तमश्विनम् ।
अभि वाजमुत श्रवः ॥१२॥

अभि । अर्ष । सहस्रिणं । रयिं । गोऽमंतं । अश्विनं ।
अभि । वाजम् । उत । श्रवः ॥१२॥

पदार्थः—हे जगदीश्वर ! भवान् (सहस्रिणं रयिं) बहुविधानि धनानि यानि (गोमंतं) भूमिहिरण्यादियुतानि तथा (आश्विनम्) नानाविधवाहनपरिपूर्णानि अथ च (बाजम्) बलयुक्तानि (उत) अथच (श्रवः) यशोरूपाणि तानि (अभ्यर्ष) अस्मभ्यं ददातु ।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (सहस्रिणम् रयिम्) अनन्तप्रकारके धनोंको जो (गोमत्) अनेक प्रकारकी भूमि हिरण्यादि युक्त है तथा (अश्विनम्) जो विविध यानों से परिपूर्ण है और जो (बाजम्) बलरूप (उत) और (श्रवः) यशोरूप है उसको (अभ्यर्ष) आप हमको दें ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्मान अनन्त प्रकारके धनोंकी उपलब्धिका उपदेश किया है ।

सोमो देवो न सूर्योऽद्रिभिः पवते सुतः ।
दधानः कलशे रसम् ॥१३॥

सोमः । देवः । न । सूर्यः । अद्रिभिः । पवते । सुतः । दधानः । कलशे । रसं ।

पदार्थः—(सोमः) सूते चराचरं जगदिति सोमः समस्तविश्वविधाता (देवः) दिव्यगुणसम्पन्नः ईश्वरः (सूर्यः न) सूर्य इव (अद्रिभिः) स्वकीयशक्तिभिः (पवते) पवित्रयति । तथायः (सुतः) स्वयंसिद्धः परमात्मा (कलशे) अखिलपदार्थेषु (रसं) आनन्दं (दधानः) धारयति ।

पदार्थ—(सोमः) सब संसारको उत्पन्न करनेवाला (देवः) दिव्यस्वरूप (सूर्यः न) सूर्यके समान (अद्रिभिः) अपनी शक्तियोंसे (पवते) पवित्र करता है । और (सुतः) स्वतःसिद्ध परमात्मा जो (कलशे) प्रत्येक पदार्थमें (रसं) रसको (दधानः) धारण कराता है ।

भावार्थ—परमात्मदेवही प्रत्येक पदार्थमें रसको उत्पन्न करता है । और वही अपनी शक्तियोंसे सबको पवित्र करता है ।

एते धामान्यार्या शुक्रा ऋतस्य धारया ।
वाजं गोमन्तमक्षरन् ॥१४॥

एते । धामानि । आर्या । शुक्राः । ऋतस्य । धारया । वाजम् । गोऽमन्तं । अक्षरन् ॥ १४ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(एते शुक्राः) प्रागुक्तशीलस्वभावः परमेश्वरः यः (ऋतस्य धारया) सत्यधाराभिः (वाजम्) बलं तथा (गोमंतं) ऐश्वर्यं (अक्षरन्) वर्षयते स ईश्वरः (आर्या) आर्यपुरुषाणां (धामानि) स्थानरूपोऽवगन्तव्यः।

पदार्थ—(एते शुक्राः) पूर्वोक्त शीलस्वभाव जो (ऋतस्य धारया) सचाईकी धाराओंसे (वाजम्) बलको और (गोमंतं) ऐश्वर्यको (अक्षरन्) बरसाते हैं वे (आर्या) आर्यपुरुषोंके (धामानि) स्थान समझने चाहिये।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि श्रेष्ठपुरुषोंकी स्थिति का हेतु एकमात्र शुभस्वभाव वा शीलही समझना चाहिये। अर्थात् शुभ शीलसे ही उनकी दृढ़ता और उनका आर्यत्व बना रहता है। इस लिये शीलको सम्पादन करना आर्योंका परम कर्तव्य है।

सुता इन्द्राय वज्रिणे सोमासो दध्याशिरः।
पवित्रमत्यक्षरन् ॥१५॥३२॥

सुताः। इंद्राय। वज्रिणे। सोमासः। दधिऽआशिरः।
पवित्रे। अति। अक्षरन् ॥ १५ ॥

पदार्थः—(सुताः सोमासः) स्वयंसिद्धः परमात्मा (अतिपवित्रं दध्याशिरः) यः सर्वोपरि पवित्रताधिकरणः स परमेश्वरः (इन्द्राय वज्रिणे) कर्मयोगिपुरुषेभ्यः (अक्षरन्) परमानन्दस्य वृष्टिं करोति।

पदार्थ—(सुताः सोमासः) स्वयंसिद्ध परमात्मा (अतिपवित्रं दध्याशिरः) जो सर्वोपरि पवित्रताका अधिकरण है वह (इन्द्राय वज्रिणे) कर्मयोगी पुरुषके लिये (अक्षरन्) परमानन्दकी वृष्टि करता है।

भावार्थ—परमात्मा कर्मयोगी पुरुषके लिये आनन्दकी वृष्टि

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करता है। इसका तात्पर्य यह है कि उद्योगी पुरुषोंके लिये परमात्मा सदैव आनन्दका प्रदान करता है। यद्यपि परमात्माका आनन्द सबके सन्निहित है तथापि उसके आनन्दको उद्योगी कर्मयोगी ही लाभ कर सक्ते हैं। इस अपूर्वताका इस मन्त्रमें उपदेश किया गया है।

प्र सोम मधुमत्तमो राये अर्ष पवित्र आ।
मदो यो देववीतमः ॥१६॥

प्र। सोम। मधुमत्ऽतमः। राये। अर्ष। पवित्रे। आ।
मदः। यः। देवऽवीतमः ॥ १६ ॥

पदार्थः—(सोम) हे जगन्नियन्तः! भावत्कः (यः) यः (मदः) रसः (मधुमत्तमः) अतिस्वादुरस्ति, तथा (देववीतमः) दिव्यस्वरूपस्तं रसं (राये) अस्मदैश्वर्याय (पवित्रे) शुद्धान्तःकरणेषु (प्रार्ष) प्रापय।

पदार्थ—(सोम) हे परमेश्वर! आपका (यः) जो (मदः) रस (मधुमत्तमः) अत्यन्त स्वादु तथा (देववीतमः) दिव्यस्वरूप है उसको (राये) हमारे ऐश्वर्यके लिये (पवित्रे) पवित्रान्तःकरणोंमें (प्रार्ष) प्राप्त कराइये।

भावार्थ—जो पुरुष परमात्माके आनन्दका अनुसन्धान करते हैं अर्थात् परमात्माको ध्येय बनाकर उसके आह्लादसे आह्लादित होते हैं वे सब प्रकारसे अभ्युदयके पात्र होते हैं।

तमी मृजन्त्यायवो हरिं नदीषु वाजिनम्।
इन्दमिन्द्राय मत्सरम् ॥१७॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तं। ईमिति। मृजन्ति। आयवः। हरिं। नदीषु। वाजिनं। इंदुं। इंद्राय। मत्सरं॥ १७॥

पदार्थः—(तं हरिं) पूर्वोक्तगुणसम्पन्नं (इंदुं) स्वप्रेमार्द्रकारकम् अथच (इन्द्राय मत्सरं) कर्मयोगिनामाह्लादकारकं (ईं वाजिनं) समृद्धिषु बलस्वरूपं तथा (नदीषु) समस्ताभ्युदयेषु (आयवः) मनुष्याः (मृजन्ति) अविद्यारूपजवनिकामुत्पाट्य बुद्धिविषयं कुर्वन्ति।

पदार्थ—(तं, हरिं) उक्त गुणसम्पन्न परमात्माका (इंदुं) जो सबको अपने प्रेमसे आर्द्रित करने वाला है और (इन्दाय मत्सरम्) कर्मयोगीके लिये आह्लादको उत्पन्न करने वाला है (ईं वाजिनम्) बलस्वरूपको समृद्धियोंमें (नदीषु) सम्पूर्ण अभ्युदयोंमें (आयवः) मनुष्यलोग (मृजंति) अविद्याके परदेको हटा कर बुद्धिविषय बनाते हैं।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि जो लोग आवरणको दूर करके परमात्माका साक्षात्कार करते हैं, वे सब प्रकारके अभ्युदयोंको प्राप्त होते हैं।

आ पवस्व हिरण्यवदश्वावत्सोम वीरवत्।
वाजं गोमन्तमा भर॥१८॥

आ। पवस्व। हिरण्यऽवत्। अश्वऽवत्। सोम। वीरऽवत्।
वाजं। गोऽमंतं। आ। भर॥ १८॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन्! भवान् (आपवस्व) अस्मान् परितः पवित्रयतु। भवान् (हिरण्यवत) समस्तैश्वर्यवानस्ति

CC-0 Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथ च । अश्वावत्) सर्वशक्तिसम्पन्नोस्ति (वीरवत्) विविधवीरस्वाम्यस्ति त्वम् मां (गोमंतं वाजं) ज्ञानस्यैश्वर्येण (आभर) परिपूरय।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (आपवस्व) हमको सब ओरसे पवित्र करें । आप (हिरण्यवत्) सबप्रकारके ऐश्वर्य वाले हैं (अश्वावत्) सर्वशक्तिसम्पन्न है (वीरवत्) विविध प्रकारके वीरोंके स्वामी है । आप हमको (गोमंतं वाजं) ज्ञानके ऐश्वर्यसे (आभर) भरपूर करिये ।

भावार्थ—जो लोग परमात्मपरायण होते हैं उनको परमात्मा ज्ञान विज्ञानादि अनन्त प्रकारके ऐश्वर्यसे परिपूर्ण करता है ।

परि वाजे न वाजयुमव्यो वारेषु सिञ्चत ।
इन्द्राय मधुमत्तमम् ॥१९॥

परि । वाजे । न । वाजयुं । अव्यः । वारेषु । सिंचत ।
इंद्राय । मधुमत्ऽतमं ॥१९॥

पदार्थः—हे जगदीश्वर ! (इंद्राय) कर्मयोगिने (मधुमत्तमं) सर्वोत्कृष्टमाधुर्यं (परि षिंचत) सिंचय । (अव्यः) सर्वरक्षको भवान् (वारेषु) वरणीयपदार्थेषु (वाजयुं न) वीर इव (वाजे) संग्रामे रक्षां करोतु ।

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (इंद्राय) कर्मयोगीके लिये (मधुमत्तमम्) सर्वोपरि माधुर्यको (परिषिंञ्चत) सिंचन करें (अव्यः) सबकी रक्षा करने वाले आप (वारेषु) वरणीय पदार्थोंमें (वाजयुं न) वीरोंके समान (वाजे) युद्धमें रक्षा करें ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि जो लोग कर्मयोगी और उद्योगी बनकर अपने लक्ष्यकी पूर्तिमें कटिबद्ध रहते हैं परमात्मा वीरोंके समान उनकी रक्षा करता है ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कविं मृजन्ति मर्ज्यं धीभिर्विप्रा अवस्यवः।
वृषा कनिक्रदर्षति ॥२०॥३३॥

कविं। मृजंति। मर्ज्यं। धीभिः। विप्राः। अवस्यवः। वृषा। कनिक्रत्। अर्षति।

पदार्थः—(अवस्यवः) रक्षाकर्तारः (विप्राः) मेधाविनः (धीभिः) बुद्ध्या (मर्ज्यं) शुद्धस्वरूपं तथा (कविं) सर्वज्ञं परमात्मानं (मृजन्ति) ध्यानविषयं कुर्वंति। स परमात्मा (वृषा) अभिलाषपूरकः एवंभूतः परमेश्वरः (कनिक्रत्) वेदवाणीं प्रददत (क्षरति) आमोदस्य वृष्टिं करोति।

पदार्थ—(अवस्यवः) रक्षा करने वाले (विप्राः) मेधावीलोग (धीभिः) बुद्धिद्वारा (मर्ज्यं) शुद्धस्वरूप तथा (कविं) सर्वज्ञ परमात्मा-को (मृजन्ति) ध्यानका विषय बनाते हैं वह परमात्मा (वृषा) जोकि कामनाओंको वृष्टी करने वाला है एवंभूत ईश्वर (कनिक्रत्) वेदवाणी को प्रदान करता हुआ (क्षरति) आनन्दकी वृष्टि करता है,

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्माने इस बातका उपदेश किया है-कि जो लोग संस्कृतबुद्धि द्वारा उसका ध्यान करते हैं उनको परमात्माका साक्षात्कार होता है। इसी लिये उपनिषद्में कहा है कि "दृश्यते त्व-ग्र्या बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः" कि सूक्ष्मदर्शी लोग सूक्ष्मबुद्धि द्वारा उसके साक्षात्कारको प्राप्त होते हैं।

वृषणं धीभिरप्तुरं सोममृतस्य धारया।
मती विप्राः समस्वरन् ॥२१॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वृषणं। धीभिः। अप्स्तुरं। सोमं। ऋतस्य। धारया। मती। विप्राः। सं। अस्वरन् ॥२१॥

पदार्थः—(विप्राः) बुद्धिमन्तः पुरुषाः (वृषणं) कामनावर्षकं (सोमं) परमात्मानं (धीभिः शुद्धबुद्ध्या (मती) स्तुत्या तथा (ऋतस्य धारया) सत्यधारणतया (समस्वरन्) बुद्धिविषयं कुर्वंति

पदार्थ—(विप्राः) मेधावीजन (वृषणं) कामनाओंकी वृष्टि करानेवाले (सोमं) परमात्माको (धीभिः) शुद्धबुद्धि द्वारा (मती) स्तुतिसे तथा (ऋतस्य धारया) सत्यकी धारणासे (समस्वरन्) बुद्धिविषय करते हैं।

भावार्थ—इस मन्त्रसें परमात्माके साक्षात्कार करनेका उपदेश किया है।

पवस्व देवायुषगिन्द्रं गच्छतु ते मदः।
वायुमा रोह धर्मणा ॥२२॥

पवस्व। देव। आयुषक्। इंद्रं। गच्छतु। ते। मदः। वायुं। आ। रोह। धर्मणा।

पदार्थः—(देव) हे परमैश्वर्यसम्पन्नपरमात्मन्! भवान् मां (पवस्व) पवित्रयतु (ते) भवतः (मदः) आनन्दः (आयुषक्) उपासकं (इंद्रं) कर्मयोगिनं (गच्छतु) प्राप्नोतु। तथा भवान् (वायुं) ज्ञानयोगिनं पुरुषं (धर्मणा) उपास्यभावेन (आरोह) प्राप्नोतु।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(देव) हे दिव्यगुणसम्पन्न परमात्मन् ! आप मुझको (पवस्व) पवित्र करें । (ते) आपका (मदः) परम आनन्द (आयुषक्) उपासक (इन्दुं) कर्मयोगी पुरुषको (गच्छतु) प्राप्त हो । तथा आप (वायुं) ज्ञानयोगी पुरुषको (धर्मणा) उपास्यभावसे (आरोह) प्राप्त हों ।

भावार्थ—जो पुरुष ज्ञानयोगी वा कर्मयोगी बनकर परमात्माके उपासक बनते हैं परमात्मा उन्हें तद्धर्मतापत्तियोग द्वारा पवित्र करता है। अर्थात् अपने शिष्यादिभावोंको प्रदान करके उनको शुद्ध करता हैं ॥

पवमान नि तोशसे रयिं सोम श्रवाय्यम् ।
प्रियः समुद्रमा विश ॥२३॥

पवमान । नि । तोशसे । रयिं । सोम । श्रवाय्यं । प्रियः । समुद्रं । आ । विश ।

पदार्थः—(पवमान) सर्वपावकपरमात्मन् ! (सोम) सौम्यस्वभाव ! यो भवान् (श्रवाय्यं, रयिम्) दुष्टानां धनं (नितोशसे) नितरां नाशयति सः (प्रियः) आनन्दप्रदस्त्वम् (समुद्रं) आर्द्रीभूते मदन्तःकरणे (आविश) विराजमानो भवतु ।

पदार्थ—(पवमान) हे सबको पवित्र करने वाले ! (सोम) हे परमात्मन् ! जो आप (श्रवाय्यं, रयिम्) दुष्टोंके धनको (नि तोशसे) भलीभांति नष्ट करते हैं वह (प्रियः) आनन्ददाता आप (समुद्रं) आर्द्रीभूत हमारे अन्तःकरणमें (आविश) विराजमान होयँ ।

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्माके रौद्रभावका वर्णन किया है। जैसा कि "भयं वज्रमुद्यत" इस उपनिषद् वाक्यमें परमात्माके वज्रको भयरूपसे वर्णन किया गया है । इसी प्रकार यहां परमात्माका स्वरूप दुष्टोंके प्रति भयप्रद वर्णन किया है ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अपघ्नन्पवसे मृधः क्रतुवित्सोम मत्सरः।
नुदस्वादेवयुं जनम् ॥२४॥

अपऽघ्नन्। पवसे। मृधः। क्रतुऽवित्। सोम। मत्सरः। नुदस्व। अदेवऽयुं। जनं ॥२४॥

पदार्थः—(सोम) हे जगदीश्वर! भवान् (मत्सरः) परमानन्ददाता तथा (क्रतुवित्) सर्वशक्तिसम्पन्नोस्ति। यो भवान् (मृधः) दुष्टान् (अपघ्नन्) नाशयन् शिष्टान् (पवसे) गोपायति स त्वं (अदेवयुं) दुराचारिणं (जनं) रक्षःसमूहं (नुदस्व) नाशयतु।

पदार्थ—(सोम) हे परमेश्वर! आप (मत्सरः) परम आनन्द देने वाले तथा (क्रतुवित्) सर्वशक्तिसम्पन्न हैं। जो आप (मृधः) दुष्टोंको (अपघ्नन्) हनन करते हुए (पवसे) रक्षा करते हैं वह आप (अदेवयुं) दुष्टाचारी (जनं) राक्षससमूहको (नुदस्व) हनन करिये।

भावार्थ—इस मंत्रमें भी परमात्माके रौद्ररूपका वर्णन किया गया है।

पवमाना असृक्षत सोमाः शुक्रास इन्दवः।
अभि विश्वानि काव्या ॥२५॥३४॥

पवमानाः। असृक्षत। सोमाः। शुक्रासः। इंदवः। अभि। विश्वानि। काव्या।

पदार्थः—(शुक्रासः) यः बलवान् तथा (इन्दवः) दीप्तिमानस्ति एतादृशः (पवमानाः) रक्षकः (सोमाः) परमात्मा (विश्वानि) सम्पूर्ण (काव्या) वेदं (अभ्यसृक्षत) प्रकाशयति।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(शुक्रासः) जो बलवान् तथा (इंदवः) दीप्तिमान् है ऐसा (पवमानाः) रक्षा करने वाला (सोमाः) परमात्मा (विश्वानि) सम्पूर्ण (काव्या) वेदको (अभ्यसृक्षत) प्रकाशित करता है ।

भावार्थ—इस मंत्रमें इस बातका कथन है कि परमात्मा सब ज्ञानोंका स्रोत तथा वेदका प्रकाशक है । जैसा कि "तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऋचः सामानि जज्ञिरे" इत्यादि मंत्रोंमें अन्यत्र भी वर्णन किया है कि परमात्मासे ऋगादि वेद उत्पन्न हुए ।

पवमानास आशवः शुभ्रा असृग्रमिन्दवः ।
घ्नन्तो विश्वा अप द्विषः ॥२६॥

पवमानासः । आशवः । शुभ्राः । असृग्रं । इंदवः । घ्नंतः । विश्वाः । अप । द्विषः ।

पदार्थः—(अपद्विषः) मत्सरान् (घ्नंतः) नाशयन् (पवमानासः) देशपवितारः शूरवीरादयः (आशवः) अतिशीघ्रकारिणः (शुभ्राः) सुन्दराङ्गाः (इन्दवः) ऐश्वर्यशालिनः (विश्वाः असृग्रं) सर्वविधैश्वर्याणि उत्पादयंति ।

पदार्थ—(अपद्विषः) अनुचित द्वेषियोंको (घ्नंतः) नाश करते-हुए (पवमानासः) देशको पवित्र करने वाले शूरवीर (आशवः) अतिशीघ्रता करने वाले (शुभ्राः) सुन्दर (इन्दवः) ऐश्वर्यशाली (विश्वाः असृग्रं) सब प्रकारके ऐश्वर्योंको उत्पन्न करते हैं ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि जो शूरवीर अन्यायकारी दुष्टोंको दमन करते हैं वे देशके लिये अनन्त प्रकारके ऐश्वर्यको उत्पन्न करते हैं ।

पवमाना दिवस्पर्यन्तरिक्षादसृक्षत ।
पृथिव्या अधि सानवि ॥२७॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पवमानाः । दिवः । परि । अंतरिक्षात् । असृक्षत । पृथिव्याः । अधि । सानवि ॥ २७ ॥

पदार्थः—शूरादयः (दिवस्परि) द्युलोकादुपरि (अंतरिक्षात्) अंतरिक्षतः तथा (पृथिव्याः अधि) पृथ्वीलोकस्य मध्ये (सानवि) शौर्येण सर्वोपरि विराजते ते वीराः (पवमानाः) स्वयं पवित्रीभूय (असृक्षत) शुभगुणमुत्पादयन्ति ।

पदार्थ—जो शूरवीर (दिवस्परि) द्युलोकसे ऊपर (अंतरिक्षात्) अंतरिक्ष और (पृथिव्याः अधि) पृथिवी लोकके बीचमें (सानवि) शूर वीरताधर्मसे सर्वोपरि होकर विराजमान हैं वे (पवमानाः) स्वयं पवित्र होकर (असृक्षत) शुभगुणोंको उत्पन्न करते हैं ।

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं कि हे पुरुषो ! तुम अपने शूर वीरतादि धर्मोंसे इस संसारके उच्च शिखर पर विराजमान होकर सबकी रक्षा करो ।

पुनानः सोम धारयेन्दो विश्वा अप स्रिधः ।
जहि रक्षांसि सुक्रतो ॥२८॥

पुनानः । सोम । धारया । इंदो इति । विश्वाः । अप । स्रिधः । जहि । रक्षांसि । सुक्रतो इति सुऽक्रतो ॥२८॥

पदार्थः—(सोम) हे सौम्यस्वभाव विद्वन् ! भवान् (धारया) अमोदवृष्ट्या (पुनानः) पवित्रयन् (विश्वा अप-स्रिधः) समस्तान् धर्मविरोधिनः (रक्षांसि) राक्षसान् (जहि) नाशयतु (इंदो) हे प्रकाशस्वरूप ! (सुक्रतो) हे यज्ञस्वरूप ! भवान् अनाचारिनाशं करोतु ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—हे सौम्य स्वभाव वाले विद्वन् ! आप (धारया) आनन्दकी वृष्टिसे (पुनानः) हमको पवित्र करते हुए (विश्वा अपस्रिधः) सम्पूर्ण धर्म विरोधियोंका (जहि) नाश करो (रक्षांसि) जो राक्षस शुभ कर्मोंका नाशक है। हे सुक्रतो! अनाचारियोंका नाश करो॥

भावार्थ—धीरवीरतादि गुणसम्पन्न शूरवीर दुराचारी राक्षसोंका नाश करके देशमें सदाचार प्रचार करता है॥

अपघ्नन्त्सोम रक्षसोऽभ्यर्ष कनिक्रदत्।
द्युमन्तं शुष्ममुत्तमम् ॥२९॥

अपऽघ्नन्। सोम। रक्षसः। अभि। अर्ष। कनिक्रदत्।
द्युमंतं। शुष्मं। उत्ऽतमं ॥२९॥

पदार्थः—(सोम) हे सौम्यस्वभाव ! भवान् (रक्षसः) राक्षसानां (अपघ्नन्) नाशं कुर्वन् (कनिक्रदत्) तथा शूरतायाउपदेशं कुर्वन् (उत्तमं) सर्वोत्कृष्टं (द्युमन्तं) दीप्तिमन्तं (शुष्मं) बलं (अभ्यर्ष) अस्मभ्यं ददातु॥

पदार्थ—(सोम) हे सौम्यगुणसम्पन्न विद्वन् ! आप (रक्षसः) राक्षसोंका (अपघ्नन्) नाश करते हुए (कनिक्रदत्) और शूरवीरताका उपदेश करते हुए (उत्तमं) उत्तम (द्युमंतं) दीप्ति वाला (शुष्मं) बल (अभ्यर्ष) हमको दें॥

भावार्थ—जिस देशमें सौम्यस्वभाव युक्त शूर वीर उत्पन्न होते हैं, उस देशमें सर्वोपरि बल और ऐश्वर्य उत्पन्न होता है। तात्पर्य यह है कि ऐश्वर्य उत्पन्न करनेके लिये धीरवीरतादि गुणोंका धारण करना अत्यावश्यक है॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अस्मे वसूनि धारय सोम दिव्यानि पार्थिवा।
इन्दो विश्वानि वार्या ॥३०॥३५॥

अस्मे इति। वसूनि। धारय। सोम। दिव्यानि। पार्थिवा।
इन्दो इति। विश्वानि। वार्या ॥३०॥३५॥

पदार्थः—(इन्दो) हे समस्तगुणसम्पन्न ! (सोम) परमात्मन् ! भवान् (दिव्यानि) दिविभवानि (पार्थिवा) पृथिवीस्थानि (विश्वानि वसूनि) समस्तरत्नानि (वार्या) यानि वरणीयानि तानि (अस्मे) अस्मभ्यं (धारय) वितरतु ॥

पदार्थ—(इंदो) हे ज्ञान विज्ञानादि गुणसम्पन्न विद्वन् ! (सोम) हे परमात्मन् ! आप (पार्थिवा) पृथिवी सम्बन्धी (दिव्यानि) तथा द्युलोक सम्बन्धी (विश्वानि वसूनि) सब रत्न (वार्या) जो वरण करने योग्य हैं, उनको (अस्मे) हमारे लिये (धारय) धारण कराइये ॥

भावार्थ—परमात्माने इस मन्त्रमें इस बातका उपदेश किया है कि जो लोग सौम्य स्वभाव युक्त शूरवीरोंके अनुयायी होकर देशका परिपालन करते हैं, वे नाना प्रकारके रत्नोंको धारण करके ऐश्वर्यशाली होते हैं ॥

इति त्रिषष्ठितमं सूक्तं पंचत्रिंशो वर्गश्च समाप्तः ॥

यह ६३वां सूक्त और ३५वां वर्ग समाप्त हुआ ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ त्रिंशदृचस्य चतुःषष्टितमस्य सूक्तस्य—

१—३० काश्यप ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता छन्दः—१, ३, ४, ७, १२, १३, १५, १७, १९, २२, २४, २६, गायत्री २, ५, ६, ८—११ १४, १६, २०, २३, २५, २९ निचृद्गायत्री । १८, २१, २७, २८ विराड्गायत्री । ३० यवमध्या गायत्री ॥ षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मनोगुणा वर्ण्यन्ते ॥

अब परमात्माके गुणोंका वर्णन करते हैं ॥

वृषा सोम द्युमाँ असि वृषा देव वृषव्रतः ।
वृषा धर्माणि दधिषे ॥१॥

वृषा । सोम । द्युऽमान् । असि । वृषा । देव । वृषऽव्रतः । वृषा । धर्माणि । दधिषे ॥१॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन् ! त्वम् (द्युमानसि) दीप्तिमानसि । तथा (वृषा) समस्ताभीष्टवर्षकोसि । तथोपासकानांहृदयानि (वृषा) स्नेहेन सिञ्चसि । (देव) हे दिव्यगुणसम्पन्न ! भवान् (वृषव्रतः) आनन्दवर्षणशीलं ददाति । (वृषा धर्माणि दधिषे) तथा वर्षणशीलधर्मधारकोस्ति ॥

पदार्थ—(सोम) हे सौम्यस्वभाव परमात्मन् ! (द्युमान्) आपदीप्तिमान् (असि) हैं (वृषा) तथा सब कामनाओंकी वर्षा करने वाले हैं ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(देव) हे देव ! आप (वृषव्रतः) अर्थात् आनन्दकी वृष्टिरूप शील-को धारण किये हुए हैं। तथा उपासकोंके हृदयोंको (वृषा) स्नेहसे-सिञ्चन करते हैं, (वृषा धर्माणि दधिषे) और वर्षण शील धर्मोंको धारण किये हुए हैं॥

भावार्थ—हे परमात्मन् ! आप नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव हैं। और आपकी मर्यादासे ही सब लोक लोकान्तर स्थिर हैं। आप अपनी धर्ममर्यादामें हमको भी स्थिर कीजिये॥

वृष्णस्ते वृष्ण्यं शवो वृषा वनं वृषा मदः।
सत्यं वृषन्वृषेदसि ॥२॥

वृष्णः। ते। वृष्ण्यं। शवः। वृषा। वनं। वृषा। मदः। सत्यं। वृषन्। वृषा। इत्। असि ॥२॥

पदार्थः—(वृषन्) हे अभीष्टदायक परमात्मन् ! (वृष्णः) वर्षणशीलस्य (ते) तव (मदः) आनन्दः (वृषा) वर्षकः (शवः) बलं च (वृष्ण्यं) वर्षणशीलं वर्तते। अथच तव (वृषा) वर्षणशीलं (सत्यं) सत्यस्वरूपं (वनं) भजनीय-मस्ति। तथा एकः (वृषेत्) वर्षको भवानेव (असि) उपा-सनीयोस्ति॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (वृष्णः) वर्षणशील (ते) आपका (मदः) आनन्द (वृषा) वर्षक है। तथा (ते) तुम्हारा (शवः) बल (वृष्ण्यं) वर्षणशील है। और तुम्हारा (वृषा) वर्षणशील (सत्यं) सत्यस्वरूप (वनं) भजन करने योग्य है। और एकमात्र (वृषेत्) वर्षक आपही (असि) उपासना करने योग्य हैं॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—इस मन्त्रमें एकमात्र परमात्माको उपास्य रूपसे वर्णन किया गया हैं। तात्पर्य यह है कि ईश्वरसे भिन्न सत्यादि गुणोंका धाम अन्य कोई पदार्थ नहीं है ॥

अश्वो न चक्रदो वृषा सं गा इन्दो समर्वतः ।
वि नो राये दुरो वृधि ॥३॥

अश्वः । न । चक्रदः । वृषा । सं । गाः । इंदो इति । सं । अर्वतः । वि । नः । राये । दुरः । वृधि ॥३॥

पदार्थः—हे जगदीश्वर ! (वृषा) वर्षको भवान् [अश्वो न] विद्युदिव [सं चक्रदः] शब्दप्रदोस्ति । (इंदो) हे परमैश्वर्यसम्पन्न ! भवान् (गाः) ज्ञानेन्द्रियाणां तथा (समर्वतः) कर्मेन्द्रियाणां (दुरः) द्वाराणि (राये) ऐश्वर्याय (नः) अस्मदर्थं (विवृधि) उत्पाटयतु ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (अश्वो न) विद्युत्के समान (सं चक्रदः) शब्दोंके देने वाले हैं । और (इंदो) हे परमेश्वर ! आप (गाः) ज्ञानेन्द्रियोंके (समर्वतः) और कर्मेन्द्रियोंके (दुरः) द्वारोंको (राये) ऐश्वर्यार्थ (नः) हमारे लिये (विवृधि) खोल दें ॥

भावार्थ—परमात्मा जिन पर कृपा करता है,उन पुरुषोंकी ज्ञानेन्द्रिय तथा कर्मेन्द्रियकी शक्तियोंको बढ़ाता है। तात्पर्य यह है कि उद्योगी-पुरुष वा, यों कहो कि सत्कर्मी पुरुषोंकी शक्तियोंको परमात्मा बढ़ाता है। आलसी और दुराचारियोंकी नहीं ॥

असृक्षत प्र वाजिनो गव्या सोमासो अश्वया ।
शुक्रासो वीरयाशवः ॥४॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

असृक्षत। प्र। वाजिनः। गव्या। सोमासः। अश्व्या। शुक्रासः। वीर्य्या। आशवः ॥४॥

पदार्थः—(सोमासः) सौम्यस्वभाववान् (वाजिनः) बलरूपः (अश्वया) गतिशीलस्तथा (गव्या) प्रकाशरूपः (शुक्रासः) ज्ञानस्वरूपः (वीरया) वीरोत्पादकः पुरुषः (आशवः) गतिशीलं परमात्मानमुपासकाः (प्रासृक्षत) उपासते ॥

पदार्थ—(सोमासः) सौम्य स्वभाव वाला (वाजिनः) बलरूप (अश्वया) गतिशील तथा (गव्या) प्रकाशस्वरूप (शुक्रासः) ज्ञानस्वरूप (वीरया) वीरोंको उत्पन्न करने वाला (आशवः) गतिशील परमात्माको, उपासक लोग (प्रासृक्षत) अपना उपास्य बनाते हैं ॥

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करते हैं, कि हे मनुष्यो! तुम लोग उक्त गुणसम्पन्न परमात्माको अपना उपास्य बनाओ ॥

शुम्भमाना ऋतायुभिर्मृज्यमाना गभस्त्योः।
पवन्ते वारे अव्यये ॥५॥३६॥

शुंभमानाः। ऋतयुऽभिः। मृज्यमानाः। गभस्त्योः। पवन्ते। वारे। अव्यये ॥५॥३६॥

पदार्थः—(शुंभमानाः) भूषणभूषकः (मृज्यमानाः) सर्वपवित्रकारी (गभस्त्योः) प्रकाशस्वरूपः (वारे) वरणीयपदार्थेषु (अव्यये) अव्ययरूपेण विराजमानः परमात्मा (ऋतायुभिः) सत्यप्रियैः उपासितः (पवन्ते) तान्पवित्रयति ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(शुभ्रमानाः) सब भूषणोंका भूषक (मृज्यमानाः) सबको शुद्ध करने वाला (गभस्त्योः) प्रकाशस्वरूप (वारे) वरणीय पदार्थमें (अव्यये) अव्यय रूपसे जो विराजमान है, ऐसा परमात्मा (कृताशुभिः) सचाईको चाहने वाले लोगोंसे उपासना किया हुआ परमात्मा (पवन्ते) उनको पवित्र करता है ॥

भावार्थ—जो लोग सत्यके अभिलाषी हैं, उनको परमात्मा सदैव पवित्र करता है। क्योंकि परमात्मा भक्तों पर और सत्याभिलाषियों-पर अपनी कृपा करके उनका उद्धार करता है ॥

ते विश्वा दाशुषे वसु सोमा दिव्यानि पार्थिवा ।
पवन्तामान्तरिक्ष्या ॥६॥

ते । विश्वा । दाशुषे । वसु । सोमाः । दिव्यानि । पार्थिवा ।
पवंतां । आ । अंतरिक्ष्या ॥६॥

पदार्थः—(ते सोमाः) प्रागुक्तगुणसम्पन्नः परमात्मा दिव्यानि) द्युलोकभवानि (पार्थिवा) पृथिवीस्थानि (अन्तरीक्ष्या) अंतरिक्षभवानि (विश्वा) सम्पूर्णानि (वसु) धनानि (दाशुषे) वेदानुयायिभ्यः (आपवंतां) ददातु ॥

पदार्थ—(ते सोमाः) पूर्वोक्त गुणसम्पन्न परमात्मा (दिव्यानि) द्युलोकके (पार्थिवा) पृथिवी लोकके अंतरिक्ष्या) अंतरिक्ष लोकके (विश्वा) सब (वसु) धन (दाशुषे) जिज्ञासु वेदानुयायियोंको (आपवतां) दें ॥

भावार्थ—जो लोग परमात्माकी आज्ञाका पालन करते हैं, परमात्मा उनको सब प्रकारके ऐश्वर्य प्रदान करता है ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पव॑मानस्य विश्ववि॒त्प्र ते॒ सर्गा॑ असृक्षत ।
सूर्य॑स्येव॒ न र॒श्मयः॑ ॥७॥

पव॑मानस्य । वि॒श्व॒ऽवि॒त् । प्र । ते॒ । सर्गाः॑ । अ॒सृ॒क्ष॒त॒ । सूर्य॑स्यऽइव । न । र॒श्मयः॑ ॥७॥

पदार्थः—(विश्ववित्) हे संसारज्ञ परमात्मन् ! (पवमानस्य) सर्वपवित्रयितः (ते) तव (सर्गाः) सृष्टयः याः (प्रासृक्षत) रचिताः सन्ति, ताः (सूर्यस्येव रश्मयः) रवेः किरणा इव (न) सम्प्रति शोभन्ते ॥

पदार्थ—(विश्ववित्) हे सम्पूर्ण संसारके जानने वाले परमात्मन् ! (पवमानस्य) सबको पवित्र करने वाले (ते) तुम्हारी (सर्गाः) सृष्टियें (प्रासृक्षत) जो रची गई हैं, वे (सूर्यस्येव) सूर्यकी (रश्मयः) किरणोंके समान (न) इस कालमें शोभाको प्राप्त होरहीं हैं ॥

भावार्थ—परमात्माके कोटि कोटि ब्रह्मांड सूर्यकी रश्मियोंके समान देदीप्यमान हो रहे हैं। तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार सूर्य अपनी ज्योतिसे अनन्त ब्रह्माण्डोंको प्रकाशित करता है, उस प्रकार अन्य भी तेजोमय ब्रह्माण्ड लोक लोकान्तरोंको प्रकाश करने वाले परमात्माकी रचनामें अनन्त हैं। इसी अभिप्रायसे वेदमें अन्यत्र भी कहा है कि "कोऽद्धावेत्ति कमिह प्रवोचत्" इत्यादि मन्त्रोंमें यह वर्णन किया है कि परमात्माकी रचनाके अन्तको कौन जान सकता है। और कौन इसको पूर्ण रूपसे कथन कर सकता है ॥

के॒तुं कृ॒ण्वन्दि॒वस्परि॒ विश्वा॑ रू॒पाभ्य॑र्षसि ।
स॒मु॒द्रः सो॑म पिन्वसे ॥८॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

केतुं । कृण्वन् । दिवः । परि । विश्वा । रूपा । अभि । अर्षसि । समुद्रः । सोम । पिन्वसे ॥८॥

पदार्थः—(दिवस्परि) द्युलोकादुपरि (सोम) सौम्यस्वभाव-परमात्मन्! (केतुं कृण्वन्) सूर्यचन्द्रौ केतुरूपौ भवता रचितौ । अथ च (विश्वा रूपा) समस्तरूपाणि (अभ्यर्षसि) पवित्राणि कृतानि (समुद्रः) समुद्रवन्ति रसा यस्मादिति समुद्रः यस्मादानन्दोपलब्धिः स भवान् (पिन्वसे) सर्वविधैश्वर्याणि मह्यं वितरति ॥

पदार्थ—(सोम) हे सौम्य स्वभाव परमात्मन् ! (दिवस्परि) द्युलोकके ऊपर (केतुंकृण्वन्) सूर्य तथा चन्द्रमाको आपने केतुरूप बनाया है। और (विश्वारूपा) सम्पूर्ण रूपोंको (अभ्यर्षसि) पवित्र बनाया है । (समुद्रः) जिससे सब आनन्द मिलते हैं उसका नाम यहाँ समुद्र है (पिन्वसे) वह आप सब प्रकारके ऐश्वर्योंको हमारे लिये देते हैं ॥

भावार्थ—परमात्माने अपनी रचनामें सूर्य तथा चन्द्रमाको प्रकाशके केतु बनाकर संसारकी शोभाको बढ़ाया है । और आनन्दका सागर होनेसे परमात्माका नाम समुद्र है ॥

हिन्वानो वाचमिष्यसि पवमान विधर्मणि ।
अक्रान्देवो न सूर्यः ॥९॥

हिन्वानः । वाचं । इष्यसि । पवमान । विऽधर्मणि । अक्रान् । देवः । न । सूर्यः ॥९॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (सूर्यः न) सूर्य इव (देवः) भवान् प्रकाशस्वरूपोस्ति । अथच (विधर्मणि) सर्वाधिकरणानि

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(अक्रान्) अतिक्राम्यसि (पवमान) समस्तानान् पवित्रयन् (वाचमिष्यसि) त्वं वेदवाणीमिच्छसि। अथ च (हिन्वानः) सर्वप्रेरकोसि ॥

पदार्थ—हे परमात्मन्! (सूर्यः) सूर्यके (न) समान (देवः) आप प्रकाशस्वरूप हैं। और (विधर्मणि) सब अधिकरणोंका (अक्रान्) आप अतिक्रमण करते हैं। (पवमान) सबको पवित्र करते हुए (वाचमिष्यसि) आप वेदरूपी वाणीकी इच्छा करते हैं। (हिन्वानः) आप सर्वप्रेरक हैं ॥

भावार्थ—इस मन्त्रमें सूर्यका दृष्टान्त देकर परमात्माका स्वतःप्रकाश वर्णन किया है ॥

यद्यपि वास्तवमें सूर्य स्वतःप्रकाश नहीं हैं, तथापि लोककी प्रसिद्धिसे सूर्यको स्वतःप्रकाश मान कर यहां सूर्यका दृष्टान्त दिया गया है। वास्तवमें परमात्मा निरपेक्ष स्वतःप्रकाश है ॥

इन्दुः पविष्ट चेतनः प्रियः कवीनां मती।
सृजदश्वं रथीरिव ॥१०॥३७॥

इंदुः। पविष्ट। चेतनः। प्रियः। कवीनां। मती। सृजत्। अश्वं। रथीःऽइव ॥१०॥३७॥

पदार्थः—(इन्दुः) परमात्मा स्वयं प्रकाशशीलोस्ति। (पविष्ट) सर्वपवित्रकर्ता चास्ति। (चेतनः) अथच चिद्रूपोस्ति (कवीनां प्रियः) ।वद्वज्जनानां प्रियः (मती) बुद्धिस्वरूपोस्ति (अश्वं) सर्वोत्कृष्टविद्युदादिशक्तीः (सृजत) अरचयत। अथच स परमात्मा (रथीरिव) महारथ इव तेजस्वी तिष्ठति ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(इदुः) परमात्मा स्वतःप्रकाश है। (पविष्ट) सबको पवित्र करने वाला है। (चेतनः) चिद्रूप है (कवीनां प्रियः) विद्वानोंका प्रिय है। (मती) बुद्धिरूप है। (अश्वं) सर्वोपरि विद्युदादि शक्तियोंको (सृजत्) रचा है। और वह परमात्मा (रथीरिव) महारथीके समान तेजस्वी होकर विराजमान है॥

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्माको चेतन स्वरूप वर्णन करनेके लिये चेतन शब्द स्पष्ट आया है। जो लोग यह कहा करते हैं, कि, वेदमें परमात्माको ज्ञानस्वरूप कहने वाले शब्द नहीं आते, उनको इस मन्त्रसे शिक्षा लेनी चाहिये॥

ऊर्मिर्यस्ते पवित्र आ देवावीः पर्यक्षरत्।
सीदन्नृतस्य योनिमा॥११॥

ऊर्मिः। यः। ते। पवित्रे। आ। देवऽअवीः। परिऽअक्षरत्
सीदन्। ऋतस्य। योनिं। आ॥११॥

पदार्थः—हे विश्वकर्तः परमात्मन्! (ते) तवानन्दस्य (ऊर्मिः) तरङ्गाः (यः) ये (देवावीः) दिव्यास्ते (पवित्रे) पूतान्तःकरणेषु (पर्यक्षरत्) परितः प्रवहन्ति। भवान् (ऋतस्य) सत्यतायाः (योनिमासीदन्) स्थाने निवसति॥

पदार्थ—हे दिव्यस्वरूप परमात्मन्! (ते) तुम्हारे आनन्दकी (ऊर्मिः) लहरें (यः) जो (देवावीः) दिव्य हैं, वे (पवित्रे) पवित्र अन्तःकरणोंमें (पर्यक्षरत्) सब ओरसे बहती हैं। आप (ऋतस्य) सचाईके (योनिमासीदन्) धाममें निवास करते हैं॥

भावार्थ—परमात्मा शुद्ध अन्तःकरण वाले पुरुषोंके हृदयोंको अपनी सुधामयी दृष्टिसे सिंचित कर देता है॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स नो अर्ष पवित्र आ मदो यो देववीतमः ।
इन्दविन्द्राय पीतये ॥१२॥

सः । नः । अर्ष । पवित्रे । आ । मदः । यः । देवऽवीतमः ।
इंदो इति । इंद्राय । पीतये ॥१२॥

पदार्थः—(इन्दो) हे विविधगुणसम्पन्न परमात्मन् ! (इन्द्राय पीतये) कर्मयोगिनस्तृप्तये भवान् (आ) समन्तात् (मदः) आमोदस्य वृष्टिं करोतु । (यः) योह्यानन्दः (देववीतमः) देवानां-तर्पकोस्ति । अथच यस्य (पवित्रे) पवित्रान्तःकरणेषु संचारो भवति (सः) तमानन्दं (नः) अस्मान् (अर्ष) देहि ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे परमैश्वर्ययुक्त परमात्मन् ! (इन्द्राय पीतये) कर्मयोगीके तृप्तिके लिये आप (आ) सब ओरसे (मदः) आनन्दकी वृष्टि करें । (यः) जो आनन्द (देववीतमः) देवताओंकी तृप्ति करने वाला है । और (पवित्रे) पवित्र अन्तःकरणोंमें जिसका संचार होता है (सः) उस आनन्दको (नः) हम लोगोंको (अर्ष) दीजिये ॥

भावार्थ—परमात्माका वह आनन्द जो देवताओंके लिये तृप्तिकारक है, अर्थात् जिसके अधिकारी दिव्य गुण वाले सदाचारी पुरुष हैं, वह आनन्द केवल कर्मयोगी और ज्ञानयोगियोंको ही उपलब्ध हो सकता है अन्योंको नहीं । इस लिये सबको चाहिये कि कर्मयोगी और ज्ञानयोगी बनकर उस आनन्दकी प्राप्तिका यत्न करें ॥

इषे पवस्व धारया मृज्यमानो मनीषिभिः ।
इन्दो रुचाभि गा इहि ॥१३॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इषे । पवस्व । धारया । मृज्यमानः । मनीषिऽभिः । इंदो-
इति । रुचा । अभि । गाः । इहि ॥१३॥

पदार्थः—(इंदो) हे परमैश्वर्यसम्पन्न परमात्मन् ! भवान् (इषे) ऐश्वर्यार्थं (पवस्व) सुयोग्यं करोतु । अथ च (मनीषिभिः) बुद्धिमद्भिः (अभि मृज्यमानः) उपास्यमानोभवान् (धारया) स्वानन्दवृष्ट्या (गाः) अस्मदिन्द्रियाणि पवित्रयतु । (रुचा) स्वप्रकाशस्वरूपेण (इहि) आगत्य ममान्तःकरणं पवित्रयतु ॥

पदार्थ—(इंदो) हे ऐश्वर्ययुक्त परमात्मन् ! आप (इषे) ऐश्वर्यके लिये (पवस्व) हमको योग्य बनाएँ । और (मनीषिभिः) बुद्धिमानोंसे (अभि मृज्यमानः) उपास्यमान आप (धारया) अपने आनन्दकी वृष्टिसे (गाः) हमारी इन्द्रियोंको पवित्र करें । (रुचा) अपने प्रकाशस्वरूपसे (इहि) आकर हमारे अन्तःकरणको पवित्र कीजिये ॥

भावार्थ—जो लोग शुद्ध अन्तःकरणसे परमात्माकी उपासना करते हैं, परमात्मा उनकी शक्तियोंको बढ़ाता है । और उनकी इन्द्रियोंको विमल करके ऐश्वर्यप्राप्तिके योग्य बनाता है ॥

पुनानो वरिवस्कृध्यूर्जे जनाय गिर्वणः ।
हरे सृजान आशिरम् ॥१४॥

पुनानः । वरिवः । कृधि । ऊर्जे । जनाय । गिर्वणः । हरे ।
सृजानः । आऽशिरं ॥१४॥

पदार्थः—(हरे) दुष्टशक्तिहारिन् हे परमात्मन् ! भवान् मां (वरिवः) ऐश्वर्यवन्तं करोतु । (गिर्वणः) भवान् वेद-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वाण्योपासनीयोस्ति। अथ च (पुनानः) पवितास्ति। भवान् लोकस्य (आशिरं) मङ्गलं (सृजानः) कुर्वन् (जनाय) स्वभक्ताय (ऊर्जं) बलं (कृधि) करोतु ॥

पदार्थ—(हरे) हे दुष्टोंकी शक्तियोंको हरने वाले परमात्मन्। आप हमको (वरिवः) ऐश्वर्यसम्पन्न करें। (गिर्वणः) आप वैदिक वाणियों द्वारा उपासना करने योग्य हैं। और (पुनानः) पवित्र करने वाले हैं। आप संसारके लिये (आशिरं) मंगल (सृजानः) करते हुए (जनाय) अपने भक्तके लिये (ऊर्जं) बल (कृधि) करें ॥

भावार्थ—परमात्मा दुष्टोंकी शक्तियोंको हर लेता है, और श्रेष्ठोंको अभ्युदय दे करके बढ़ाता है ॥

पुनानो देववीतय इन्द्रस्य याहि निष्कृतम्।
द्युतानो वाजिभिर्यतः ॥१५॥३८॥

पुनानः। देवऽवीतये। इंद्रस्य। याहि। निःऽकृतं। द्युतानः। वाजिऽभिः। यतः ॥१५॥३८॥

पदार्थः—(हे परमात्मन् ! भवान् (इन्द्रस्य) कर्मयोगिनः (देववीतये) ब्रह्मप्राप्तये (याहि) प्राप्तोभवतु (यतः) यस्मात् कारणात् त्वम् (निष्कृतं द्युतानः) स्वाभाविकदीप्तिमानसि। तथा (वाजिभिः) उपासकैरुपास्यमानोसि। अथ च (पुनानः) सर्वान् पवित्रयसि। अतस्त्वमेव कर्मयोगिनोलक्ष्यतां प्राप्नुहि ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (इद्रस्य) कर्मयोगीको (देववीतये) ब्रह्मप्राप्तिके लिये (याहि) प्राप्त हों। (यतः) क्योंकि आप

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(निस्कृतं द्युतानः) स्वाभाविक दीप्तिमान् हैं। तथा (वाजिभिः) उपासक लोगोंसे उपासना किये जाते हैं। और (पुनानः) सबको पवित्र करते हैं। इस लिये कर्मयोगीका लक्ष्य आपही बनें॥

भावार्थ—कर्मयोगी यहां उपलक्षण मात्र है। तात्पर्य यह है कि कर्मयोगी तथा ज्ञानयोगी अथवा अन्य कोई उपासक हो, इन सबको एकमात्र ईश्वरकी ही उपासना करनी चाहिये। किसी अन्यकी नहीं॥

प्र हिन्वानास इन्दवोऽच्छा समुद्रमाशवः।
धिया जूता असृक्षत ॥१६॥

प्र। हिन्वानासः। इंदवः। अच्छ। समुद्रं। आशवः। धिया। जूताः। असृक्षत ॥१६॥

पदार्थः—(धिया) संस्कृतबुद्ध्या (जूताः) उपासितः (आशवः) गतिशीलः (अच्छ) निर्मलः परमात्मा (समुद्रं) द्रवीभूते मनसि (प्रासृक्षत) ध्यानविषयो भवति। पूर्वोक्तः परमेश्वरः (इंदवः) सर्वविधैश्वर्यवानस्ति। तथा (हिन्वानासः) सर्वप्रेरकोस्ति॥

पदार्थ—(धिया) संस्कृतबुद्धिसे (जूताः) उपासना किया हुआ (आशवः) गतिशील (अच्छ) निर्मल परमात्मा (समुद्रं) द्रवीभूत-मनमें (प्रासृक्षत) ध्यानको लक्ष्य बनाता है। उक्त परमात्मा (इंदवः) सब प्रकार ऐश्वर्य वाला है। तथा (हिन्वानासः) सबकी प्रेरणा करने वाला है॥

भावार्थ—सर्वप्रकाशक और सबका प्रेरक परमात्मा, संयमी पुरुषोंके ध्यानका विषय होता है। अन्योंके नहीं॥

मर्मृजानास आयवो वृथा समुद्रमिन्दवः।
अग्मन्नृतस्य योनिमा ॥१७॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मर्मृजानासः । आयवः । वृथा । समुद्रं । इंदवः । अग्मन् । ऋतस्य । योनिं । आ ॥१७॥

पदार्थः—पूर्वोक्तः परमात्मा (ऋतस्य योनिं) सत्यताया: स्थानं (आ) समन्तात् (अग्मन्) प्राप्नोति । स परमेश्वरः (मर्मृजानासः) सर्वपवित्रकर्तास्ति । अथ च (आयवः । गमनशीलोस्ति । (इंदवः) प्रकाशस्वरूपस्तथा (वृथा समुद्रम्) अंतरिक्षेप्यनायासेन गच्छति ॥

पदार्थ—उक्त परमात्मा (ऋतस्य योनिं) सत्यताके स्थानको (आ) भलीभांति (अग्मन्) प्राप्त होता है । वह परमात्मा (मर्मृजानासः) सबको पवित्र करने वाला है । (आयवः) गतिशील है (इंदवः) प्रकाशस्वरूप है । तथा (वृथा समुद्रम्) अन्तरिक्षमें भी अनायास गमन करने वाला है ॥

भावार्थ—उक्त सर्वशक्तिसम्पन्न परमात्मा विना परिश्रमके ही अन्तरिक्षादिलोकोंमें गमन कर सकता है, अन्य नहीं ॥

परि णो याह्यस्मयुर्विश्वा वसून्योजसा ।
पाहि नः शर्म वीरवत् ॥१८॥

परि । नः । याहि । अस्मऽयुः । विश्वा । वसूनि । ओजसा । पाहि । नः । शर्म । वीरऽवत् ॥१८॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (अस्मयुः) भक्तैः प्रार्थ्यो भवान् (नः) अस्माकं (विश्वा) सम्पूर्णानि (वसूनि) धनानि (ओजसा) सबलानि (परियाहि) सर्वतः प्रापयतु । अथ च

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(नः) अस्माकं (वीरवत्) वीरान् पुत्रान् (शर्म) शीलं च (पाहि) रक्षयतु ॥

पदार्थ—हे परमात्मन्! (अस्मयुः) भक्तोंको प्राप्त होने वाले आप (नः) हम लोगोंके (विश्वा) सम्पूर्ण (वसूनि) धनोंको (ओजसा) बलके सहित (परियाहि) सब ओरसे प्राप्त कराइये। और (नः) हम लोगोंके (वीरवत्) वीर पुत्रोंकी और (शर्म) शीलकी (पाहि) रक्षा कीजिये ॥

भावार्थ—जो लोग सदाचारी हैं और सदाचारसे अपने शीलको बनाते हैं, परमात्मा उनकी सदैव रक्षा करता है॥

मिमाति वह्निरेतशः पदं युजान ऋक्वभिः।
प्र यत्समुद्र आहितः ॥१९॥

मिमाति। वह्निः। एतशः। पदं। युजानः। ऋक्वऽभिः। प्र। यत्। समुद्रे। आऽहितः ॥१९॥

पदार्थः—हे परमात्मन्! (ऋक्वभिः) ऋत्विग्भिः (यत्) यदा (वह्निः) हवनीयाग्निः (एतशः) योहि दिव्यशक्तिसम्पन्नोस्ति (मिमाति) प्रज्वलितः क्रियते तदा (युजानः) यज्ञप्रयुक्तः परमात्मा योहि (समुद्रे) भक्त्या नम्रीभूतेऽन्तःकरणे (आहितः) स्थिरोभवति स परमात्मा (पदं) स्वपदं दधाति ॥

पदार्थ—हे परमात्मन्! (ऋक्वभिः) ऋत्विक् लोगोंसे (यत्) जब (वह्निः) हवनकी अग्नि (एतशः) जो दिव्यशक्तिसम्पन्न है (मिमाति) प्रज्वलित की जाती है, तब (युजानः) यज्ञमें युक्त होने वाला पर-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मात्मा जो (समुद्रे) भक्तिभावसे नम्रीभूत अन्तःकरणोंमें (माहितः) स्थिर रहता है, वह (पदं) अपने पदको धारण करता है ॥

भावार्थ—याज्ञिक लोग जब यज्ञ करते हैं, तब उनके नम्रीभूत अन्तःकरणोंमें परमात्मा निवास करता है । यज्ञ शब्दके अर्थ यहां उपासनात्मक यज्ञके हैं । यों तो जपयज्ञ, योगयज्ञ, कर्मयज्ञ इत्यादि अनेक प्रकारके यज्ञोंमें यज्ञ शब्द आता है, जिनके करने वाले ऋत्विक् कहलाते हैं, परन्तु यहां ऋत्विक् शब्दका अर्थ उपासक है । जो ऋतु ऋतुमें अर्थात् प्रकृतिके प्रत्येक भावमें उपासना करते हैं, उनको यहां ऋत्विक् कहा गया है ॥

आ यद्योनिं हिरण्ययमाशुर्ऋतस्य सीदति ।
जहात्यप्रचेतसः ॥२०॥३९॥

आ । यत् । योनिं । हिरण्ययं । आशुः । ऋतस्य । सीदति । जहाति । अप्रऽचेतसः ॥२०॥

पदार्थः—(यत्) यदा (आशुः) अत्यन्तगतिशीलोजगदीश्वरः (ऋतस्य हिरण्ययं योनिं) हिरण्मयीं यज्ञवेदीं (आसीदति) प्राप्नोति, तदा (अप्रचेतसः) असमाहितजनानामन्तःकरणानि (जहाति) त्यजति ॥

पदार्थ—(यत्) जब (आशुः) अतिवेग गतिशील परमात्मा (ऋतस्य हिरण्ययं योनिं) हिरण्मयी यज्ञवेदीको (आसीदति) प्राप्त होता है, तब (अप्रचेतसः) असमाहित लोगोंके अंतःकरणोंको (जहाति) छोड़ देता है ॥

भावार्थ—तात्पर्य यह है कि, ज्ञानसे प्रकाशित अंतःकरणोंको परमात्मा अपनी शक्तिसे विभूषित करता है, अज्ञानाद्दत अन्तःकरणोंको नहीं । इसी लिये यहां " अप्रचेतसः जहाति " यह लिखा है । वास्तवमें परमात्मा न किसी स्थानको छोड़ते है, न पकड़ते हैं ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अभि वेना अनूषतेयक्षन्ति प्रचेतसः ।
मज्जन्त्यविचेतसः ॥२१॥

अभि । वेनाः । अनूषत । इयक्षंति । प्रऽचेतसः । मज्जंति । अविऽचेतसः ॥२१॥

पदार्थः—(प्रचेतसो वेनाः) अत्युत्कृष्टज्ञानवन्तोविज्ञानिनो-जनाः (अभ्यनूषत) जगदीश्वरस्योपासनां कुर्वन्ति । अथ च (इयक्षंति) उपासनात्मकयज्ञेन परमात्मयजनं कुर्वन्ति । तथा (अविचेतसः) अज्ञानिनः (मज्जन्ति) निमग्ना भवन्ति ॥

पदार्थ—(प्रचेतसो वेनाः) प्रकृष्ट ज्ञान वाले विज्ञानी लोग (अभ्यनूषत) परमात्माकी उपासना करते हैं । और (इयक्षंति) उपासना-त्मकयज्ञसे परमात्माका यजन करते हैं । (अविचेतसः) अज्ञानी लोग-(मज्जन्ति) डूबते हैं ॥

भावार्थ—जो लोग शुद्ध मन वाले हैं, वे परमात्माके तत्वज्ञानसे मुक्तिके भागी होते हैं । और अज्ञानी लोग बार बार जन्म लेते हैं, और मरते हैं, परन्तु फिर भी परमात्माके तत्वको नहीं पाते । इसी लिये उनका यहां डूबना दिखलाया है ॥

इन्द्रायेन्दो मरुत्वते पवस्व मधुमत्तमः ।
ऋतस्य योनिमासदम् ॥२२॥

इन्द्राय । इन्दो इति । मरुत्वते । पवस्व । मधुमत्ऽतमः । ऋतस्य । योनिं । आऽसदम् ॥२२॥

पदार्थः—(इन्दो) हे परमैश्वर्यसम्पन्नपरमेश्वर ! (मरुत्वते

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इन्द्राय) ज्ञानयोगिने कर्मयोगिने च भवान् (पवस्व) स्वानन्दवृष्टिं करोतु । यतो भवान् (मधुमत्तमः) आनन्दमयोस्ति । अतएवोक्तविद्वज्जनेभ्य आनन्दप्रदानं करोतु । अथच (ऋतस्य योनिमासदम्) यज्ञवेद्यामागत्य यज्ञं विभूषयतु ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे प्रकाशस्वरूप परमात्मन् ! (मरुत्वते इन्द्राय) ज्ञानयोगी और कर्मयोगीके लिये (पवस्व) आप अपने आनन्दकी वृष्टि करें। क्योंकि आप (मधुमत्तमः) आनन्दमय हैं। इस लिये उक्त विद्वानोंको आप आनन्दका प्रदान करें। और (ऋतस्य योनिमासदम्) यज्ञवेदीको आकर विभूषित करें ॥

भावार्थ—परमात्मा कर्मयोगी और ज्ञानयोगीके हृदयमण्डपको विभूषित करता है, और उनके सत्यव्रतात्मक यज्ञको सदैव सुशोभित करता है ॥

तं त्वा विप्रा वचोविदः परिष्कृण्वन्ति वेधसः ।
सं त्वा मृजन्त्यायवः ॥२३॥

तं । त्वा । विप्राः । वचःऽविदः । परि । कृण्वंति । वेधसः ।
सं । त्वा । मृजंति । आयवः ॥२३॥

पदार्थः—हे जगदीश्वर ! (तं त्वा) उक्तगुणसम्पन्नं त्वां (वचोविदः) वेदज्ञाः (विप्राः) मेधाविनः (परिष्कृण्वन्ति) वर्णयन्ति । अथ च (वेधस आयवः) कर्मकाण्डिनोजनाः (त्वा) त्वां (संमृजंति) ध्यानविषयं कुर्वन्ति ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (तं त्वा) उक्त गुणसम्पन्न आपको

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(वचोविदोविप्राः) वेदवाणीके जानने वाले मेधावी लोग (परिष्कृण्वंति) वर्णन करते हैं । और (वेधस आयवः) कर्मकांडी लोग (त्वा) आपको (संयूजन्ति) ध्यानविषय करते हैं ॥

भावार्थ—जो लोग कर्मयोगी हैं, तथा योगसाधनरूपी कर्मों-द्वारा परमात्माको अपने ध्यानका विषय बनाते हैं, वे परमात्माके साक्षा-त्कारको प्राप्त होते हैं, अन्य नहीं ।

रसं ते मित्रो अर्यमा पिबन्ति वरुणः कवे ।
पवमानस्य मरुतः ॥२४॥

रसं । ते । मित्रः । अर्यमा । पिबंति । वरुणः । कवे ।
पवमानस्य । मरुतः ॥२४॥

पदार्थः—(पवमानस्य) सकलपावकस्य भवतः (रसं) रसं (मित्रः) समद्रष्टारः (वरुणः) विज्ञानादिभिर्गुणैः सृष्टेराच्छा-दका विद्वांसः (मरुतः) कर्मयोगिनः (ते कवे) सर्वज्ञस्य तव रसं (अर्यमा) न्यायकारिणः (पिबंति) पानं कुर्वन्ति ॥

पदार्थ—(पवमानस्य) सबको पवित्र करने वाले जो आप हैं, ऐसे आपके (रसं) रसको (मित्रः) समदर्शी विद्वान् (वरुणः) विज्ञानादि गुणोंसे सृष्टिको आच्छादन करने वाले (मरुतः) कर्मयोगिगण (ते कवे) तुम जो सर्वज्ञ हो, ऐसे आपके रसको (अर्यमा) न्यायकारी लोग (पिबंति) पान करते हैं ॥

भावार्थ—जो पुरुष कर्मयोगी तथा ज्ञानयोगी है, वही उस परमा-त्माके आनन्दको पान कर सक्ता है, अन्य नहीं । तात्पर्य यह है, कि परमात्माके समान परमात्माका आनन्द भी सर्वत्र परिपूर्ण है। परन्तु विना-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उक्त उपदेशसे, वा यों कहो, कि सर्वोपरि साधनके विना उसके आनन्दका कोई भी उपभोग नहीं कर सक्ता। इसी लिये यहां उक्त प्रकारके योगियोंका कथन किया है, कि उक्त योगी ही उसके आनन्दको भोगते हैं ॥

त्वं सोम विपश्चितं पुनानो वाचमिष्यसि ।
इन्दो सहस्रभर्णसम् ॥२५॥४०॥

त्वं । सोम । विपःऽचितं । पुनानः । वाचं । इष्यसि । इन्दो इति । सहस्रऽभर्णसं ॥२५॥

पदार्थः—(पुनानः) सर्वपावक ! (सोम) हे सर्वोपास्यदेव ! (त्वं) भवान् (विपश्चितं) ज्ञानविज्ञानदायिनीं (वाचं) वाणीं (इन्दो) हे सर्वप्रकाशक ! (सहस्रभर्णसं) बहुविधभूषणवत्शोभा यस्यास्तादृशीं वाणीं (इष्यसि) त्वं वाञ्छसि ॥

पदार्थ—(पुनानः) सबको पवित्र करने वाले ! (सोम) सबके उपास्यदेव परमात्मन् ! (इंदो) हेसर्वप्रकाशक ! (त्वं) तुम (विपश्चितं) ज्ञान विज्ञानको देने वाली (वाचं) जो वाणी है (सहस्रभर्णसं) और अनन्तप्रकारके भूषणोंके समान जिसकी शोभा है, ऐसी वाणीको (इष्यसि) चाहते हो ॥

भावार्थ—वेदवाणीके समान कोई अन्य भूषण ज्ञानका ज्ञापक नहीं है। वह सहस्रों प्रकारके भूषणोंकी शोभाको धारण किये हुई है। जो पुरुष इस विद्याभूषणको धारण करता है, वह सर्वोपरि दर्शनीय बनता है॥

उतो सहस्रभर्णसं वाचं सोम मखस्युवम् ।
पुनान इन्दवा भर ॥२६॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उतो इति । सहस्रऽभर्णसं । वाचं । सोम । मखस्युवं । पुनानः । इंदो इति । आ । भर ॥२६॥

पदार्थः—(उतो) अपि च (सहस्रभर्णसम्) बहुविध-भूषणवतीं (मखस्युवं) विविधविधैश्वर्य्यदायिनीं (वाचं) वाणीं (पुनानः) सर्वपावक ! (सोम) हे परमात्मन् ! (इन्दो) हे सर्वप्रकाशक ! (आभर) पूर्वोक्तवाण्याः प्रदानं करोतु ॥

पदार्थ—(उतो) और (सहस्रभर्णसं) अनेक प्रकारके भूषणों की शोभा वाली (मखस्युवं) जो विविध प्रकारके धनोंको देनेवाली है, ऐसी (वाचं) वाणीका (पुनानः) सबको पवित्र करने वाले ! (सोम) परमात्मन् ! (इंदो) हे सर्वप्रकाशक ! (आभर) हमको सब-प्रकारसे प्रदान करिये ॥

भावार्थ—परमात्मासे प्रार्थना है, कि उक्त प्रकारका विद्याभूषण हमको प्रदान करें ॥

पुनान इन्दवेषां पुरुहूत जनानाम् ।
प्रियः समुद्रमा विश ॥२७॥

पुनानः । इंदो इति । एषां । पुरुऽहूत । जनानां । प्रियः । समुद्रं । आ । विश ॥ २७ ॥

पदार्थः— [पुनानः] सर्वपावकपरमात्मन् ! [पुरुहूत] जगत्पूज्य ! [इंदो] सर्वप्रकाशक ! [प्रियः] सर्वप्रियपरमात्मन् ! [एषां जनानां] उपासकानां पुरुषाणां [समुद्रे] द्रवीभूत-मन्तःकरणं [आविश] स्वाभिव्यक्त्या शुद्धं कुरु ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosh

पदार्थ—(पुनानः) हे सबको पवित्र करनेवाले ! (पुरुहूत) सर्वपूज्य ! (इंदो) सर्वप्रकाशक ! (प्रियः) सबके प्रिय परमात्मन् ! (एषां जनानां) इन उपासक पुरुषोंके (समुद्रं) द्रवीभूत अन्तःकरणको (आविश) अपनी अभिव्यक्तिसे शुद्ध करिये ॥

भावार्थ—जो लोग विद्या और विनयसे सम्पन्न हैं, उनके अन्तःकरणको परमात्मा अवश्यमेव पवित्र करता है ॥

दविद्युतत्या रुचा परिष्टोभन्त्या कृपा ।
सोमाः शुक्रा गवाशिरः ॥२८॥

दविद्युतत्या । रुचा । परिऽस्तोभंत्या । कृपा । सोमाः । शुक्राः । गोऽआशिरः ॥२८॥

पदार्थः—(सोमाः) सर्वोत्पादकः (शुक्राः) बलस्वरूपः (गवाशिरः) इन्द्रियागोचरः परमात्मा (दविद्युतत्या) स्वोज्ज्वलज्योतिषा (रुचा) ज्ञानदीप्त्या (परिस्तोभंत्या) सर्वोत्कृष्टशोभमानया (कृपा) एतादृश्या कृपयास्माकं कल्याणं करोतु ॥

पदार्थ—(सोमाः) सर्वोत्पादक (शुक्राः) बलस्वरूप (गवाशिरः) इन्द्रियागोचर परमात्मा (दविद्युतत्या) अपनी उज्वल ज्योति से (रुचा) जो ज्ञानदीप्ति वाली है (परिस्तोभंत्या) और जो सर्वोपरि शोभा वाली है (कृपा) ऐसी कृपादृष्टिसे हमारा कल्याण करें ॥

भावार्थ—परमात्मा जिन लोगों पर अपनी कृपादृष्टि करता है उनका कल्याण अवश्यमेव होता है ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हिन्वानो हेतृभिर्यत आ वाजं वाज्यक्रमीत् ।
सीदन्तो वनुषो यथा ॥२९॥

हिन्वानः । हेतृऽभिः । यतः । आ । वाजं । वाजी ।
अक्रमीत् । सीदंतः । वनुषः । यथा ॥२९॥

पदार्थः—(हेतृभिः) उपासकैः (हिन्वानः) उपासितः परमात्मा (यतः) स्वेन प्रयत्नेन (वाजी) उत्कृष्टबलवान् (वाजं) बलं (अक्रमीत्) जयति (वनुषः) मनुष्यः (सीदंतः) युद्धे प्रवेशं कृत्वा (यथा) येन प्रकारेणान्यानि बलान्यभिभवति तथैव जगदीश्वरः सर्वबलजेतास्ति ॥

पदार्थ—(हेतृभिः) उपासक लोगोंसे (हिन्वानः) उपासना-किया हुआ परमात्मा (यतः) अपने प्रयत्नसे (वाजी) सर्वोपरि बल-वाला (वाजं) बलको (अक्रमीत्) जीतता है (वनुषः) मनुष्य (सीदंतः) युद्धमें प्रविष्ट होकर (यथा) जैसे अन्य बलोंको जीतता-है इस प्रकार परमात्मा सब बलोंको जीतता है ॥

भावार्थ—परमात्माने इस मन्त्रमें बलका उपदेश किया है, कि जिस प्रकार योद्धा सेनापति अपने बलके गर्वसे अन्य सेनाधीशों-को जीत कर स्वाधीन कर लेता है, इसी प्रकार सर्वोपरि बलस्वरूप परमात्मा सम्पूर्ण लोक लोकान्तरोंको अपने वशीभूत किये हुए हैं ॥

ऋधक्सोम स्वस्तये सञ्जग्मानो दिवः कविः ।
पवस्व सूर्यो दृशे ॥३०॥४१॥

ऋधक् । सोम । स्वस्तये । सञ्ऽजग्मानः । दिवः । कविः ।
पवस्व । सूर्यः । दृशे ॥३०॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(ऋधक् सोम) हे अद्वितीय जगदीश्वर! भवान् (संजग्मानः) सर्वत्र परिपूर्णोऽस्ति। तथा (दिवः) प्रकाशस्वरूपोऽस्ति। अथ च (कविः) सर्वज्ञो भवान् (स्वस्तये) कल्याणाय (पवस्व) मां पवित्रयतु। (सूर्यः) सरतीति सूर्यः हे परमात्मन्! (दृशे) ज्ञानवर्धनाय ममान्तःकरणे विराजितो-भवतु ॥

पदार्थ—(ऋधक् सोम) हे अद्वितीय परमात्मन्! आप (संजग्मानः) सर्वत्र परिपूर्ण हैं। तथा (दिवः) प्रकाशस्वरूप हैं (कविः) सर्वज्ञ हैं। आप (स्वस्तये) हमारे कल्याणके लिये (पवस्व) हमको पवित्र करें। (सूर्यः) हे परमात्मन्! (दृशे) ज्ञानकी वृद्धिकेलिये आप हमारे हृदयमें आकर विराजमान हों ॥

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्माने ज्ञानका उपदेश किया है कि, हे उपासक जनो! आप अपने ज्ञानकी वृद्धिके लिये सर्वोपरि शक्ति से अपने मङ्गलकी उपासना सदैव करते रहें ॥

इति चतुःषष्टितमंसूक्तमेकचत्वारिंशत्तमो वर्गश्च समाप्तः।

यह ६४ वाँ सूक्त और ४१ वाँ वर्ग समाप्त हुआ।

इति श्रीमदार्यमुनिनोपनिबद्धे ऋक्संहिताभाष्ये नवममण्डले सप्तमाष्टके प्रथमोऽध्यायः समाप्तः।

ऋग्वेद के ९ वें मण्डल में ७ वें अष्टक का १ ला अध्याय समाप्त हुआ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ द्वितीयोऽध्यायः ।

ओं विश्वानि देव सवितुर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रं तन्न आसुव ॥

अथ त्रिंशदृचस्य पंचषष्ठितमस्य सूक्तस्य—

१-३० भृगुर्वारुणिर्जमदग्निर्वा ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः—१,९,१०,१२,१३,१६,१८,२१,२२,२४, २६ गायत्री । २,११,१४,१५,२९,३० विराड्-गायत्री । ३,६-८,१९,२०,२७,२८ निचृद् गायत्री । ४,५पादनिचृद्गायत्री । १७,२३ककुम्मती गायत्री षड्जः स्वरः ॥

अथ परमात्मनो ध्यानविषयत्वं निरूप्यते ।

अब परमात्माका ध्यानविषयत्व निरूपण करते हैं ।

हिन्वन्ति सूरमुस्रयः स्वसारो जामयस्पतिम् ।
महामिन्दुं महीयुवः ॥१॥

हिन्वन्ति । सूरं । उस्रयः । स्वसारः । जामयः । पतिं । महां । इंदुं । महीयुवः ॥१॥

पदार्थः—(पतिं) सर्वरक्षकं तथा (महामिन्दुं) अतिप्रकाशकं (सूरं) सुवति प्रेरयति कर्मणि लोकमिति सूरः परमात्मा तं जगदीश्वरं (स्वसारः) स्वयं सरन्तीति स्वसारो-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बुद्धिवृत्तयः तथा (जामयः) जायन्त्यविद्यां नाशयन्तीति जामयो ज्ञानरूपा बुद्धिवृत्तयः (उस्रयः) परमात्मविषयिण्यः (महीयुवः) ब्रह्मविषयिण्योवृत्तयः (हिन्वन्ति) परमात्मनः साक्षात्कारं कुर्वन्ति ॥

पदार्थ—(पतिं) जो सबका रक्षक है, तथा (महामिदुं) सर्वोपरि जो सर्वप्रकाशक है (सूरं) ऐसे परमात्माको (स्वसारः) बुद्धिवृत्तियें (जामयः) ज्ञान रूप बुद्धिवृत्तियें (उस्रयः) परमात्माको विषय करने वाली (महीयुवः) ब्रह्मविषयिणी उक्त प्रकारकी वृत्तियें (हिन्वन्ति) उसका साक्षात्कार करतीं हैं ॥

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है, कि हे जीवो ! तुम जगज्जन्मादिहेतुभूत महाशक्तिको विषय करने वाली संस्कृत बुद्धियोंको उत्पन्न करो, ताकि इन्द्रियागोचर उस सूक्ष्मशक्तिका तुम ध्यान द्वारा साक्षात्कार कर सको ॥

पवमान रुचारुचा देवो देवेभ्यस्परि ।
विश्वा वसून्या विश ॥२॥

पवमान । रुचाऽरुचा । देवः । देवेभ्यः । परि । विश्वा । वसूनि । आ । विश ॥२॥

पदार्थः—(देवेभ्यस्परि देवः) सर्वोत्तमदेवः तथा यः परमेश्वरः (रुचा रुचा पवमानः) ज्ञानदीप्त्या सर्वान् पवित्रयति । एवंभूतो जगदीश्वरः (विश्वा वसूनि) सर्वैश्वर्यैःसह (आविश) ममान्तःकरणमागत्य निवसतु ॥

पदार्थ—(देवेभ्यस्परि देवः) जो सब देवोंसे उत्तम देव है, तथा जो परमात्मा (रुचा रुचा पवमानः) अपनी ज्ञानदीप्तिसे सब

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

को पवित्र करता है, ऐसा परमेश्वर (विश्वा वसूनि) सब ऐश्वर्योंके साथ (आविश) मेरे अन्तःकरणमें आकर निवास करें ॥

भावार्थ—परमात्माको सर्वोपरिदेव इस लिये कथन किया गया है, कि उस दिव्यशक्तिके आगे सब शक्तियें तुच्छ हैं। इसी लिये अन्यत्र भी वेदमें कहा गया है कि "एषो देवः प्रदिशोनुमर्वः"। वह सर्वोपरि देव सर्वत्र परिपूर्ण है, यहां उसी स्वजातीय विजातीय स्वगत-भेदशून्य देवसे यह प्रार्थना की गई है, कि हे प्रभो! आप आकर हमारे दुर्गुणोंको शुद्ध करें ॥

आ पवमान सुष्टुतिं वृष्टिं देवेभ्यो दुवः।
इषे पवस्व संयतम् ॥३॥

आ। पवमान। सुऽस्तुतिं। वृष्टिं। देवेभ्यः। दुवः।
इषे। पवस्व। संऽयतं ॥३॥

पदार्थः—(पवमान) हे सर्वपावक परमेश्वर! भवान् (देवेभ्यः) विद्वद्भ्यः (सुष्टुतिं वृष्टिं) सुन्दरस्तुतिरूपां वेदस्य-वृष्टिं (दुवः) प्रसन्नतायै (आपवस्व) वेदवृष्टिं ददातु। अथ च (संयतं) संयमिनं मां (इषे) ऐश्वर्यं (आपवस्व) ददातु ॥

पदार्थ—(पवमान) हे सबको पवित्र करने वाले! आप (देवेभ्यः) विद्वानोंके लिये (सुष्टुतिं वृष्टिं) सुन्दर स्तुति रूप वेदकी वृष्टिको (दुवः) प्रसन्नताके लिये (आपवस्व) दीजिये। और मुझ (संयतं) संयमीको (इषे) ऐश्वर्य (आपवस्व) दीजिये ॥

भावार्थ—परमात्मा संयमी जनोंको ऐश्वर्य प्रदान करता है, और और जो लोग दिव्यगुणसम्पन्न हैं, उनको ही सुधामयी वृष्टिसे परमात्मा सिञ्चित करता है ॥

CC-0. Kanhi Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तात्पर्य यह है कि परमात्माकी कृपाओंके पानेके लिये प्रथम मनुष्य को स्वयं पात्र बनना चाहिये । अर्थात् मनुष्य आधिकारी बनके उसके ऐश्वर्योंका पात्र बने ॥

वृषा ह्यसि भानुना द्युमन्तं त्वा हवामहे ।
पवमान स्वाध्यः ॥४॥

वृषा । हि । असि । भानुना । द्युऽमंतं । त्वा । हवामहे ।
पवमान । सुऽआध्यः ॥४॥

पदार्थः—(पवमान) हे सर्वपावकपरमात्मन् ! त्वम् (भानुना) सदर्थप्रकाशकतया (वृषाहि) वेदवाण्यावर्षकःखलु (असि) असि (स्वाध्यः) सुबुद्धिमंतोवयं (द्युमन्तं) दीप्तिमन्तं (त्वा) भवन्तं (हवामहे स्तुमः ॥

पदार्थ—(पवमान) सबको पवित्र करने वाले हे जगदीश ! आप (भानुना) अच्छे अर्थको प्रकाश करनेसे (वृषाहि) अवश्य वेद रूप वाणी की वर्षा करने वाले (असि) हैं । (स्वाध्यः) अच्छी बुद्धि वाले हम लोग (द्युमन्तं) स्वयंप्रकाश (त्वा) आपकी (हवामहे) स्तुति करते हैं ॥

भावार्थ—जो पुरुष परमात्मपरायण होते हैं, उन्हींके परिश्रम सफल होते हैं । इस अभिप्रायसे यह वर्णन किया है, कि परमात्मा उद्योगी पुरुषोंके उद्योगोंको सफल करें ॥

आ पवस्व सुवीर्यं मन्दमानः स्वायुध ।
इहो ष्विन्दवा गहि ॥५॥१॥

आ । पवस्व । सुऽवीर्यं । मंदमानः । सुऽआयुध । इहो इति ।
सु । इंदो इति । आ । गहि ॥५॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(इन्दो) हे जगदीश्वर ! भवान् (सुवीर्यं) अस्मत्पराक्रमं (आपवस्व) सर्वथा पवित्रयतु । यतस्त्वम् (मंदमानः) अनन्दमूर्तिरसि । अथ च (स्वायुधः) भवान् स्वयम्भूरस्ति । (इहउ) अत्रैव (सु) सुतरां (आगहि) आगत्य मामनुगृहाण ॥

पदार्थ—(इंदो) हे सर्वप्रकाशक परमात्मन् ! आप (सुवीर्यं) हमारे पराक्रमको (आपवस्व) सब प्रकारसे पवित्र करें । (मंदमानः) आप आनन्द स्वरूप हैं । और (स्वायुधः) आप स्वयम्भू हैं (इहउ) यहां ही (सु) भलीभांति (आगहि) हमको आकर अनुग्रहण करिये ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्माके आह्वान करनेका तात्पर्य स्वकर्माभिमुख करनेका है, अर्थात् आप हमारे कर्मोंके अनुकूल फलप्रदान करें । परमात्मा सर्वव्यापक है, इसलिये एक स्थानसे उठकर किसी-दूसरे स्थानमें जाना उसका नहीं हो सक्ता । इस प्रकार बुलानेका तात्पर्य सर्वत्र हृदयदेशमें अवगत करनेका समझना चाहिये । कुछ अन्य नहीं ॥

यदद्भिः परिषिच्यसे मृज्यमानो गभस्त्योः ।
द्रुणा सधस्थमश्नुषे ॥६॥

यत् । अत्ऽभिः । परिऽसिच्यसे । मृज्यमानः । गभस्त्योः ।
द्रुणा । सधऽस्थं । अश्नुषे ॥६॥

पदार्थः—(यत्) येन कारणेन भवान् (अद्भिः) सत्कर्मभिः (परिषिच्यसे) पूजितो भवति, अस्मात्कारणात् (गभस्त्योर्मृज्यमानः) स्वशक्त्या शुद्धोस्ति । अथ च (द्रुणा) स्वशक्त्या (सधस्थं) जीवात्मानं (अश्नुषे) व्याप्तं करोति ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(यत्) जिस कारणसे आप (आज्ञिः) सत्कर्मोंसे (परिषिच्यसे) पूजित होते हैं, अतः (गभस्त्योः) भृज्यमानः) स्वशक्तियोंसे जो शुद्ध हैं, और (द्रुणा) अपनी शक्तिसे (सधस्थं) जीवात्माको (अश्नुषे) व्याप्त करते हैं ॥

भावार्थ—जो पुरुष सत्कर्म करता है, उसकी आत्माको परमात्मा स्वशक्तियोंसे विभूषित करता है ॥

प्र सोमाय व्यश्ववत्पवमानाय गायत ।
महे सहस्रचक्षसे ॥७॥

प्र । सोमाय । व्यश्वऽवत् । पवमानाय । गायत । महे । सहस्रऽचक्षसे ॥७॥

पदार्थः—(व्यश्ववत्) कर्मयोगीव (सहस्रचक्षसे) अनन्तशक्तिसम्पन्नं (सोमाय) परमात्मानं (प्रगायत) यूयमुपगायध्वम् । यः परमेश्वरः (महे) सर्वपूज्योस्ति । तथा (पवमानाय) सर्वपवित्रकर्तास्ति ॥

पदार्थ—(व्यश्ववत्) कर्मयोगीके समान (सहस्रचक्षसे) अनन्त शक्तिसम्पन्न (सोमाय) परमात्माको (प्रगायत) आप लोग गान करें । जो परमात्मा (महे) सर्वपूज्य और (पवमानाय) सबको पवित्र करने वाला है ॥

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है, कि हे मनुष्यो ! तुम उस पूर्ण पुरुषकी उपासना करो । जो सर्वशक्तिसम्पन्न और सब संसारका हर्ता धर्ता तथा कर्ता है । इसी अभिप्रायसे वेदमें अन्यत्र भी कहा कि सूर्य चन्द्रमा आदि सब पदार्थोंका कर्ता एकमात्र परमात्मा है ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यस्य वर्णं मधुश्चुतं हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः ।
इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥८॥

यस्य । वर्णं । मधुऽश्चुतं । हरिं । हिन्वन्ति । अद्रिऽभिः ।
इंदुं । इंद्राय । पीतये ॥८॥

पदार्थः—(यस्य) यस्य परमात्मनः (वर्णं) स्वरूपं (मधुश्चुतं) आनन्ददायकं वर्तते, तं (हरिं) पापहर्तारं (इंदुं) स्वतःप्रकाशं परमात्मानं (अद्रिभिः) चित्तवृत्त्या (हिन्वन्ति) उपासका ध्यानविषयं कुर्वन्ति । (इन्द्राय) कर्मयोगिनः (पीतये) तृप्तये एतादृश्युपासना कर्तव्या, नान्या ॥

पदार्थ—(यस्य) जिस परमात्माका (वर्णं) स्वरूप (मधुश्चुतं) आनन्द देने वाला है, उस (हरिं) पापको हरण करने वाले (इंदुं) स्वतःप्रकाश परमात्माको (अद्रिभिः) चित्तवृत्तियों द्वारा (हिन्वन्ति) उपासक लोग ध्यानका विषय बनाते हैं । (इंद्राय) कर्मयोगीकी (पीतये) तृप्तिके लिये इसी प्रकारकी उपासना उचित समझनी चाहिये, अन्य नहीं ॥

भावार्थ—जो लोग अपनी चित्तवृत्तियोंको निरोध करके परमात्माका साक्षात्कार करते हैं, वेही कर्मयोगी कहला सक्ते हैं, अन्य नहीं ॥८॥

तस्य ते वाजिनो वयं विश्वा धनानि जिग्युषः ।
सखित्वमा वृणीमहे ॥९॥

तस्य । ते । वाजिनः । वयं । विश्वा । धनानि । जिग्युषः ।
सखित्वं । आ । वृणीमहे ॥९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—हे परमेश्वर ! यस्त्वम् (विश्वा) समस्तानि (धनानि) धनानि (जिग्युषः) स्वाधीनानि करोषि (तस्यते) एवंभूतस्य भवतः (सखित्वं) मैत्रीभावं (वयं वाजिनः) उपासका वयं (आवृणीमहे) वृणुमः ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! जो आप (विश्वा) सम्पूर्ण (धनानि) धन (जिग्युषः) स्वाधीन करने वाले हैं (तस्यते) उस आपके (सखित्वं) मैत्रीभावको (वाजिनः) हम उपासक लोग (आवृणीमहे) सब प्रकारसे वरण करें ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्माके साथ मैत्रीभावका उपदेश है। तात्पर्य यह है, कि जो सर्वशक्तिसम्पन्न परमात्मासे मित्रताका भाव रखते हैं, वे लोग परमात्माके प्रियगुणोंको अपनेमें अवश्यमेव धारण करते हैं ॥९॥

वृषा पवस्व धारया मरुत्वते च मत्सरः ।
विश्वा दधान ओजसा ॥१०॥२॥

वृषा । पवस्व । धारया । मरुत्वते । च । मत्सरः । विश्वा । दधानः । ओजसा ॥१०॥

पदार्थः—हे जगदीश्वर ! भवान् (वृषा) सर्वाभीष्टदातास्ति (धारया) स्वकीयानन्दवृष्ट्या (पवस्व) अस्मान्पवित्रय । (मरुत्वते) ज्ञानक्रियाकुशलानां विदुषां (मत्सरः) आमोददायकोस्ति । (च) अथ च (विश्वाः) सम्पूर्णानि लोकलोकान्तराणि (ओजसा) आत्मिकबलेन (दधानः) दधाति ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (वृषा) आप सब कामनाओंकी वर्षा करने वाले हैं । (धारया) आनन्दकी वृष्टिसे (पवस्व) हमको पवित्र

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हैं। (मरुत्वते) ज्ञान और क्रियाकुशल विद्वानोंके लिये (मत्सरः) आप आनन्दमय हैं (च) और (विश्वाः) सम्पूर्ण लोकलोकान्तरोंको (ओजसा) अपने आत्मिकबलसे (दधानः) आप धारण किये हुए हैं ॥

भावार्थ—परमात्मा आनन्दस्वरूप है, उसमें दुःखका लेश भी नहीं। उसके आनन्दको ज्ञानी तथा विज्ञानी कर्मयोगी और ज्ञानयोगी ही पा सक्ते हैं, अन्य नहीं ॥१०॥

तं त्वा धर्तारमोण्योः पवमान स्वर्दृशम् ।
हिन्वे वाजेषु वाजिनम् ॥११॥

तं । त्वा । धर्तारं । ओण्योः । पवमान । स्वःऽदृशं ।
हिन्वे । वाजेषु । वाजिनं ॥११॥

पदार्थः—(ओण्योः) द्युलोकस्य तथा पृथिवीलोकस्य (धर्तारं) धारणकर्तारं (तं त्वां) उक्तगुणसम्पन्नं (पवमान) सर्वपवितारं तथा (स्वःदृशं) समस्तलोकलोकान्तरज्ञं (वाजिनं) समस्तशक्तिसम्पन्नं भवन्तं (वाजेषु) यज्ञेषु (हिन्वे) वयमाह्वयामः ॥

पदार्थ—(ओण्योः) द्युलोक और पृथिवीलोकके (धर्तारं) धारण करने वाले जो आप हैं (तं त्वां) उक्त गुणसम्पन्न आपको (पवमान) जो सबको पवित्र करनेवाले और (स्वःदृशं) जो सब लोकलोकान्तरोंके ज्ञाता हैं, ऐसे (वाजिनं) सर्वशक्तिसम्पन्न आपको (वाजेषु) सब यज्ञोंमें (हिन्वे) हम लोग आह्वान करते हैं ॥

भावार्थ—जो लोग योगयज्ञ, ध्यानयज्ञ, विज्ञानयज्ञ, संग्रामयज्ञ और ज्ञानयज्ञ इत्यादि सब यज्ञोंमें एकमात्र परमात्माका आश्रयण करते-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हैं, वे लोग अवश्यमेव कृतकार्य होते हैं । तात्पर्य यह है, कि परमात्माके सहायता विना किसी भी यज्ञकी पूर्ति नहीं होती । इसलिये मनुष्योंको चाहिये, कि वे सदैव परमात्माकी सहायता लेकर अपने उद्देश्यकी पूर्ति करें ॥११॥

अया चित्तो विपानया हरिः पवस्व धारया ।
युजं वाजेषु चोदय ॥१२॥

अया । चित्तः । विपा । अनया । हरिः । पवस्व । धारया । युजं । वाजेषु । चोदय ॥१२॥

पदार्थः—हे सर्वबलस्वायत्तकारिन् परमेश्वर ! भवान् (धारया) आनन्दवृष्ट्या (पवस्व) अस्मान्पवित्रयतु । या आनन्दवृष्टिः (चित्तः) अद्भुता । तथा (अया) कर्मशीलतादात्री, अथच (विपा) शुभकृत्येषु प्रेरयित्री वर्तते (अनया) एतादृश्या वृष्ट्या (पवस्व) अस्मान्पवित्रयतु (वाजेषु) यज्ञेषु (युजं) युक्तं मां (चोदय) शुभकर्मणि प्रेरयतु ॥

पदार्थ—(हरिः) हे सम्पूर्ण बलोंको स्वाधीन रखने वाले परमात्मन् ! आप (धारया) आनन्दकी वृष्टिसे हमको (पवस्व) पवित्र करें । जो आनन्दकी वृष्टि (चित्तः) अद्भुत है (अया) और कर्मशीलता देने वाली है । और (विपा) शुभकार्योंमें प्रेरणा करनेवाली है, (अनया) उससे (पवस्व) आप हमको पवित्र करें (वाजेषु) यज्ञोंमें (युजं) युक्त मुझको (चोदय) सत्कर्मकी प्रेरणा करें ॥

भावार्थ—जो लोग सत्कर्मी बननेके लिये परमात्मासे प्रार्थना करते हैं, परमात्मा उन्हें अवश्यमेव शुभकर्मोंमें लगाता है ॥१२॥

आ नं इन्दो महीमिषं पवस्व विश्वदर्शतः ।
अस्मभ्यं सोम गातुवित् ॥१३॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आ । नः । इंदो इति । महीं । इषं । पवस्व । विश्वऽदर्शतः । असम्यं । सोम । गातुऽवित् ॥१३॥

पदार्थः—(इंदो) सर्वैश्वर्यसम्पन्नपरमात्मन् ! भवान् (विश्वदर्शतः) सकलसंसारदीपकोस्ति । अथच (महीमिषं) समस्तैश्वर्यसम्पन्नोस्ति । (सोम) सर्वजनकपरमात्मन् ! भवान् (असम्यं) अस्माकं (गातुवित्) सर्वज्ञोस्ति (नः) अस्मान् (आपवस्व) सर्वथा पवित्रयतु ॥

पदार्थ—(इंदो) हे सर्वप्रकाशक परमात्मन् ! आप (विश्वदर्शतः) सम्पूर्ण विश्वके प्रकाशक हैं । और (महीमिषं) सवैश्वर्यसम्पन्न हैं । (सोम) हे सर्वोत्पादक परमात्मन् ! आप (अस्मभ्यं) हम लोगोंके (गातुवित्) सम्पूर्ण ज्ञातव्य पदार्थोंके ज्ञाता हैं (नः) हमको (आपवस्व) सब प्रकारसे पवित्र करिए ॥

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है कि, हे मनुष्यो ! तुमको अपनी पवित्रताकी प्रार्थना केवल उसी देवसे करनी चाहिये, जो सब ब्रह्माण्डोंका ज्ञाता, और सर्वोत्पादक है ॥१३॥

आ कलशा अनूषतेन्दो धाराभिरोजसा ।
एन्द्रस्य पीतये विश ॥१४॥

आ । कलशाः । अनूषत । इंदो इति । धाराभिः । ओजसा । आ । इंद्रस्य । पीतये । विश ॥१४॥

पदार्थः—(इंदो) सर्वप्रकाशकर्तः परमात्मन् ! त्वं (धाराभिः) अमोदवृष्टिभिः (इन्द्रस्य पीतये) कर्मयोगिनस्तृप्तये-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(कलशाः) कर्मयोगिनामन्तःकरणेषु (आविश) परितःप्रविश। अथ-च (ओजसा) स्वप्रकाशेन कर्मयोगिनं (आनूषत) विभूषय॥

पदार्थ—(इंदो) हे सर्वप्रकाशक परमात्मन्! आप (धारा-भिः) आनन्दकी वृष्टि द्वारा (इन्द्रस्य पीतये) कर्मयोगीकी तृप्तिके लिये (कलशाः) उसके अन्तःकरणमें (आविश) सब ओरसे प्रवेश करें। और (ओजसा) अपने प्रकाशसे कर्मयोगीको (आनूषत) विभूषित करें॥

भावार्थ—जो पुरुष कर्म करनेमें तत्पर रहते हैं, अर्थात् उद्योगी हैं, परमात्मा उनको अपने प्रकाशसे परमोद्योगी बनाता है॥१४॥

यस्य ते मद्यं रसं तीव्रं दुहन्त्यद्रिभिः ।
स पवस्वाभिमातिहा ॥१५॥३॥

यस्य । ते । मद्यं । रसं । तीव्रं । दुहन्ति । अद्रिऽभिः । सः । पवस्व । अभिमातिऽहा ॥१५॥

पदार्थः—(यस्य) यस्य (ते) तव (मद्यं) आह्लादनीयं (तीव्रं) उत्कटम् (रसं) रसं कर्मयोगिनः (अद्रिभिः) उद्योगकर्तृशक्तिभिः (दुहन्ति) पूर्णतया दुहते। (सः) सः (अभिमातिहा) विघ्नविनाशको भवान् (पवस्व) अस्मान्प-वित्रयतु॥

पदार्थ—(यस्य) जिस (ते) आपके (मद्यं) आह्लादका-रक (तीव्रं) उत्कट (रसं) रसको कर्मयोगी लोग (अद्रिभिः) उद्योग-रूप शक्तियोंसे (दुहन्ति) पूर्ण रूपसे दुहते हैं, (सः) वह (अभि-मातिहा) विघ्नोंके हनन करनेवाले आप (पवस्व) हमको पवित्र करें॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—कर्मयोगियोंके सब विघ्नोंको हनन करने वाला परमात्मा, उनके उद्योगको सफल करता है ॥१५॥

राजा मेधाभिरीयते पवमानो मनावधि ।
अन्तरिक्षेण यातवे ॥१६॥

राजा । मेधाभिः । ईयते । पवमानः । मनौ । अधि । अंतरिक्षेण । यातवे ॥१६॥

पदार्थः—(राजा) राजते प्रकाशतेति राजा सर्वप्रकाशकः परमात्मा (मेधाभिः) बुद्धिभिः (ईयते) प्राप्यते । परमात्मा (पवमानः) सर्वपवितास्ति । तथा (मनावधि) यज्ञेषु पवित्रतासम्पादकोस्ति । (अंतरिक्षेण यातवे) अथ च परलोकयात्रायां सहायकोस्ति ॥

पदार्थ—(राजा) परमात्मा (मेधाभिः) बुद्धिसे (ईयते) प्राप्त होता है। (पवमानः) सबको पवित्र करनेवाला है, (मनावधि) यज्ञोंमें पवित्रता देने वाला है तथा (अन्तरिक्षेण यातवे) परलोकयात्रामें सहायक है ॥

भावार्थ—आध्यात्मिक, आधिभौतिक, और आधिदैविक इत्यादि सब यज्ञोंमें परमात्मा ही यज्ञदेव है, और याजकोंको पवित्र करनेवाला है। तथा परलोकयात्रामें जीवका एकमात्र सहारा परमात्मा ही है। उक्त गुणसम्पन्न परमात्माकी उपासना एकमात्र संस्कृत बुद्धिद्वारा ही करनी चाहिये ॥१६॥

आ न इन्दो शतग्विनं गवां पोषं स्वश्व्यम् ।
वहा भगत्तिमूतये ॥१७॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आ। नः। इंदो इति। शतऽग्विनं। गवां। पोषं। सुऽअश्व्यं। वह। भगत्ति। ऊतये ॥१७॥

पदार्थः—(इन्दो) हे प्रकाशस्वरूप परमेश्वर! (भगत्ति) अस्मद्भक्तेः (ऊतये) रक्षार्थं (न आवह) अस्मभ्यं प्राप्तो-भवतु। अथ च (गवां) इन्द्रियाणां (शतग्विनं) सहस्र-गुणां (पोषं) पुष्टिं तथा (स्वश्व्यं) गतिशीलां पुष्टिं मह्यं भवान् ददातु ॥

पदार्थ—(इंदो) हे प्रकाशस्वरूप! (भगत्ति) हमारी भक्ति की (ऊतये) रक्षाके लिये हे परमात्मन्! (न आवह) आप हमको प्राप्त हों। और (गवां) इन्द्रियोंकी (शतग्विनं) सहस्रगुणी (पोषं) पुष्टि (स्वश्व्यं) जो गतिशील है, ऐसी पुष्टि आप हमको दें॥

भावार्थ—जो लोग परमात्माकी अनन्यभक्ति करते हैं, परमात्मा उनकी सब प्रकारसे रक्षा करता है। और उनकी इन्द्रियोंको सहस्र प्रकारकी शक्तियोंसे सम्पन्न करता है। अर्थात् ज्ञान विज्ञानादि-शक्तियोंसे उनकी सहस्र प्रकारकी शक्तियें बढ़ जातीं हैं। इसीका नाम इन्द्रियोंकी सहस्रशक्ति है॥१७॥

आ नः सोम सहो जुवो रूपं न वर्चसे भर।
सुष्वाणो देववीतये ॥१८॥

आ। नः। सोम। सहः। जुवः। रूपं। न। वर्चसे। भर। सुस्वानः। देवऽवीतये ॥१८॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन्! (देववीतये) देव-मार्गप्राप्तये (नः) अस्मान् (आभर) सर्वविधाभ्युदयैः

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परिपूरय । भवान् सर्वेषां (सुस्वानः) उत्पत्तिस्थानमस्ति । अथ च (सहः) शत्रुनाशकोस्ति तथा (जुवः) शीघ्रगतिशीलो भवान् (वर्चसे) प्रकाशाय (रूपं न) स्वरूपं वितरतु ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (देववीतये) देवमार्गकी प्राप्तिके लिये (नः) हमको (आभर) सब प्रकारके अभ्युदयोंसे आप भरपूर करें । आप सबके (सुस्वानः) उत्पत्तिस्थान हैं । और (सहः) शत्रुबलनाशक (जुवः) शीघ्रगति वाले आप (वर्चसे) प्रकाशके लिये (रूपं न) रूप हमको दें ॥

भावार्थ—परमात्मा जिन पुरुषोंमें दैवी सम्पत्तिके गुण देता है, उनको तेजस्वी बनाता है । और सब प्रकारके ऐश्वर्योंका भण्डार बनाकर उनको सर्वोपरि बनाता है ॥१८॥

अर्षा सोम द्युमत्तमोऽभि द्रोणानि रोरुवत् ।
सीदञ्छ्येनो न योनिमा ॥१९॥

अर्ष । सोम । द्युमत्ऽतमः । अभि । द्रोणानि । रोरुवत् । सीदन् । श्येनः । न । योनिं । आ ॥१९॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन् ! भवान् (श्येनो न) विद्युदिव गतिशीलोस्ति । (द्रोणानि) समस्तलोकेषु (रोरुवत्) गतिशीलः सन् सर्वत्र विराजितो भवतु । तथा (द्युमत्तमः) भवान् स्वयं प्रकाशोस्ति । अथ च (योनिं) मदन्तःकरणेषु (सीदन्) विराजमानः (अभ्यर्ष) मम हृदयं पवित्रयतु ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! आप (श्येनः) विद्युत्के (न) समान गतिशील हैं । (द्रोणानि) सम्पूर्ण लोकलोकान्तरोंमें

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(रोरुवत्) गतिशील होकर आप सर्वत्र विराजमान हैं । और (द्युमत्तमः) आप स्वयंप्रकाश हैं । (योनिं) हमारे हृदय स्थानमें (आसीदन्) विराजमान होकर (अभ्यर्ष) हमारे हृदयको शुद्ध करें ॥

भावार्थ—परमात्मा स्वयंप्रकाश है, और उसीके प्रकाशसे सब पदार्थ प्रकाशित होते हैं ॥१९॥

अप्सा इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः ।
सोमो अर्षति विष्णवे ॥२०॥४॥

अप्साः । इंद्राय । वायवे । वरुणाय । मरुत्ऽभ्यः । सोमः । अर्षति । विष्णवे ॥२०॥

पदार्थः—(सोमः) सर्वपूज्यः परमात्मा (इंद्राय वायवे) गतिशीलकर्मयोगिविदुषे तथा (मरुद्भ्यः) पदार्थज्ञेभ्यः अथ च (वरुणाय) विद्यावलेन सर्वाच्छादकाय (विष्णवे) ज्ञानयोगिविदुषे (अप्सा अर्षति) स्वज्ञानरूपगत्या प्राप्तो भवति ॥

पदार्थ—(सोमः) सर्वपूज्य परमात्मा (इंद्राय वायवे) कर्मयोगी विद्वानोंके लिये (मरुद्भ्यः) पदार्थविद्यावेत्ता विद्वानोंके लिये (वरुणाय) अपने विद्यावलसे सबको अच्छादन करने वाले विद्वानके लिये और (विष्णवे) ज्ञानयोगी विद्वान्के लिये (अप्सा अर्षति) अपनी ज्ञानरूपी गतिसे प्राप्त होता है ॥

भावार्थ—जो लोग ज्ञानयोग कर्मयोग इत्यादि योगोंसे परमात्माकी आज्ञाका पालन करते हैं, उनको परमात्मा अपनी ज्ञानगतिसे अवश्यमेव प्राप्त होता है ॥२०॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इषं॑ तो॒काय॑ नो॒ दध॑द॒स्मभ्यं॑ सोम वि॒श्वतः॑ ।
आ प॑वस्व सह॒स्रिण॑म् ॥२१॥

इषं॑ । तो॒काय॑ । नः॒ । दध॑त् । अ॒स्मभ्यं॑ । सो॒म॒ । वि॒श्वतः॑ ।
आ । प॒व॒स्व॒ । स॒ह॒स्रिणं॑ ॥२१॥

पदार्थः—(सोम) हे जगदीश ! भवान् (नस्तोकाय) अस्मत्संतानेभ्यः (सहस्रिणं) बहुविधधनानि (विश्वतः) परितः (दधत्) धारयतु । अथ च (अस्मभ्यं) मां (इषं) सर्वविधैश्वर्यं ददातु । तथा (आपवस्व) सर्वथा पवित्रयतु ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! आप (नः) हमारे (तोकाय) संतानोंके लिये (सहस्रिणं) अनन्त प्रकारके धन (विश्वतः) सब ओरसे (दधत्) धारण कराएँ । और (अस्मभ्यं) हमको सब प्रकारका ऐश्वर्य दें । तथा (आपवस्व) सब प्रकारसे पवित्र करें ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्मासे अभ्युदयप्राप्तिकी प्रार्थना की गई है ॥२१॥

अथ सोमसंज्ञकस्येश्वरस्योपासकानां विदुषां गुणा वर्ण्यन्ते ॥

अब सोमनामक परमेश्वरकी उपासना करने वाले विद्वानोंके गुणोंका वर्णन करते हैं ॥

ये सोमा॑सः परा॒वति॒ ये अ॑र्वा॒वति॑ सुन्वि॒रे ।
ये वा॒दः श॑र्य॒णाव॑ति ॥२२॥

ये । सोमा॑सः । प॒रा॒ऽवति॑ । ये । अ॒र्वा॒ऽवति॑ । सु॒न्वि॒रे॒ । ये ।
वा॒ । अ॒दः । श॒र्य॒णाऽव॑ति ॥२२॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(ये सोमासः) सौम्यस्वभाववन्त इमे विद्वांसः (परावति) परब्रह्मशक्तौ (ये) ये (अर्वावति) प्रकृतिशक्तौ तथा (ये) ये (वा अदः शर्यणावति) संसारशक्तावस्यां (सुन्विरे) ये कुशलास्तान् परमेश्वरः पवित्रयतु ॥

पदार्थ—(ये सोमासः) जो सौम्यस्वभाव वाले विद्वान् (परावति) परब्रह्म रूप शक्तिमें (ये) और जो (अर्वावति) प्रकृतिरूप शक्तिमें, (ये) जो (वा) और (अदः शर्यणावति) इस संसाररूप शक्तिमें, (सुन्विरे) निपुण किये गए हैं, इन सब विद्वानोंको परमात्मा पवित्र करें ॥

भावार्थ—इस मंत्रका यह तात्पर्य है, कि परमात्मा सब प्रकारके विद्वानोंको पवित्र करता है ॥२२॥

य आर्जीकेषु कृत्वसु ये मध्ये पस्त्यानाम् ।
ये वा जनेषु पञ्चसु ॥२३॥

ये । आर्जीकेषु । कृत्वऽसु । ये । मध्ये । पस्त्याना । ये । वा । जनेषु । पञ्चऽसु ॥२३॥

पदार्थः—(ये) ये विद्वांसः (आर्जीकेषु कृत्वसु) सत्कर्मसु तथा (ये) ये खलु (पस्त्यानां मध्ये) गृहकर्मसु कुशलास्सन्ति (येवा) अथ ये खलु (जनेषु पञ्चसु) पञ्चविधेषु मनुष्येषु शिक्षितुं शक्नुवन्ति, ते सर्वे अस्माकं कल्याणकारिणो भवन्तु ॥

पदार्थ—(ये) जो विद्वान् (आर्जीकेषु कृत्वसु) सत्कर्मोंमें और (ये) जो विद्वान् (पस्त्यानां मध्ये) गृहकर्मोंमें चतुर हैं, (येवा) और

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जो [जनेषु पञ्चसु] पांच प्रकारके मनुष्योंमें शिक्षा दे सक्ते हैं, वे सब हमारे लिये कल्याणकारी हों ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें विद्वानोंके गुणोंका वर्णन किया है। पांच प्रकारके मनुष्योंकी विद्याका तात्पर्य यहां यह है कि, जो विद्वान् ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य, और शूद्र इन चारों वर्णोंमें उपदेश कर सक्ते हैं, और पांचवें इन मनुष्योंमें जो सर्वथा असंस्कारी है, अर्थात् दस्युभावको प्राप्त हैं, इनसबको सुधार सक्ते हैं, वे प्रजाके लिये सदैव कल्याणकारी होते हैं ॥२३॥

ते नो वृष्टिं दिवस्परि पवन्तामा सुवीर्यम् ।
सुवाना देवास इन्दवः ॥२४॥

ते । नः । वृष्टिं । दिवः । परि । पवंतां । आ । सुऽवीर्यं ।
सुवानाः । देवासः । इंदवः ॥२४॥

पदार्थः—[ते] ते विद्वांसः [नः] अस्मभ्यं [वृष्टिं] वृष्टिं [दिवस्परि] द्युलोकतोवर्षयन्तु । [इन्दवः] ऐश्वर्यसम्पन्नाः [देवासः] दिव्यगुणाः पण्डिताः [सुवीर्यं] पराक्रमं [सुवानाः] उत्पादयन्तः (आपवंतां) सर्वथास्मान्यवित्रयन्तु ॥

पदार्थ—(ते) वे विद्वान् (नः) हमारे लिये (वृष्टिं) वृष्टिको (दिवस्परि) द्युलोकसे बरसायें । (इंदवः) ऐश्वर्य वाले (देवासः) दिव्यगुण सम्पन्न विद्वान् (सुवीर्य) पराक्रमको (सुवानाः) पैदा करते हुए (आपवंतां) हमको सब प्रकारसे पवित्र करें ॥

भावार्थ—द्युलोकसे वृष्टि करनेका तात्पर्य यहां हिमालय आदि दिव्यस्थानोंसे जलकी धाराओंसे सींच देनेका है। जो विद्वान् व्यवहार विषयके सब विद्याओंके वेत्ता होते हैं, वे अपने विद्याबलसे प्रजामें सुवृष्टि करके अद्भुत पराक्रमको उत्पन्न कर देते हैं। उक्त विद्वानोंसे विद्या लेकर सुरक्षित होनेका उपदेश यहां परमात्माने किया है ॥२४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पव॑ते हर्य॒तो हरि॑र्गृणा॒नो ज॒मद॑ग्निना ।
हि॒न्वा॒नो गोरधि॑ त्व॒चि ॥२५॥५॥

पव॑ते । ह॒र्य॒तः । हरिः॑ । गृ॒णा॒नः । ज॒मत्ऽअ॑ग्निना । हि॒न्वा॒नः । गोः । अधि॑ । त्व॒चि ॥ २५ ॥

पदार्थः—(हरिः) परमेश्वरः (हर्यतः) विदुषामभिलाषुकः (जमदग्निना) अंतश्चक्षुषा (गृणानः) गृहीतः यः (अधित्वचि) शरीरे (गोः) इन्द्रियाणां (हिन्वानः) निर्मातास्ति स जगदीश्वरः (पवते) ज्ञानद्वाराऽस्मान् पवित्रयति ॥

पदार्थ—(हरिः) परमात्मा (हर्यतः) विद्वानोंको चाहने वाला (जमदग्निना) अंतः चक्षुसे (गृणानः) ग्रहण किया हुआ जो (अधित्वचि) शरीरमें (गोः) इन्द्रियोंकी (हिन्वानः) रचना करनेवाला है, वह (पवते) ज्ञानद्वारा हमको पवित्र करता है ॥

भावार्थ—इसमें परमात्मासे इस बातकी प्रार्थना की है, कि आप सर्वोपरि विद्वान् उत्पन्न करके हमारा कल्याण करें ॥२५॥

प्र शु॒क्रासो॑ वयो॒जुवो॑ हिन्वा॒नासो॒ न सप्त॑यः ।
श्री॒णा॒ना अ॒प्सु मृ॑ञ्जत ॥२६॥

प्र । शु॒कासः॑ । व॒यः॒ऽजुवः॑ । हि॒न्वा॒नासः॑ । न । सप्त॑यः । श्री॒णा॒नाः । अ॒प्ऽसु । मृ॒ञ्ज॒त ॥ २६ ॥

पदार्थः—(शुक्रासः) वीर्यवन्तः (वयोजुवः) अन्नादिपदार्थविद्याविदः (श्रीणानाः) विद्यया संस्कृता विद्वांसः ऋत्विग्भि

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(मृंजत) स्वीक्रियन्ते (न) यथा (अप्सु हिन्वानासः जलशुद्धानि (सप्तयः) इन्द्रियाणां सप्तद्वाराणि (प्र) शुभगुणान्ददते ॥

पदार्थ—(शुक्रासः) वीर्यवाले (वयोजुवः) अन्नादिकोंकी विद्या जानने वाले (श्रीणानाः) विद्याद्वारा संस्कृत हुए उक्त प्रकारके विद्वान् ऋत्विक् लोगों द्वारा (मृंजत) वरण किये जाते हैं। (न) जैसे कि (अप्सु हिन्वानासः) जलोंमें शुद्ध किये हुए (सप्तयः) इन्द्रियोंके सात द्वार (प्र) शुभगुणोंको देते हैं ॥

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है, कि हे जीवो! जिसप्रकार ज्ञानेन्द्रियोंके सप्तद्वार जलमें शुद्ध किये हुए सुन्दर ज्ञानके साधन बनते हैं, इसी प्रकार यज्ञोंमें वर्णन किये हुए विद्वान् ज्ञानद्वारा तुम्हारे कल्याणकारी होते हैं ॥२६॥

तं त्वा॑ सु॒तेष्वा॒भुवो॑ हिन्वि॒रे दे॒वता॑तये ।
स प॑वस्वा॒नया॑ रु॒चा ॥२७॥

तं । त्वा॒ । सु॒तेषु॑ । आ॒ऽभुवः॑ । हि॒न्वि॒रे । दे॒वऽता॑तये । सः । प॒व॒स्व॒ । अ॒नया॑ । रु॒चा ॥ २७ ॥

पदार्थः—हे परमात्मन्! (तं) पूर्वोक्तगुणसम्पन्नं (त्वा) त्वां (सुतेषु) सुयज्ञेषु (आभुवः) ऋत्विजः (देवतातये) विघ्नविनाशनाय (हिन्विरे) तवोपासनां कुर्वते। (सः) स भवान् (अनया रुचा) प्रागुक्तज्ञानशक्त्या (पवस्व) अस्मान्पवित्रयतु ॥

पदार्थ—हे परमात्मन्! (तं) उक्तगुणसम्पन्न (त्वा) आपको (सुतेषु) सुन्दर करने वाले यज्ञोंमें (आभुवः) अत्विक् लोग (देवतातये) विघ्नोंके विनाशके लिये (हिन्विरे) आपकी उपासना करते हैं। (सः) वह उक्तगुणसम्पन्न आप (अनया रुचा) पूर्वोक्त ज्ञानकी शक्तिसे (पवस्व) हमको पवित्र करें ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—जो परमात्मा अपने ज्ञानप्रदीपसे भक्तोंके हृदयको पवित्र करते हैं, वे हमारे अन्तःकरणको पवित्र करें ॥२७॥

आ ते दक्षं मयोभुवं वह्निमद्या वृणीमहे।
पान्तमा पुरुस्पृहम् ॥२८॥

आ। ते। दक्षं। मयःऽभुवं। वह्निं। अद्य। वृणीमहे।
पांतं। आ। पुरुऽस्पृहं ॥ २८ ॥

पदार्थः—(मयोभुवं) सर्वसुखदातारं (पुरुस्पृहं) सर्वजनभजनीयं (पांतं) सर्वरक्षकं (दक्षं) सर्वज्ञं (वह्निं) प्रकाशस्वरूपं पूर्वोक्तगुणसम्पन्नं (ते) भवन्तं (अद्य) अद्यैव (आवृणीमहे) सर्वथा वयं स्वीकुर्मः ॥

पदार्थ—(मयोभुवं) जो सब सुखोंके देने वाले आप हैं, (पुरुस्पृहं) जो सब पुरुषोंसे भजनीय हैं (पांतं) सर्वरक्षक हैं, (दक्षं) सर्वज्ञ हैं, (वह्निं) प्रकाशस्वरूप हैं, उक्तगुण सम्पन्न (ते) आपको (अद्य) आज (आवृणीमहे) हम सब प्रकारसे स्वीकार करते हैं ॥

भावार्थ—जो उपासक उक्त गुणसम्पन्न परमात्माकी उपासना करते हैं, वे सब प्रकारसे शुद्ध होकर परमात्मभावको प्राप्त होते हैं ॥२८॥

आ मन्द्रमा वरेण्यमा विप्रमा मनीषिणम्।
पान्तमा पुरुस्पृहम् ॥२९॥

आ। मंद्रं। आ। वरेण्यं। आ। विप्रं। आ। मनीषिणं।
पांतं। आ। पुरुऽस्पृहं ॥ २९ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—हे जगदीश्वर! (मंद्रं) स्तुत्यं (वरेण्यं) वरणीयं (विप्रं) मेधाविनं (मनीषिणं) मनःस्वामिनं (पुरुस्पृहं) सर्ववरणीयं (पांतं) सर्वपवितारं भवन्तं जगदीश्वरं (आ) आवृणीमहे स्वीकुर्मोवयम् ॥

पदार्थ—हे परमात्मन्! (मंद्रं) जो आप सर्वोपरि स्तुति करनेयोग्य हैं, (वरेण्यं) वरण करने योग्य हैं, (विप्रं) मेधावी हैं, (मनीषिणं) मनके स्वामी हैं, (पुरुस्पृहं) सब पुरुषोंके कामना करने योग्य हैं, (पांतं) सबके रक्षक हैं, ऐसे आपको (आ) "आवृणीमहे" हम लोग सब प्रकारसे स्वीकार करते हैं ॥

भावार्थ—उक्त गुणसम्पन्न परमात्माका वरण करना, अर्थात् सब प्रकारसे स्वीकार करना इस मंत्रमें बताया गया है। "आ" शब्द यहां प्रत्येकगुणसम्पन्न परमात्माको भलीभांति वर्णन करनेके लिये आया है ॥२९॥

आ रयिमा सुचेतुनमा सुक्रतो तनूष्वा ।
पान्तमा पुरुस्पृहम् ॥३०॥६॥

आ । रयिं । आ । सुऽचेतुनं । आ । सुक्रतो इति सुऽक्रतो । तनूषु । आ । पांतं । आ । पुरुऽस्पृहं ॥ ३० ॥

पदार्थः—(सुक्रतो) हे सर्वयज्ञाधिपते परमेश्वर! भवान् (रयिं) धनं तथा (सुचेतुनं) शुभज्ञानं (तनूषु) मत्संततिषु (आ) आ ददातु। भवान् (पुरुस्पृहम्) सर्वेषामुपास्यदेवोस्ति। तथा (पांतं) सर्वपवितास्ति। (सुक्रतो) हे शुभकर्मिन्! त्वमेव मयोपासनीयोसि ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(सुक्रतो) हे सर्वयज्ञाधिपते परमात्मन्! आप (रयिं) धनको (सुचेतनं) और सुन्दर ज्ञानको (तनूषु) हमारी संतानों में (आ) सब प्रकारसे दें। आप (पुरुस्पृहं) सबके उपास्य देव हैं। (पांतं) सबको पवित्र करने वाले हैं (सुक्रतो) हे शोभन कर्मों वाले परमात्मन्! आप ही हमारे उपास्य देव हैं॥

भावार्थ—इस मंत्रमें नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्तस्वभाव सर्वरक्षक पतितपावन परमात्माके गुणोंका वर्णन किया गया है। और उसको एकमात्र उपास्य देव माना है॥३०॥

इति पञ्चषष्ठितमं सूक्तं षष्ठोवर्गश्च समाप्तः।

यह ६५ वां सूक्त और ६ वां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ त्रिंशदृचस्य षट्षष्ठितमस्य सूक्तस्य—

१--३० शतं वैखानसा ऋषिः॥ १--१८, २२--३० पवमानः सोमः। १९-२१ अग्निर्देवता॥ छन्दः-१ पादनिचृद्गायत्री। २,३,५-८,१०,११,१३,१५-१७,१९,२०,२३, २४,२५,२६,३०,गायत्री।४,१४,२२,२७ विराड् गायत्री।९,१२,२१,२८,२९ निचृद्गायत्री १८पादनिचृदनुष्टुप्। स्वरः-१-१७ -१९-३० षड्जः। १८ गान्धारः॥

अथेश्वरगुणा वर्ण्यन्ते।

अब ईश्वरके गुणोंका वर्णन करते हैं।

पवस्व विश्वचर्षणेऽभि विश्वानि काव्या।
सखा सखिभ्य ईड्यः॥ १॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पव॑स्व । वि॒श्व॒ऽच॒र्ष॒णे॒ । अ॒भि । विश्वा॑नि । काव्या॑ । सखा॑ । सखि॑ऽभ्यः । ईड्यः॑ ॥१॥

पदार्थः—(विश्वचर्षणे) हे जगदीश्वर ! (विश्वानि-काव्या) सर्वेषां कवीनां भावान् (अभि) परितः प्रदायास्मान् (पवस्व) पवित्रय । अथ च (सखिभ्यः) मित्रेभ्यः (सखा) मित्रमसि । तथा (ईड्यः) सर्वैः पूजनीयोसि ॥

पदार्थ—(विश्वचर्षणे) हे सर्वज्ञ परमात्मन् ! (विश्वानि, काव्या) सम्पूर्ण कवियोंके भावको (अभि) सब ओरसे प्रदान करके हमको आप (पवस्व) पवित्र करें । और (सखिभ्यः) मित्रोंके लिये आप (सखा) मित्र हैं (ईड्यः) तथा सर्वपूज्य हैं ॥

भावार्थ—जो लोग परमात्मासे मित्रके समान प्रेम करते हैं, अर्थात् जिनको परमात्मा मित्रके समान प्रिय लगता है, उनको परमात्मा कवित्वकी अद्भुत शक्ति देता है ॥१॥

ताभ्यां॒ विश्व॑स्य राजसि॒ ये प॑वमान॒ धाम॑नी ।
प्र॒ती॒ची सो॑म त॒स्थतुः॑ ॥ २ ॥

ताभ्यां॑ । विश्व॑स्य । रा॒ज॒सि॒ । ये इति॑ । प॒व॒मा॒न॒ । धाम॑नी॒ इति॑ । प्र॒ती॒ची इति॑ । सो॒म॒ । त॒स्थतुः॑ ॥२॥

पदार्थः—(सोम) हे परमेश्वर ! भवान् (ताभ्यां) कर्म-ज्ञानाभ्यां (विश्वस्य) समस्तसंसारस्य (राजसि) प्रकाशं करोति (पवमान) सर्वपवित्रयितः परमात्मन् ! (ये धामनी) ज्ञान-कर्मणी (प्रतीची) प्राचीनेस्तः ते (तस्थतुः) उपजग्मतुः ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! आप (ताभ्यां) ज्ञान और कर्म दोनों द्वारा (विश्वस्य) सम्पूर्ण विश्वका (राजासि) प्रकाश करते हैं । (पवमान) हे सबको पवित्र करने वाले परमात्मन् ! (ये धामनी) जो ज्ञान कर्म (प्रतीची) प्राचीन हैं, वे (तस्थतुः) हममें विराजमान हों ॥

भावार्थ—परमात्मा सब लोकलोकान्तरोंमें विराजमान है । ज्ञान क्रिया और बल, यह तीनों प्रकारके उसके प्राचीन धाम है, जिनसे वह सबकी प्रेरणा करता है ॥१॥

परि धामानि यानि ते त्वं सोमासि विश्वतः ।
पवमान ऋतुभिः कवे ॥ ३ ॥

परि । धामानि । यानि । ते । त्वं । सोम । असि ।
विश्वतः । पवमान । ऋतुऽभिः । कवे ॥३॥

पदार्थः—(कवे) हे सर्वज्ञ जगदीश्वर ! (पवमान) सर्वपवित्रकर्तः ! भवान् (ऋतुभिः) वसन्तादिऋतूनां परिवर्तनेन नव्यान्भावानुत्पादयति । अथ च (यानि ते) यानि तव (धामानि) लोकलोकान्तराणि (परि) परितस्सन्ति तानि (विश्वतः) सर्वथा (त्वं सोमासि) त्वमुत्पादकोसि ॥

पदार्थ—(कवे) हे सर्वज्ञ परमात्मन् ! (पवमान) हे सबको पवित्र करने वाले ! आप (ऋतुभिः) वसन्तादि ऋतुओंके परिवर्तनसे संसारमें नये नये भाव उत्पन्न करते हैं । और (यानि ते) जो तुम्हारे (धामानि) लोकलोकान्तर (परि) सब ओर हैं, उनको (विश्वतः) सब प्रकारसे (सोमासि) आप उत्पन्न करने वाले हैं ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा उत्पत्ति, स्थिति, तथा प्रलय तीनों प्रकारकी क्रियाओंका हेतु है। अर्थात् उसीसे संसारकी उत्पत्ति, और उसीमें स्थिति और उसी से प्रलय होता है ॥३॥

पवस्व जनयन्निषोऽभि विश्वानि वार्या ।
सखा सखिभ्य ऊतये ॥ ४ ॥

पवस्व । जनयन् । इषः । अभि । विश्वानि । वार्या । सखा । सखिऽभ्यः । ऊतये ॥४॥

पदार्थः—हे जगदीश्वर ! (विश्वानि) सर्वे पदार्थाः (वार्या) ये वरणीयास्सन्ति (अभि) तान्मह्यमभिदेहि । अथ च (इषः) ऐश्वर्यं (जनयन्) उत्पादयन् (पवस्व) अस्मान् पवित्रयतु । (सखिभ्यः) मित्राणां (ऊतये) रक्षायै (सखा) मित्रमसि ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (विश्वानि) सब पदार्थ (वार्या) वरणीय (अभि) सब ओरसे आप हमें दें। और (इषः) ऐश्वर्यको (जनयन्) पैदा करते हुए (पवस्व) आप हमको पवित्र करें (सखिभ्यः) मित्रोंकी (ऊतये) रक्षाके लिये (सखा) आप मित्र हैं ॥

भावार्थ—जो लोग परमात्मपरायण होते हैं परमात्मा उन्हें सब-प्रकारके आनन्दोंसे विभूषित करता है ॥४॥

तव शुक्रासो अर्चयो दिवस्पृष्ठे वि तन्वते ।
पवित्रं सोम धामभिः ॥ ५ ॥ ७ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तव । शुक्रासः । अर्चयः । दिवः । पृष्ठे । वि । तन्वते । पवित्रं । सोम । धामभिः ॥५॥

पदार्थः—(सोम) हे परमेश्वर ! (धामभिः) भवान् स्वशक्तिभिः (पवित्रं) पवित्रोऽस्ति (तव) भवतः (शुक्रासः) बलवत्यः (अर्चयः) प्रकाशोर्मयः (दिवस्पृष्ठे) द्युलोकोपरि (वितन्वते) विस्तृताः सन्ति ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (धामभिः) आप अपनी शक्तियोंसे (पवित्रं) पवित्र हैं । (तव) तुम्हारी (शुक्रासः) बल वाली (अर्चयः) प्रकाशकी लहरें (दिवस्पृष्ठे) द्युलोकके ऊपर (वितन्वते) विस्तृत हो रहीं हैं ॥

भावार्थ—परमात्माकी ज्योति सर्वत्र दीप्तिमती है, उसके प्रकाश से एक रेणु भी खाली नहीं । द्युलोकमें उसका प्रकाश इस प्रकार फैला हुआ है, जैसे मकड़ीके जालेके तन्तुओंके आतान वितानका पारावार नहीं मिलता, इसी प्रकार उसका पारावार नहीं ॥

अथवा यों कहो कि मयूरपिच्छकी शोभाके समान उसके द्युलोककी अनन्त प्रकारकी शोभा है। जिसको परमात्मज्योतिने देदीप्यमान कियाहै॥५॥

तवेमे सप्त सिन्धवः प्रशिषं सोम सिस्रते ।
तुभ्यं धावन्ति धेनवः ॥ ६ ॥

तव । इमे । सप्त । सिन्धवः । प्रऽशिषं । सोम । सिस्रते । तुभ्यं । धावन्ति । धेनवः ॥६॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(सोम) चराचरोत्पादक परमात्मन् ! (तव) भवतः (इमे) इमे (सप्त सिंधवः) सप्तविधाः (धेनवः) वाणीप्रवाहाः (प्रशिषं) प्रशासनं (सिस्रते) अनुसरन्ति । अथ च (तुभ्यं) तुभ्यमेव (धावन्ति) प्रतिदिनं गच्छन्ति ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (तव) तुम्हारे (इमे) ये (सप्त (सिंधवः) सात प्रकारके (धेनवः) वाणियोंके प्रवाह (प्रशिषं) प्रशासनको (सिस्रते) अनुसरण करते हैं । और (तुभ्यं) तुम्हारे लिये ही (धावन्ति) प्रतिदिन गमन करते हैं ॥

भावार्थ—परमात्माके शासनमें वेदादिवाणियोंके प्रवाह बहते हैं। अथवा यों कहो, कि ज्ञानेन्द्रियोंके सप्तछिद्रोंके द्वारा प्राण सिन्धुके-समान प्रतिक्षण क्रियाको प्राप्त हो रहे हैं । अथवा यों कहो, कि सम्पूर्ण भूत, सिन्धु, आदि नदियोंके समान उसीसे निकल कर उसीके स्वरूप-में प्रतिदिन स्रवित होते हैं ॥६॥

प्र सोम याहि धारया सुत इन्द्राय मत्सरः ।
दधानो अक्षिति श्रवः ॥ ७ ॥

प्र । सोम । याहि । धारया । सुतः । इंद्राय । मत्सरः । दधानः । अक्षिति । श्रवः ॥७॥

पदार्थः—(सोम) हे जगदीश्वर ! (धारया) स्वा-नन्दवृष्ट्या (प्रयाहि) आगत्य मां प्राप्नोतु । भवान् (इन्द्राय) ऐश्वर्याय (सुतः) प्रसिद्धोस्ति । अथ च (मत्सरः) आनन्द-स्वरूपोस्ति । तथा (अक्षिति) अक्षयं (श्रवः) यशः (दधानः) धार्यमाणोस्ति ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (धारया) अपने आनन्द-की वृष्टिसे (प्रयाहि) आप हमको आकर प्राप्त हों। आप (इंद्राय) ऐश्वर्यके लिये (सुतः) प्रसिद्ध हैं, और (मत्सरः) आनन्दस्वरूप-हैं, तथा (अक्षिति) अक्षय (श्रवः) यशको (दधानः) आप धारण किये हुए हैं॥

भावार्थ—परमात्माका यश अक्षय है, इस लिये अन्यत्र भी वेदने वर्णन किया है, कि "यस्यनाममहद्यशः" जिसका सबसे बड़ा यश है, वह परमात्मा निराकारभावसे सर्वत्र व्यापक हो रहा है॥७॥

समु त्वा धीभिरस्वरन्हिन्वतीः सप्त जामयः।
विप्रमाजा विवस्वतः॥ ८॥

सं। ऊं इति। त्वा धीभिः। अस्वरन्। हिन्वतीः। सप्त। जामयः। विप्रं। आजा। विवस्वतः॥८॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (विप्रं) सर्वज्ञं (त्वा) भवन्तं (सप्तजामयः) ज्ञानेन्द्रियाणां सप्तछिद्राणि (धीभिः) बुद्ध्या (समु) सम्यक् (अस्वरन्) शब्दायमानानि (विवस्वतः) यज्ञकर्तुः (आजा) यज्ञे (हिन्वतीः) प्रेरयन्ति॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (विप्रं) सर्वज्ञ (त्वा) आपको (सप्त-जामयः) ज्ञानेन्द्रियोंके सात गोलक (धीभिः) बुद्धिद्वारा (समु) भलीभांति (अस्वरन्) शब्द करते हुए। (विवस्वतः) यज्ञकर्ताके (आजा) यज्ञमें (हिन्वतीः) प्रेरणा करते हैं।

भावार्थ—उपासक लोग बुद्धिवृत्तियों द्वारा परमात्माका सा-क्षात्कार करते हैं। वा यों कहो कि यमनियमादि सात अङ्गों द्वारा समाधिकी-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सिद्धि करते हैं । अर्थात् समाधि साध्य पदार्थ है, और सात उसके साधन हैं ।

मृजन्ति त्वा समग्रुवोऽव्ये जीरावधि ष्वणि ।
रेभो यदज्यसे वने ॥ ९ ॥

मृजंति । त्वा । सं । अग्रुवः । अव्ये । जीरौ । अधि । स्वनि । रेभः । यत् । अज्यसे । वने ॥९॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (रेभः) शब्दगम्यं (अव्ये) पालकं (अधिष्वणि) शब्दगमनीयं (जीरौ) शत्रुघातकं (वने) भजनीयं (त्वा) भवन्तं (अग्रुवः) कर्मयोगिनः (यत्) यदा (संमृजन्ति) ध्यानविषयं कुर्वन्ति, तदा (अज्यसे) त्वं तेषां साक्षात्कृतो भवसि ।

पदार्थ—हे जगदीश ! (रेभः) शब्दगम्य (त्वा) आपको (अग्रुवः) कर्मयोगी जन (अव्ये) रक्षक तथा (अधिष्वणि) शब्दगम्य और (जीरौ) शत्रुनाशक (वने) भजनीय आपको (यत्) जब (संमृजन्ति) ध्यानविषय करते हैं, तब आप (अज्यसे) उनके साक्षात्कार के विषय होते हैं ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें सर्वरक्षक परमात्माके साक्षात्कार का वर्णन किया गया है, कि कर्मयोगी लोग अपने कर्मण्यतायोगसे परमात्मपरायण होकर, परमात्माका साक्षात्कार करते हैं ॥९॥

पवमानस्य ते कवे वाजिन्त्सर्गा असृक्षत ।
अर्वन्तो न श्रवस्यवः ॥ १० ॥ ८ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पवमानस्य । ते । कवे । वाजिन् । असृक्षत । अर्वन्तः । न । श्रवस्यवः ॥१०॥

पदार्थः—(कवे) हे सर्वज्ञ ! (वाजिन्) सर्वशक्तिसम्पन्न जगदीश्वर ! (पवमानस्य) सर्वपवित्रयितः (ते) भवतः (सर्गाः) बहुविधाः सृष्टयः एवं (असृक्षत) उत्पद्यन्ते (न) यथा (अर्वन्तः) विद्यूच्छक्तयोनेकधा (श्रवस्यवः) प्रवहन्ति ॥

पदार्थ—(कवे) हे सर्वज्ञ ! (वाजिन्) हे सर्वशक्तिमन् परमात्मन् ! (पवमानस्य) सबको पवित्र करने वाले (ते) आपकी (सर्गाः) अनन्त प्रकारकी सृष्टियें इस प्रकार (असृक्षत) उत्पन्न होतीं हैं (न) जैसेकि (अर्वन्तः) विद्युत् शक्तियें अनेक प्रकारसे (श्रवस्यवः) प्रवाहित होतीं हैं ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्माको निमित्तकारण वर्णन किया है, कि परमात्मा इस सृष्टिका निमित्तकारण है। उपादान कारण प्रकृति है, और निमित्तकारण परमात्मा है, इसीसे यहां विद्युत्का दृष्टान्त दिया है॥१०॥

अथ सर्वाधिकरणत्वेन परमात्मा स्तूयते ॥

यहां सर्वाधिकरणत्वसे परमात्माकी स्तुति करते हैं।

अच्छा कोशं मधुश्चुतमसृग्रं वारे अव्यये ।
अवावशन्त धीतयः ॥ ११ ॥

अच्छ । कोशं । मधुऽश्चुतं । असृग्रं । वारे । अव्यये ।
अवावशंत । धीतयः ॥११॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—येन परमात्मना (अच्छ) निर्मलं (कोशं) सर्वनिधानं तथा (मधुश्चुतं) आनन्ददायकं जगदिदं (असृग्रम्) रचितमस्ति तस्मिन् (अव्यये) अविनाशिनि (वारे) वरणीये परमात्मनि (धीतयः) सृष्टयः (अवावशंत) निवसन्ति ॥

पदार्थ—जिस परमात्माने इस संसार को (अच्छ) निर्मल और (कोशं) सर्वनिधान तथा (मधुश्चुतं) आनन्ददायक (असृग्रम्) रचा है उसी (अव्यये) अविनाशी तथा (वारे) वरणीय परमात्मामें (धीतयः) सृष्टियें (अवावशंत) निवास करतीं हैं ॥

भावार्थ—परमात्माही एकमात्र सब लोक लोकान्तरोंका अधिकरण है ॥११॥

अच्छा समुद्रमिन्दवोऽस्तं गावो न धेनवः ।
अग्मन्नृतस्य योनिमा ॥१२॥

अच्छ । समुद्रं । इंदवः । अस्तं । गावः । न । धेनवः । अग्मन् । ऋतस्य । योनिं । आ ॥१२॥

पदार्थः—(धेनवो न) यथा वेदवाण्यः (अस्तं) स्थानरूपं (समुद्रं) येन शब्दा उत्पद्यन्ते एतादृशं (अच्छ) विमलं परमेश्वरं (आग्मन्) सुतरां प्राप्नुवन्ति । तथा (इंदवः) प्रकाशिन्यः (गावः) सत्कर्मिणामिन्द्रियवृत्तयः (ऋतस्य योनिं) सत्यस्थानं परमेश्वरं सुखेन प्राप्नुवन्ति ॥

पदार्थ—(धेनवो न) जैसे वेदवाणियें (अस्तं) स्थानरूप (समुद्रं) जिससे शब्द उत्पन्न होते हैं, ऐसे (अच्छ) निर्मल परमेश्वर-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

को (आगमन्) भलीभांति प्राप्त होतीं हैं, उसी प्रकार (इंदवः) प्रकाश करने वाली (गावः) सत्कर्मियोंकी इन्द्रियवृत्तियें (ऋतस्य योनिं) सत्य स्थान परमात्माको भलीभांति प्राप्त होतीं हैं।

भावार्थ—इस मंत्रसे यह सिद्ध किया है, कि परमात्मा एक मात्र शब्दगम्य है। अर्थात् सर्वज्ञ परमात्माकी वेदवाणी ही उसको विषय करती है। अन्य प्रमाणोंका विषय सुगमतासे परमात्मा नहीं ॥१२॥

प्रणं इन्दो महे रणं आपो अर्षन्ति सिन्धवः।
यद्गोभिर्वासयिष्यसे ॥१३॥

प्र। नः। इंदो इति। महे। रणे। आपः। अर्षंति। सिन्धवः। यत्। गोभिः। वासयिष्यसे ॥ १३ ॥

पदार्थः—(इंदो) हे प्रकाशरूप परमात्मन्! (नः) अस्माकं (महेरणे) ज्ञानयज्ञाय त्वया (गोभिः) ज्ञानेन्द्रियैरस्मच्छरीरं (वासयिष्यसे) निर्मितम्। अथच (यत्) यदा (सिन्धवः) स्यन्दनशीलकर्मेन्द्रियाणि (आपः) कर्माणि (प्रार्षन्ति) प्राप्नुवन्ति, तदैव यज्ञपूर्तिर्भवति ॥

पदार्थ—(नः) हमारे (महेरणे) ज्ञानरूप यज्ञके लिये (इंदो) हे प्रकाशरूप परमात्मन्! आपने (गोभिः) ज्ञानेन्द्रियों द्वारा हमारे शरीरका (वासयिष्यसे) निर्माण किया है। और (यत्) जब (सिंधवः) स्यन्दनशील कर्मेन्द्रियें (आपः) कर्मोंको (प्रार्षन्ति) प्राप्त होतीं हैं, तब हमारे इस बृहत् यज्ञकी पूर्ति होती है ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्माने ज्ञान और कर्मका समुच्चय कथन किया है, कि जब ज्ञान और कर्म दोनों मिलते हैं, तब ही यज्ञकी पूर्ति होती है, अन्यथा नहीं ॥१३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अस्य ते सख्ये वयमियक्षन्तस्त्वोतयः ।
इन्दो सखित्वमुश्मसि ॥१४॥

अस्य । ते । सख्ये । वयं इयक्षन्तः । त्वाऽऊतयः । इंदो-इति । सऽखित्वं । उश्मासि ॥ १४ ॥

पदार्थः—(इन्दो) प्रकाशरूपपरमेश्वर ! (अस्य, ते-सख्ये) प्रागुक्तगुणविशिष्टस्य भवतोमित्रतायां (वयं) वयंजनाः (इयक्षंतः) तव यजनं कुर्मः (त्वोतयः) भवता सुरक्षिता वयम् तव (सखित्वं) मित्रत्वं (उश्मासि) वाञ्छामः ॥

पदार्थ—(अस्यते सख्ये) पूर्वोक्तगुणविशिष्ट आपके मैत्रीभावमें (वयं) हम लोग (इयक्षंतः) आपका यजन करते हैं । (त्वोतयः) आपसे सुरक्षित हुए हमलोग (इन्दो) हे प्रकाशरूप परमात्मन् ! आपकी (सखित्वं) मित्रताको (उश्मासि) चाहते हैं ॥

भावार्थ—परमात्माके साक्षात्कारसे जब मनुष्य अत्यन्त सन्निहित हो जाता है, तब ब्रह्मके सत्यादि गुणोंके धारण करनेसे उसमें ब्रह्मसाम्य हो जाता है । उसीका नाम ब्रह्ममैत्री है । इसी भावका कथन इस-मंत्रमें किया है, कि हे परमात्मन् ! हम तुम्हारे मैत्रीभावको प्राप्त हों ।

आ पवस्व गविष्टये महे सोम नृचक्षसे ।
एन्द्रस्य जठरे विश ॥१५॥९॥

आ । पवस्व । गोऽइष्टये । महे । सोम । नृऽचक्षसे । आ । इंद्रस्य । जठरे । विश ॥ १५ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(सोम) जगदीश्वर! त्वं (आपवस्व) मां परितः पवित्रय (महे) महत्यै (नृचक्षसे) ज्ञानवृद्ध्यै तथा (गविष्टये) इन्द्रियशुद्ध्यै (इन्द्रस्य) कर्मयोगिनः (जठरे) जठराग्नौ आविश) प्रविश॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्! आप (आपवस्व) हमको सब ओरसे पवित्र करें (महे) बड़े (नृचक्षसे) ज्ञानकी वृद्धिके लिये और (गविष्टये) इन्द्रियोंकी शुद्धिके लिये और (इंद्रस्य) कर्मयोगीके (जठरे) जठराग्निमें (आविश) प्रवेश करें॥

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है, कि मैं कर्मयोगी, तथा ज्ञानयोगियोंके हृदयमें अवश्यमेव निवास करता हूँ। यद्यपि परमात्मा सर्वत्र है, तथापि परमात्माकी अभिव्यक्ति जैसी ज्ञानयोगी तथा कर्मयोगीके हृदयमें होती है, वैसी अन्यत्र नहीं होती। इसी अभिप्रायसे यहाँ कर्मयोगीके हृदयमें विराजमान होना लिखा गया है। इसी अभिप्रायसे "वैश्वानरस्तद्धर्मव्यपदेशात्" इस सूत्रमें परमात्माको "वैश्वानर" अग्निरूपसे कथन किया गया है॥१५॥

महाँ असि सोम ज्येष्ठ उग्राणामिन्द ओजिष्ठः।
युध्वा सञ्छश्वज्जिगेथ॥१६॥

महान्। असि। सोम। ज्येष्ठः। उग्राणाँ। इंदो इति। ओजिष्ठः। युध्वा। सन्। शश्वत्। जिगेथ॥

पदार्थः—(सोम) जगदुत्पादक परमेश्वर! त्वं (महानसि) श्रेष्ठोसि। तथा (उग्राणां) तेजस्विनां मध्ये (ज्येष्ठः) प्रशस्योसि (इन्दो) सर्वप्रकाशक परमात्मन्! त्वं (ओजिष्ठः) सर्वोपरि बलवानसि! अथच (युध्वा सन्) स्वतः प्रतिकूलशक्तिभिर्युध्यमानः (शश्वत्) निरन्तरं (जिगेथ) जयसि॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! आप (महानसि) बड़े हैं । और (उग्राणां) तेजस्वियोंमें (ज्येष्ठः) बड़े हैं । (इंदो) हे सर्वप्रकाशक परमात्मन् ! आप (ओजिष्ठः) सर्वोपरि ओजस्वी हैं। और आप (युध्वासन्) अपनेसे प्रतिकूलशक्तियोंसे युद्ध करते हुए (शश्ववत्) निरन्तर (जिगेथ) जीतते हैं ॥

भावार्थ—परमात्मा सूर्यचन्द्रमादिकोंकी रचना करता हुआ, अर्थात् उत्पत्तिसमयमें विनाशरूपी सब विरोधी शक्तियोंको जीतता है । इस प्रकार परमात्मा सर्वविजयी कथन किया गया है । किसी युद्धविशेष-के अभिप्रायसे नहीं ॥१६॥

य उग्रेभ्यश्चिदोजीयाञ्छूरेभ्यश्चिच्छूरतरः ।
भूरिदाभ्यश्चिन्महीयान् ॥१७॥

यः । उग्रेभ्यः । चित् । ओजीयान् । शूरेभ्यः । चित् । शूरतरः । भूरिदाभ्यः । चित् । महीयान् ॥१७॥

पदार्थः—(यः) यः परमेश्वरः (शूरेभ्यः) वीरेभ्यः (शूरतरः) ततोप्यधिकवीरोस्ति (चित्) अथ च (भूरिदाभ्यः) दानवीरेषु (महीयान्) दानवीरतरोस्ति (चित्) अथच (उग्रेभ्यः) महाबलेषु (ओजीयान्) बलिष्ठः एवंभूतं त्वां वयमुपास्महे ।

पदार्थ—(यः) जो परमात्मा (शूरेभ्यः) शूरवीरोंसे (शूरतरः) अत्यन्त शूरवीर है, और (भूरिदाभ्यः) अत्यन्त, दानशीलोंसे (महीयान्) अत्यन्त दानशील है (चित्) और (उग्रेभ्यः) जो अत्यन्त बल वाले हैं, उनसे (ओजीयान्) अत्यन्त बल वाला है, ऐसे परमात्माकी हम उपास-ना करते हैं ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें यह वर्णन किया है, कि परमात्मा अजर,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अमर तथा अविनाशी है। जैसा कि "तेजोऽसि तेजो मयि धेहि। वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि। बलमसि बलं मयि धेहि" इत्यादि मन्त्रोंमें परमात्माको बलस्वरूप कथन किया गया है। इसी प्रकार इस मन्त्रमें भी परमात्माको बलस्वरूप कथन किया है॥१७॥

त्वं सोम सूर एषस्तोकस्य साता तनूनाम्।
वृणीमहे सख्याय वृणीमहे युज्याय॥१८॥

त्वं। सोम। सूरः। आ। इषः। तोकस्य। साता। तनूनां। वृणीमहे। सख्याय। वृणीमहे। युज्याय॥१८॥

पदार्थः—(सोम) जगदीश। (त्वं) भवन्तं (युज्याय-सख्याय) योग्यमित्रतायै (वृणीमहे) वयं वृणुमः। कथंभूतं-त्वां वृणुमोवयम तथाहि (सूरः) सर्वप्रेरकोसि (इषः) सर्वैश्वर्य प्रदोसि। अथच (तोकस्य) पुत्रस्य (तनूनां) शरीरत उत्पन्नानां पुत्रपौत्रादीनां (साता) दातासि। प्रागुक्तगुणपूर्णं भवन्तं (आवृणीमहे) वयं संवृणुमः॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्! (त्वं) तुमको हम (युज्याय) योग्य (सख्याय) सख्यके लिये हम (वृणीमहे) वरण करें। तुम कैसे हो? (सूरः) सर्वप्रेरक हो (इषः) सब ऐश्वर्य देने वाले हो। और (तोकस्य) पुत्रके (तनूनां) शरीरसे उत्पन्न पुत्रादिकोंके (साता) देने वाले हो। उक्त गुणसम्पन्न आपको (आवृणीमहे) हम भलीभांति स्वीकार करते हैं॥

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्माको सर्वोपरि मित्ररूपसे कथन किया गया है। वस्तुतः मित्र शब्दके अर्थ स्नेह करनेके हैं। वास्तवमें परमात्माके बराबर स्नेह करने वाला अन्य कोई नहीं है। इसी भावको "त्वं वा अहमस्मि भगवोदेवते अहं वा त्वमसि" इस उपनिषद्में भलीभांति

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वर्णन किया है, कि तू मैं, और मैं तू हूं। अर्थात् मैं आपके निष्पापादि-गुणोंको धारण करके शुद्धात्मा बनूं ॥१८॥

अग्न आयूँषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः।
आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥१९॥

अग्ने। आयूँषि। पवसे। आ। सुव। ऊर्जं। इषं। च। नः। आरे। बाधस्व। दुच्छुनाँ ॥१९॥

पदार्थः—(अग्ने) ज्ञानस्वरूप परमेश्वर! त्वम् (आयूंषि) अस्माकं वयांसि (पवसे) पवित्रयसि (च) अथ च (नः) अस्मभ्यं (इषं ऐश्वर्यं तथा (ऊर्जं) बलं (आसुव) देहि। तथा (दुच्छुनां) विघ्नकारिराक्षसान् इतः (आरे बाधस्व) दूरीकुरु ॥

पदार्थ—(अग्ने) हे ज्ञानस्वरूप परमात्मन्! आप (आयुषि) हमारी आयुको (पवसे) पवित्र करते हैं (च) और (नः) हमारे लिये (इषं) ऐश्वर्य और (ऊर्जं) बल (आसुव) दें। तथा (दुच्छुनां) विघ्नकारी-राक्षसोंको हमसे (आरे) दूर (बाधस्व) करें ॥

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्माने विघ्नकारी राक्षसोंसे बचनेका उपदेश किया है, कि हे पुरुषो! तुम विघ्नकारी अवैदिक पुरुष जो राक्षस-हैं, उनके हटानेमें सदैव तत्पर रहो ॥१९॥

अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः।
तमीमहे महागयम् ॥२०॥१०॥

अग्निः। ऋषिः। पवमानः। पांचऽजन्यः। पुरःऽहितः। तं। ईमहे। महाऽगयं ॥२०॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(अग्निः) ज्ञानस्वरूपः (ऋषिः) सर्वव्यापकः ऋषति ज्ञानदृष्ट्या सर्वत्र गच्छतीतियावत् । (पाञ्चजन्यः) पञ्च-ज्ञानेन्द्रियाणां शुभमार्गचालकः (पुरोहितः) वैदिकानामुपास्यः (महागयं) वेदराशिरूपधनंदाता परमात्मास्ति (तं, ईमहे) भवन्तं प्राप्नुमः ॥

पदार्थ—(अग्निः) ज्ञानस्वरूप (ऋषिः) सर्वव्यापक परमात्मा (पवमानः) सबको पवित्र करने वाला है (पांचजन्यः) पांचो ज्ञानेन्द्रियोंको शुभ मार्गमें चलाने वाला (पुरोहितः) वैदिक लोगोंका एकमात्र उपास्य (महागयं) वेदराशिरूप धनको देने वाला है (तं) उसको (ईमहे) हम लोग प्राप्त हों ॥

भावार्थ—जो परमात्मा सर्वगत परिपूर्ण और नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्तस्वभाव है, जिसकी उपासनासे ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय दोनों बल, वीर्य सम्पन्न होकर ऐश्वर्यके उपलब्ध करनेका सर्वोपरि हेतु बनते हैं। हम एकमात्र उक्त गुणसम्पन्न परमात्माको ही अपना उपास्य समझें॥२०॥

अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम् ।
दधद्रयिं मयि पोषम् ॥२१॥
अग्ने । पवस्व । सुऽअपाः । अस्मेइति । वर्चः । सुऽवीर्यं ।
दधत् । रयिं । मयि । पोषं ॥२१॥

पदार्थः—(अग्ने) ज्ञानस्वरूप जगत्पालक परमात्मन् ! मां (पवस्व) पवित्रय । भवान् (स्वपाः) सुकर्मास्ति । (अस्मे) अस्मासु (वर्चः) ब्रह्मतेजो ददातु । अथ च (मयि) मयि (रयिं) ऐश्वर्यं (सुवीर्यं) सुन्दरं बलं (पोषं) पुष्टिं च (दधत्) धारयतु ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(अग्ने) हे ज्ञानस्वरूप परमात्मन् ! (पवस्व) आप हमको पवित्र करें । आप (स्वपाः) शोभन कर्मों वाले हैं (अस्मे) हममें आप (वर्चः) ब्रह्मतेज दें । और (मयि) मुझमें (रयिं) ऐश्वर्य (सुवीर्यं) और सुन्दर बल (पोषं) तथा पुष्टिको (दधत्) धारण कराएँ ॥

भावार्थ—जो पुरुष परमात्मपरायण होते हैं, परमात्मा उनमें सब प्रकारके ऐश्वर्योंको धारण कराता है ॥२१॥

पवमानो अति स्रिधोऽभ्यर्षति सुष्टुतिम् ।
सूरो न विश्वदर्शतः ॥२२॥

पवमानः । अति । स्रिधः । अभि । अर्षति । सुऽस्तुतिं । सूरः । न । विश्वऽदर्शतः ॥२२॥

पदार्थः—(पवमानः) पविता परमात्मा (स्रिधः अति) दुष्टानतिक्राम्यति । तथा (सुष्टुतिं) सद्गुणसम्पन्नपुरुषान् (अभ्यर्षति) प्राप्नोति, स परमात्मा (सूरो न) सूर्य इव (विश्वदर्शतः) स्वयंप्रकाशोस्ति ॥

पदार्थ—(पवमानः) पवित्र करने वाला परमात्मा (स्रिधः-अति) दुष्टोंको अतिक्रमण करता है । और (सुष्टुतिं) सद्गुणसम्पन्न पुरुषोंको (अभ्यर्षति) प्राप्त होता है, वह परमात्मा (सूरो न) सूर्यकी-तरह (विश्वदर्शतः) स्वतःप्रकाश है ॥

भावार्थ—जो पुरुष संयमी बन कर ईश्वरपरायण होते हैं, परमात्मा उनपर अवश्यमेव कृपा करता है ॥२२॥

स मर्मृजान आयुभिः प्रयस्वान्प्रयसे हितः ।
इन्दुरत्यो विचक्षणः ॥२३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सः । म॒र्मृ॒जा॒नः । आ॒युऽभिः॑ । प्र॑यस्वान् । प्रय॑से । हि॒तः । इंदुः॑ । अत्यः॑ । वि॒च॒ऽक्ष॒णः ॥२३॥

पदार्थः—(इन्दुः) परमैश्वर्ययुक्तः परमात्मा (हितः) हितकारकोस्ति । तथा (अत्यः) सर्वदा गत्वरोस्ति । अथ च (विचक्षणः) सर्वज्ञोस्ति (प्रयस्वान्) तर्पकः स परमेश्वरः (प्रयसे) ब्रह्मानन्दाय (आयुभिः) कर्मयोगिभिः (मर्मृजानः) ध्यायमानः सन् तेषां साक्षात्कृतोभवति ॥

पदार्थ—(इंदुः) परमैश्वर्यसम्पन्न परमात्मा (हितः) सबका हितकारक तथा (अत्यः) सतत गमनशील है, और (विचक्षणः) सर्वज्ञ (प्रयस्वान्) तर्पक (सः) वह जगदीश (प्रयसे) ब्रह्मानन्दके लिये (आयुभिः) कर्मयोगियोंसे (मर्मृजानः) ध्यान किया गया उनके साक्षात्कारको प्राप्त होता है ॥

भावार्थ—योगी लोग जब परमात्माका ध्यान करते हैं, तब परमात्मा उन्हें आत्मस्वरूपवत् भान होता है । इसी अभिप्रायसे योगसूत्रमें कहा है कि "तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्" समाधिवेलामें उपासकके स्वरूपमें परमात्माकी स्थिति होती है ॥२३॥

पव॑मान ऋ॒तं बृ॒हच्छु॒क्रं ज्योति॑रजीजनत् ।
कृ॒ष्णा तमां॑सि॒ जङ्घ॑नत् ॥२४॥

पव॑मानः । ऋ॒तं । बृ॒हत् । शु॒क्रं । ज्योतिः॑ । अ॒जी॒ज॒न॒त् । कृ॒ष्णा । तमां॑सि । जंघ॑नत् ॥२४॥

पदार्थः—तदा (पवमानः) पवित्रकर्ता जगदीश्वरः

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(बृहत्) महत् (शुक्रं) बलरूपं (ऋतं ज्योतिः) सत्यरूपप्रकाशं (अजीजनत्) उत्पादयति । अथच (कृष्णा) नीलवर्णानि (तमांसि) तिमिराणि (जंघनत्) नाशयति ॥

पदार्थ—तब (पवमानः) सबको पवित्र करने वाला परमात्मा (बृहत्) बड़े (शुक्रं) बलरूप (ऋतं ज्योतिः) सत्यरूप प्रकाशको (अजीजनत्) पैदा करता है । और (कृष्णा) काले (तमांसि) अँधियारेको (जंघनत्) नाश करता है ॥

भावार्थ—परमात्माके साक्षात्कारसे अज्ञानकी निवृत्ति और परमानन्दकी प्राप्ति होती है । अथवा यों कहो कि "सता सौम्यतदा सम्पन्नोभवति" उस समय योगी सद्रूपब्रह्मके साथ सह अवस्थानको प्राप्त होता है । अर्थात् उस समय सद्रूपब्रह्मसे भिन्न और कुछ प्रतीत नहीं होता । इसी अभिप्रायसे योगसूत्रमें लिखा है, कि "ऋतंभरा तत्र प्रज्ञा" उस समय सद्रूप ब्राह्मी प्रज्ञा हो जाती है । ऋत, सत्य यह पर्याय शब्द हैं ॥ २४ ॥

पवमानस्य जङ्घ्नतो हरेश्चन्द्रा असृक्षत ।
जीरा अजिरशोचिषः ॥२५॥११॥

पवमानस्य । जङ्घ्नतः । हरेः । चन्द्राः । असृक्षत । जीराः । अजिरऽशोचिषः ॥२५॥

पदार्थः—तस्मिन्नज्ञाने नष्टे सति (पवमानस्य) पवित्रयितुः (जङ्घ्नतः) अज्ञाननाशकस्य (हरेः) पापहर्तुः (अजिरशोचिषः) सर्वगतेजस्विनः परमदयावत ईश्वरस्य (चन्द्राः) आह्लादकानि (जीराः) ज्योतींषि (असृक्षत) उत्पद्यन्ते ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—उस समय (पवमानस्य) पवित्र करने वाले (जंघ्नतः) अज्ञानोंके नाश करने वाले तथा (हरेः) पापोंके हरण करने वाले (अजिरशोचिषः) सर्वत्रगति तेज वाले परमात्माकी (चन्द्राः) आह्लादक (जीराः) ज्योतियें (असृक्षत) उत्पन्न होती हैं॥

भावार्थ—जब योगीजन उस परमात्माको लक्ष्य बनाकर उसका ध्यान करते हैं, तब अपूर्व ज्योति उत्पन्न होती है। वा यों कहो, कि अजर, अमर, भाव देनें वाला ब्रह्मज्ञान उस समय मनुष्यकी बुद्धिको प्रकाशित करता है। इसीका नाम ब्राह्मी प्रज्ञा है। इसी अभिप्रायसे गीतामें कृष्णजीने कहा है, कि "एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां-प्राप्य विमुह्यति" हे अर्जुन! यह ब्राह्मी स्थिति है, इसको पाकर फिर पुरुष मोहको प्राप्त नहीं होता॥२५॥

पवमानो रथीतमः शुभ्रेभिः शुभ्रशस्तमः।
हरिश्चन्द्रो मरुद्गणः॥२६॥

पवमानः। रथितमः। शुभ्रेभिः। शुभ्रशस्तमः। हरिश्चंद्रः। मरुत्गणः॥२६॥

पदार्थः—(पवमानः) पविता (रथीतमः) गतिशीलः-परमेश्वरः (शुभ्रेभिः) स्वीयप्रकाशन (शुभ्रशस्तमः) अति-प्रकाशकोस्ति। एतादृशो जगदीश्वरः (हरिश्चन्द्रः) सर्वानन्द-दाता (मरुद्गणः) विद्वद्भिरुपासनीयोस्ति॥

पदार्थ—(पवमानः) पवित्र करने वाला तथा (रथीतमः) गतिशील परमात्मा (शुभ्रेभिः) अपनी ज्योतिसे (शुभ्रशस्तमः) सर्वोपरि प्रकाशक है। ऐसा ईश्वर (हरिश्चन्द्रः) सबको आनन्द देने वाले (मरुद्गणः) विद्वानोंका एकमात्र उपास्य है॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—विद्वान् लोग नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्तस्वभाव परमात्मा की उपासना करते हैं, किसी अन्यकी नहीं ॥२६॥

पवमानो व्यश्नवद्रश्मिभिर्वाजसातमः ।
दधत्स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥२७॥

पवमानः । वि । अश्नवत् । रश्मिऽभिः । वाजऽसातमः ।
दधत् । स्तोत्रे । सुऽवीर्यं ॥२७॥

पदार्थः—(वाजसातमः) आध्यात्मिकबलदः परमेश्वरस्तथा (रश्मिभिः) स्वशक्तिभिः (व्यश्नवत्) सर्वान्स्वायत्तं कुर्वन् सः (पवमानः) पविता जगदीशः (स्तोत्रे) वेदाध्येयनशीलेभ्यः (सुवीर्यं) ब्रह्मवर्चः (दधत्) प्रददाति ॥

पदार्थ—(वाजसातमः) आध्यात्मिक बल देने वाला परमात्मा जो (रश्मिभिः) अपनी शक्तियोंसे (व्यश्नवत्) सबको स्वाधीन किये हुए है, वह (पवमानः) सबको पवित्र करने वाला ईश्वर (स्तोत्रे) वेदाध्ययनशीलोंमें (सुवीर्यं) ब्रह्मवर्चसका (दधत्) प्रदान करता है ॥

भावार्थ—स्वयंज्योति परमात्मासे ही विद्वानोंको ब्रह्मवर्चस मिलता है। इस लिये एकमात्र उसी ईश्वरकी उपासना करनी चाहिये ॥२७॥

प्र सुवान इन्दुरक्षाः पवित्रमत्यव्ययम् ।
पुनान इन्दुरिन्द्रमा ॥२८॥

प्र । सुवानः । इंदुः । अक्षारिति । पवित्रे । अति । अव्ययं ।
पुनानः । इंदुः । इन्द्रे । आ ॥२८॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(सुवानः) सर्वोत्पादकः (इन्दुः) सकलप्रकाशकः परमात्मा (प्राक्षाः) आनन्दस्य वृष्टिं करोति। तथा (पुनानः) पविता परमेश्वरः (इन्द्रं) कर्मयोगिने (पवित्रमव्ययं) पवित्रमव्ययं च भावं ददन् तथा तेषामन्तःकरणेषु (आ) आवसन् (अति) अत्येति अज्ञानं नाशयतीत्यर्थः "अति" इत्युपसर्गश्रुतेर्योग्यक्रियाया "एती" त्यस्याध्याहारः॥

पदार्थ—(सुवानः) सबको उत्पन्न करने वाला तथा (इन्दुः) सर्वप्रकाशक परमात्मा (प्राक्षाः) आनन्दकी वृष्टि करता है। तथा (पुनानः) पवित्र करने वाला जगदीश (इन्द्रं) कर्मयोगीको (पवित्रमव्ययं) पवित्र अव्यय भावको देता हुआ, तथा उनके अन्तःकरणोंमें (आ) निवास करता हुआ (अति) "अत्येति" अज्ञानका नाश करता है॥

भावार्थ—यद्यपि मनुष्यमात्रके हृदयमें परमात्मा विराजमान है, उससे एक अणुमात्र भी खाली नहीं, तथापि कर्मयोगी और ज्ञानयोगियोंके हृदयमें योगज सामर्थ्यसे अधिक अभिव्यक्ति समझी जाती है। इस अभिप्रायसे परमात्माका आवेश यहां योगीजनोंके हृदयमें कथन किया गया है॥२८॥

एष सोमो अधि त्वचि गवां क्रीळत्यद्रिभिः।
इन्द्रं मदाय जोहुवत्॥२९॥

एषः। सोमः। अधि। त्वचि। गवां। क्रीळति। अद्रिभिः। इन्द्रं। मदाय। जोहुवत्॥२९॥

पदार्थः—(एषः सोमः) अयं परमात्मा (गवां)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इन्द्रियाणां (अधित्वचि) मनोरूपशक्तौ (अद्रिभिः) इन्द्रियवृत्तिभिः साक्षात्क्रियते । (इन्द्रं) कर्मयोगिनः कर्मक्षेत्रे (जोहुवत्) प्राणापानगतिं निघ्नन्ति । अथ च कर्मयोगिनं कर्मक्षेत्रे (क्रीडति) क्रीडयति । अन्तर्भावितण्यर्थोऽत्रवर्तते ॥

पदार्थ—(एष सोमः) यह परमात्मा (गवां) इन्द्रियोंकी (अधित्वचि) मनोरूप शक्तिमें (अद्रिभिः) इन्द्रियवृत्तियों द्वारा साक्षात्कार किया जाता है । (इन्द्रं) कर्मयोगीके कर्मक्षेत्रमें (जोहुवत्) प्राणापानकी गतिको हवन करता है । और कर्मयोगीको कर्मक्षेत्रमें (क्रीडति) क्रीडा कराता है ॥

भावार्थ—परमात्माकी कृपासे ही कर्मयोगी जन प्राणापानकी गतिको रोक कर प्राणायाम करते हैं । और वही परमात्मा इस ब्रह्माण्डरूपी अद्भुत कर्मक्षेत्रमें उनसे सर्वोपरि कर्म कराता है । इसमें " अधित्वचि " नाम मनका है, क्योंकि "इन्द्रियाणां शक्तिं तनोतीतित्वक्" " त्वचि अधि इति अधित्वचि " " अधित्वचि " इससे यहां आध्यात्मिक यज्ञका अभिप्राय है । सायणाचार्यने यहां " अधित्वचि " इसके अत्यन्त घृणित अर्थ किये हैं । अर्थात् "गवामधित्वचि" इसका " अनुड्वर्चर्माणि" अर्थ किये हैं । सायणाचार्यके मतमें अनुड्वर्चर्म बिछाकर उसके ऊपर सोम कूटा जाता था । विचार करनेसे यह अर्थ योग्यतासे भी विरुद्ध है, क्योंकि सोम किसी कड़ी चीज़ पर कूटा जा सक्ता है, न कि चमड़े पर । कुछ हो, परन्तु " गवामधित्वचि " इसके " अनुड्वर्चर्म " अर्थ करना वेदके आशयसे सर्वथा विरुद्ध है ॥२९॥

यस्य ते द्युम्नवत्पयः पवमानाभृतं दिवः ।
तेन नो मृळ जीवसे ॥३०॥१२॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यस्य । ते । द्युम्नऽवत् । पयः । पवमान । आऽभृतं । दिवः ।
तेन । नः । मृळ । जीवसे ॥३०॥

पदार्थः--(पवमान) सर्वपावक परमात्मन्! (यस्य) यस्य भवतः (द्युम्नवत्) दीप्तिमत् (पयः) ऐश्वर्यं (दिवः आभृतं) द्युलोकतोदुग्धमस्ति (तेन) तेनैश्वर्येण (नः) अस्माकं (जीवसे) जीवनं (मृळ) सुखय ॥

पदार्थ--(पवमान) हे सबको पवित्र करने वाले परमात्मन्! (यस्य) जिस आपका (द्युम्नवत् पयः) दीप्ति युक्त ऐश्वर्य जो (दिवः) आभृतं) द्युलोकसे दुहा गया है, (तेन) उस ऐश्वर्यसे (नः) हम लोगोंके (जीवसे) जीवनके लिये (मृळ) सुख दें ॥

भावार्थ--परमात्माके ऐश्वर्यरूपी अमृतका जब तक मनुष्य पान नहीं करता, तब तक उसके ऐश्वर्यकी बृद्धि कदापि नहीं होती। इस लिये अपने जीवनकी बृद्धिके लिये इन्द्रियसंयम द्वारा ईश्वराज्ञाका-पालन करता हुआ पुरुष १०० बरस जीनेकी इच्छा करे। इस अभि-प्रायसे वेदमें अन्यत्र भी कहा है कि, "जीवेम शरदः शतम् पश्येम शरदः शतम्" इत्यादि। इसी अभिप्रायसे मनुधर्मशास्त्रमें कहा है, कि "सदा-चारेण पुरुषः शतवर्षाणि जीवति" ब्रह्मचर्यादि व्रतोंसे मनुष्य सैकड़ों बरस तक जीवित रहता है ॥३०॥

इति षट्षष्टितमं सूक्तं द्वादशोवर्गश्च समाप्तः।

यह ६६ वां सुक्त और १२ वां वर्ग समाप्त हुआ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ द्वात्रिंशदृचस्य सप्तषष्ठितमस्य सूक्तस्य—

ऋषिः-१-३ भरद्वाजः। ४-६ कश्यपः। ७-९ गोतमः। १०-१२ अत्रिः। १३-१५ विश्वामित्रः। १६-१८ जमदग्निः। १९-२१ वसिष्ठः। २२-३२ पवित्रो वसिष्ठो वोभौ वा॥ देवताः-१-९, १३-२२, २८-३० पवमानः सोमः। १०-१२ पवमानः सोमः पूषा वा। २३, २४ अग्निः। २५ अग्निः सविता वा। २६ अग्निरग्निर्वा सविताच। २७ अग्निर्विश्वेदेवा वा। ३१, ३२ पवमान्यध्येतृस्तुतिः॥ छन्दः—१, २, ४, ५, ११-१३, १५, १९, -२३-२५ निचृद्गायत्री। ३, ८ विराड्गायत्री। १० यवमध्यागायत्री। १६-१८ भुरिग्गार्ची विराड्गायत्री। ६, ७, ९, १४, २०-२२, २४, २६, २८, २९ गायत्री। २७ अनुष्टुप्। ३१, ३२ निचृदनुष्टुप् ३० पुरउष्णिक्॥ स्वरः-१-२६, २८, २९ षड्जः। २७, ३१, ३२ गान्धारः। ३० ऋषभः॥

अथ गुणान्तरेण परमात्मा स्तूयते।

अब गुणान्तरोंसे परमात्माकी स्तुति करते हैं।

त्वं सोमासि धारयुर्मन्द्र ओजिष्ठो अध्वरे।
पवस्व मंहयद्रयिः॥१॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्वं । सोम । असि । धारयुः । मंद्रः । ओजिष्ठः । अध्वरे । पवस्व । मंहयत्ऽरायिः ॥१॥

पदार्थः—(सोम) परमेश्वर ! (त्वं) भवान् (धारयुः) धारणशक्तिमान् तथा (मंद्रः) आनन्दप्रदोस्ति । अथच (ओजिष्ठः) ओजस्व्यस्ति। भवान् (अध्वरे) यज्ञे (मंहयद्रयिः) धनानि ददन् (पवस्व) रक्षयतु ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (त्वं) तुम (धारयुः) धारणशक्ति वाले हो। तथा (मंद्रः) तुम आनन्दमद हो। और (ओजिष्ठः) ओजस्वी हो। तथा आप (अध्वरे) यज्ञमें (मंहयद्रयिः) धन प्रदान करते हुए (पवस्व) हमारी रक्षा करें ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्माको सर्वाधार कथन किया है। और सम्पूर्ण धनोंका दातृरूपसे वर्णन किया है ॥१॥

त्वं सुतो नृमादनो दध्न्वान्मत्सरिन्तमः ।
इन्द्राय सूरिरन्धसा ॥२॥

त्वं । सुतः । नृऽमादनः । दध्न्वान् । मत्सरिन्ऽतमः । इंद्राय । सूरिः । अंधसा ॥२॥

पदार्थः—हे जगदीश ! (त्वं) भवान् (इन्द्राय) कर्मयोगिने (मत्सरिंतमः) आनन्ददायकोस्ति । (सुतः) स्वयम्भूः तथा (नृमादनः) सर्वानन्दजनकः । अथच (दध्न्वान्) सर्वधारकोस्ति। तथा (सूरिः) सर्वोत्पादकोसि त्वम्। अथच (अंधसा) स्वकीयैश्वर्येण सर्वस्मै ऐश्वर्यं ददासि ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—हे परमात्मन् ! आप (इन्द्राय) कर्मयोगीके लिये (मत्सरितमः) अत्यन्त आह्लादजनक हैं। और (सुतः) स्वयम्भू हैं। तथा (तृमादनः) आप सर्वानन्दजनक हैं। और (दधन्वान्) सबके धारण करने वाले हैं, और (सूरिः) सर्वोत्पादक हैं। तथा (अंधसा) अपने ऐश्वर्यसे सबको ऐश्वर्यशाली बनाते हैं॥

भावार्थ—परमात्मा उद्योगी पुरुषोंको अपने ऐश्वर्यसे ऐश्वर्यशाली बनाता है॥२॥

त्वं सुष्वाणो अद्रिभिरभ्यर्ष कनिक्रदत्।
द्युमन्तं शुष्ममुत्तमम्॥३॥

त्वं। सुस्वानः। अद्रिऽभिः। अभि। अर्ष। कनिक्रदत्।
द्युऽमन्तं। शुष्मं। उत्ऽतमं॥३॥

पदार्थः—(त्वं) भवान् (कनिक्रदत्) वेदवाणिभिः (सुष्वाणः) स्तूयमानोऽस्ति। एवंभूतस्त्वं (द्युमन्तं) दीप्तिमत (उत्तमं) सर्वोत्कृष्टं (शुष्मं) बलं (अद्रिभिः) स्वकीयादरणीयशक्तिभिः (अभ्यर्ष) प्रापय॥

पदार्थ—(त्वं) आप (कनिक्रदत्) वेदरूपी वाणियों द्वारा (सुष्वाणः) स्तूयमान हैं। (द्युमन्तं) दीप्ति वाला (उत्तमं) सबसे अच्छे (शुष्मं) बलको (अद्रिभिः) अपने आदरणीय शक्तियोंसे (अभ्यर्ष) प्राप्त कीजिये॥

भावार्थ—परमात्मा वेदवाणियोंके द्वारा ज्ञानरूपी बलका प्रदान करता है॥३॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इन्दुर्हिन्वानो अर्षति तिरो वाराण्यव्यया ।
हरिर्वाजमचिक्रदत् ॥४॥

इंदुः । हिन्वानः । अर्षति । तिरः । वाराणि । अव्यया ।
हरिः । वाजं । अचिक्रदत् ॥४॥

पदार्थः—(इन्दुः) स्वयंप्रकाशः (हिन्वानः) सर्वप्रेरकः परमेश्वरः (तिरः) अज्ञानानि तिरस्कृत्य (वाराणि) वरणीयानि (अव्यया) नित्यज्ञानानि (अर्षति) ददाति । (हरिः) पापहारकः परमात्मा ज्ञानदानाय (वाजं) बलपूर्वकं (अचिक्रदत्) अस्मानाह्वयति ॥

पदार्थ—(इंदुः) स्वयंप्रकाश (हिन्वानः) सर्वप्रेरक परमात्मा (तिरः) अज्ञानको तिरस्कार करके (वाराणि) वरण करने योग्य (अव्यया) नित्यज्ञानोंको (अर्षति) देता है । (हरिः) पूर्वोक्त परमेश्वर ज्ञान देनेके लिये (वाजं) बलपूर्वक (अचिक्रदत्) आह्वान करता है ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें अज्ञानको निवृत्त करके ईश्वरके सद्गुणोंके धारणका उपदेश किया गया है ॥४॥

इन्दो व्यव्यमर्षसि वि श्रवांसि वि सौभगा ।
वि वाजान्त्सोम गोमतः ॥५॥१३॥

इंदो इति । वि । अव्यं । अर्षसि । वि । श्रवांसि । वि ।
सौभगा । वि । वाजान् । सोम । गोऽमतः ॥५॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(इन्दो) सर्वैश्वर्यसम्पन्न ! (सोम) हे परमेश्वर ! (अव्यं) अव्ययं (विश्रवांसि) विशेषयशस्तथा (विसौभगा) अधिकसौभाग्यं तथा (गोमतो वि वाजान्) ऐश्वर्यवदधिकबलं च (व्यर्षसि) त्वं ददासि ।

पदार्थ—(इंदो) सर्वैश्वर्यसम्पन्न ! (सोम) परमात्मन् ! (अव्यं) अव्यय (विश्रवांसि) विशेष यशको तथा (विसौभगा) विशेष सौभाग्यको और (गोमतो विवाजान्) ऐश्वर्य वाले विशेष बलको (व्यर्षसि) आप देते हैं ॥

भावार्थ—परमात्मा सत्कर्मों द्वारा जिस पुरुषको अपने ऐश्वर्यका पात्र समझता है, उसे अनन्त प्रकारके बल, सौभाग्य तथा यशका प्रदान करता है ॥५॥

आ नं इन्दो शतग्विनं रयिं गोमन्तमश्विनम् ।
भरा सोम सहस्रिणम् ॥६॥

आ । नः । इंदो इति । शतऽग्विनं । रयिं । गोऽमंतं । अश्विनं । भर । सोम । सहस्रिणं ॥६॥

पदार्थः—(इन्दो) सर्वप्रकाशक परमात्मन् ! भवान् (शतग्विनं) शतविधशक्तिमत तथा (गोमन्तं) ऐश्वर्ययुक्तं (अश्विनं) सर्वत्र व्यापकं (सहस्रिणं) सहस्रविधं (रयिं) धनं (नः) अस्मभ्यं (आभर) देहि ॥

पदार्थ—(इन्दो) हे सर्वप्रकाशक परमात्मन् ! आप (शतग्विनं) सैकड़ों प्रकारकी शक्ति वाले (गोमन्तं) तथा ऐश्वर्य युक्त (अ-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्विनं) सर्वत्र व्यापक (सहस्रिणं) हज़ारो प्रकारके (रयिं) धनको (नः) हमको (आभर) दीजिये ॥

भावार्थ—परमात्मा सहस्रों प्रकारके ऐश्वर्योंका प्रदान करने-वाला है ॥६॥

पवमानास इन्दवस्तिरः पवित्रमाशवः ।
इन्द्रं यामेभिराशत ॥७॥

पवमानासः । इंदवः । तिरः । पवित्रं । आशवः । इद्रं । यामेभिः । आशत ॥७॥

पदार्थः—(पवमानासः) पावकः (इन्दवः) सर्वैश्वर्य-सम्पन्नः (आशवः) व्यापकः परमेश्वरः (यामेभिः) स्वकीया-नन्तशक्तिभिः (तिरः) अज्ञानानि तिरस्कृत्य (पवित्रं) पूतं (इन्द्रं) कर्मयोगिनं (आशत) प्राप्नोति ।

पदार्थ—(पवमानासः) पवित्र करने वाला तथा (इंदवः) सर्वैश्वर्य सम्पन्न और (आशवः) व्यापक परमात्मा (यामेभिः) अपनी अनन्त शक्तियोंसे (तिरः) अज्ञानोंका तिरस्कार करके (पवित्रं) पवित्र (इन्द्रं) कर्मयोगीको (आशत) प्राप्त होता है ॥

भावार्थ—जो पुरुष ज्ञानयोग वा कर्मयोग द्वारा अपने आप को ईश्वरके ज्ञानका पात्र बनाते हैं, उन्हे परमात्मा अपने अनन्त गुणोंसे प्राप्त होता है । अर्थात् वह परमात्माके सच्चिदादि अनेक गुणोंका लाभ करता है ॥७॥

ककुहः सोम्यो रस इन्दुरिन्द्राय पूर्व्यः ।
आयुः पवत आयवे ॥८॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ककुहः। सोम्यः। रसः। इंदुः। इंद्राय। पूर्व्यः। आयुः। पवते। आयवे ॥८॥

पदार्थः—(ककुहः) महान् (ककुह इति महन्नामसु पठितम्" नि० ३।१।३।) (सोम्यः) सौम्यस्वभावः (इन्दुः) समस्तैश्वर्ययुक्तः (आयुः) सर्वगः (रसः) रसस्वरूपः (पूर्व्यः) अनादिः परमेश्वरः (आयवे) सर्वत्रगन्तारं (इन्द्राय) कर्मयोगिनं (पवते) पवित्रयति ॥

पदार्थ—(ककुहः) महान् (सोम्यः) सौम्य स्वभाव (इन्दुः) सर्वैश्वर्यसम्पन्न (आयुः) सर्वत्र गन्ता (रसः) रस स्वरूप (पूर्व्यः) अनादि परमात्मा (आयवे) सर्वत्र गति वाले (इन्द्राय) कर्मयोगीको (पवते) पवित्र करता है ॥

भावार्थ—इन्द्र शब्दके अर्थ यहां केवल कर्मयोगी नहीं, किन्तु कर्मयोगी, ज्ञानयोगी दोनोंके हैं। तात्पर्य यह है, कि जो पुरुष कर्म वा ज्ञानद्वारा परमात्माको उपलब्ध करना चाहते हैं, उनके लिये परमात्मा सदैव सुलभ है ॥८॥

हिन्वन्ति सूरमुस्रयः पवमानं मधुश्चुतम्।
अभि गिरा समस्वरन् ॥९॥

हिन्वंति। सूरं। उस्रयः। पवमानं। मधुश्चुतं। अभि। गिरा। सं। अस्वरन् ॥९॥

पदार्थः—(उस्रयः) ज्ञानिनोजनाः (पवमानं) पवितारं (मधुश्चुतं) आमोदवर्षकं (सूरं) परमात्मानं (गिरा)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वेदवाग्भिः (समस्वरन्) स्तुतिं कुर्वन्तः (अभि हिन्वन्ति) परितः साक्षात्कुर्वन्ति ॥

पदार्थ—(उक्षयः) ज्ञानी लोग (पवमानं) पवित्र करने वाले (मधुश्चुतं) आनन्दकी वृष्टि करने वाले (शूरं) परमात्माकी (गिरा) वेदवाणियोंसे (समस्वरन्) स्तुति करते हुए (अभिहिन्वन्ति) सब ओरसे साक्षात्कार करते हैं ॥

भावार्थ—विद्वान् लोग वेदवाणियों द्वारा पूर्वोक्त परमात्माकी स्तुति करते हैं ॥९॥

अविता नो अजाश्वः पूषा यामनियामनि ।
आ भक्षत्कन्यासु नः ॥१०॥१४॥

अविता । नः । अजऽअश्वः । पूषा । यामनिऽयामनि । आ । भक्षत् । कन्यासु । नः ॥१०॥

पदार्थः—(अजाश्वः) नित्यधनवान् (पूषा) सर्वपालकः परमात्मा (नः) अस्माकं (अविता) पालको भवतु । (यामनियामनि) सर्वस्मिन्काले (कन्यासु) कमनीयपदार्थेषु (नः) अस्मान् (आ भक्षत्) गृह्णातु ॥

पदार्थ—(अजाश्वः) नित्यधन वाला (पूषा) सर्वपोषक परमात्मा (नः) हम लोगोंका (अविता) पालन करने वाला हो । (यामनि यामनि) सर्वदा (कन्यासु) कमनीय पदार्थोंमें (नः) हम लोगोंको (आभक्षत्) ग्रहण करे ।

भावार्थ—परमात्मा ईश्वरपरायण लोगोंके लिये सदैव कल्याणकारी होता है ॥१०॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अयं सोमः कपर्दिने घृतं न पवते मधु ।
आ भक्षत्कन्यासु नः ॥११॥

अयं । सोमः । कपर्दिने । घृतं । न । पवते । मधु । आ । भक्षत् । कन्यासु । नः ॥११॥

पदार्थः—(अयं सोमः) प्रागुक्तः परमेश्वरः (कपर्दिने) कर्मयोगिने (घृतं) स्वप्रेम्णा (मधु न) मधुवत् (पवते) मधुरयति । अथ च (नः) अस्मान् (कन्यासु) कमनीय-पदार्थेषु (आभक्षत्) गृह्णाति ॥

पदार्थ—(अयं सोमः) पूर्वोक्त परमात्मा (कपर्दिने) कर्मयोगी-को (घृतं) अपने प्रेमसे (मधु न) मधुके समान (पवते) मधुर बनाता-है । और (नः) हम लोगोंको (कन्यासु) कमनीय पदार्थोंमें (आभक्षत्) ग्रहण करता है ॥

भावार्थ—परमात्मा कर्मयोगियोंको कमनीय पदार्थोंका प्रदान करता है ॥११॥

अयं त आघृणे सुतो घृतं न पवते शुचि ।
आ भक्षत्कन्यासु नः ॥१२॥

अयं । ते । आघृणे । सुतः । घृतं । न । पवते । शुचि । आ । भक्षत् । कन्यासु । नः ॥१२॥

पदार्थः—(आघृणे) सर्वप्रकाशक परमात्मन् ! (अयं) असौ (सुतः) संस्कृतः (ते) भवतः (शुचि) शुद्धः स्वभावः

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(घृतं न) स्नेह इव (पवते) पवित्रयति। अथच (नः) अस्मान् (कन्यासु) कल्याणकारिगुणेषु (आभक्षत्) गृह्णाति॥

पदार्थ—(आघृणे) हे सर्वप्रकाशक परमात्मन्! (अयं) या (सुतः) संस्कृत (ते) आपका (शुचि) शुद्ध स्वभाव (घृतं न) स्नेहकी तरह (पवते) पवित्र करता है। और (नः) हम लोगोंको (कन्यासु) अपने कल्याणकारक गुणोमें (आभक्षत्) ग्रहण करता है॥

भावार्थ—जो लोग परमात्मसुखोपलब्धिके लिये सत्कर्म करते हैं, उन्हें परमात्मा मंगलमय बनाता है॥१२॥

वाचो जन्तुः कवीनां पवस्व सोम धारया।
देवेषु रत्नधा असि॥१३॥

वाचः। जंतुः। कवीनां। पवस्व। सोम। धारया। देवेषु। रत्नधाः। असि॥१३॥

पदार्थः—(सोम) हे जगदीश! (कवीनां) कविवराणां मध्ये त्वं (वाचोजन्तुः) वेदवाणीजनकोसि। अथ च (देवेषु) विद्वद्भ्यः (रत्नधा असि) विद्यारत्नं धारयसि। एवंभूतस्त्वं (धारया) स्वकीयसुधामय्यावृष्ट्या (पवस्व) पुनीहि॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्! (कवीनां) कवियोंके मध्यमें आप (वाचोजन्तुः) वेदवाणियोंके उत्पादक हैं। और (देवेषु) विद्वानोंको (रत्नधा असि) विद्यारूप रत्न धारण कराते हैं। ऐसे आप (धारया) अपनी सुधामयी दृष्टिसे (पवस्व) पवित्र करिये॥

भावार्थ—परमात्मा ही वस्तुतः आदिकवि है। उसकी कवित्वशक्तिका अनुकरण करके अन्य कवियोंने अपने अपने भावोंको प्रकट किया है॥१३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आ कलशेषु धावति श्येनो वर्म वि गाहते ।
अभि द्रोणा कनिक्रदत् ॥१४॥

आ । कलशेषु । धावति । श्येनः । वर्म । वि । गाहते ।
अभि । द्रोणा । कनिक्रदत् ॥१४॥

पदार्थः—जगत्पूज्य परमात्मन् ! (श्येनः) यथा विद्युत् (वर्म) विग्रहवद्वस्तु (विगाहते) अवगाहते । तथा (अभिद्रोणा) प्रतिविग्रहवद्वस्तुनोऽभिमुखं (कनिक्रदत्) सशब्दं प्राप्नोति । इत्थं (कलशेषु) प्रत्यकस्थानेषु (आधावति) भवान् विराजितो भवति ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (श्येनः) जैसे विद्युत् (वर्म) विग्रहवत् वस्तुका (विगाहते) अवगाहन करती है, और (अभिद्रोणा) प्रत्यक विग्रहवद्वस्तुके अभिमुख (कनिक्रदत्) शब्दायमान होकर प्राप्त होती है, इस प्रकार (कलशेषु) प्रत्यक स्थानमें (आधावति) आप विराजमान होते हैं ॥

भावार्थ—विद्युत् निराकार होकर भी सबसे तेजस्वी, ओजस्वी और शब्दायमान है । इसी प्रकार निराकार परमात्मा तेजस्वी ओजस्वी तथा शब्दयोनि होकर विराजमान है । यहाँ विद्युत् का दृष्टान्त अत्यन्त बल और निराकारके अभिप्रायसे है । किसी और अभिप्रायसे नहीं ॥१४॥

परि प्र सोम ते रसोऽसर्जि कलशे सुतः ।
श्येनो न तक्तो अर्षति ॥१५॥१५॥

परि । प्र । सोम । ते । रसः । असर्जि । कलशे । सुतः ।
श्येनः । न । तक्तः । अर्षति ॥१५॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(सोम) हे जगन्नियन्तः ! (श्येनोन) यथा विद्युद् (अर्षति) सर्वत्र गच्छति, तथा (ते) भवतः (सुतः) स्वयंसिद्धः (तक्तः) सर्वगः (रसः) आनन्दः (परि) सर्वतः (कलशे) पूतान्तःकरणेषु (प्रासर्जि) स्थिरोभवति ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! (श्येनोन) जैसे विद्युत् (अर्षति) सर्वत्र गमन करती है, तथा (ते) आपका (सुतः) स्वतःसिद्ध (तक्तः) सर्वत्र गमनशील (रसः) आनन्द (परि) चारो ओर (कलशे) पवित्र अन्तःकरणोंमें (प्रासर्जि) स्थिर होता है ॥

भावार्थ—जिस प्रकार परमात्मा सर्वत्र व्यापक है, इसी प्रकार उसके आनन्दादि गुण भी सर्वत्र व्यापक हैं ॥१५॥

पवस्व सोम मन्दयन्निन्द्राय मधुमत्तमः ॥१६॥

पवस्व । सोम । मंदयन् । इंद्राय । मधुमत्ऽतमः ॥१६॥

पदार्थः—(सोम) जगज्जनक परमात्मन् ! त्वम् (मधुमत्तमः) अत्यानन्दमयोसि । अतः (मंदयन्) आनन्दयन् (इन्द्राय) उद्योगिनं (पवस्व) मंगलमयभावैः पवित्रय ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् ! आप (मधुमत्तमः) अत्यन्त आनन्दमय हैं, अतः (मंदयन्) आनन्दित करते हुए (इन्द्राय) उद्योगीके लिये (पवस्व) मंगलमय भावोंसे पवित्र करिये ॥

भावार्थ—उद्योगी पुरुषको परमात्मा उत्साहित करके पवित्र करता है ॥१६॥

असृग्रन्देववीतये वाजयन्तो रथा इव ॥१७॥

असृग्रन् । देवऽवीतये । वाजयंतः । रथाःऽइव ॥१७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(देववीतये) देवमार्गावाप्तये (वाजयंतः) बलवन्तः (रथा इव) रथवत् उद्योगिनः (असृग्रन्) विरच्यन्ते ॥

पदार्थ—(देववीतये) देवमार्गकी प्राप्तिके लिये (वाजयंतः) बल वाले (रथा इव) रथोंकी तरह उद्योगी लोग (असृग्रन्) रचे जाते हैं ॥

भावार्थ—"आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेवतु" कठ. १।३।३। इस वाक्यमें जैसे शरीरको रथ बनाया है, इसी प्रकार यहां भी रथका दृष्टान्त है। तात्पर्य यह है, कि जिन पुरुषोंके शरीर दृढ़ होते हैं, वा यों कहो कि परमात्मा पूर्वकर्मानुसार जिन पुरुषोंके शरीरोंको दृढ़ बनाता है, वे कर्मयोगके लिये अत्यन्त उपयोगी होते हैं ॥१७॥

ते सुतासो मदिन्तमाः शुक्रा वायुमसृक्षत ॥१८॥

ते । सुतासः । मदिन्ऽतमाः । शुक्राः । वायुं । असृक्षत ॥१८॥

पदार्थः—(ते) भवतः (सुतासः) संस्कृताः (मदिन्तमाः) अमोदजनकाः (शुक्राः) स्वभावाः (वायुं) कर्मयोगिनं (असृक्षत) उत्पादयन्ति ॥

पदार्थ—(ते) तुम्हारे (सुतासः) संस्कृत (मदिन्तमाः) आह्लादजनक (शुक्राः) स्वभाव (वायुं) कर्मयोगीको (असृक्षत) उत्पन्न करते हैं ॥

भावार्थ—तात्पर्य यह है, कि जिसको परमात्मा उत्तम शील देता है, वही कर्मयोगी बनता है, अन्य नहीं ॥१८॥

ग्राव्णा तन्नो अभिष्टुतः पवित्रं सोम गच्छसि ।
दधत्स्तोत्रे सवीर्यम् ॥१९॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ग्राव्णा। तुन्नः। अभिऽस्तुतः। पवित्रं। सोम। गच्छसि। दधत्। स्तोत्रे। सुऽवीर्यं ॥१९॥

पदार्थः—(ग्राव्णा) जिज्ञासुभिः (तुन्नः) आविर्भूतस्तथा (अभिष्टुतः) सर्वथा स्तुतः (सोम) हे जगदीश! भवान् (पवित्रं) पूर्वोक्तानां कर्मयोगिनामन्तःकरणानि (गच्छसि) प्राप्नोति। अथ च (स्तोत्रे) उक्तस्तोतृभ्यस्त्वम् (सुवीर्यं) सुबलं (दधत्) उत्पादयसि ॥

पदार्थ—(ग्राव्णा) जिज्ञासुओंसे (तुन्नः) आविर्भावको प्राप्त हुए तथा (अभिष्टुतः) सब प्रकारसे स्तुति किये हुए (सोम) हे परमात्मन्! आप (पवित्रं) उनके पवित्र अन्तःकरणोंको (गच्छसि) प्राप्त होते हैं। और (स्तोत्रे) उक्त स्तोता लोगोंके लिये आप (सुवीर्यं) सुन्दर बलको (दधत्) उत्पन्न करते हैं ॥

भावार्थ—उपासक लोगोंसे उपासना किया हुआ परमात्मा उनके लिये सुन्दर बलका प्रदान करता है ॥१९॥

एष तुन्नो अभिष्टुतः पवित्रमति गाहते।
रक्षोहा वारमव्ययम् ॥२०॥१६॥

एषः। तुन्नः। अभिऽस्तुतः। पवित्रं। अति। गाहते। रक्षःऽहा। वारं। अव्ययं ॥२०॥

पदार्थः—(एषः) पूर्वोक्तः परमात्मा (तुन्नः) योऽज्ञाननिवृत्त्याऽऽविर्भूतस्तथा (अभिष्टुतः) सर्वथा स्तुतः स जगदीश्वरः (पवित्रं) शुद्धान्तःकरणं (अति गाहते) प्रकाशितं करोति। अथ-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

च (रक्षोहा) दुष्टनाशकस्तथा (अव्ययं) अविनाशी परमात्मास्ति तथा (वारं) भजनीयश्च ॥

पदार्थ—(एषः) उक्त परमात्मा (तुन्नः) जो अज्ञाननिवृत्तिद्वारा आविर्भावको प्राप्त हुआ है, और (अभिष्टुतः) सब प्रकारसे स्तुति किया गया है, वह (पवित्रं) पवित्र अन्तःकरणको (अति गाहते) प्रकाशित करता है। और (रक्षोहा) दुष्टोंका विघातक तथा (अव्ययं) अविनाशी और (वारं) भजनीय है ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्माके दण्डदातृत्व और अविनाशित्वादि धर्मोंका कथन किया गया है ॥२०॥

यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह ।
पवमान वि तज्जहि ॥२१॥

यत् । अंति । यत् । च । दूरके । भयं । विंदति । मां । इह । पवमान । वि । तत् । जहि ॥२१॥

पदार्थः—(पवमान) सर्वपवित्रयितः परमात्मन्! (मामिह) मामस्मिन्संसारे (यत् भयं) यत्किमपि भयं (विंदति) प्राप्तं वर्तते (च) अथ च (यत्) यद्विघ्नं (अंति) सन्निकटं वर्तते तथा (दूरके) दूरमस्ति (तत्) तान् (विजहि) सर्वथा नाशय ॥

पदार्थ—(पवमान) सबको पवित्र करने वाले परमात्मन्! आप (मामिह) मुझको इस संसारमें (यद्) जो (भयं) भय (विंदति) प्राप्त है (च) और (यद्) जो विघ्न (अंति) मेरे समीप तथा (दूरके) दूर हैं (तत्) उनको (विजहि) सर्वथा नाश करें ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्मासे भय और विघ्नोंके नाश करनेकी प्रार्थना की गई है ॥२१॥

पवमानः सो अद्य नः पवित्रेण विचर्षणिः।
यः पोता स पुनातु नः ॥२२॥

पवमानः। सः। अद्य। नः। पवित्रेण। विचर्षणिः। यः। पोता। सः। पुनातु। नः ॥२२॥

पदार्थः—(सः) स परमात्मा (नः) अस्माकं (पवमानः) पवित्रयिता तथा (विचर्षणिः) सकलद्रष्टास्ति। अथच (पवित्रेण) स्वकीयपवित्रधर्मेण (यः) य ईश्वरः (पोता) सकलपावकोस्ति (सः) असौ जगज्जनकः परमेश्वरः (नः) अस्मान् (अद्य पुनातु) अद्यैव पवित्रयतु ॥

पदार्थ—(सः) वह परमात्मा (नः) हम लोगोंको (पवमानः) पवित्र करने वाला तथा (विचर्षणिः) सर्वद्रष्टा है, और (पवित्रेण) अपने पवित्र धर्मोंसे (यः) जो (पोता) सबको पवित्र करने वाला है (सः) वह (नः) हमको (अद्य) अब (पुनातु) पवित्र करे ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें इस अपूर्वताका उपदेश किया गया है, कि उपासनाकालमें उपासक अपनी पवित्रताका अनुसन्धान करे। और उसकी न्यूनता देख कर उसकी याचना परमेश्वरसे अवश्यमेव करे ॥२२॥

यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने वितततमन्तरा।
ब्रह्म तेन पुनीहि नः ॥२३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यत् । ते । पवित्रं । अर्चिषि । अग्ने । विऽततं । अंतः ।
आ । ब्रह्म । तेन । पुनीहि । नः ॥२३॥

पदार्थः—(अग्ने) ज्ञानस्वरूप जगन्नियन्तः ! (यत्) यानि (ते अन्तः) त्वयि (पवित्रं) शुद्धानि (आविततं) विस्तृतानि (अर्चिषि) ज्योतींषि (तेन) तैः (ब्रह्म) हे परमेश्वर ! (नः) अस्मान् (पुनीहि) पवित्रय ॥

पदार्थ—(अग्ने) हे ज्ञानस्वरूप परमात्मन् ! (यत्) जो (ते अन्तः) तुझमें (पवित्रं) पवित्र (आविततं) विस्तृत (अर्चिषि) ज्योतियें हैं,- (तेन) उनसे (ब्रह्म) हे परमात्मन् ! (नः) हम लोगोंको (पुनीहि) पवित्र करिये ॥

भावार्थ—ब्रह्म शब्दके अर्थ यहां परमात्माके हैं। सायणाचार्यने इसके अर्थ शरीरके किये हैं, जो कि वेदाशयसे सर्वथा विरुद्ध है ॥२३॥

यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने तेन पुनीहि नः ।
ब्रह्मसवैः पुनीहि नः ॥२४॥

यत् । ते । पवित्रं । अर्चिऽवत् । अग्ने । तेन । पुनीहि ।
नः । ब्रह्मऽसवैः । पुनीहि । नः ॥२४॥

पदार्थः—(अग्ने) ज्ञानस्वरूप परमात्मन् ! (ते) तव (यत्) यत् (पवित्रं) पूतं (अर्चिवत्) सूर्यादिषु तेजोस्ति (तेन) तेन तेजसा (नः) अस्मान् (पुनीहि) पवित्रय । तथा (ब्रह्मसवैः) स्वीयब्रह्मभावेन (नः) अस्मान् (पुनीहि) पवित्रय ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(अग्ने) हे ज्ञानस्वरूप परमात्मन् ! (ते) आपका (यत्) जो (पवित्रं) पवित्र (अर्चिषत्) सूर्यादिकोंमें तेज है (तेन) उससे (नः) हम लोगोंको (पुनीहि) पवित्र करिये । तथा (ब्रह्मसवैः) अपने ब्रह्म भावसे (नः) हम लोगोंको (पुनीहि) पवित्र करिये ॥

भावार्थ—परमात्मा सूर्यादि सब दिव्य पदार्थोंका प्रकाशक है, और उसीके प्रकाशसे प्रकाशित होकर सब तेजोमय प्रतीत होतेहैं ॥२४॥

उभाभ्यां देव सवितः पवित्रेण सवेन च ।
मां पुनीहि विश्वतः ॥२५॥१७॥

उभाभ्यां । देव । सवितारीति । पवित्रेण । सवेन । च । मां । पुनीहि । विश्वतः ॥२५॥

पदार्थः—(देव) प्रशंसनीयगुण परमात्मन् ! (सवितः) हे सर्वजनक ! त्वम् (उभाभ्यां) ज्ञानयोगकर्मयोगाभ्यां (मां) मां (विश्वतः) परितः (पुनीहि, पवित्रय । (च) अथच (पवित्रेण) शुद्धेन (सवेन) ब्रह्मभावेन मां पवित्रय ॥

पदार्थ—(देव) दिव्यगुणसम्पन्न परमात्मन् ! (सवितः) हे सर्वोत्पादक ! आप (उभाभ्यां) ज्ञानयोग तथा कर्मयोग द्वारा (मां) मुझको (विश्वतः) सब ओरसे (पुनीहि) पवित्र करिये (च) और (पवित्रेण) पवित्र (सवेन) ब्रह्मभावसे मुझे पवित्र करिये ॥

भावार्थ—जो लोग अपनेमें ज्ञानयोग और कर्मयोगकी न्यूनता समझते हैं, वे परपात्मासे ज्ञानयोग तथा कर्मयोगकी प्रार्थना करें ॥२५॥

त्रिभिष्ट्वं देव सवितर्वषिष्ठैः सोम धामभिः ।
अग्ने दक्षैः पुनीहि नः ॥२६॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्रिभिः । त्वं । देव । सवितः । वर्षिष्ठैः । सोम । धामभिः ।
अग्ने । दक्षैः । पुनीहि । नः ॥२६॥

पदार्थः—(अग्ने) ज्ञानस्वरूप परमात्मन् ! (सवितः) हे सर्वोत्पादक ! (देव) दिव्यगुणसम्पन्न परमेश्वर ! (त्वम्) त्वम् (त्रिभिः) त्रिभिः (धामभिः) शरीरैः (वर्षिष्ठैः) श्रेष्ठैस्तथा (दक्षैः) दक्षतायुक्तैः (सोम) हे परमात्मन् ! (नः) अस्मान् (पुनीहि) पवित्रय ॥

पदार्थ—(सोम) परमात्मन् ! (अग्ने) हे ज्ञानस्वरूप ! (सवितः) हे सर्वोत्पादक ! (देव) हे दिव्यगुणसम्पन्न परमात्मन् ! (त्वं) आप (त्रिभिः) तीन (धामभिः) शरीरोंसे (वर्षिष्ठैः) जो श्रेष्ठ हैं, तथा (दक्षैः) दक्षतायुक्त हैं, उनसे (नः) हम लोगोंको (पुनीहि) पवित्र करिये ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें सूक्ष्म, स्थूल, और कारण इन तीनों शरीरोंके शुद्धिकी प्रार्थना है। प्रलयकालमें जीवात्मा जब प्रकृतिलीन होकर रहता है, उसका नाम कारणशरीर है । तथा जिसके द्वारा जन्मान्तरको प्राप्त होता है, उसका नाम सूक्ष्मशरीर है। और तीसरा स्थूलशरीर है। इन तीनों शरीरोंकी पवित्रताका उपदेश यहां किया गया है ॥२६॥

पनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु वसवो धिया ।
विश्वे देवाः पुनीत मा जातवेदः पुनीहि मा ॥२७॥
पनंतु । मां । देवज्जनाः । पुनंतु । वसवः । धिया । विश्वे ।
देवाः । पुनीत । मा । जातवेदः । पुनीहि । मा ॥२७॥

पदार्थः—(देवजनाः) विद्वज्जनाः (मां) मामुपदेशेन

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(पुनन्तु) पवित्रयन्तु (वसवः) नैष्ठिका ब्रह्मचारिणः (धिया) स्वीयशुभबुद्धया (पुनन्तु) पवित्रयन्तु (विश्वे देवाः) हे विद्वांसः ! (मां) मां (पुनीत) यूयं पवित्रयत । तथा (जातवेदः) हे जगदीश्वर ! (मा) मां (पुनीहि) पवित्रय ॥

पदार्थ—(देवजनाः) विद्वान् जन (मां) मुझको उपदेश-द्वारा (पुनंतु) पवित्र करें । (वसवः) नैष्ठिक ब्रह्मचारीगण (धिया) अपनी शुभबुद्धि द्वारा (पुनन्तु) पवित्र करें (विश्वेदेवाः) हे विद्वानों ! (मां) मुझको आप लोग (पुनीत) पवित्र करें । तथा (जातवेदः) हे परमात्मन् ! (मा) मुझको (पुनीहि) पवित्र करिये ॥

भावार्थ -इस मंत्रमें परमात्मानें विद्वानोंके उपदेशों द्वारा पवित्रता-का उपदेश दिया है, कि हे जीवो ! तुम अपने विद्वानोंसे तथा ब्रह्मचारि-गणोंसे सदैव सद्बुद्धिका ग्रहण किया करो ॥२७॥

प्र प्यायस्व प्र स्यन्दस्व सोम विश्वेभिरंशुभिः ।
देवेभ्य उत्तमं हविः ॥२८॥

प्र । प्यायस्व । प्र । स्यंदस्व । सोम । विश्वेभिः । अंशुभिः ।
देवेभ्यः । उत्ऽतमं । हविः ॥२८॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन् ! त्वम् (प्रप्यायस्व) मां वर्द्धय । तथा (विश्वेभिरंशुभिः) स्वीयसम्पूर्णभावैर्द्रवीभूय (प्रस्यन्दस्व) कृपालुर्भव । तथा (देवेभ्यः) विद्वद्भ्यः (उत्तमं हविः) सर्वो-त्तमदानरूपभावान् प्रदेहि ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन् । आप (प्रप्यायस्व) हमको वृद्धि-युक्त करें । तथा (विश्वेभिरंशुभिः) अपने सम्पूर्ण भावोंसे द्रवीभूत होकर

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(प्रस्यन्दस्व) कृपायुक्त हों । तथा (देवेभ्यः) विद्वानोंके लिये (उत्तमं हविः) उत्तम दान रूपी भावोंका प्रदान करें ॥

भावार्थ—परमात्मा ही एकमात्र तृप्तिका कारण है । वह अपने ज्ञानके प्रदानसे हमको तृप्त करे ॥२८॥

उप प्रियं पनिप्नतं युवानमाहुतीवृधम् ।
अगन्म बिभ्रतो नमः ॥२९॥

उप । प्रियं । पनिप्नतं । युवानं । आहुतिऽवृधं । अगन्म । बिभ्रतः । नमः ॥२९॥

पदार्थः—(प्रियं) सर्वानन्ददायकं (पनिप्नतं) वेदादिशब्दराश्याविर्भावकं (युवानं) सदैकरसं (आहुतीवृधं) प्रकृत्या महान्तं परमात्मानं (नमः) नम्रतादिभावान् (बिभ्रतः) धारयन्तो वयं (उपागन्म) प्राप्नुमः ॥

पदार्थ—(प्रियं) सबको प्रसन्न करने वाले (पनिप्नतं) वेदादिशब्दराशिके आविर्भावक (युवानं) सदा एकरस (आहुतीवृधं) जो अपनी प्रकृतिरूपी आहुतिसे बृहत् हैं, उक्त गुणसम्पन्न परमात्माको (नमः) नम्रतादिभावोंको (बिभ्रतः) धारण करते हुए हम लोग (उपागन्म) प्राप्त हों ॥

भावार्थ—इस मन्त्रमें परमात्मा नम्रतादि भावोंका उपदेश करता है, कि हे मनुष्यो ! तुम नम्रतादि भावोंको धारण करते हुए, उक्तप्रकारकी प्रार्थनाओंसे मुझको प्राप्त हो ॥ २९ ॥

अलार्य्यस्य परशुर्ननाश तमा पवस्व देव सोम ।
आखुं चिदेव देव सोम ॥३०॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अलाय्यस्य। परशुः। ननाश। तं। आ। पवस्व। देव। सोम। आखुं। चित्। एव। देव। सोम ॥३०॥

पदार्थः—(सोम) हे परमात्मन्! (देव) हे दिव्यगुणयुक्त! (अलाय्यस्य) सर्वत्र व्याप्तशत्रोर्यत् (परशुः) अस्त्रं (तं) तत् (आखुंचित्) सर्वघातकमस्त्रं (ननाश) नाशय। (देव) हे परमात्मन्! (आपवस्व) मां पवित्रय।

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्! (देव) दिव्यगुणसम्पन्न! (अलाय्यस्य) सर्वत्र व्याप्त शत्रुका जो (परशुः) अस्त्र है (तं) उस (आखुंचित्) सर्वघातक अस्त्रको (ननाश) नाश करिये। (देव) हे परमात्मन्! (आपवस्व) आप मुझको पवित्र करें॥

भावार्थ—परमात्मा जिनमें, दैवी सम्पत्तिके गुण समझता है, उनको वृद्धियुक्त करता है, और जिनमें आसुरी भावके अवगुण देखता है, उनका नाश करता है॥३०॥

यः पावमानीरध्येत्यृषिभिः सम्भृतं रसम्।
सर्वं स पूतमश्नाति स्वदितं मातरिश्वना ॥३१॥

यः। पावमानीः। अधिऽएति। ऋषिऽभिः। संऽभृतं। रसं। सर्वं। सः। पूतं। अश्नाति। स्वदितं। मातरिश्वना ॥३१॥

पदार्थः—(यः) योजनः (पावमानीः) परमेश्वरस्तुतिरूपा ऋचः (अध्येति) पठति (सः) स पुरुषः (ऋषिभिः) मन्त्रद्रष्टृभिः (संभृतं) स्पष्टीकृतं (रसं) ब्रह्मानन्दं (अ-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नाति) भुनक्ति "रसोवैसः, रसंह्येवायं लब्ध्वाऽऽनन्दी भवति" इति तै. २।७। अथ च (सर्वं) सम्पूर्णं (मातरिश्वना स्वदितं) वायुना स्वादूकृतं (पूतं) शुद्धं पदार्थमश्नाति ॥

पदार्थ—(यः) जो जन (पावमानीः) परमेश्वरस्तुतिरूप ऋचाओंको (अध्येति) पढ़ता है (सः) वह (ऋषिभिः) मन्त्रद्रष्टाओंसे (संभृतं) स्पष्ट किया हुआ (रसं) ब्रह्मानन्दको (अश्नाति) भोगता है। और (सर्वं) सम्पूर्ण (मातरिश्वना स्वदितं) वायुसे स्वादूकृत (पूतं) पवित्र पदार्थोंको (अश्नाति) भोगता है ॥

भावार्थ—जो लोग परमात्माके पवित्र गुणोंका सहारा लेते हैं, वे ब्रह्मानन्द रसका पान करते हैं। और उनके लिये वायुके पवित्र किये हुए पदार्थ, मधुर रसोंके प्रदाता होते हैं। तात्पर्य यह है, कि वायु फलोंमें एक प्रकारका माधुर्य उत्पन्न करता है। उस माधुर्यके भोक्ता पुण्यात्मा ही हो सकते हैं, अन्य नहीं ॥३१॥

पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभिः सम्भृतं रसम् ।
तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् ॥३२॥१८॥३॥

पावमानीः । यः । अधिऽएति । ऋषिऽभिः । संऽभृतं । रसं । तस्मै । सरस्वती । दुहे । क्षीरं । सर्पिः । मधु । उदकं॥३२॥

पदार्थः—(यः) यो जनः (पावमानीः) जगदीश्वरस्तवनरूपा ऋचः (अध्येति) अधीते (तस्मै) तस्मै (ऋषिभिः) मंत्रदर्शिभिः (सम्भृतं) सम्पादितं (रसं) रसं तथा (क्षीरं-सर्पिर्मधूदकं) दुग्धघृतजलानि (सरस्वती) ब्रह्मविद्या (दुहे) दोग्धि ॥

पदार्थ—(यः) जो जन (पावमानीः) परमेश्वरस्तुतिरूप ऋचाओंको (अध्येति) पढ़ता है (तस्मै) उसके लिये (ऋषिभिः) मंत्रद्रष्टाओंसे

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(सम्भृतं) स्पष्टीकृत (रसं) रसका और (क्षीरं सर्पिर्मधूदकम्) दूध, घी, मधु, और जलका (सरस्वती) ब्रह्मविद्या (दुहे) दोहन करती है ॥

भावार्थ—जो लोग परमात्माके शरणागत होते हैं, उनके लिये मानो (सरस्वती) ब्रह्मविद्या स्वयं दुहने वाली बन कर दूध, घी, मधु और नाना प्रकारके रसोंका दोहन करती है। वा यों कहो, कि माताके-समान (सरस्वती) विद्या नाना प्रकारके रसोंको अपने विज्ञानमय-स्तनोंसे पान कराती है ॥३२॥

इति सप्तषष्ठितमं सूक्तमष्टादशो वर्गश्च समाप्तः ॥

यह ६७ वां सूक्त और १८ वां वर्ग समाप्त हुआ ॥

अथदशर्चस्याष्टषष्ठितमस्य सूक्तस्य—

१–१० वत्सप्रिर्भालन्दन ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः–१,३,६,७ निचृज्जगती । २,४,५,९ जगती । ८ विराड्जगती । १० त्रिष्टुप् ॥ स्वरः–१–९ निषदः । १० धैवतः ॥

अथेश्वरोपासकानां विदुषां गुणा वर्ण्यन्ते ॥

अब ईश्वरके उपासकोंके गुणवर्णन करते हैं ॥

प्र देवमच्छा मधुमन्त इन्दवोऽसिष्यदन्त गाव आ न धेनवः ।
बर्हिषदो वचनावन्त ऊधभिः परिष्कृतमुस्रिया निर्णिजं धिरे ॥१॥

प्र । देवं । अच्छ । मधुऽमंतः । इंदवः । असिस्यदंत ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गावः । आन । धेनवः । बर्हिऽसदः । वचनाऽवंतः । ऊधऽभिः । परिऽस्रुतः । उस्रियाः । निःऽनिजं । धिरे ॥ १ ॥

पदार्थः—(इंदवः) विद्वांसः (मधुमंतः) मधुरोपदेशवन्तः (देवं) परमात्मानं (अच्छ) प्रति (प्रासिष्यदंत) नम्रतयोपगच्छन्ति । (गावोधेनवो न) यथा प्रकाशिका वाण्यः (वचनावन्तः) सदुपदेशवत्यः (बर्हिषदः) प्रतिष्ठिताः (ऊधभिः) ज्ञानामृतधारिण्यः (उस्रियाः) दीप्तिमत्यः (परिश्रुतं) व्याप्तशीलं (निर्णिजं) शुद्धज्ञानं (आधिरे) दधति तथोक्ता विद्वांसोज्ञानं धारयन्ति ॥

पदार्थ—(इंदवः) परम विद्वान् (मधुमंतः) मीठे उपदेश वाले (देवं) परमात्माके (अच्छ) प्रति (प्रासिष्यदंत) नम्रीभूत हो कर जाते हैं । (गावोधेनवोन) जैसे प्रकाश करने वाली वाणियें (वचनावन्तः) सदुपदेश वालीं (बर्हिषदः) प्रतिष्ठा वालीं (ऊधभिः) ज्ञानरूपी अमृतको धारण करने वालीं (उस्रियाः) सुदीप्ति वालीं (परिस्रुतं) व्याप्तशील (निर्णिजं) शुद्ध ज्ञानको (आधिरे) धारण करातीं हैं, इसी प्रकार उक्त विद्वान् ज्ञानको धारण कराते हैं ॥

भवार्थ—परमात्माके मार्गका उपदेश करने वाले विद्वान्, वाग्धेनुके समान सद् ज्ञानका उपदेश करते हैं । जिस प्रकार सद्वाणी सद्ज्ञानको उत्पन्न करती है, इसी प्रकार सम्यग्ज्ञाता विद्वान् सत्का उपदेश करके सच्चे ज्ञानका उपदेश करते हैं ॥ १ ॥

स रोरुवदभि पूर्वा अचिक्रदद्दुपारुहः श्रथयन्त्स्वादते हरिः । तिरः पवित्रं परियन्नुरुग्रयो नि शर्याणि दधते देव आ वरम् ॥ २ ॥

सः । रोरुवत् । अभि । पूर्वाः । अचिक्रदत् । उपऽआरुहः ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रथयन्। स्वादते। हरिः। तिरः। पवित्रं। परिऽयन्। उरु। ज्रयः। नि। शर्याणि। दधते। देवः। आ। वरं॥३॥

पदार्थः—(हरिः) अपगुणापहारकः (उपारुहः) उन्नतिशीलः (सः) पूर्वोक्तोविद्वान् (रारुवत्) बलपूर्वकमुपदिशन् तथा (श्रथयन्) सत्यासत्यं विभेदयन् जिज्ञासुं (स्वादते) संस्करोति। अथच (पूर्वीः) अनादिसिद्धपरमेश्वरस्तुतिं (अभ्यचिक्रदत्) विशालयति। तथा (देवः) दिव्यगुणो विद्वान् (शर्याणि) अज्ञानानि (तिरः) तिरस्कृत्य (पवित्रं) शुद्धज्ञानं (परियन्) प्रकाशयन् (उरु) महान्तं (ज्रयः) कर्मयोगिनं (निदधते) धारयति। अथ च (वरं) वरणीयपदार्थं (आ) (आदधते आददातीतियावत्॥

पदार्थ—(हरिः) दुर्गुण हर करने वाला (उपारुहः) उन्नतिशील (सः) पूर्वोक्त विद्वान् (रारुवत्) बलपूर्वक उपदेश करता हुआ, तथा (श्रथयन्) सत्यासत्यका विभेद करता हुआ, जिज्ञासुको (स्वादते) संस्कारी बनाता है। और (पूर्वीः) अनादिसिद्ध परमात्माकी स्तुतिको (अभ्यचिक्रदत्) विशाल करता है। और (देवः) दिव्यगुणयुक्त विद्वान् (शर्याणि) अज्ञानोंका (तिरः) तिरस्कार करके (पवित्रं) पवित्र ज्ञानको (परियन्) प्रकाश करते हुए (उरु) बड़े (ज्रयः) कर्मयोगीको (निदधते) धारण कराता है। तथा (वरं) वरणीय पदार्थको (आ) (आदधते) देता है॥

भावार्थ—सदुपदेश द्वारा अज्ञानोंको निवृत्त करना पूर्ण विद्वानका ही काम है। पूर्ण विद्वान्के उपदेशसे मनुष्य ज्ञानी और विज्ञानी बनकर मनुष्यजन्मके फलको उपलब्ध करता है॥३॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वि यो ममे यम्या संयती मदः साकंवृधा पयसा पिन्वदक्षिता ।
मही अपारे रजसी विवेविददभिव्रजन्नक्षितं पाज आ ददे ॥३॥

वि । यः । ममे । यम्या । संयती इति संऽयती । मदः ।
साकंऽवृधा । पयसा । पिन्वत् । अक्षिता ।
मही इति । अपारे । इति । रजसी इति विऽवेविदत् ।
अभिऽव्रजन् । अक्षितं । पाजः । आ । ददे ॥

पदार्थः—(यो मदः) योऽानन्दवर्धकः कर्मयोगी (यम्या) युगलस्य (संयती) मिथःसम्बद्धस्य पृथिवीलोकस्य द्युलोकस्य-च ज्ञाने (विममे) उत्पादयति, अथ (च) (साक) सहैव (पयसावृधा) ऐश्वर्येणाभ्युदयंगतानि (अक्षिता) अक्षीणानि द्युलोकज्ञानानि (पिन्वत्) बर्धयति । अथ च पूर्वोक्तोविद्वान् (रजसी) आकर्षणशीले (मही अपारे) पाररहितद्यावा-पृथिव्यौ ज्ञानेन (विवेविदत) व्यक्तयति । तथा (अभिव्रजन्) अप्रतिहतगतिःसन् (अक्षितं पाज आददे) अनश्वरं बलं ददाति ॥

॥ पदार्थ—(यो मदः) जो आनन्दका वर्धक कर्मयोगी (यम्या) युगल (संयती) परस्पर संबद्ध पृथिवीलोक और द्युलोकके ज्ञान-को (विममे) उत्पन्न करता है । और (साक) साथ ही (पयसा वृधा) ऐश्वर्यसे बढ़ा हुआ (अक्षिता) अक्षीण द्युलोक (रजसी) जो आकर्षण-शील है, उसको ज्ञान द्वारा (विवेविदत) व्यक्त करता है । तथा (अभि-व्रजन्) अव्याहत गति होता हुआ (अक्षितं पाज आददे) क्षयरहित बलको देता है ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—कर्मयोगी विद्वान्के उपदेशसे ही मनुष्यको पृथिवीलोक और द्युलोकका ज्ञान होता है। और उसीके सदुपदेशसे अक्षयबल मिलता है ॥३॥

स मातरा विचरन्वाजयन्नपः प्र मेधिरः स्वधया पिन्वते पदम्।
अंशुर्यवेन पिपिशे यतो नृभिः सं जामिभिर्नसते रक्षते शिरः॥४

सः । मातरा । विऽचरन् । वाजयन् । अपः । प्र । मेधिरः । स्वधया । पिन्वते । पदं । अंशुः । यवेन । पिपिशे । यतः । नृऽभिः । सं । जामिऽभिः । नसते । रक्षते । शिरः ॥

पदार्थः—(सः) असौ (मेधिरः) प्राज्ञः कर्मयोगी (मातरा) द्यावापृथिव्योः (विचरन्) परिभ्रमन् तथा (अपः) कर्मयोगस्य (वाजयन्) बलं प्रददन् (पदं) कर्मयोगपदं (स्वधया) अनुष्ठानरूपक्रियया (पिन्वते) पुष्णाति (अंशुः) ज्ञानप्रकाशेन प्रदीप्तो विद्वान् (यवेन) स्वकीयभवाप्ययरयोगेन (पिपिशे) योगाङ्गं दधाति (यतः) यतः स कर्मयोगी (जामिभिर्नृभिः) परस्परसंगत्या गन्तृजिज्ञासुद्वारा (संनसते) स्वकीयकर्तव्यपालनं करोति। अथ च (शिरः) शीर्णान् पतितान्नितियावत् (रक्षते) पवते ॥

पदार्थ—(सः) वह (मेधिरः) प्राज्ञ कर्मयोगी (मातरा) सब जीवोंकी माताके समान द्युलोकमें तथा पृथिवीलोकमें (विचरन्) विचरता हुआ और (अपः) कर्मरूपी योगका (वाजयन्) बल प्रदान करता हुआ (पदं) कर्मयोगके पदको (स्वधया) अनुष्ठानरूप क्रियासे (पिन्वते) पुष्ट करता है। (अंशुः) ज्ञानरूप प्रकाशसे प्रदीप्त विद्वान् (यवेन) अपने भव और अप्ययरूप योगसे (पिपिशे) योगाङ्गको धारण

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करता है । (यतः) जिससे कर्मयोगी (जामिभिर्नृभिः) परस्पर संगतिबंध कर चलने वाले जिज्ञासु द्वारा (संनसते) अपने कर्तव्यका पालन करता है । और (शिरः) पतित पुरुषोंकी (रक्षते) रक्षा करता है ॥

भावार्थ—कर्मयोगीका यह कर्तव्य है, कि वह अकर्मण्यतादोषग्रस्त मनुष्योंमें उद्योग उत्पन्न करके उनमें जागृति उत्पन्न करे ॥४॥

सं दक्षेण मनसा जायते कविर्ऋतस्य गर्भो निहितो यमा परः ।
यूना ह सन्ता प्रथमं वि जज्ञतुर्गुहा हितं जनिम नेममुद्यतम् ॥५॥

सं । दक्षेण । मनसा । जायते । कविः । ऋतस्य । गर्भः । निहितः । यमा । परः । यूना । ह । संता । प्रथमं । वि । जज्ञतुः । गुहा । हितं । जनिम । नेमं । उत्ऽयतं ॥

पदार्थः—स कर्मयोगी (दक्षेण मनसा) समाहितमनसा (ऋतस्य कविः संजायते) सत्यस्य कथनकर्ता भवति । (यमा) परमात्मना स कर्मयोगी (परः) उत्तमः (निहितः) सुरक्षितः (गर्भः) गर्भस्थानीयः कृतः । (यूना संता) कर्मयोगिज्ञानयोगिनावुभावपि कर्मयोगज्ञानयोगौ प्रपूरयंतौ (ह) प्रसिद्धौ (गुहाहितं) अन्तःकरणगुहास्थितं परमात्मानं (प्रथमं) पूर्वं (विजज्ञतुः) विजानीतः । यः परमात्मा (जनिम) सर्वोत्पादकस्तथा (नेमं) सर्वनियामकोस्ति । अथच (उद्यतं) सर्वोपरि बलरूपोस्ति ॥

पदार्थ—वह कर्मयोगी (दक्षेण मनसा) समाहित मनसे (ऋतस्य कविः संजायते) सचाईका कथन करने वाला होता है । (यमा) दैवने उसे (परः) सर्वोपरि (निहितः) सुरक्षित (गर्भः) गर्भस्थानीय बनाया ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(यूना संता) कर्मयोग तथा ज्ञानयोगको पूर्ण करते हुए ज्ञानयोगी और कर्मयोगी यह (ह) प्रसिद्ध दोनों (गुहाहितं) अन्तःकरणरूपी गुहामें निहित परमात्माको (प्रथमं) सबसे पहिले (विजज्ञतुः) जानते हैं। जो परमात्मा (जनिम) सबकी उत्पत्तिका स्थान तथा (नेमं) सबको नियममें रखने वाला और (उद्यतं) सर्वोपरि बलस्वरूप है ॥

भावार्थ—जो परमात्मा सूक्ष्मरूपसे सबके अन्तःकरणमें विराजमान है, उसको कर्मयोगी और ज्ञानयोगी ही सुलभतासे लाभ कर सकते हैं, अन्य नहीं ॥५॥

मन्द्रस्य रूपं विविदुर्मनीषिणः श्येनो यदन्धो अभरत्परावतः ।
तं मर्जयन्त सुवृधं नदीषूँ उशन्तमंशुं परियन्तमृग्मियम् ॥६॥

मंद्रस्य । रूपं । विविदुः । मनीषिणः । श्येनः । यत् । अंधः । अभरत् । पराऽवतः । तं । मर्जयंत । सुऽवृधं । नदीषु । आ । उशंतं । अंशुं । परिऽयंतं । ऋग्मियं ॥६॥

पदार्थः—(मंद्रस्य रूपं) परमात्मनोरूपं (मनीषिणः) मेधाविनः (विविदुः) विजानन्ति । यः परमेश्वरः (परावतः) समस्तलोकलोकान्तराणां (अभरत्) उत्पादकः स्थापकोनाशकश्चास्ति । अथ च (श्येनः) योविद्युदिव (यदंधः) सर्वव्यापकोस्ति (तं) तं (ऋग्मियं) स्तुत्यं (अंशुं) प्रकाशरूपं (सुवृधं) बर्धमानं (उशंतं) कान्तिमन्तं (परियंतं) सर्वत्र व्याप्तं परमात्मानं (नदीषु) वेदवाणीभिः (आमर्जयन्त) वयं साक्षात्कुर्मः ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(मंद्रस्य) आनन्दस्वरूप परमात्माके (रूपं) रूपको (मनीषिणः) मेधावी लोग (विविदुः) जानते हैं । जो परमात्मा (परावतः) सब लोक लोकान्तरोंकी (अभरत्) उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करने वाला है । और (श्येनः) जो विद्युत्के समान (यदंधः) सर्वव्यापक है, (तं) उस (ऋग्मियं) स्तवनीय (अंशुं) प्रकाशस्वरूप (सुवृधं) बढ़े हुए (उशंतं) कान्ति वाले (परियंतं) सर्वव्यापक परमात्माका हम लोग (नदीषु) वेदवाणीयोंसे (आमर्जयन्त) साक्षात्कार करते हैं ।

भावार्थ—आनन्दमय परमात्माका साक्षात्कार कर्मयोग और ज्ञानयोग द्वारा संस्कृत बुद्धिसे ही हो सकता है, अन्यथा नहीं । इसी अभिप्रायसे कहा है, कि "दृश्यते त्वग्रया बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः" कि उसको सूक्ष्मबुद्धिसे सूक्ष्मदर्शी ही देख सकते हैं अन्य नहीं ॥६॥

अथ प्रसङ्गसंगत्या परमात्मप्राप्तिर्वर्ण्यते ।

अब प्रसंगसंगतिसे परमात्मप्राप्तिका वर्णन करते हैं ।

त्वां मृजन्ति दश योषणः सुतं सोम ऋषिभिर्मतिभिर्धीतिभिर्हितं
अव्यो वारेभिरुत देवहूतिभिर्नृभिर्यतो वाजमा दर्षि सातये ॥७॥

त्वां । मृजंति । दश । योषणः । सुतं । सोम । ऋषिऽभिः ।
मतिऽभिः । धीतिऽभिः । हितं । अव्यः । वारेभिः । उत ।
देवहूतिऽभिः । नृऽभिः । यतः । वाजं । आ । दर्षि । सातये ॥७॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (सुतं) स्वयंसिद्धं (त्वां) भवन्तं (दश योषणः) दश धृत्यादिधर्मसाधनानि (मृजन्ति) साक्षात्कुर्वन्ति । (सोम) हे जगदीश ! त्वम् (मतिभिः) ज्ञानयोगिभिस्तथा (धीतिभिः)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कर्मयोगिभिः (ऋषिभिः) तत्त्वदर्शिभिः (हितं) साक्षात्कृतोसि। तथा त्वम् (अव्ययः) सर्वरक्षकोसि। (उत) अथ च (वारेभिर्देवहूतिभिर्नृभिः) वरणीयज्ञानयोगिकर्मयोगिमनुष्यद्वारा (सातये) अज्ञाननिवृत्तये (वाजं) बलं (यतः) यस्मात्कारणात् (आदर्षि) ददास्यतस्सर्वोपासनीयोसि॥

पदार्थ—हे परमात्मन्! (सुतं) स्वयंसिद्ध (त्वां) तुमको (दश योषणः) धृत्यादि धर्मके दस साधन (मृजन्ति) साक्षात्कार करते हैं। (सोम) हे परमात्मन्! तुम (अतिभिः) ज्ञानयोगी तथा (धीतिभिः) कर्मयोगी (ऋषिभिः) ऋषियोंसे (हितं) साक्षात्कार किये जाते हो। तथा तुम (अव्ययः) सर्वरक्षक हो। (उत) और (वारेभिर्देवहूतिभिर्नृभिः) सर्वोपरि वरणीय योगी मनुष्यों द्वारा (सातये) अज्ञाननिवृत्तिके लिये (वाजं) बलको (यतः) जिस हेतु (आदर्षि) देते हो अतः तुम सर्वोपरि उपासनीय हो॥

भावार्थ—परमात्मा ज्ञानयोगी तथा कर्मयोगियोंको अनन्त बल देता है। इस लिये मनुष्यको ज्ञानयोगी तथा कर्मयोगी अवश्य बनना चाहिये॥७॥

परिप्रयन्तं वय्यं सुषंसदं सोमं मनीषा अभ्यनूषत स्तुभः।
यो धारया मधुमाँ ऊर्मिणा दिव इयर्ति वाचं रयिषाळमर्त्यः॥८॥

परिऽप्रयंतं। वय्यं। सुऽसंसदं। सोमं। मनीषाः। अभि। अनूषत। स्तुभः। यः। धारया। मधुऽमान्। ऊर्मिणा। दिवः। इयर्ति। वाचं। रयिषाट्। अमर्त्यः॥८॥

पदार्थः—(मनीषाः स्तुभः) शुभबुद्धयः (परिप्रियन्तं)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सर्वैः प्राप्यं (वन्द्यं) विद्वद्भिः काम्यमानं (सुषंसदं) सुस्थितिमन्तं (सोमं) परमात्मानं (अभ्यनूषत) वर्णयन्ति। (यो धारया) यस्त्वं स्वकीयानन्दामृतधारया (मधुमान्) आनन्दमयोसि। तथा (ऊर्मिणा) आमोदतरङ्गद्वारा (दिवः) द्युलोकतः (वाचं) वेदवाणीं (इयर्ति) ददाति, स परमेश्वरः (रयिषाट्) सकलैश्वर्यदायकस्तथा (अमर्त्यः) मरणधर्मरहितोस्ति॥

पदार्थ—(मनीषाः स्तुभः) शुभबुद्धियें (परिभियन्तं) सबको प्राप्त होने वाले (वन्द्यं) विद्वानोंसे काम्यमान (सुषंसदं) शोभन स्थिति वाले (सोमं) परमात्माको (अभ्यनूषत) वर्णन करतीं हैं। (यो धारया) जो अपने अमृतकी धारासे (मधुमान्) आनन्दमय है, तथा (ऊर्मिणा) आनन्दकी लहर द्वारा (दिवः) द्युलोकसे (वाचं) वेदवाणीको (इयर्ति) देता है, वह परमात्मा (रयिषाट्) समस्तैश्वर्यदाता तथा (अमर्त्यः) मरणधर्मरहित है।

भावार्थ—परमात्मा अपनी दिव्यशक्तिसे पवित्र वेदवाणीका प्रकाश करता है। और स्वयं अमरण धर्मा होकर जगज्जन्मादि का हेतु है॥८॥

अयं दिव इयर्ति विश्वमा रजः सोमः पुनानः कलशेषु सीदति।
अद्भिर्गोभिर्मृज्यते अद्रिभिः सुतः पुनान इन्दुर्वरिवो विदत्प्रियं
अयं। दिवः। इयर्ति। विश्वं। आ। रजः। सोमः। पुनानः। कलशेषु। सीदति। अद्भिः। गोभिः। मृज्यते। अद्रिऽभिः। सुतः। पुनानः। इंदुः। वरिवः। विदत्। प्रियं॥९॥

पदार्थः—(अयं सोमः) असौ जगज्जनकः परमात्मा (दिवः) द्युलोकस्य (विश्वं) सकलं (रजः) ऐश्वर्यं (इयर्ति)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ददाति। अथच (कलशेषु) अखिलान्तःकरणेषु (पुनानः) पवित्रयन् (आसीदति) विराजते। तथा (अद्रिभिः) इन्द्रियवृत्तिभिः (अद्भिर्गोभिः) ज्ञानयोगकर्मयोगाभ्यां (मृज्यते) साक्षात्क्रियते। अथच (सुतः) स्वयंसिद्धः (इन्दुः) परमैश्वर्यवान् (पुनानः) पविता परमेश्वरः (प्रियं) प्रियकारकं (वरिवः) वरणीयमैश्वर्यं ज्ञानयोगिभ्यः कर्मयोगिभ्यश्च (विदत्) ददाति॥

पदार्थ—(अयं सोमः) यह परमात्मा (दिवः) द्युलोकके (विश्वं) सम्पूर्ण (रजः) ऐश्वर्यको (इयर्ति) देताहै। और (कलशेषु) समस्त अन्तःकरणोंमें (पुनानः) पवित्र करता हुआ (आसीदति) विराजमान है। तथा (अद्रिभिः) इन्द्रियवृत्तियोंसे (अद्भिर्गोभिः) ज्ञान और कर्मों द्वारा (मृज्यते) साक्षात्कार किया जाता है। और (सुतः) स्वयंसिद्ध (इन्दुः) परमैश्वर्यवान् (पुनानः) पवित्रकर्ता परमात्मा (प्रियं) प्रियकारक (वरिवः) वरणीय ऐश्वर्यको ज्ञानयोगी और कर्मयोगियोंको (विदत्) देता है॥

भावार्थ—ज्ञानयोगी तथा कर्मयोगी को परमात्मा अनन्तप्रकारके ऐश्वर्य देता है॥९॥

एवा नः सोम परिषिच्यमानो वयो दधच्चित्रतमं पवस्व।
अद्देषे द्यावापृथिवी हुवेम देवा धत्त रयिमस्मे सुवीरम्॥१०॥

एव। नः। सोम। परिऽसिच्यमानः। वयः। दधत्। चित्रऽतमं। पवस्व। अद्देषे इति। द्यावापृथिवी इति। हुवेम। देवाः। धत्त। रयिं। अस्मे इति। सुऽवीरं॥१०॥

पदार्थः—(सोम) चराचरोत्पादक परमात्मन्! (परि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विच्यमानः) ज्ञानयोगकर्मयोगाभ्यां साक्षात्कृतोभवान् (नः) अस्मान् (चित्रतमं) अनेकविधं (वयः) बलं (दधदेव) धारयन् (पवस्व) पवित्रयतु। तथा (अद्वेषे द्यावापृथिवी) द्वेषरहितस्य द्युलोकपृथिवीलोकस्य (हुवेम) प्रार्थनां कुर्मः। अथच (देवाः) दिव्यगुणसम्पन्ना विद्वांसः (अस्मे) अस्मासु (सुवीरं रयिं) वीरयुक्तमैश्वर्यं (धत्त) धारयंतु॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्! (परिषिच्यमानः) ज्ञानयोग और कर्मयोगसे साक्षात्कृत आप (नः) हम लोगोंको (चित्रतमं) नानाविध (वयः) बलको (दधत् एव) अवश्य धारण कराते हुए (पवस्व) पवित्र करें। तथा (अद्वेषे द्यावापृथिवी) द्युलोक और पृथिवीलोकको द्वेषसे रहित होनेकी (हुवेम) हम लोग प्रार्थना करते हैं। और (देवाः) दिव्यगुणसम्पन्न विद्वान् (अस्मे) हम लोगोंमें (सुवीरं रयिं) सुन्दरवीरों वाले ऐश्वर्यको (धत्त) धारण करायें॥

भावार्थ—जो लोग कर्मयोगी और ज्ञानयोगियोंकी सङ्गतिमें रहते हैं, उनके लिये परमात्मा नानाविध ऐश्वर्योंको देता है। और द्युलोक और पृथिवीलोक उनके द्वेषियोंसे सर्वथा रहित हो जाता है। अर्थात् वे मित्रताकी दृष्टिसे सबको देखते हैं॥ १०॥

इत्यष्टषष्टितमं सूक्तं विंशोवर्गश्च समाप्तः।

यह ६८ वां सूक्त और २० वां वर्ग समाप्त हुआ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ दशर्चस्यैकोनसप्ततितमस्य सूक्तस्य—

१–१० हिरण्यस्तूप ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता॥
छन्दः—१,५ पादनिचृज्जगती। २—४, ६
जगती। ७, ८ निचृज्जगती। ९
निचृत्त्रिष्टुप्। १० त्रिष्टुप्॥
स्वरः—१—८ निषादः।
९, १० गान्धारः॥

अथेश्वरसाक्षात्कारसाधनानि निरूप्यंते—

अब ईश्वरके साक्षात्कारके साधनोंका निरूपण करते हैं।

इषुर्न धन्वन्प्रति धीयते मतिर्वत्सो न मातुरुप सर्ज्यूधनि।
उरुधारेव दुहे अग्र आयत्यस्य व्रतेष्वपि सोम इष्यते॥१॥
इषुः। न। धन्वन्। प्रति। धीयते। मतिः। वत्सः।
न। मातुः। उप। सर्जि। ऊधनि। उरुधाराऽइव। दुहे।
अग्रे। आऽयती। अस्य। व्रतेषु। अपि। सोमः। इष्यते।

पदार्थः—(धन्वन्) धनुषि (न) यथा (इषुः) बाणः (प्रतिधीयते) संधीयते तथा हे जिज्ञासो! भवतापीश्वरविषये (मतिः) बुद्धिः योज्या। अथ च (न) यथा (वत्सः) गोवत्सः (मातुः) गोः (ऊधनि) पयोधारके (उपसर्जि) सृष्टः तथा त्वमप्युपासनार्थं सृष्टः। अथ च (अस्य) जिज्ञासोः (व्रतेषु) सत्यादिव्रतेषु (सोमः) परमात्मा। (इष्यते) उपास्यत्वेनेष्टः। वत्सस्य

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(अग्रे) पुरतः (आयती) उपस्थिता (उरुधारेव) गौः । दुहे) यथा दुह्यते तथा सन्निहितः परमेश्वरः सर्वान्कामान्ददीत्यर्थः ॥

पदार्थ—(धन्वन्) धनुषमें (न) जैसे (इषुः) बाण (प्रतिधीयते) रक्खे जाते हैं उसी प्रकार हे जिज्ञासो ! तुमको ईश्वरमें (मतिः) बुद्धिको लगाना चाहिये और (न) जैसे (वत्सः) बछड़ा (मातुः) गायके (ऊधनि) स्तनों के पानके लिये (उपसर्जे) रचा गया है उसी प्रकार तुम भी ईश्वरकी उपासनाके लिये रचे गये हो । और (अस्य) इस जिज्ञासुके (व्रतेषु) सत्यादि व्रतोंमें (सोमः) परमात्मा (इष्यते) उपास्य रूपसे कहा गया है । (वत्सस्य) बछड़ेके (अग्रे) आगे (आयती) उपस्थित (उरुधारेव) गौ (दुहे) जैसे दुही जाती है, उसी प्रकार सन्निहित परमात्मा सब अभीष्टोंका प्रदान करता है ॥

भावार्थ—जिस प्रकार धन्वी लक्ष्यभेदन करने वाला मनुष्य इतस्ततः वृत्तियोंको रोक कर एकमात्र अपने लक्ष्यमें वृत्ति लगाता है, इसी प्रकार परमात्मोपासकको चाहिये, कि वे सब ओरसे वृत्तिको रोक कर एकमात्र परमात्माकी उपासना करें ॥१॥

उपो मतिः पृच्यते सिच्यते मधु मन्द्राजनी चोदतेअन्तरासनि ।
पवमानः सन्तनिः प्रग्नतामिव मधुमान्द्रप्सः परि वारमर्षति ॥२

उपो । इति । मतिः । पृच्यते । सिच्यते । मधु । मन्द्रऽअजनी । चोदते । अंतः । आसनि । पवमानः । संऽतनिः । प्रग्नतांऽइव । मधुमान् । द्रप्सः । परि । वारं । अर्षति ॥२॥

पदार्थः—(पवमानः) सर्वपावकः परमात्मा (प्रग्नतां) शूराणां (संतनिरिव) शरा इव रुद्ररूपोस्ति । अथ च सज्जनेभ्यः (द्रप्सः) गतिशीलः परमेश्वरः (मधुमान्) मधु-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इव मधुरोस्ति, शान्तिप्रद इति यावत्। (वारम्) योहि परमात्मनोभक्तोजनोस्ति तस्मै (पर्यषति) सर्वथा प्राप्नोति। अथ च (अन्तरासनि) भक्तजनानामन्तःकरणेषु (मन्द्राजनि) आह्लादकारिणी (मतिः) बुद्धिः (चोदते) उत्पद्यते येन (मधु सिच्यते) आनन्दवृष्टिः क्रियते॥

पदार्थ—(पवमानः) सबको पवित्र करने वाला परमात्मा (मघवताम्) शूरवीरोंके (सन्तानः) शरोंके (इव) समान रुद्र रूप है। और साधु पुरुषोंके लिये (द्रप्सः) गतिशील परमात्मा (मधुमान्) मधुके समान मीठा है। अर्थात् शान्तिप्रद है। (वारम्) जो उसका कृपापात्र भक्त जन है उसको (पर्यषति) सब प्रकारसे प्राप्त होता है। और (अन्तरासनि) भक्त पुरुषोंके अन्तःकरणमें (मन्द्राजनि) आह्लाद उत्पन्न करने वाली (मतिः) बुद्धि (चोदते) उत्पन्न होती है। जिससे (मधु सिच्यते) आनन्दकी वृष्टि की जाती है।

भावार्थ—जो पुरुष शान्ति भावसे परमात्माके नियमानुकूल चलते हैं, परमात्मा उन्हें शान्ति रूपसे उनके कर्मानुकूल फल देता है। और जो परमात्मनियमोंका उल्लंघन करते हैं, उनके लिये परमात्मा दण्ड देता है। इसी अभिप्रायसे यहां शूरवीरोंके बाणोंके समान परमात्माको कथन किया गया है। जैसा कि "महद्भयं वज्रमुद्यतम्" उठे हुए वज्रकी तरह परमात्मा भयप्रद है॥२॥

अव्ये वधूयुः पवते परि त्वचि श्रथ्नीते नप्तीरदितेऋतं यते।
हरिरक्रान्यजतःसंयतो मदोनृम्णा शिशानो महिषो न शोभते॥३॥

अव्ये। वधूऽयुः। पवते। परि। त्वचि। श्रथ्नीते। नप्तीः। आदितेः। ऋतं। यते। हरिः। अक्रान्। यजतः। संऽयतः। मदः। नृम्णा। शिशानः। महिषः। न। शोभते॥३॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(वधूयुः) प्रकृतिस्वामी (हरिः) परमात्मा (अक्रान्) दुष्टानतिक्रामति । (यजतः संयतः) संयमिने यज्ञकर्त्रे (मदः) आनन्ददायकोस्ति। (नृम्णा) बलस्वरूपस्तथा (शिशानः) सर्वगतोस्ति। तथा (महिषोन) अत्यन्ततेजस्वीव विराजितोस्ति स परमात्मा (अदितेः) पृथिव्यादितत्वस्य (ऋतं यते) तत्वज्ञस्य (अव्ये) रक्षकोस्ति (त्वचि) तस्यान्तःकरणं (परिपवते) पवित्रो-विराजते। अथ च (नक्षीः) तेषां सन्ततीः (अश्नीते) सफलयति ॥

पदार्थ—(वधूयुः) प्रकृतिका स्वामी (हरिः) परमात्मा (अक्रान्) दुष्टोंको अतिक्रमण करता है । (यजतः) याग करने वाला जो (संयतः) संयमी पुरुष है (मदः) उसको आह्लाद उत्पन्न करने वाला है । (नृम्णा) बलस्वरूप है तथा (शिशानः) सर्वगत है (महिषः) और अत्यन्त तेजस्वीके (न) समान विराजमान है । वह परमात्मा (अदितेः) पृथिव्यादि तत्वों-के (ऋतंयते) तत्वको जानने वाले पुरुषके लिये (अव्यः) जो रक्षा-करने वाला है (त्वचि) उसके अन्तःकरणमें (परिपवते) सब ओरसे विराजमान होता है । तथा (नक्षीः) उनकी सन्ततियोंको (अश्नीते) सफल करता है ॥

भावार्थ—जो पुरुष संयमी बन कर निष्काम यज्ञ करते हैं, उन-पुरुषोंके लिये परमात्मा शुभ संन्तानें और शुभ फलोंको उत्पन्न करता है ॥३॥

उक्षा मिमाति प्रति यन्ति धेनवो देवस्य देवीरुप यन्ति निष्कृतं
अत्यक्रमीदर्जुनं वारमव्ययमत्कं न निक्तं परि सोमो अव्यत ॥४॥

उक्षा । मिमाति । प्रति । यंति । धेनवः । देवस्य । देवीः ।
उप । यंति । निःऽकृतं । अति । अक्रमीत् । अर्जुनं । वारं ।
अव्ययं । अत्कं । न । निक्तं । परि । सोमः । अव्यत ॥४॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(उक्षा) ब्रह्मचर्यादिबलसम्पन्नः पुरुष एव (मिमाति) सर्वज्ञोभवति। तं (निष्कृतं) परिष्कृतं पुरुषं (धेनवः) इन्द्रियाणि (प्रतियन्ति) प्राप्नुवन्ति। (देवस्य-देवी) परमात्मनोदिव्यशक्तयः (उपयन्ति) तमेव प्राप्नुवन्ति। स परमात्मैव (अर्जुनं) वीरयोद्धृन् (अत्यक्रमीत्) अतिक्रामति। (वारं) तं सर्ववरणीयं (अव्ययं) इन्द्रियविकाररहितं (अत्कं न) वर्मेव (निक्तं) यशसोज्वलं (सोमः) परमात्मा (पर्यव्यत) परितोरक्षति॥

पदार्थ—(उक्षा) ब्रह्मचर्यादि बलसम्पन्न पुरुष ही (मिमाति) सर्वज्ञाता हो सकता है। उस (निष्कृतं) परिस्कृत पुरुषको (धेनवः) इन्द्रियें (प्रतियन्ति) प्राप्त होतीं हैं। (देवस्य देवी) दिव्य परमात्माकी दिव्यशक्तियें (उपयन्ति) उसीको प्राप्त होतीं हैं। वही (अर्जुनं) बड़े बड़े योद्धाओंको (अत्यक्रमीत्) अतिक्रमण करता है। (वारं) उस सर्ववरणीय (अव्ययं) इन्द्रियविकाररहित (अत्कं न) कवचकी तरह (निक्तं) यशसे उज्वलको (सोमः) परमात्मा (पर्यव्यत) चारो ओरसे रक्षा करता है॥४॥

भावार्थ—जो पुरुष ब्रह्मचारी बनकर शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक तीनों प्रकारके बल अपनेमें उत्पन्न करता है, वह परमात्माके सामर्थ्यका पात्र होता है॥४॥

अमृक्तेन रुशता वाससा हरिरमर्त्यो निर्णिजानः परि व्यत।
दिवस्पृष्ठं बर्हणा निर्णिजे कृतोपस्तरणं चम्वोर्नि भस्मयं॥५।२१।
अमृक्तेन। रुशता। वाससा। हरिः। अमर्त्यः। निःऽनिजानः।
परि। व्यत। दिवः। पृष्ठं। बर्हणा। निःऽनिजे। कृत।
उपऽस्तरणं। चम्वोः। नि। भस्मयं॥५॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(अमर्त्योहरिः) मरणधर्मरहितः परमात्मा तथा (निर्णिजानः) शुद्धः (अमृक्तेन रुशता) स्वकीयस्वाभाविकतेजसा (वाससा) स्वशक्तिरूपाच्छादनेन (दिवस्पृष्ठं) द्युलोकपृष्ठं यत् (चम्बोर्नभस्मयम्) द्यावापृथिव्योः (कृतोपस्करणम्) परिकल्पितान्तरिक्षरूपोपस्करणम् तत् (बर्हणा) स्वीयप्रकृतिपुच्छेन (निर्णिजे) पुष्णाति। अथ च (परिव्यत) ब्रह्माण्डमिमं सर्वतआच्छादयति ॥

पदार्थः—(अमर्त्योहरिः) अमरणधर्मा परमात्मा तथा (निर्णिजानः) शुद्ध (अमृक्तेन रुशता) अपने स्वाभाविक तेजसे (वाससा) अपनी शक्तिरूपी आच्छादन द्वारा (दिवस्पृष्ठं) द्युलोकके पृष्ठको, जिसमें (चम्बोर्नभस्मयम्) द्युलोक और पृथिवीलोककी (कृतोपस्करणम्) अन्तरिक्षरूपी बिछौना है, उसको (बर्हणा) अपनी प्रकृतिरूपी पुच्छसे (निर्णिजे) पुष्ट करता है। और (परिव्यत) सब ओरसे इस ब्रह्माण्डको आच्छादित करता है ॥

भावार्थ—अजरामरादिभावयुक्त परमात्मा अपने प्रकृतिरूपी बर्हसे सब संसारको आच्छादित किये हुए हैं ॥५॥

सूर्यस्येव रश्मयो द्रावयित्नवो मत्सरासः प्रसुपः साकमीरते।
तन्तुं ततं परि सर्गास आशवो नेन्द्रादृते पवते धाम किं चन॥६॥

सूर्यस्याऽइव । रश्मयः । द्रवयित्नवः । मत्सरासः । प्रऽसुपः । साकं । ईरते । तंतुं । ततं । परि । सर्गासः । आशवः । न । इंद्रात् । ऋते । पवते । धाम । किं । चन ॥६॥

पदार्थः—(मत्सरासः) सर्वाह्लादकः (प्रसुपः) सर्वाधार-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रूपः परमात्मा (ततं तंतुं) विस्तृतप्रकृतितन्तुना (साकं) सह (ईरते) गच्छति। ततः (आशवः) गत्वर्यः (सर्गासः) सृष्टयः (सूर्यस्य रश्मय इव) रविकिरणा इव (द्रावयित्नवः) स्यन्दनशीला उत्पद्यन्ते। पूर्वोक्तः परमात्मा (इन्द्राद्ऋते) उद्योगिनोविना (किंचन धाम) अन्यदीयान्तःकरणं (न पवते) न पवित्रयति ॥

पदार्थ—(मत्सरासः) सर्वाह्लादक (प्रसुपः) सबका निवासस्थान परमात्मा (ततं तंतुं) विस्तृत प्रकृतिरूप तन्तुके (साकं) साथ (ईरते) गति करता है। उससे (आशवः) गमनशील (सर्गासः) सृष्टियें (सूर्यस्य रश्मय इव) सूर्यकी किरणोंके समान (द्रावयित्नवः) क्षरणशील उत्पन्न होती हैं। उक्त परमात्मा (इन्द्राद्ऋते) उद्योगीके अतिरिक्त (किंचन धाम) अन्य किसीके अन्तःकरणको (न पवते) नहीं पवित्र करता है ॥

भावार्थ—उक्तगुणसम्पन्न परमात्माके द्वारा सूर्यकी रश्मियोंके समान अनन्त प्रकारकी सृष्टियें उत्पन्न होतीं हैं ॥६॥

सिन्धोरिव प्रवणे निम्न आशवो वृषच्युता मदासो गातुमाशत।
शं नो निवेशे द्विपदे चतुष्पदेऽस्मे वाजाः सोम तिष्ठंतु कृष्टयः॥७॥
सिंधोःऽइव। प्रवणे। निम्ने। आशवः। वृषऽच्युताः। मदासः।
गातुं। आशत। शं। नः। निऽवेशे। द्विऽपदे। चतुःऽपदे।
अस्मे इति। वाजाः। सोम। तिष्ठंतु। कृष्टयः ॥७॥

पदार्थः—(सोम) हे जगदीश्वर! त्वं (अस्मे) अस्माकं (निवेशे) स्थितौ (नो द्विपदे चतुष्पदे) अस्मत्पशुमनुष्यादीनां (शं) कल्याणं कुरुष्व। तथा मदीयाः (कृष्टयः) बुद्धयः (तिष्ठंतु) शुभविषयिण्योभवन्तु। (मदासः) आनन्दयुतं (आशवः)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

व्यापकं भवद्यशः (गातुं) उपगीय एवं प्रकारेण जिज्ञासवस्तवरूपे (आशत) लीना भवन्तु। यथा (सिन्धोरिव) समुद्रस्य (निम्न प्रवणे) निम्नप्रवाहे (वृषच्युताः) वेगवत्योनद्योमिलन्ति, तद्वत् ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्! आप (अस्मे) हमारी (निवेशे) स्थितिमें (नः) हमारे (द्विपदे चतुष्पदे) मनुष्य तथा पशुओंके (शं) कल्याणकारी हों। तथा हमारी (कृष्टयः) बुद्धियें (तिष्ठन्तु) शुभ हों। (मदासः) आनन्दमय (आशवः) व्यापक आपके यशको (गातुं) गानकर इस प्रकार जिज्ञासु लोग आपके स्वरूपमें (आशत) लीन हों, जैसे (सिन्धोरिव) समुद्रके (प्रवणे निम्ने) निम्न प्रवाहमें (वृषच्युताः) वेगसे-बहने वालीं नदियें मिलतीं हैं ॥

भावार्थ—परमात्मा करुणासिन्धु है। जिस प्रकार छुद्र नदियाँ समुद्रमें मिलकर महासागर हो जातीं हैं, इसी प्रकार उक्त परमात्माको मिल कर उपासक महत्वको धारण करता है ॥७॥

आ नः पवस्व वसुमद्धिरण्यवदश्वावद्गोमद्यवमत्सुवीर्यम् ।
यूयं हि सोम पितरो मम स्थन दिवो मूर्धानः प्रस्थिता वयस्कृतः॥९

आ । नः । पवस्व । वसुऽमत् । हिरण्यऽवत् । अश्वऽवत् । गोऽमत् । यवऽमत् । सुऽवीर्यं । यूयं । हि । सोम । पितरः । मम । स्थन । दिवः । मूर्धानः । प्रऽस्थिताः । वयःऽकृतः ॥

पदार्थः—(सोम) हे जगदीश! (वसुमत्) ऐश्वर्यसम्पन्नः (हिरण्यवत्) स्वर्णादिधनस्वामी (गोमत्) गवाद्यैश्वर्यवान् (अश्ववत्) विद्युदादिशक्तेरीश्वरः (यवमत्) अन्नधनाद्यैश्वर्ययुक्तस्त्वम् (सुवीर्यं) सुपराक्रमं (नः) अस्मभ्यं (आपवस्व) परितोदेहि। (यूयं) भवान्-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(हि) खलु (मम पितरः स्थन) अस्मत्पालनकर्ता भवतु। अथ च (वयस्कृतः) ऐश्वर्यदायकोभवान् (दिवः) द्युलोकस्य (मूर्धानः) मुखरूपः (प्रस्थिताः) विराजमानोस्ति ॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्! (वसुमत्) ऐश्वर्यसम्पन्न (हिरण्यवत्) स्वर्णादिधनके स्वामी (गोमत्) गवाद्यैश्वर्य वाले (अश्ववत्) विद्युदादिशक्तियोंके स्वामी (यवमत्) अन्नधनाद्यैश्वर्ययुक्त आप (सुवीर्यं) सुन्दरपराक्रमको (नः) हम लोगोंको (आपवस्व) सब ओरसे दें। (यूयं) आप (हि) निश्चय करके (मम) मेरे (पितरः स्थन) पालन करने वाले हों। और (वयस्कृतः) ऐश्वर्यके देने वाले आप (दिवः) द्युलोकके (मूर्धानः) मुखरूप (प्रस्थिताः) विराजमान हैं ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें परमात्मासे ऐश्वर्यकी प्रार्थना की गई है॥८॥

एते सोमाः पवमानास इन्द्रं रथा इव प्र ययुः सातिमच्छ।
सुताः पवित्रमति यन्त्यव्यं हित्वी वन्निं हरितो वृष्टिमच्छ॥९॥
एते। सोमाः। पवमानासः। इंद्रं। रथाःऽइव। प्र। ययुः।
सातिं। अच्छ। सुताः। पवित्रं। अति। यंति। अव्यं।
हित्वी। वन्निं। हरितः। वृष्टिं। अच्छ॥

पदार्थः—(पवमानासः) पावकाः (एते) इमे (सुताः) संस्कृताः (सोमाः) सौम्यस्वभावाः (रथाइव) रणे महारथिन इव (पवित्रं) पूतं (सातिमच्छ) संग्रामाभिमुखगं (इन्द्रं) कर्मयोगिनं (प्रययुः) प्राप्नुवन्ति। उक्ताः स्वभावाः (हरितः) पापान्हरन्तः (अव्यं) कार्तयं (अतियन्ति) दूरीकुर्वन्ति। अथ च (वन्निं) जरां (हित्वी) प्रणश्य (वृष्टिं) अमोदवृष्टिं (अच्छ) ददन्ते ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(पवमानासः) पवित्र करने वाले (एते) ये (सुताः) संस्कृत (सोमाः) सौम्यस्वभाव (रथाइव) संग्राममें महारथीके समान (पवित्रं) पवित्र (सातिमच्छ) संग्रामके अभिमुख जाने वाले (इन्द्रं) कर्मयोगीको (प्रययुः) प्राप्त हों। उक्त स्वभाव (हरितः) पापोंको हरण करते हुए (अव्यं) कायरताको (अतियंति) दूर करते हैं। और (वन्द्रिं) जराका (हित्वी) नाश करके (वृष्टिं) आनन्दकी वृष्टिको (अच्छ) देते हैं ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें शीलकी प्रार्थना है। जिस शुभ शीलसे मनुष्य ऐश्वर्यसम्पन्न होता है ॥ ९ ॥

इन्दविन्द्राय बृहते पवस्व सुमृळीको अनवद्यो रिशादाः ।
भरा चन्द्राणि गृणते वसूनि देवैर्द्यावापृथिवी प्रावतं नः ।१०।२२।

इन्दो इति । इन्द्राय । बृहते । पवस्व । सुऽमृळीकः । अनवद्यः । रिशादाः । भर । चन्द्राणि । गृणते । वसूनि । देवैः । द्यावापृथिवी इति । प्र । अवतं । नः ॥

पदार्थः—(इन्दो) ऐश्वर्यसम्पन्न परमात्मन्! (सुमृळीकः) कर्मयोगिसुखदः (अनवद्यः) निन्दारहितः (रिशादाः) बाधकनाशकस्त्वम् (इन्द्राय) कर्मयोगिने (पवस्व) पवित्रतां देहि। अथ च (गृणते) स्तोत्रे कर्मयोगिने (चन्द्राणि) आह्लादकानि (वसूनि) धनानि (भर) प्रददस्व। भवान् (देवैः) दिव्यधनयुते (द्यावापृथिवी) द्यावाभूमी (नः) अस्मभ्यं (प्रावतं) प्रापयतु ॥

पदार्थ—(इन्दो) ऐश्वर्यसम्पन्न परमात्मन्! (सुमृळीक) कर्मयोगीको सुख देने वाले (अनवद्यः) निन्दारहित (रिशादाः) बाधकोंके नाशक आप (इन्द्राय) कर्मयोगीके लिये (पवस्व) पवित्रताका प्रदान-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करें । और (गृणते) स्तुति करने वाले कर्मयोगीके लिये (चन्द्राणि) आल्हाद देने वाले (वसूनि) धनोंको (भर) प्रदान करें । आप (देवैः) दिव्य धनोंके सहित (द्यावापृथिवी) द्युलोक और पृथिवीलोकको (नः) हम लोगोंके लिये (आवतं) प्राप्त करायें ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें कर्मयोगीके लिये ऐश्वर्यप्रदानका वर्णन किया गया है ॥ १० ॥

इत्येकोनसप्ततितमं सूक्तं द्वाविंशोवर्गश्च समाप्तः ।

यह ६९ वां सूक्त और २२ वां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ दशर्चस्य सप्ततितमस्य सूक्तस्य--

१–१० रेणुर्वैश्वामित्र ऋषिः । पवमानः सोमो देवता । छन्दः-१, ३ त्रिष्टुप् । २, ६, ९, १० निचृज्जगती । ४, ५, ७, जगती । ८ विराड्जगती । स्वरः–१, ३ धैवतः । २, ४–१० । निषादः ॥

अथ पञ्चविंशतितत्वानि वर्ण्यन्ते ।

अब पचीस प्रकारके तत्वोंका वर्णन करते हैं ।

त्रिरस्मै सप्त धेनवो दुदुह्रे सत्यामाशिरं पूर्व्ये व्योमनि ।
चत्वार्यन्या भुवनानि निर्णिजे चारूणि चक्रे यद्ततैरवर्धत ॥१॥

त्रिः । अस्मै । सप्त । धेनवः । दुदुह्रे । सत्यां । आऽशिरं । पूर्व्ये । विऽओमनि । चत्वारि । अन्या । भुवनानि । निः ऽनिजे । चारूणि । चक्रे । यत् । ऋतैः । अवर्धत ॥१॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(पूर्व्ये व्योमनि) महदाकाशे (अन्या) प्रकृतेरन्यानि (चत्वारि भुवनानि) चत्वारि तत्वानि (यत्) यानि (चारूणि) सुन्दराणि सन्ति तानि (निर्णिजे) शुद्धये (ऋतैः) प्रकृतेः सत्यद्वारेण (चक्रे) परमात्मना निर्मितानि सन्ति। (अस्मे) एतदर्थं (धेनवः) वेदवाचः (त्रिःसप्त) अहङ्कारत इन्द्रियपर्यन्तमेकविंशतितत्वैः (दुदुह्रे) दुहन्ति। अथ च तैस्तत्वैः (सत्यामाशिरं) सत्यकारणभूतान् क्षीरादिरसान् (अवर्धत) वर्धयन्ति ॥

पदार्थ—(पूर्व्ये व्योमनि) महदाकाशमें (अन्या) प्रकृतिसेभिन्न (चत्वारि भुवनानि) चार तत्व (यत्) जो कि (चारूणि) सुन्दर हैं, वे (निर्णिजे) शुद्धिके लिये (ऋतैः) प्रकृतिके सत्यद्वारा (चक्रे) परमात्माने रचे हैं। (अस्मे) इस कार्यके लिये (धेनवः) वेदवाणियें (त्रिःसप्त) अहङ्कारसे लेकर इन्द्रियों तक २१ तत्वों द्वारा (दुदुह्रे) पूर्ण करतीं हैं। और उससे (सत्यामाशिरं) सत्य हैं कारण जिनके ऐसे क्षीरादि रसोंको (अवर्धत) बढ़ातीं हैं ॥

भावार्थ—परमात्माने प्रकृतिरूपी उपादान-कारणसे इस संसारको उत्पन्न किया। और वह इस प्रकार कि प्रकृतिसे महत्तत्व, और महत्तत्वसे अहङ्कार और अहङ्कारसे पञ्चतन्मात्र अर्थात् शब्द,स्पर्श,रूप,रस, तथा गन्ध इनसे पांच ज्ञानेन्द्रिय और पांच कर्मेन्द्रिय एवं पञ्च-भूत अर्थात् पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश और २१ वां अहङ्कार इन २१ प्रकृतियोंसे परमात्माने संसारको उत्पन्न किया। महत्तत्वको यहाँ इस लिये नहीं गिना, कि वह वैदिक-लोगोंके मन्तव्यमें एक प्रकारकी प्रकृति ही है। तात्पर्य यह है, कि प्रकृति इस संसारका परिणामी उपादान-कारण है। अर्थात् प्रकृतिके परिणामसे इस संसारकी रचना हुई है। और परमात्मा कूटस्थ नित्य है। उसका किसी प्रकारसे परिणाम वा परिवर्तन नहीं होता ॥१॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स भिक्षमाणो अमृतस्य चारुण उभे द्यावा काव्येना वि शश्रथे।
तेजिष्ठा अपो मंहना परि व्यत यदी देवस्य श्रवसा सदो विदुः।२।
सः । भिक्षमाणः । अमृतस्य । चारुणः । उभे इति । द्यावा ।
काव्येन । वि । शश्रथे । तेजिष्ठाः । अपः । मंहना । परि ।
व्यत । यदि । देवस्य । श्रवसा । सदः । विदुः ॥२॥

पदार्थः—(भिक्षमाणः) प्रकृतितत्वस्य लाभं कुर्वन्तं (चारुणोऽमृतस्य) प्रियामृतप्रदातारं (उभे द्यावा) द्युलोकं पृथिवीलोकं च (काव्येन) स्वचातुर्येण (विशश्रथे) व्यक्तंकरोति (सः) असौ परमात्मा (तेजिष्ठा अपः) तेजस्विजलपरमाणूनां (मंहना) महत्वेन (परिव्यत) आच्छादयति । (यदि देवस्य) यदि दिव्यज्ञानस्य (श्रवसा) महत्वेन (सदः) सद्रूपब्रह्म (विदुः) विदाङ्कुर्वन्तु चेत्तदोक्तपरब्रह्मणः कर्तृत्वं ज्ञास्यन्ति ॥

पदार्थ—(भिक्षमाणः) प्रकृतिरूपी तत्वको लाभ करता हुआ (चारुणोऽमृतस्य) सुन्दर अमृतके देने वाले (उभे द्यावा) द्युलोक और पृथिवीलोकको (काव्येन) अपनी चतुराईसे (विशश्रथे) व्यक्त करता है। (सः) वह परमात्मा (तेजिष्ठा अपः) तेजस्वी जलमयपरमाणुओंके (मंहना) महत्वसे (परिव्यत) आच्छादन करता है। (यदि देवस्य) अगर दिव्य ज्ञानके (श्रवसा) महत्वसे (सदः) सद्रूपब्रह्मको (विदुः) जानें, तो उक्तपरमात्माके कर्तृत्वको जान सकते हैं ॥

भावार्थ—जो पुरुष परमात्माके महत्वको जानते हैं, वे ही इस जगत्की अद्भुतसत्ता जान सकते हैं, अन्य नहीं ॥२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ते अस्य सन्तु केतवोऽमृत्यवोऽदाभ्यासो जनुषी उभे अनु । येभिर्नृम्णा च देव्या च पुनत आदिद्राजानं मननाअगृभ्णत ३

ते । अस्य । सन्तु । केतवः । अमृत्यवः । अदाभ्यासः । जनुषी इति । उभे इति । अनु । येभिः । नृम्णा । च । देव्या । च । पुनते । आत् । इत् । राजानं । मननाः । अगृभ्णत ॥३॥

पदार्थः—(ते) पूर्वोक्ताः (अमृत्यवः) मरणधर्मशून्याः (अदाभ्यासः) अदम्भनीयास्तत्त्वविदः (अस्य) अमुष्य जगतः (केतवः) मौलिमणिस्थानीयाः (सन्तु) भवन्तु (उभे जनुषी) उभयजन्म (अनु) लक्ष्यीकृत्य (देव्या नृम्णा) दिव्यानि कर्माणि (येभिः) यैः क्रियन्ते ते एव (पुनते) जगत् पवित्रयन्ति । (च) अथ च (आदित्) ते एव (मननाः) मान्याः (राजानं) स्वतःप्रकाशं परमात्मानं (अगृभ्णत) गृह्णन्ति ॥

पदार्थ—(ते) वे (अमृत्यवः) मरणधर्मरहित (अदाभ्यासः) अदम्भनीय पूर्वोक्त तत्त्ववेत्ता लोग (अस्य) इस संसारके (केतवः) मौलिमणिस्थानी (सन्तु) हों । (उभे जनुषी) दोनों जन्मोंको (अनु) लक्ष्य करके (देव्या नृम्णा) दिव्य कर्म (येभिः) जिनसे किये जाते हैं, वेही लोग (पुनते) संसारको पवित्र करते हैं (च) और (आदित्) वे ही (मननाः) माननीय (राजानं) प्रकाशरूप परमात्माको (अगृभ्णत) ग्रहण करते हैं ॥

भावार्थ—जो लोग लोक और परलोकको लक्ष्य रखकर शुभकर्म करते हैं, वेही परमात्माके ज्ञानपात्र हो सकते हैं, अन्य नहीं ॥ ३ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स मृज्यमानो दशभिः सुकर्मभिः प्र मध्यमासु मातृषु प्रमे सचा।
व्रतानि पानो अमृतस्य चारुण उभे नृचक्षा अनु पश्यते विशौ॥४

सः । मृज्यमानः । दशऽभिः । सुकर्मऽभिः । प्र । मध्यमासु ।
मातृषु । प्रऽमे । सचा । व्रतानि । पानः । अमृतस्य ।
चारुणः । उभे इति । नृऽचक्षाः । अनु । पश्यते । विशौ ॥४॥

पदार्थः—(मध्यमासु प्रमातृषु) ज्ञानेन्द्रियेषु (प्रमे) प्रमाणार्थं (सचा) संगतः (सः) असौ परमात्मा (दशभिः कर्मभिः) सूक्ष्मभूतैः पञ्चभिस्तथा पञ्चस्थूलभूतैः (मृज्यमानः) विराड्रूपेणाभिव्यक्तः सर्वत्र विराजते (व्रतानि पानः) व्रतकर्ता जनः (चारुणोऽमृतस्य) शोभनामृतभावप्रदातृणी (उभे विशौ) ये द्वे ज्ञानकर्मणी ते (नृचक्षाः) सर्वज्ञ एव (अनुपश्यते) अवलोकयति नान्यः ॥

पदार्थ—(मध्यमासु प्रमातृषु) ज्ञानेन्द्रियोंमें (प्रमे) प्रमाणके लिये (सचा) संगत (सः) वह परमात्मा (दशभिः कर्मभिः) पांच सूक्ष्मभूत और पांच स्थूलभूतोंसे (मृज्यमानः) विराट् रूपसे अभिव्यक्तिको प्राप्त हुआ सर्वत्र विराजमान है (व्रतानि पानः) व्रतोंको धारण करने वाला मनुष्य (चारुणोऽमृतस्य) सुन्दर अमृत भावके देने वाले (उभे विशौ) दोनों ज्ञान और कर्म जो हैं, उनको (नृचक्षाः) सर्वज्ञ पुरुष ही (अनुपश्यते) देखता है, अन्य नहीं ॥

भावार्थ—जो पुरुष तपश्चर्यादि कर्मोंको करता है, वही पुरुष ज्ञान तथा कर्मके प्रभावसे सर्वत्राभिव्यक्त परमात्माको ज्ञानदृष्टिसे देख सकताहै, अन्य नहीं ॥४॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स मर्मृजान इन्द्रियाय धायस ओभे अन्ता रोदसी हर्षते हितः
वृषा शुष्मेण बाधते वि दुर्मतीरादेदिशानः शर्यहेव शुरुधः५-२३

सः । मर्मृजानः । इन्द्रियाय । धायसे । आ । उभे इति । अन्तरिति । रोदसी इति । हर्षते । हितः । वृषा । शुष्मेण । बाधते । वि । दुःऽमतीः । आऽदेदिशानः । शर्यहाऽइव । शुरुधः ॥५॥

पदार्थः—(मर्मृजानः) सर्वपूज्यः (दुर्मतीः शुरुधः) दुष्टप्रकृतीनामसुराणां (आदेदिशानः) शिक्षकः (वृषा) आमोद वर्षकः (उभे रोदसी) द्यावापृथिव्योर्द्वयोर्लोकयोः (अन्तर्हितः) मध्ये विराजमानः (सः) स परमात्मा (इन्द्रियाय) इन्द्रियाणां (धायसे) धारणकर्त्रे बलाय (आहर्षते) सर्वत्र विराजमानोस्ति । अथ च (शुष्मेण) शत्रुनाशकेन बलेन (विबाधते) दुष्टान्पीडयति । (शर्यहेव) यथा योद्धा प्रतिपक्षस्थितं स्वशत्रुं हन्ति, तथा परमेश्वरो दुराचारिविघ्नकारिराक्षसान् हिनस्ति ॥

पदार्थ—(मर्मृजानः) सर्वपूज्य (दुर्मतीः शुरुधः), दुष्ट प्रकृति वाले असुरोंको (आदेदिशानः) शिक्षा देने वाला (वृषा) आनन्दकावर्षक (उभे, रोदसी) द्युलोक और पृथ्वीलोक दोनोंके (अन्तर्हितः) मध्यमें विराजमान (सः) वह परमात्मा (इन्द्रियाय) इन्द्रियोंके (धायसे) धारण करने वाले बलके लिये (आहर्षते) सर्वत्र विराजमान है। और (शुष्मेण) अपने बलसे (विबाधते) दुष्टोंको पीड़ा देता है । (शर्यहेव) जैसे बाणोंसे योद्धा अपने प्रतिपक्षीको मारता है, उसी प्रकार परमात्मा दुराचारी और विघ्नकारी राक्षसोंको मारता है ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा अपने सच्चिदानन्दरूपसे सर्वत्रैव परिपूर्ण हो-रहा है। और वह अपनी दमनरूप शक्तिसे दुष्टोंको दमन करके सत्पुरुषों-का उद्धार करता है॥५॥

स मातरा न ददृशान उस्रियो नानददेति मरुतामिव स्वनः।
जानन्नृतं प्रथमं यत्स्वर्णरं प्रशस्तये कमवृणीत सुक्रतुः॥६॥
सः। मातरा। न। ददृशानः। उस्रियः। नानदत्। एति। मरुतांऽइव। स्वनः। जानन्। ऋतं। प्रथमं। यत्। स्वःऽनरं। प्रऽशस्तये। कं। अवृणीत। सुऽक्रतुः॥६॥

पदार्थः—(मातरा ददृशानः) मातरं पश्यन् (न) यथा वत्सः (नानदत्) शब्दं कृत्वा (उस्रियः) गोसम्मुखं (एति) गच्छति। तथा (सः) असौ (सुक्रतुः) शोभनकर्मो-पासकः (मरुतां स्वन इव) कर्मयोगिविदुषां शब्दैः (ऋतं) सत्यं (जानन्) अवगतं कुर्वन् (स्वर्णरं) सर्वहितकारकं (प्रथमं) अनादिं (कं) सुखरूपं परमात्मानं (प्रशस्तये) प्रशंसायै (अवृणीत) स्वीकरोति॥

पदार्थ—(मातरा ददृशानः) माताको देखता हुआ (न) जैसे (वत्स) नानदत्) शब्द करके (उस्रियः) गौके सम्मुख (एति) जाता है, इसी प्रकार (सः) वह (सुक्रतुः) शोभनकर्मा उपासक (मरुतां स्वन इव) कर्मयोगी विद्वानोंके शब्दोंसे (ऋतं) सत्यको (जानन्) जानता हुआ (स्वर्णरं) सर्वहितकारक (प्रथमं) अनादि (कं) सुखरूप परमात्माकी (प्रशस्तये) प्रशंसाके लिये (अवृणीत) उस परमात्माको स्वीकार करता है॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—जो पुरुष ब्रह्मामृतवर्षिणी धेनुके समान परमात्माको कामधेनु समझकर उसकी उपासना करता है, वह अन्य किसी सुखकी अभिलाषा नहीं करता ॥६॥

रुवति भीमो वृषभस्तविष्यया
शृङ्गे शिशानो हरिणी विचक्षणः ।
आ योनिं सोमः सुकृतं नि षीदति
गव्ययी त्वग्भवति निर्णिगव्ययी ॥७॥

रुवति । भीमः । वृषभः । तविष्यया । शृङ्गे इति । शिशानः । हरिणी इति । विऽचक्षणः । आ । योनिं । सोमः । सुऽकृतं । नि । सीदति । गव्ययी । त्वक् । भवति । निःऽनिक् । अव्ययी ॥७॥

पदार्थः—यस्य कर्मयोगिविदुषः (गव्ययी) सदसन्निर्णेत्री (त्वक्) चिच्छक्तिः (निर्णिगव्ययी) परिशोधनकर्त्री तथा रक्षिका (भवति) अस्ति, तस्य (सुकृतं) सुकृतिनः कर्मयोगिनो-हृदयं (योनिं) स्थानंकृत्वा (तविष्यया) बर्धितुमिच्छया (भीमः) दुष्टभयदः (वृषभः) कामानां वर्षकः (विचक्षणः) सर्वज्ञः (सोमः) परमेश्वरः (आनिषीदति) कर्मयोगिनोहृदये निवसति । अथच (हरिणी) अविद्यानाशिके (शृङ्गे) द्वे दीप्ती (शिशानः) तीक्ष्णीकुर्वन् (रुवति) शब्दस्पर्शाद्याश्रयभूतपञ्च-तन्मात्रान्युत्पादयति ॥

पदार्थ—जिस कर्मयोगीकी (गव्ययी) सत् असत्का निर्णय-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करने वाली (त्वक्) चैतन्यशक्ति (निर्णिगव्ययी) परिशोधन करने वाली और रक्षा करने वाली (भवति) होती है, उस (सुकृतं) सुकृति कर्मयोगी के हृदयको (योनिं) स्थान बनाकर (तविष्यया) बुद्धिकी इच्छासे (भीमः) दुष्टके भयदाता (वृषभः) कामोंका वर्षक (विचक्षणः) सर्वज्ञ (सोमः) परमात्मा (आनिषीदति) निवास करता है। और (हरिणी) अविद्याकी हरण करने वालीं (शृङ्गे) दो दीप्तियोंको (शिशानः) तीक्ष्ण करता हुआ (रुवति) शब्द स्पर्शादिकोंके आश्रयभूत पञ्चतत्वोंको उत्पन्न करता है ॥

भावार्थ--परमात्मा जीवरूपी शक्ति और प्रकृतिरूपी शक्ति दोनोंका अधिष्ठाता है। वा यों कहो, कि उक्त दोनों दीप्तियोंको उत्पन्न करके परमात्मा इस ब्रह्माण्डकी रचना करता है ॥७॥

शुचिः पुनानस्तन्वमरेपसमव्ये हरिर्न्यधाविष्ट सानवि।
जुष्टो मित्राय वरुणाय वायवे त्रिधातु मधु क्रियते सुकर्मभिः॥८॥

शुचिः। पुनानः। तन्वं। अरेपसं। अव्ये। हरिः। नि। अधाविष्ट। सानवि। जुष्टः। मित्राय। वरुणाय। वायवे। त्रिऽधातु। मधु। क्रियते। सुऽकर्मऽभिः ॥८॥

पदार्थः--(सुकर्मभिः) सुन्दरकृत्यैः (त्रिधातु) कफवातपित्तात्मकं (अरेपसं) पापशून्यं (तन्वं) शरीरं (मित्राय वरुणाय वायवे) अध्यापकत्वोपदेशकत्वकर्मयोगित्वसंपादनाय (मधु क्रियते) यः संस्करोति स पुरुषः (अव्ये सानवि) सर्वरक्षकस्य परमात्मनः स्वरूपे (न्यधाविष्ट) स्थिरोभवति। यः परमात्मा (हरिः) पापानां नाशकोस्ति। अथच (शुचिः) पवित्रोस्ति। तथा (पुनानः) पावकः (जुष्टः) प्रीत्या संसेवनीयोस्ति ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(सुकर्मभिः) सुन्दर कर्मोंसे (त्रिधातु) कफ, वात-पित्तात्मक (अरेपसं) पापरहित (तन्वं) शरीर (मित्राय वरुणाय वायवे) अध्यापक, उपदेशक और कर्मयोगी बननेके लिये (मधु क्रियते) जिसने संस्कृत किया है, वह पुरुष (अव्ये सानसि) सबरक्षक परमात्माके स्वरूपमें (न्यधाविष्ट) स्थिर होता है । जो परमात्मा (हरिः) पापोंका हरण करने वाला है, और (शुचिः) पवित्र है, तथा (पुनानः) पवित्र करने वाला है । और (जुष्टः) प्रीतिसे सेव्य है ॥

भावार्थ—जो लोग अपने इन्द्रियसंयम द्वारा वा यज्ञादि कर्मों-द्वारा इस शरीरका संस्कार करते हैं, वे मानो इस शरीरको मधुमय बनाते हैं । जैसे कि "महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः" इत्यादि वाक्योंमें यह कहा है, कि अनुष्ठानसे पुरुष इस तनुको ब्राह्मी अर्थात् ब्रह्मसे सम्बन्ध रखने वाली बना लेता है । इसी भावका उपदेश इस मंत्रमें किया गया है ॥८॥

पवस्व सोम देववीतये वृषेन्द्रस्य
हार्दि सोमधानमा विश ।
पुरा नो बाधादुरितातिं पारय
क्षेत्रविद्धि दिश आहा विपृच्छते ॥९॥

पवस्व । सोम । देवऽवीतये । वृषा । इन्द्रस्य । हार्दि । सोमऽधानं । आ । विश । पुरा । नः । बाधात् । दुःऽइता । अति । पारय । क्षेत्रऽवित् । हि । दिशः । आह । विऽपृच्छते ॥९॥

पदार्थः—(सोम) हे जगदीश ! भवान् (देववीतये) यज्ञादिकर्मकरणीय (पवस्व) अस्मान् पवित्रयतु । अथच (वृषा)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आनन्दवर्षको भवान् (इन्द्रस्य) कर्मयोगिनः (सोमधानं) भवत्स्थितियोग्यं मनः (हार्दि) सर्वप्रियमास्ते तस्मिन् (आविश) आगत्य प्रविशतु। तथा येन प्रकारेण (क्षेत्रवित्) मार्गज्ञोजनः (विपृच्छते) मार्गपृच्छकाय (दिशआह हि) शुभमार्गमुपदिशति तथा भवान् (नः) अस्माकं (बाधात्) बाधनात (पुरा) पूर्वमेव (दुरिता) दुरितानि (अतिपारय) दूरयतु॥

पदार्थ—(सोम) हे परमात्मन्! आप (देववीतये) यज्ञादि कर्मके लिये (पवस्व) हमको पवित्र बनायें। और (वृषा) आनन्दवर्षक आप (इन्द्रस्य) कर्मयोगीको (सोमधानं) जो आपकी स्थितिके योग्य मन (हार्दि) सर्वप्रिय है, उसमें (आविश) आकर प्रवेश करें। और जिस प्रकार (क्षेत्रवित्) मार्गका जानने वाला पुरुष (विपृच्छते) मार्ग पूछने वालेको (दिश आह हि) शुभ मार्गका उपदेश करता है, इसी प्रकार आप (नः) हम लोगों के (बाधात्) पीडनके (पुरा) पहले ही (दुरिता) पापोंको (अति पारय) दूर करिये॥

भावार्थ—परमात्मा जीवोंको शुभमार्गका उपदेश करके आने वाले दुःखोंसे पहिले ही बचाता है॥९॥

हितो न सप्तिरभि वाजमर्षेन्द्रस्येन्दो जठरमा पवस्व।
नावा न सिन्धुमति पर्षि विद्वाञ्छूरो न युध्यन्नव नो निदः स्पः॥१०॥२४॥

हितः। न। सप्तिः। अभि। वाजं। अर्ष। इन्द्रस्य। इन्दो इति। जठरं। आ। पवस्व। नावा। न। सिन्धुं। अति।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पर्षि । विद्वान् । शूरः । न । युध्यन् । अव । नः । निदः । स्पृधः ॥१०॥

पदार्थः—(इन्दो) परमैश्वर्य सम्पन्न परमात्मन् ! (नावा न) यथा नाविका नराः (सिन्धुं) नदीं (अतिपर्षि) पारयन्ति तथा भवान् अस्मान् संसारसागरतः पारं करोतु । (विद्वान् शूरोन) यथा प्राज्ञः शूरः (युध्यन्) युद्धं कुर्वन् (नः) अस्माकं (निदः) निन्दकान् (अवस्पृधः) हिनस्ति । तथा भवानपि दुष्टान्निहत्य श्रेष्ठान् जनान् परिपालयतु । अथच (सत्रिर्न) यथा सूर्यः (वाजं) ऐश्वर्यमुत्पादयन् (अभ्यर्ष) स्वलक्ष्यं (प्राप्नोति) तथा भवान् (इन्द्राय) कर्मयोगिनः (जठरं) हृदये ज्ञानरूपसत्तया विराजमानः (आपवस्व) पवित्रयस्व ॥

पदार्थ—(इन्दो) परमैश्वर्य सम्पन्न परमात्मन् ! (नावान) जैसे नाविकजन (सिन्धुं) नदीको (अतिपर्षि) पार करते हैं, ऐसे आप हमको संसारसागरसे पार करें । (विद्वान् शूरोन) और जैसे विद्वान् शूरवीर (युध्यन्) युद्ध करता हुआ (नः) हम लोगोंके (निदः) निन्दकोंको (अवस्पृधः) मारता है, इसी तरह आप दुष्टोंको दमन कर श्रेष्ठोंको उबारें । और (सत्रिर्न) जैसे सूर्य (वाजं) ऐश्वर्यको उत्पन्न करता हुआ (अभ्यर्ष) अपने लक्ष्यको प्राप्त होता है, इसी प्रकार आप (इन्द्रस्य) कर्मयोगीके (जठरं) हृदयमें ज्ञानरूपी सत्तासे विराजमान होकर (आपवस्व) पवित्र करें ।

भावार्थ—परमात्मा सूर्यके समान अज्ञानरूप अन्धकारको दूर करके हमारे हृदयमें ज्ञानदीप्तिका प्रकाश करता है ॥१०॥

इति सप्ततितमं सूक्तं चतुर्विंशोवर्गश्च समाप्तः ॥

यह ७० वां सूक्त और २४ वां वर्ग समाप्त हुआ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ दशर्चस्यैकसप्ततितमस्य सूक्तस्य—

१—९ ऋषभो वैश्वामित्र ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता॥ छन्दः—१, ४, ७ विराड्जगती। २ जगती। ३, ५, ८ निचृज्जगती। ६ पादनिचृज्जगती। ९ विरादत्रिष्टुप्॥ स्वरः—१—८ निषादः। ९ धैवतः॥

अथ परमात्मनोयुभुक्वादीनामधिकरणत्वं निरूप्यते॥

अब परमात्माको युभुक्वादि-लोकोंका अधिकरणरूपसे निरूपण करते हैं॥

आ दक्षिणा सृज्यते शुष्म्या३सदं
वेति द्रुहो रक्षसः पाति जागृविः।
हरिरोपशं कृणुते नभस्पय-
उपस्तिरे चम्वो३र्ब्रह्म निर्णिजे॥१॥

आ। दक्षिणा। सृज्यते। शुष्मी। आऽसदं। वेति। द्रुहः। रक्षसः। पाति। जागृविः। हरिः। ओपशं। कृणुते। नभः। पयः। उपऽस्तिरे। चम्वोः। ब्रह्म। निःऽनिजे॥१॥

पदार्थः—(सोमः) परमात्मा (शुष्मी) बलवान् (आसदं) सर्वत्र व्याप्तोस्ति। उपासकाः (दक्षिणा) उपासनारूपां दक्षिणां (सृज्यते) परमात्मानं समर्पयंति। (जागृविः) जागरणशीलः परमात्मा (द्रुहोरक्षसः) द्रोहकारिराक्षसान्निहत्य सज्जनान् (पाति) रक्षति। अथच (चम्वोः) द्यावाभूमी (निर्णिजे)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पुष्णाति । (हरिः) पापहारकः (ब्रह्म) परमात्मा (नभः) अन्तरिक्षलोकं (पयः) परमाणुपुञ्जेन (उपस्तिरे) आच्छादयति । तथा (ओपशं) सर्वावकाशदमन्तरिक्षलोकं (कृणुते) स परमात्मैव करोति ॥

पदार्थ—(सोमः) परमात्मा (शुष्मी) बल वाला (आसदं) सर्वत्र व्याप्त है । उपासक लोग (दक्षिणा) उपसनारूप दक्षिणाको (सृज्यते) परमात्माको समर्पित करते हैं । (जागृविः) जागरणशील परमेश्वर (द्रुहोरक्षसः) द्रोह करने वाले राक्षसोंको मारकर सज्जनोंकी (पाति) रक्षा करता है । और (चम्वोः) द्युलोक तथा पृथिवीलोकको (निर्णिजे) पोषण करता है । (हरिः) पापोंका हरण करने वाला (ब्रह्म) परमात्मा (नभः) अन्तरिक्षलोकको (पयः) परमाणुसमूहसे (उपस्तिरे) आच्छादित करता है । तथा (ओपशं) वही परमात्मा अन्तरिक्षलोकको (कृणुते) सबको अवकाश देने वाला करता है ॥

भावार्थ—परमात्माने इस ब्रह्माण्डको द्रवीभूत अथवा यों कहो कि वाष्परूप परमाणुओंसे आच्छादित किया हुआ उसी सर्वोपरि उपास्यदेवकी उपासक लोग अपनी उपासना रूप दक्षिणासे उपासना करें ॥१॥

प्र कृष्टिहेव शूष एति रोरुवदसुर्यं १
वर्णं नि रिणीते अस्य तम् ।
जहाति वव्रिं पितुरेति
निष्कृतमुपप्रुतं कृणुते निर्णिजं तना ॥२॥

प्र । कृष्टिहाऽइव । शूषः । एति । रोरुवत् । असुर्यं । वर्णं । नि । रिणीते । अस्य । तं । जहाति । वव्रिं । पितुः । एति । निःऽकृतं । उपऽप्रुतं । कृणुते । निःऽनिजं । तना ॥२॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(शूषः) अस्य जगत उत्पादकः परमेश्वरः (कृष्टिहेव) योद्धेव (प्रेति) महताप्रभावेन सर्वत्र परिपूर्णोस्ति। अथच (असुर्यं) राक्षसान् (रोरुवत्) रोदयति॥ तथा (अस्य) अमुष्य जीवात्मनः (तं) पूर्वोक्तां (वर्णं) आच्छादनकर्त्रीं (वर्त्रिं) वृद्धावस्थां (जहाति) अतिक्रामति। अथच (पितुरेति) पितुर्भावं प्राप्नुवन् (निष्कृतं) कृतकार्यं तथा (उपप्रुतं) पूर्णं (कृणुते) करोति। तथा (तना) इदं शरीरं (निर्णिजं) सुरूपयुक्तं करोति (निरिणीते) निर्मुक्तं च करोति॥

पदार्थ—(शूषः) इस संसारकी उत्पत्ति करने वाला परमात्मा (कृष्टिहेव) योद्धाके समान (प्रेति) बड़े प्रभावसे सर्वत्र परिपूर्ण हो रहा है। और (असुर्यं) असुरोंको (रोरुवत्) अत्यन्त रुलाता है। तथा (अस्य) इस जीवात्माके (तं) पूर्वोक्त (वर्णं) आच्छादन करने वाली (वर्त्रिं) वृद्धावस्थाको (जहाति) अतिक्रमण करता है। और (पितुः एति) पिताके भावको प्राप्त होकर (निष्कृतं) कृतकार्य और (उपप्रुतं) पूर्ण (कृणुते) बना देता है। तथा (तना) इस शरीरको (निर्णिजं) सुन्दर रूप युक्त बना देता है। और (निरिणीते) निर्मुक्त करता है॥

भावार्थ—जो पुरुष परमात्मज्ञानके पात्र हैं परमात्मा उनको पूर्णज्ञान देकर जरामरणादिभावोंसे निर्मुक्त करके अमृत बना देता है॥३॥

अद्रिभिः सुत पवते
गभस्त्योर्वृषायते नभसा वेपते मती।
स मोदते नसते साधते गिरा
नेनिक्ते अप्सु यजते परीमणि॥३॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अद्रिभिः । सुतः । पवते । गभस्त्योः । वृषायते । नभसा । वेपते । मती । सः । मोदते । नसते । साधते । गिरा । नेनिक्ते । अप्सु । यजते । परीमणि ॥३॥

पदार्थः—(सुतः) स्वयंसिद्धः परमेश्वरः (अद्रिभिः) चित्तवृत्तिभिः साक्षात्कृतः सन् (पवते) पवित्रयति । अथच (गभस्त्योः) अस्य जीवात्मनोज्ञानरूपदीप्तीः (वृषायते) बलयुताःकरोति । तथा (मती) ज्ञानस्वरूपोजगदीश्वरः (नभसा वेपते) व्याप्तोभवति । (सः) असौ परमेश्वरः (मोदते) आनन्दरूपेण विराजते तथा (नसते) सर्वैः संगतो विराजमानोस्ति । (गिरा) वेदवाणिभिरुपासितः (साधते) सिद्धिदायकोस्ति (अप्सु) सत्कर्मणि प्रविश्य (नेनिक्ते) मनुष्यं पवित्रयति (परीमणि) रक्षायज्ञेषु (यजते) सर्वत्र परिपूजितोस्ति ॥

पदार्थ—(सुतः) स्वयंसिद्ध स्वयम्भू परमात्मा (अद्रिभिः) चित्तवृत्तियों द्वारा साक्षात् किया हुआ (पवते) पवित्र करता है । और (गभस्त्योः) इस जीवात्माकी ज्ञानरूपी दीप्तियोंको (वृषायते) बलयुक्त करता है । तथा (मती) वह ज्ञानस्वरूप परमात्मा (नभसा वेपते) व्याप्त हो रहा है । (सः) वह (मोदते) आनन्दरूपसे विराजमान है । और (नसते) सबका अङ्गी सङ्गी होकर विराजमान है । (गिरा) वेदरूपी वाणिओं द्वारा उपासना किया हुआ (साधते) सिद्धिका देने वाला है । और (अप्सु) सत्कर्मोंमें प्रवेश करके (नेनिक्ते) मनुष्यको शुद्ध करने वाला है । तथा (परीमणि) रक्षाप्रधान यज्ञोंमें (यजते) सर्वत्र परिपूजित है ॥

भावार्थ—जो परमात्मज्ञानके पात्र होते हैं, वे प्रथम स्वयं उद्योगी बनते हैं, फिर परमात्मा उनके उद्योग द्वारा उनको शुद्ध करके परमानन्दका भागी बनाता है ॥३॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परि द्युक्षं सहसः पर्वतावृधं मध्वः
सिञ्चन्ति हर्म्यस्य सक्षणिम् ।
आ यस्मिन्गावः सुहुताद ऊधनि
मूर्धञ्छ्रीणन्त्यग्रियं वरीमभिः ॥४॥

परि । द्युक्ष । सहसः । पर्वतऽवृधं । मध्वः । सिञ्चन्ति । हर्म्यस्य । सक्षणिं । आ । यस्मिन् । गावः । सुहुतऽअदः । ऊधनि । मूर्धन् । श्रीणन्ति । अग्रियं । वरीमऽभिः ॥४॥

पदार्थः—(सहसः) क्षमी (मध्वः) सर्वानन्ददः परमेश्वरः (द्युक्षं) ज्ञानदीप्तिषु निश्चलस्य जीवस्य (हर्म्यस्य सक्षणिं) ये शत्रवःसन्ति तेषां घातकोस्ति । तथा (पर्वतावृधं) योहिमवानिव स्वसहायभूतैर्जनैरभ्युदयंगतः एतादृशं जीवात्मानं (परिषिञ्चति) ज्ञानवृष्ट्या सिञ्चनं करोति । (यस्मिन्) यत्र (गावः) इन्द्रियाणि (सुहुतादः) स्वीयभोग्यविषयाणां शब्दस्पर्शादीनां भोगकर्तृशक्तिमंति सन्ति । अथ च (वरीमभिः) समहत्त्वेन (ऊधनि) पयोधारपात्रमिव (अग्रियं) तस्य अग्रणीपुरुषस्य (मूर्धन्) मूर्धानं (आश्रीणन्ति) अभिषेकेण पवित्रयन्ति ॥

पदार्थ—(सहसः) क्षमाशील वह परमात्मा (मध्वः) सबको आनन्द देने वाला (द्युक्षं) ज्ञानरूपी दीप्तियोंमें स्थिर जीवको (हर्म्यस्य सक्षणिं) जो शत्रुओंको हनन करने वाला है, तथा (पर्वतावृधं) जो हिमालयकी तरह अपने सहायक लोगोंसे वृद्धिको प्राप्त है, ऐसे जीवात्माको (परिषिंचति) परमात्मा ज्ञानरूपी वृष्टिसे सिंचन करता है। तथा वह

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ऐसे जीवात्माको ज्ञानदृष्टिसे परिपूर्ण करता है। (यस्मिन्) जिसमें (गावः) इन्द्रियें (सुहुतादः) अपने शब्दस्पर्शादि भोग्य विषयोंको भोगनेकी शक्ति रखतीं हैं। और (वरीमभिः) अपने महत्वसे (ऊधनि) पयोधारपात्रके समान (अघ्रियं) उस अग्रणी पुरुषके (मूर्धन्) मूर्धाको (आश्रीणन्ति) अभिषेक द्वारा शुद्ध करतीं हैं॥

भावार्थ—परमात्मा उपासकको ज्ञानी तथा विज्ञानी बनाकर उसका उद्धार करता है॥४॥

समी रथं न भुरिजोरहेषत दश
स्वसारो अदितेरुपस्थ आ।
जिगादुप ज्रयति गोरपीच्यं पदं
यदस्य मतुथा अजीजनन् ॥५॥२५॥

सं। ईमिति। रथं। न। भुरिजोः। अहेषत। दश।
स्वसारः। अदितेः। उपऽस्थे। आ। जिगात्। उप। ज्रयति।
गोः। अपीच्यं। पदं। यत्। अस्य। मतुथाः। अजीजनन्॥५॥

पदार्थः—(दश) दशसंख्याकाः (स्वसारः) स्वाभाविकगतिमंतः प्राणाः (अदितेः उपस्थे) अस्मिन् पार्थिवशरीरे (आजिगात्) इन्द्रियवृत्तीः जयन्ति (न) यथा सारथी (रथं) यानं (भुरिजोः) बाहुभ्यां (अहेषत) प्रेरयति तथा जगदीश्वरः शुभाशुभकर्मभिर्नरशरीररूपं रथं प्रेरयति। अथ च (अस्य) अमुष्य जीवात्मनः (मतुथाः) मनोरथान् (अजीजनन्) सफलयन्ति। तथा (यत्) यत् (अपीच्यं पदं) गूढं पदं वर्तते तत् जीवात्मानमिमं

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रददति । अथ च (ईं) पूर्वोक्तं परमेश्वरं (सं) सम्यक् प्राप्य (उपज्रयति) स्वकीयमनोरथान् साधनोति ॥

पदार्थ—(दश) दश संख्या वाले (स्वसारः) स्वभाविक गति-वाले प्राण (अदितेः, उपस्थे) इस पार्थिव शरीरमें (आजिगात्) इन्द्रियों-की वृत्तियोंको जीतते हैं। और (न) जैसे सारथी (रथं) रथको (भुरिजोः) हाथोंसे (अहेषत) प्रेरणा करता है, इसी प्रकार परमात्मा शुभाशुभ कर्म द्वारा मनुष्योंके शरीररूपी रथकी प्रेरणा करता है। (अस्य) इस जीवा-त्माके (मतुथाः) मनोरथोंको जो (अजीजनन्) सफल करते हैं। तथा (यत्) जो (अपीच्यं) गूढ़ (पदं) पद है, वह इस जीवात्माको प्रदान करते हैं। और (ईं) उक्त परमात्माको (सं) भलीभांति प्राप्त होकर (उपज्रयति) अपने मनोरथों को सिद्ध कर लेता है ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें यह बतलाया गया है, कि मनुष्य प्राणा-याम द्वारा संयमी बनकर उन्नतिशील बने ॥९॥

श्येनो न योनिं सदनं धिया कृतं
हिरण्ययमासदं देव एषति ।
आ रिणन्ति बर्हिषि प्रियं गिराश्वो
न देवाँ अप्येति यज्ञियः ॥६॥

श्येनः । न । योनिं । सदनं । धिया । कृतं । हिरण्ययं । आऽसदं । देवः । आ । ईषति । आ । ईमिति । रिणन्ति । बर्हिषि । प्रियं । गिरा । अश्वः । न । देवान् । अपि । एति । यज्ञियः ॥६॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(देवः) दिव्यगुणयुक्तः परमेश्वरः (धिया कृतं) संस्कृतबुद्ध्या साक्षात्कृतः (हिरण्ययं) प्रकाशरूपं (आसदं) स्थानं (एषति) प्राप्तोभवति। (श्येनो न) यथा श्येनः पक्षी (योनिं सदनं) स्वनीडमभिगच्छति तद्वत् (ईं) एनं (प्रियं) सर्वप्रियं परमात्मानं उपासकाः (बर्हिषि) हृदये (गिरा) वेदवाणीभिः (आरिणन्ति) स्तुवन्ति। (अश्वोन) अश्नुतेचराचरमितिअश्वो, विद्युत् यथा चराचरं व्याप्नोति। तथा (यज्ञियः) परमेश्वरः (देवान्) विदुषः (अप्येति) प्राप्तोभवति ॥

पदार्थ—(देवः) दिव्यगुणयुक्त परमात्मा (धिया कृतं) संस्कृत बुद्धिसे साक्षात्कार किया हुआ (हिरण्ययं) प्रकाशरूप (श्येनो न योनिं सदनं) अपने स्थिर स्थान घोंसलेको प्राप्त होता है उसी तरह जैसे बाज (आसदं) स्थानको (एषति) प्राप्त होता है। (ईं) उक्त (प्रियं) सबके प्यारे परमात्माकी उपासक (बर्हिषि) हृदयमें (गिरा) वेदवाणियोंसे (आरिणन्ति) स्तुति करते हैं। एवं (यज्ञियः) परमात्मा (देवान्) दिव्यगुण वाले विद्वानोंको (अप्येति) प्राप्त होता है ॥

भावार्थ—जो लोग परमात्माका साक्षात्कार करना चाहें, वे अपने हृदयमें उसका ध्यान करें ॥६॥

परा व्यक्तो अरुषो दिवः
कविर्वृषा त्रिपृष्ठो अनविष्ट गा अभि।
सहस्रणीतिर्यतिः परायती रेभो न
पूर्वीरुषसो वि राजति ॥७॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परा। विऽअक्तः। अरुषः। दिवः। कविः। वृषा। त्रिऽपृष्ठः। अनविष्ट। गाः। अभि। सहस्रऽनीतिः। यतिः। पराऽयतिः। रेभः। न। पूर्वीः। उषसः। वि। राजति ॥७॥

पदार्थः—(अरुषः) प्रकाशस्वरूपः (वृषा) आनन्दवर्षकः (कविः) सर्वज्ञः (व्यक्तः) स्फुटः परमात्मा (दिवः परा) द्युलोकादपि परोस्ति। तथा (त्रिपृष्ठः) त्रिकालज्ञः परमात्मा (गाः) उपासनारूपा वाणीः (अभि) अभिलक्ष्य (अनविष्ट) स्थिरोस्ति। अथ स परमेश्वरः (सहस्रणीतिः) अनन्तशक्तिमानस्ति। तथा (यतिः) लोकमर्यादाहेतुरस्ति। तथा (परायतिः) सर्वत्र व्याप्तोस्ति। परमात्मा (पूर्वी उषसः) अनादिषूषस्सु (रेभो न) प्रकाशमानः सूर्य इव (विराजति) विराजमानोस्ति॥

पदार्थ—(अरुषः) प्रकाशस्वरूप (वृषा) आनन्दका वर्षक (कविः) सर्वज्ञ (व्यक्तः) स्फुट परमात्मा (दिवः परा) द्युलोकसे भी परे है। तथा (त्रिपृष्ठः) त्रिकालज्ञ परमात्मा (गाः) उपासनारूपी वाणीको (अभि) लक्ष्य करके (अनविष्ट) स्थिर है। और वह परमेश्वर (सहस्रणीतिः) अनन्त शक्ति वाला है। और (यतिः) लोक मर्यादाका हेतु, और (परायतिः) सर्वत्र व्याप्त है। परमात्मा (पूर्वी उषसः) अनादि कालकी ऊषाओंमें (रेभो न) प्रकाशमान सूर्यके समान (विराजति) विराजमान है॥

भावार्थ—अनादि कालसे परमात्मा अनेक ऊषाकालोंको प्रकाशित करता हुआ सर्वत्र विद्यमान है॥७॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्वेषं रूपं कृणुते वर्णो अस्य स
यत्राशयत्समृता सेधति स्निधः ।
अप्सा याति स्वधया दैव्यं जनं
सं सुष्टुती नसते सं गोअग्रया ॥८॥

त्वेषं । रूपं । कृणुते । वर्णः । अस्य । सः । यत्र । अशयत् । संऽऋता । सेधति । स्निधः । अप्साः । याति । स्वधया । दैव्यं । जनं । सं । सुऽस्तुती । नसते । सं । गोऽअग्रया ॥८॥

पदार्थः—(सोमः) परमात्मा (रूपं) स्वरूपं (त्वेषं) दीप्यमानं (कृणुते) करोति (वर्णः) वरणीयः (सः) असौ परमेश्वरः (यत्र) यस्मिन् (समृता) रणे (अशयत्) स्थिरोभवति (अस्य) तत्र (स्निधः) दुष्टान् (सेधति) हिनस्ति । (दैव्यं जनं) दिव्यशक्तिमन्तं पुरुषं (अप्साः) सुकर्मदः (संस्तुती) स्तुतियोग्योजगदीशः (स्वधया) स्वानन्दवृष्ट्या (याति) परिपूर्णोस्ति । अथ च (गोअग्रया) वेदवाण्या (संनसते) सर्वत्र संगतोभवति ॥

पदार्थ—(सोमः) परमात्मा (रूपं) रूपको (त्वेषं) दीप्यमान (कृणुते) करता है । (वर्णः) वरणीय (सः) वह परमात्मा (यत्र) जिस (समृता) संग्राममें (अशयत्) स्थिर होता है (अस्य) उसमें (स्निधः) दुष्टोंको (सेधति) मारता है । (दैव्यं जनं) दिव्यशक्ति वाले मनुष्यको वह (अप्साः) सत्कर्मोंका दाता (संस्तुती) सुन्दर स्तुति योग्य परमात्मा (स्वधया) अपने आनन्दसे (याति) परिपूर्ण है । और (गोअग्रया) वेदवाणीसे (संनसते) सर्वत्र संगत होता है ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—इस मंत्रमें इस बातका वर्णन किया गया है, कि परमात्मा प्रत्येक रूपको प्रदीप्त करने वाला है। उसीकी सत्तासे सम्पूर्ण पदार्थ स्थिर हैं। और स्वयं वह निर्लेप होकर इन सब चीजोंमें विराजमान है ॥८॥

उक्षेव यूथा परियन्नरावीदधि
त्विषीरधित सूर्यस्य ।
दिव्यः सुपर्णोऽव चक्षत क्षां सोमः
परि क्रतुना पश्यते जाः ॥९॥२६॥

उक्षाऽइव । यूथा । परिऽयन् । अरावीत् । अधि । त्विषीः । अधित । सूर्यस्य । दिव्यः । सुऽपर्णः । अव । चक्षत । क्षां । सोमः । परि । क्रतुना । पश्यते । जाः ॥९॥

पदार्थः—(उक्षेव) विद्युदिव (यूथा) गणान् (परियन्) संप्राप्य (अरावीत्) शब्दायते (सूर्य्यस्य) सर्वात्मनः (त्विषीः) दीप्तिः (अध्यधित) अधिदधाति स पूर्वोक्तः (दिव्यः) (सुपर्णः) चिद्रूपः परमात्मा (क्षां) पृथिवीं (अवचक्षत) व्याकरोति (सोमः) परमात्मा (क्रतुना) । ज्ञानदृष्ट्या (जाः) प्रजाः (परिपश्यते) पश्यति ॥

पदार्थ—(उक्षेव) विद्युत्के समान (यूथा) गणोंको (परियन्) प्राप्त होकर (अरावीत्) शब्दायमान होता है (सूर्यस्य) सूर्यकी (त्विषीः) दीप्तिका (अध्यधित) धारण कराता है । (दिव्यः) दिव्य-गुण वाला (सुपर्णः) चेतन (सोमः) परमात्मा (क्षां) पृथिवीका (अवचक्षत) निर्माण करने वाला है । वह परमात्मा (जाः) प्रजाको (क्रतुना) ज्ञानदृष्टिसे (परिपश्यते) देखता है ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—परमात्मा अपनी ज्ञानदृष्टिसे सम्पूर्ण पदार्थोंको देखता-
। और सूर्यादि लोकलोकान्तरोंका प्रकाशक है ॥९॥

इत्येकसप्ततितमं सूक्तं षड्विंशोवर्गश्च समाप्तः ।

यह ७१ वां सूक्त और २६ वां वर्ग समाप्त हुआ ॥

अथ नवर्चस्य द्विसप्ततितमस्य सूक्तस्य—

१—९ हरिमन्त ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥
छन्दः—१—३, ६, ७ निचृज्जगती । ४, ८
जगती । ५ विराड्जगती ।
९ पादनिचृज्जगती ॥
निषादः स्वरः ॥

अथ परमात्मोपदेशोनिरूप्यते ।

अब परमात्मोपदेश निरूपण करते हैं ।

हरिं मृजन्त्यरुषो न युज्यते सं
धेनुभिः कलशे सोम अज्यते ।
उद्वाचमीरयति हिन्वते मती
पुरुष्टुतस्य कति चित्परिप्रियः ॥१॥

हरिं । मृजन्ति । अरुषः । न । युज्यते । सं । धेनुऽभिः ।
कलशे । सोमः । अज्यते । उत् । वाचं । ईरयति । हिन्वते ।
मती । पुरुऽस्तुतस्य । कति । चित् । परिऽप्रियः ॥१॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(सोमः) परमेश्वरः (उद्वाचं) सदुपदेशं (ईरयति) प्रेरयति । परमात्मा (मती) बुद्धिं (हिन्वते) प्रेरयति । अथच (पुरुष्टुतस्य) विज्ञानिनां (परिप्रियः) सखा । तस्मै (कतिचित्) बहुधनानि प्रयच्छति (कलशे) संस्कृतान्तःकरणे (सं धेनुभिः) संस्कृतेन्द्रियैः परमात्मा (अज्यते) पूज्यते । सोयं परमात्मा (अरुषोन) विद्युदिव (युज्यते) सर्वत्र युक्तोभवति ॥

पदार्थ—(सोमः) परमात्मा (उद्वाचं) सदुपदेशकी (ईरयति) प्रेरणा करने वाला है। (मती) बुद्धिका (हिन्वते) प्रेरक है। और (पुरुष्टुतस्य) विज्ञानियोंको (परिप्रियः) सर्वोपरि प्यारा परमात्मा (कतिचित्) अनन्त दान देता है । (अरुषोन) विद्युत्की तरह वह परमात्मा (युज्यते) युक्त होता है । ऐसे (हरिं) परमात्माको उपासक (मृजन्ति) ध्यानविषय करतेहैं । और उसका (संधेनुभिः) इन्द्रियोंके द्वारा (कलशे) अन्तःकरणोंमें (अज्यते) साक्षात्कार किया जाता है ॥

भावार्थ—जो लोग अपनी इन्द्रियोंको संस्कृत बनाते हैं, अर्थात् शुद्ध मन वाले होते हैं, परमात्मा अवश्यमेव उनके ध्यानका विषय होता है ॥१॥

सा॒कं व॑दन्ति ब॒हवो॑ मनी॒षिण॒
इन्द्र॑स्य॒ सोमं॑ ज॒ठरे॒ यदा॑दु॒हुः ।
यदी॑ मृ॒जन्ति॒ सुग॑भस्तयो॒ नरः॒
सनी॑ळाभिर्द॒शभिः॒ काम्यं॒ मधु॑ ॥२॥

सा॒कं । व॒द॒न्ति॒ । ब॒हवः॑ । म॒नी॒षिणः॑ । इंद्र॑स्य । सोमं॑ । ज॒ठरे॑ । यत् । आ॒ऽदु॒हुः । यदि॑ । मृ॒जन्ति॑ । सुऽग॑भस्तयः । नरः॑ । सऽनी॑लाभिः । द॒शऽभिः॑ । काम्यं॑ । मधु॑ ॥२॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(सुगभस्तयः) शोभनकर्माणः (नरः) नेतारो-जनाः (यदि) यदा (सनीलाभिः) बलयुक्तैः (दशभिः) दशेन्द्रियैः (काम्यं) सर्वकामप्रदं,(मधु) आनन्दरूपं परमात्मानं (जठरे) अन्तः-करणमें (मृजान्ति) ध्यानविषयं कुर्वन्ति तदा (बहवः) प्रचुराः (मनी-षिणः) योगिनः (साकं वदन्ति) युगपदेव उच्चारयन्ति। किं तत् वदन्ति (इन्द्रस्य) ऐश्वर्यस्यं (सोमं) उत्पादकं परमात्मानं (आदुहुः) यूयं साक्षात्कुरुत ॥

पदार्थ—(यदि) जब (बहवोमनीषिणः) बुद्धिमान् लोग (साकं) साथही (वदन्ति) उसका यशोगान करते हैं। तब (इन्द्रस्य) कर्मयोगीके (जठरे) अन्तःकरणमें (सोमं) शान्तिरूप परमात्मा (दुहुः) परिपूर्ण रहते हैं और (सुगभस्तयोनरः) भाग्यवान् लोग (यदा) जब (मृजन्ति) उसका साक्षात्कार करते हैं। तब (सनीलाभिर्दशभिः) बलयुक्त दश इन्द्रियोंसे (काम्यं मधु) यथेष्ट आनन्दको लाभ करते हैं ॥

भावार्थ—जब कर्मयोगी लोग उस परमात्माका साक्षात्कार करते हैं, तब सामाजिकबल उत्पन्न होता है। अर्थात् बहुतसे लोगोंकी सङ्गति होकर परमात्माके यशका गान करते हैं ॥२॥

अरममाणो अत्येति गा अभि सूर्यस्य
प्रियं दुहितुस्तिरो रवम् ।
अन्वस्मै जोषमभरद्विनङ्गृसः सं द्वयीभिः
स्वसृभिः क्षेति जामिभिः ॥ ३ ॥

अरममाणः । अति । एति । गाः । अभि । सूर्यस्य । प्रियं । दुहितुः । तिरः । रवं । अनु । अस्मै । जोषं । अभ-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रत् । विनऽङ्गृसः । सं । द्र्यीभिः । स्वस्रृऽभिः । क्षेति । जामिऽभिः ॥३॥

पदार्थः—(अरममाणः) जितेन्द्रियः कर्मयोगी (गाः) इन्द्रियाणि (अत्येति) अतिक्रामति (सूर्यस्य प्रियं दुहितुः) रवेः प्रियाया उषायाः (अभि) सम्मुखं (तिरोरवं) शब्दायमानः सन् स्थिरोभवति ! अथच स कर्मयोगी (द्र्यीभिः स्वस्रृभिः) एकेन मनसाऽऽविर्भावात्स्वस्रृभावं दधन्त्यौ कर्मयोगस्य द्वे वृत्ती (जामिभिः) ये युगलरूपेण वर्तमाने ताभ्यां (संक्षेति) विचरति । (विनङ्गृसः) स्तोता (अस्मै) कर्मयोगिने (जोषमन्वभरत्) प्रीत्या संसेवते ॥

पदार्थ—(अरममाणः) जितेन्द्रियकर्मयोगी (गाः) इन्द्रियोंका (अत्येति) अतिक्रमण करता है । (सूर्यस्य प्रियं दुहितुः) सूर्यकी प्रिय दुहिता उषाके (अभि) सम्मुख (तिरोरवं) शब्दायमान होकर स्थिर होता है । और वह कर्मयोगी (द्र्यीभिः स्वस्रृभिः) कर्मयोगकी दोनों वृत्तियें जो एक मनसे उत्पन्न होनेके कारण स्वस्रृभावको धारण किये हुई हैं, और (जामिभिः) जो युगलरूपसे रहतीं हैं, उनसे (संक्षेति) विचरता है । (विनङ्गृसः) स्तोता (अस्मै) उस कर्मयोगीके लिये (जोषमन्वभरत्) प्रीतिसे सेवन करता है ॥

भावार्थ—जितेन्द्रिय पुरुषके यशको स्तोता लोग गान करते हैं । क्योंकि उनके हाथमें इन्द्रिय-रूपी घोड़ोंकी रासें रहतीं हैं । इसी अभिप्रायसे उपनिषत् में यह कहा है, कि "सोऽध्वनः पारमाप्नोति तद्विष्णोः परमं पदम्" वही पुरुष इस संसाररूपी मार्गको तै करके विष्णुके परम पदको प्राप्त होता है, अन्य नहीं ॥३॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नृधूतो अद्रिषुतो बर्हिषि प्रियः
पतिर्गवां प्रदिव इन्दुर्ऋत्वियः ।
पुरन्धिवान्मनुषो यज्ञसाधनः
शुचिर्धिया पवते सोम इन्द्र ते ॥४॥

नृऽधूतः । अद्रिऽसुतः । बर्हिषि । प्रियः । पतिः । गवाँ । प्रऽदिवः । इन्दुः । ऋत्वियः । पुरन्धिऽवान् । मनुषः । यज्ञऽसाधनः । शुचिः । धिया । पवते । सोमः । इन्द्र । ते ॥४॥

पदार्थः—(इन्द्र) हे कर्मयोगिन् ! (नृधूतः) सर्वकम्पकः (अद्रिषुतः) संस्कृतेन्द्रियैः साक्षात्कृतस्तथा (बर्हिषि) यज्ञेषु (प्रियः) प्रियकारकः (गवां पतिः) लोकलोकान्तरस्य भर्ता तथा (प्रदिवः) द्युलोकस्य (इन्दुः) प्रकाशकः (ऋत्वियः) त्रिकालज्ञः (पुरन्धिवान्) सर्वज्ञः (मनुषः) मनुष्येभ्यः (यज्ञसाधनः) ज्ञानयज्ञकर्मयज्ञादिदायकः सः (सोमः) परमेश्वरः (शुचिर्धिया) शुद्धबुद्ध्या साक्षात्कृतः सन् (ते) त्वां (पवते) पवित्रयति ॥

पदार्थ—(इन्द्र) हे कर्मयोगिन् ! परमात्मा (नृधूतः) सबको कम्पायमान करने वाला, और (अद्रिषुतः) संस्कृत इन्द्रियोंकी वृत्तियोंसे साक्षात्कारको जो प्राप्त है, तथा (बर्हिषि) यज्ञोंमें (प्रियः) जो प्रिय है, और जो जगदीश्वर (गवां पतिः) लोकलोकान्तरोंका पति है, तथा (प्रदिवः) द्युलोकका (इन्दुः) प्रकाशक है । और (ऋत्वियः) त्रिकालज्ञ (पुरन्धिवान्) सर्वज्ञ तथा (मनुषः) मनुष्योंके लिये (यज्ञसाधनः) ज्ञानयज्ञ, कर्मयज्ञादिकोंका देने वाला वह (सोमः) परमात्मा (शुचिर्धिया) शुद्धबुद्धिसे साक्षात्कार किया हुआ (ते) तुमको (पवते) पवित्र करता है ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भावार्थ—जो लोक-लोकान्तरोंका अधिपति परमात्मा है, उसको जब मनुष्य ज्ञानदृष्टिसे लाभ कर लेता है, तब आनन्दित हो जाता है ॥४॥

नृबाहुभ्यां चोदितो धारया
सुतोऽनुष्वधं पवते सोम इन्द्र ते ।
आप्राः क्रतून्त्समजैरध्वरे मतीर्वेर्न
द्रुषच्चम्वोः३ रासदद्धरिः ॥ ५ ॥ २७ ॥

नृबाहुऽभ्यां । चोदितः । धारया । सुतः । अनुऽस्वधं । पवते । सोमः । इन्द्र । ते । आ । अप्राः । क्रतून् । सं । अजैः । अध्वरे । मतीः । वेः । न । द्रुऽसत् । चम्वोः । आ असदत् । हरिः ॥ ५ ॥

पदार्थः—(इन्द्र) हे कर्मयोगिन् ! (ते) त्वां (अनुष्वधं) बलार्थं (सोमः) शान्तरूपः परमात्मा (पवते) पवित्रयतु । उक्तः परमेश्वरः (नृबाहुभ्यां) मनुष्याणां ज्ञानेन कर्मणा च (चोदितः) प्रेरितः अथ च (धारया) धारणरूपबुद्ध्या (सुतः) साक्षात्कृतः सन् पवित्रयतु । उक्तपरमात्मना पवित्रितस्त्वं (क्रतूनाप्राः) कर्माणि प्राप्नुहि । (अध्वरे) धर्मयुद्धे (मतीः) अभिमानिनश्शत्रून् (समजैः) सम्यग्जय (वेर्न) यथा विद्युत् (द्रुषत्) प्रतिगतिशीलपदार्थेषु स्थिरास्ति तथा (हरिः) पापहर्ता परमात्मा (चम्वोः) द्यावापृथिव्योः (आसदत्) स्थिरोस्ति ॥

पदार्थ—(इन्द्र) हे कर्मयोगिन् ! (ते) तुमको (अनुष्वधं) बलके लिये (सोमः) शान्तरूप परमात्मा (पवते) पवित्र करे । उक्त-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परमात्मा (नृबाहुभ्यां) मनुष्योंके ज्ञान और कर्म द्वारा (चोदितः) प्रेरणा किया हुआ, तथा (धारया) धारणारूप बुद्धिसे (सुतः) साक्षात्कार किया हुआ पवित्र करे । उक्त परमात्माके पवित्र किये हुए तुम (ऋतूनाप्राः) कर्मोंको प्राप्त हो । (अध्वरे) धर्मयुद्धमें (मतीः) अभिमानी शत्रुओंको तुम (समजैः) भलीभाँति जीतो । (वेर्न) जिस प्रकार विद्युत् (द्रुषत्) प्रत्येक गतिशील पदार्थोंमें स्थिर है, इसी प्रकार (हरिः) परमात्मा (चम्वोः) द्युलोक तथा पृथिवीलोकमें (आसदत्) स्थिर है ॥

भावार्थ—कर्मयोगी उद्योगी पुरुष धर्मयुद्धमें अन्यायकारी शत्रुओं पर विजय पाते हैं । और विद्युत्के समान सर्वव्यापक परमात्मा पर भरोसा रखकर इस संसारमें अपनी गति करते हैं ॥५॥

अंशुं दुहन्ति स्तनयन्तमक्षितं
कविं कवयोऽपसो मनीषिणः ।
समी गावो मतयो यन्ति संयत-
ऋतस्य योना सदने पुनर्भुवः ॥ ६ ॥

अंशुं । दुहन्ति । स्तनयन्तं । अक्षितं । कविं । कवयः । अपसः । मनीषिणः । सं । ईमिति । गावः । मतयः । यन्ति । संऽयतः । ऋतस्य । योना । सदने । पुनःऽभुवः ॥६॥

पदार्थः—(पुनर्भुवः) भूयोभूयोऽभ्यासकारिण्यः (गावो-मतयः) बुद्धिरूपा इन्द्रियवृत्तयः (संयतः) संयमिताः (ऋतस्य योना सदने) सत्यस्य यज्ञे स्थिराः (ईं) उक्तं परमात्मानं (संयन्ति) प्रापयन्ति । अथच (मनीषिणः) बुद्धिमन्तः (अपसः) कर्मयोगिनः (कवयः) स्तोतारोजनाः (कविं) सर्वज्ञं (अंशुं)

Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सर्वव्यापकं (स्तनयन्तं) जगद्विस्तारयन्तं (अक्षितं) अविनाशिनं परमेश्वरं (दुहन्ति) साक्षात्कुर्वन्ति ॥

पदार्थ—(पुनर्भुवः) बारम्बार अभ्यास करने वाली (गावो मतयः) बुद्धिरूपी इन्द्रियवृत्तियें (संयतः) संयमको प्राप्त होतीं हुई (ऋतस्य योना सदने) सचाईके यज्ञमें स्थिर (ईं) उक्त परमात्माको (संयन्ति) प्राप्त करातीं हैं । और (मनीषिणः) बुद्धिमान् (अपसः) कर्मयोगी (कवयः) स्तुतिकी शक्ति रखने वाले लोग (कविं) सर्वज्ञ (अंशुं) सर्वव्यापक तथा (स्तनयन्तं) सम्पूर्ण संसारका विस्तार करने वाले (अक्षितं) क्षयरहित परमात्माका (दुहन्ति) साक्षात्कार करते हैं ॥

भावार्थ—जो लोग सर्वाधार और सर्वेश्वर परमात्माके ज्ञानको लाभ करते हैं, वेही उसके सचाईके यज्ञके ऋत्विक् बन सकते हैं, अन्य नहीं ॥६॥

नाभा पृथिव्या धरुणो महो दिवो३
ऽपामूर्मौ सिन्धुष्वन्तरुक्षितः ।
इन्द्रस्य वज्रो वृषभो विभूवसुः
सोमो हृदे पवते चारु मत्सरः ॥७॥

नाभा । पृथिव्याः । धरुणः । महः । दिवः । अपां । ऊर्मौ । सिन्धुषु । अन्तः । उक्षितः । इन्द्रस्य । वज्रः । वृषभः । विभुऽवसुः । सोमः । हृदे । पवते । चारु । मत्सरः ॥७॥

पदार्थ—(इन्द्रस्य वज्रः) रुद्ररूपः (वृषभः) कामानांवर्षकः (विभूवसुः) पूर्णैश्वर्ययुक्तः (चारु मत्सरः) सर्वोपरि प्रमोदरूपः पूर्वोक्तः (सोमः) जगदीशः (हृदे) मद्हृदयं (पवते) पावित्रयतु । (पृथिव्या नाभा) यः परमेश्वरः पृथिव्या नाभौ स्थिरः

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथच (महोदिवः) महतोद्युलोकस्य (धरुणः) धारकोस्ति । तथा (अपामूर्मौ) जलतरङ्गेषु (सिन्धुषु) समुद्रेषु च (अन्तरुक्षितः) अभिषिक्तोस्ति स परमात्मा मां पवित्रयतु ॥

पदार्थ—(इन्द्रस्य वज्रः) रुद्ररूप परमात्मा (वृषभः) सब कामनाओंकी वृष्टि करने वाला तथा (विभूवसुः) परिपूर्ण ऐश्वर्य वाला और (चारु मत्सरः) जिसका सर्वोपरि आनन्द है, वह उक्त (सोमः) परमात्मा (हृदे) हमारे हृदयको (पवते) पवित्र करे । (पृथिव्या नाभा) जो परमात्मा पृथिवीकी नाभिमें स्थिर है, और (महोदिवः) बड़े द्युलोकका (धरुणः) धारण करने वाला है । तथा (अपामूर्मौ) जलकी लहरोंमें और (सिन्धुषु) समुद्रोंमें (अन्तरुक्षितः) अभिषिक्त किया गया है । उक्त गुणविशिष्ट परमात्मा हमको पवित्र करे ॥

भावार्थ—जो लोग उक्तगुणसे विशिष्ट परमात्माका उपासन करते हैं, और उसमें अटल विश्वास रखते हैं, परमात्मा उनको अवश्यमेव पवित्र करता है । और जो हतविश्वास होकर, ईश्वरके नियमका उल्लङ्घन करते हैं, परमात्मा उनके मदको चूर्ण करनेके लिये वज्रके समान उद्यत रहता है ॥७॥

स तू पवस्व परि पार्थिवं रजः
स्तोत्रे शिक्षन्नाधून्वते च सुक्रतो ।
मा नो निर्भाग्वसुनः सादनस्पृशो-
रयिं पिशङ्गं बहुलं वसीमहि ॥८॥

सः । तु । पवस्व । परि । पार्थिवं । रजः । स्तोत्रे । शिक्षन् । आऽधून्वते । च । सुक्रतो इति सुऽक्रतो । मा । नः । निः । भाक् । वसुनः । सदनऽस्पृशः । रयिं । पिशङ्गं । बहुलं । वसीमहि ॥८॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(सुक्रतो) हे शोभनयज्ञप्रभो जगन्नियन्तः ! (सः) पूर्वोक्तस्त्वं (तु) झटिति (पार्थिवं) पृथ्वीलोकस्य तथा (रजः) अन्तरिक्षलोकस्य (परि) चतुर्दिक्षु (पवस्व) मां पवित्रय । अथच (आधून्वते स्तोत्रे) कम्पितं स्तोतारं मां (शिक्षन्) शिक्षयन् पवित्रय । तथा (सादनस्पृशः) यत् मन्दिर-शोभारूपं (वसुनः) धनं वर्तते तेन (नः) अस्मान् (मानिर्भाक्) वियुक्तान् कुरु । अतः (पिशङ्गं बहुलं रयिं) स्वर्णादियुतं बहुधनं (वसीमहि) वयं प्राप्नुमः ॥

पदार्थ—(सुक्रतो) हे शोभनयज्ञेश्वर परमात्मन् ! (सः) वह पूर्वोक्त आप (तु) शीघ्र (पार्थिवं) पृथिवीलोक और (रजः) अन्तरिक्ष-लोकके (परि) चारो ओर (पवस्व) हमको पवित्र करें । और (आधून्वते स्तोत्रे) कम्पायमान हुए तथा स्तुति करते हुए मुझको (शिक्षन्) शिक्षा करते हुए आप पवित्र करें । और (सादनस्पृशः) घरके शोभाभूत (वसुनः) जो धन हैं उनसे (नः) हमको (मानिर्भाक्) वियुक्तमत करिये । इस लिये (पिशङ्गं) स्वर्णादियुत (बहुलं रयिं) बहुत धनको (वसीमहि) हम लोग प्राप्त हों ॥

भावार्थ—हे परमात्मन् ! आपकी कृपासे हम लोग पृथिवी तथा अन्तरिक्षलोकके चारो ओर परिभ्रमण करें । और नाना प्रकारके धनोंको प्राप्त करें ॥८॥

आ तू न इन्दो शतदात्वश्व्यं
सहस्रदातु पशुमद्धिरण्यवत् ।
उप मास्व बृहती रेवतीरिषोऽधि
स्तोत्रस्य पवमान नो गहि ॥९॥२८॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आ । तु । नः । इन्दो इति । शतऽदातु । अश्व्यं । सहस्रऽदातु । पशुऽमत् । हिरण्यऽवत् । उप । मास्व । बृहतीः । रेवतीः । इषः । अधि । स्तोत्रस्य । पवमान । नः । गहि ॥९॥

पदार्थः—(इन्दो) प्रकाशरूप परमात्मन् ! त्वम् (शतदातु अश्व्यं) विद्युदादिशतविधकलाकौशलयुक्तं तथा (सहस्रदातु पशुमत् हिरण्यवत्) सहस्रविधपशुस्वर्णादियुक्तं धनमथच (रेवतीरिषः) धनयुतमैश्वर्यं यत् (बृहतीः) महद्भवते तानि मदर्थं (उपमास्व) निर्मिमीष्व । (पवमान) पावक परमेश्वर ! (स्तोत्रस्य) स्तोतॄन् (नः) अस्मान् (अधिगहि) गृह्णातु ॥

पदार्थ—(इन्दो) प्रकाशरूप परमात्मन् ! आप (शतदातु अश्व्यं) विद्युदादि सैकड़ो प्रकारके कलाकौशलयुक्त और (सहस्रदातु) सहस्रों प्रकारके (पशुमत् हिरण्यवत्) पशु और हिरण्यादि युत धन और (रेवतीरिषः) धनयुक्त ऐश्वर्य (बृहतीः) जो सबसे बड़े हैं, उनको हमारे लिये (उपमास्व) निर्माण करिये । (पवमान) सबको पवित्र करने वाले परमात्मन् ! (स्तोत्रस्य) उक्त स्तुतिके करने वाले (नः) हमको (अधिगहि) आप ग्रहण करें ॥

भावार्थ—जो पुरुष अपने कर्मयोग और उद्योगके अनन्तर अपने कर्मोंको ईश्वरार्पण कर देता है, अर्थात् निष्काम भावसे कर्मोंको करता है, परमात्मा अवश्यमेव उसका उद्धार करता है ॥९॥

इति द्विसप्ततितमं सूक्तमष्टाविंशोवर्गश्च समाप्तः ॥

यह ७२वां सूक्त और २८वां वर्ग समाप्त हुआ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथ नवर्चस्य त्रिसप्ततितमस्य सूक्तस्य—

१–९ पवित्र ऋषिः॥ पवमानः सोमो देवता॥ छन्दः–१ जगती। २–७ निचृज्जगती। ८,९ विराड्जगती॥ निषादः स्वरः॥

अथ परमात्मना यज्ञकर्मोपदिश्यते।

अब परमात्मा यज्ञकर्मका उपदेश करते हैं।

स्रक्वे द्रप्सस्य धमतः समस्वरन्नृतस्य
योना समरन्त नाभयः।
त्रीन्त्स मूर्धो असुरश्चक्र आरभे
सत्यस्य नावः सुकृतमपीपरन्॥१॥

स्रक्वे। द्रप्सस्य। धमतः। सं। अस्वरन्। ऋतस्य। योना। सं। अरन्त। नाभयः। त्रीन्। सः। मूर्धः। असुरः। चक्रे। आऽरभे। सत्यस्य। नावः। सुऽकृतं। अपीपरन्॥१॥

पदार्थः—(सत्यस्य नावः) सत्यस्य नौकारूपा उक्ता यज्ञाः (सुकृतं) शोभनकर्माणं जनं (अपीपरन्) ऐश्वर्यैः परिपूरयन्ति। (स सोमः) उक्तपरमात्मना (मूर्ध्नः) सर्वोपरि (त्रीन्) त्रयाणां लोकानां (आरभे) आरम्भाय (असुरश्चक्रे) असुरा निर्मिताः। अथ च (द्रप्सस्य) कर्मयज्ञस्य (स्रक्वे) शिरःस्थानीयाः (धमतः) प्रतिदिनं शुभकर्मणि तत्पराः कर्मयोगिनो निर्मिताः। पूर्वोक्ताः कर्मयोगिनः (ऋतस्य योना) यज्ञस्य कारणरूपे-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कर्मणि (समस्वरन्) चेष्टां कुर्वन्तः (समरन्तः) सांसारिकीं यात्रां कुर्वन्ति । उक्ताः कर्मयोगिनः परमात्मना (नाभयः) नाभिस्थानीयाः कृताः ॥

पदार्थ—(सत्यस्य नावः) सचाईकी नौकारूप उक्त यज्ञ (सुकृतं) शोभन कर्म वालेको (अपीपरन्) ऐश्वर्योंसे परिपूर्ण करते हैं । (स सोमः) उक्त परमात्माने (मूर्धनः) सर्वोपरि (त्रीन्) तीन लोकोंके (आरभे) आरंभके लिये (असुरश्चक्रे) असुरोंको बनाया । और (द्रप्सस्य) कर्मयज्ञके (स्वके) मूर्धास्थानी (धमतः) प्रतिदिन कर्म करनेमें तत्पर कर्मयोगियोंको बनाया । उक्त कर्मयोगी (ऋतस्य योना) यज्ञके कारणरूप कर्ममें (समस्वरन्) चेष्टा करते हुए (समरन्तः) सांसारिक यात्रा करते हैं । उक्त कर्मयोगियोंको परमात्माने (नाभयः) नाभिस्थानीय बनाया ॥

भावार्थ—इस मंत्रमें असुरोके तीन लोकोंका वर्णन किया है। और वे तीन लोक काम, क्रोध, और लोभ हैं । इसी अभिप्रायसे गीतामें यह कहा है, कि " त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः । कामः क्रोधस्तथालोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ॥" और इनसे विपरीत कर्मयोगियोंको यज्ञकी नाभि और यज्ञका मुखरूप वर्णन किया है ॥१॥

अथासुरान्निन्दयन्कर्मयोगिनः प्रशंसयन्नाह ।

अब असुरोंकी निन्दा करते हुए, और कर्मयोगियोंकी प्रशंसा करते हुए कहतेहैं।

सम्यक् सम्यञ्चो महिषा अहेषत
सिन्धोरूर्मावधि वेना अवीविपन् ।
मधोर्धाराभिर्जनयन्तो अर्कमि-
त्प्रियामिन्द्रस्य तन्वमवीवृधन् ॥२॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सम्यक्। सम्यञ्चः। महिषाः। अहेषत। सिन्धोः। ऊर्मौ। अधि। वेनाः। अवीविपन्। मधोः। धाराभिः। जनयन्तः। अर्कम्। इत्। प्रियां। इन्द्रस्य। तन्वं। अवीवृधन्॥२॥

पदार्थः—(महिषाः) महान्तोजनाः (वेनाः) अभ्युदयाभिलाषिणः (सम्यञ्चः) संगतिमन्तः (सिन्धोरूर्मावधि) संसारसागरेस्मिन् (सम्यक्) सुतरां (अहेषत) बृद्धिं प्राप्नुवन्ति। अथ च (अवीविपन्) दुष्टान्कम्पयन्ति च। (मधोर्धाराभिः) ऐश्वर्यस्य धाराभिः (जनयन्तः) प्रकटन्तः (अर्कमित्) अर्चनीयं परमात्मानं प्राप्नुवन्तः (प्रियामिन्द्रस्य तन्वं) ईश्वरस्य प्रियमैश्वर्यं (अवीवृधन्) वर्धयन्ति॥

पदार्थ—(महिषाः) महान् पुरुष (सम्यञ्चः) संगति वाले (सम्यक्) भलीभांति (सिन्धोरूर्मावधि) इस संसार-रूपी समुद्रमें (वेनाः) अभ्युदयकी अभिलाषा करने वाले (अहेषत) बृद्धिको प्राप्त होते हैं। और (अवीविपन्) दुष्टोंको कम्पायमान करते हैं। (मधोर्धाराभिः) ऐश्वर्यकी धाराओंसे (जनयन्तः) प्रकट होते हुए तथा (अर्कमित्) अर्चनीय परमात्माको प्राप्त होते हुए, (प्रियामिन्द्रस्य तन्वं) ईश्वरके प्रिय ऐश्वर्यको (अवीवृधन्) बढ़ाते हैं॥

भावार्थ—जो लोग परमात्माके महत्वको धारण करके महान् पुरुष बनते हैं, वे इस भवसागरकी लहरोंसे पार हो जाते हैं। और परमात्माके यशको गान करके, अन्य लोगोंको भी अभ्युदयशाली बनाकर, इस भवसागरकी धारसे पार कर देते हैं॥२॥

पवित्रवन्तः परि वाचमासते पितैषां
प्रत्नो अभि रक्षति व्रतम्।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

महः समुद्रं वरुणस्तिरो दधे धीरा
इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम् ॥ ३ ॥

पवित्रवन्तः । परिवाचं । आसते । पिता । एषां । प्रत्नः ।
अभि । रक्षति । व्रतं । महः । समुद्रं । वरुणः । तिरः ।
दधे । धीराः । इत् । शेकुः । धरुणेषु । आरभं ॥३॥

पदार्थः—(पवित्रवन्तः) पुण्यकर्माणः कर्मयोगिनः (परिवाचं) वेदवाचं (आसते) आश्रयन्ति (एषां) अमीषां कर्मयोगिनां (प्रत्नः) प्राचीनः (पिता) परमात्मा (व्रतं) एषांसद्व्रतं (अभिरक्षति) रक्षति । अथ च तदभिमुखं (महः समुद्रं) महान्तं संसारसागरमिमं (वरुणं) वरुणरूपेण स्वतरङ्गेषु निमज्जयितुमुद्यतं (तिरोदधे) परमात्मा तिरस्करोति । तथा (धरुणेषु) कर्मयोगज्ञानयोगादिसाधनेषु (आरभं) आरम्भं कर्तुं (धीराः) धीराः पुरुषाः (इत्) एव (शेकुः) समर्था भवन्ति, नान्ये ॥

पदार्थ—(पवित्रवन्तः) उक्त पुण्य कर्म वाले कर्मयोगी (परिवाचं) वेदरूपी वाणीका (आसते) आश्रयण करते हैं । (एषां) इन कर्मयोगियोंका (प्रत्नः) प्राचीन (पिता) परमात्मा (व्रतं) इनके व्रतकी (अभिरक्षति) रक्षा करता है । और उनके साम्हने (महः समुद्रं) इस बड़े संसाररूप सागरको (वरुणं) जो वरुणरूप अपनी लहरोंमें डुबा लेनेके-लिये उद्यत है, उसको (तिरोदधे) परमात्मा तिरस्कार कर देता है । (धरुणेषु) उक्त कर्मयोग और ज्ञानयोगादि-साधनोंमें (आरभं) आरम्भको (धीराः) धीरपुरुष (इत्) ही (शेकुः) समर्थ होते हैं, अन्य नहीं ॥

भावार्थ—परमात्मा उपदेश करता है, कि पवित्र कर्मों वाले

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पुरुषही वाग्गमी बनते हैं । और वे ही इस भवसागरकी लहरोंसे पारहो सकते हैं, अन्य नहीं । इसी अभिप्रायसे उपनिषत्में यह कहा है, कि "कश्चिद्धीर आत्मानमैक्षत्" कि यह संसार छुरेकी धार है । कोई धीर पुरुष ही इस धारका अतिक्रमण कर सकता है। सब नहीं । भवसागरकी लहरें और छुरेकी धार यह एक अत्यन्त उत्तेजना उत्पन्न करनेके लिये वाणीका अलङ्कार है ॥३॥

सहस्रधारेऽव ते समस्वरन्दिवो
नाके मधुजिह्वा असश्चतः ।
अस्य स्पशो न नि मिषन्ति भूर्णयः
पदेपदे पाशिनः सन्ति सेतवः ॥४॥

सहस्रऽधारे । अव । ते । स । अश्वरन् । दिवः । नाके । मधुऽजिह्वाः । असश्चतः । अस्य । स्पशः । न । नि । मिषन्ति । भूर्णयः । पदेऽपदे । पाशिनः । सन्ति । सेतवः ॥४॥

पदार्थः—हे जगन्नियन्तः परमेश्वर ! (ते) तव (सेतवः) मर्यादारूपाः सेतवः (पदेपदे सन्ति) स्थाने स्थाने विद्यन्ते । अथ च ते मर्यादासेतवः (पाशिनः) पापिभ्यो दण्डदातारः । तथा (भूर्णयः) क्षिप्रकारिणस्सन्ति । अथच (न निमिषन्ति) तदवमानं कृत्वा न कोपि स्थातुं शक्नोति । (अस्य) अमुष्य परमात्मनः (स्पशः) सारभूतानि (असश्चतः) अनन्तानि ज्योतींषि सन्ति । हे परमात्मन् ! भवान् (सहस्रधारे) अनन्तानन्दस्वरूपे (अव) मम रक्षां करोतु । तथा (दिवोनाके) द्युलोकमध्ये (समस्वरन्)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ये स्यन्दमाना भवदानन्दाः [मधुजिह्वा] ये आह्लादनीयास्ते मां प्राप्नुवन्तु ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (ते) आपका (सेतवः) मर्यादारूप सेतु (पदेपदे सन्ति) पद पद पर हैं । और वे मर्यादारूप सेतु (पाशिनः) पापियोंके दण्डदाता हैं । (भूर्णयः) शीघ्रता करने वाले हैं । और (न निमिषन्ति) उनके सामने कोई आँख उठा कर नहीं देख सकता । (अस्य) उस परमात्माके (स्पशः) सारभूत (असश्चतः) अनन्त ज्योतियें हैं । हे परमात्मन् ! आप (सहस्रधारे) अनन्त आनन्द-स्वरूप-में (अव) हमारी रक्षा करें । और (दिवोनाके) द्युलोकके मध्यमें (समस्वरन्) स्रवित होते हुए, आपके आनन्द (मधुजिह्वा) जो अत्यन्त आह्लाद जनक हैं, वे हमको प्राप्त हों ॥

भावार्थ—परमात्माके आनन्दकी सहस्रों धारें इस संसारमें इतस्ततः सर्वत्र बह रही हैं । जो पुरुष परमात्माकी आज्ञाओंको पालन करता है, वही उन आनन्दोंको लाभ करता है, अन्य नहीं ॥४॥

पितुर्मातुरध्या ये समस्वरन्नृचा
शोचन्तः सन्दहन्तो अव्रतान् ।
इन्द्राद्विष्टामप धमन्ति मायया
त्वचमसिक्नीं भूमनो दिवस्परि ॥५॥२९॥

पितुः । मातुः । अधि । आ । ये । समस्वरन् । ऋचा ।
शोचन्तः । सन्दहन्तः । अव्रतान् । इन्द्रात्ऽविष्टां । अप । धमन्ति ।
मायया । त्वचं । असिक्नीं । भूमनः । दिवः । परि ॥५॥

पदार्थः—ये मनुष्याः (पितुर्मातुः) मातापित्रोः शिक्षां-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्राप्य सुशिक्षिताः सन्ति अथ (ये) ये जनाः (ऋचा) वेदस्य ऋग्भिः (समस्वरन्) स्वीयजीवनयात्रां कुर्वन्ति तथा (शोचन्तोऽव्रतान्) शोकशीलानव्रतिनः (संदहन्तः) सम्यग्दाहकास्सन्ति तथा ये (मायया) स्वकीयापूर्वशक्त्या (इन्द्रद्विष्टामपधमन्ति) ईश्वराज्ञाभञ्जकानां राक्षसानां निहन्तारस्सन्ति अथच ये राक्षसाः (असिक्नीं) रात्रेरन्धकारमिव (भूमनः) भूलोकस्य तथा (दिवः) द्युलोकस्य (परि) सर्वतः (त्वचं) त्वगिववर्तमानास्तेषां नाशकाः पितृमन्तो मातृमन्तश्च कथ्यन्ते॥

पदार्थ—जो लोग (पितुर्मातुः) पिता माताकी शिक्षाको पाकर सुशिक्षित हैं, और (ये) जो लोग (ऋचा) वेदकी ऋचाओंके द्वारा (समस्वरन्) अपनी जीवनयात्रा करते हैं (शोचन्तोऽव्रतान्) तथा शोकशील अव्रतियोंको (संदहन्तः) भलीभांति दाह करने वाले हैं। और जो (मायया) अपनी अपूर्व-शक्तिसे (इन्द्रद्विष्टामपधमन्ति) ईश्वरकी आज्ञाको भङ्ग करने वाले राक्षसोंका नाश करते हैं, और जो राक्षस (असिक्नीं) रात्रिके अन्धकारके समान (भूमनः) भूलोक और (दिवः) द्युलोकके (परि) चारो ओर (त्वचं) त्वचाके समान वर्तमान हैं, उनको नाश करने वाले पितृमान् और मातृमान् कहलाते हैं॥

भावार्थ—मनुष्य इस संसारमें चार प्रकारसे शिक्षाको लाभ करता है। वे चार प्रकार यह हैं, कि माता, पिता, आचार्य, और गुरु। इसी अभिप्रायसे उपनिषत्में कहा है, कि "मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद" ॥५॥

प्रतान्मानादध्या ये समस्वरञ्छो-
कयन्त्रासो रभसस्य मन्तवः।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अपा॑न॒क्षासो॑ बधि॒रा अ॑हासत
ऋ॒तस्य॒ पन्थां॒ न त॑रन्ति दु॒ष्कृतः॑ ॥६॥

प्र॒त्नात् । माना॑त् । अधि॑ । आ । ये । सं॒ऽअस्व॑रन् । श्लोक॑ऽयन्त्रासः । र॒भ॒सस्य॑ । मन्त॑वः । अप॑ । अ॒न॒क्षासः॑ । ब॒धि॒राः । अ॒हा॒सत । ऋ॒तस्य॑ । पन्थां॑ । न । त॒र॒न्ति॒ । दुः॒ऽकृतः॑ ॥

पदार्थः—(अनक्षासः) अज्ञानिनोजनाः (बधिराः) ये-हितमप्युपदेशं न शृण्वन्ति ते (ऋतस्य) सत्यस्य (पन्थां) मार्गं (अपाहासत) उज्झन्ति। (दुष्कृतः) ते दुष्टाचारिणोऽस्य भवसागरस्योर्मिं (न तरन्ति) तरितुं न शक्नुवन्ति। अथच (ये) ये नराः (प्रत्नान्मानात्) प्राचीनादाप्तपुरुषात् (अध्या) आगतान् उपदेशान् (समस्वरन्) पालयन्तः (श्लोकयन्त्रासः) सज्जनैः संगतास्सन्ति तथा (रभसस्य मन्तवः) परमात्माज्ञापालकास्तेऽस्यभवसागरस्योर्मिं तरन्ति ॥

पदार्थ—(अनक्षासः) अज्ञानी लोग (बधिराः) जो हितोपदेशको भी नहीं सुन सकते वे (ऋतस्य पन्थां) सचाईके मार्गको (अपाहासत) छोड़ देते हैं। (दुष्कृतः) वे दुष्टाचारी इस भवसागरकी लहरको (न तरन्ति) नहीं तर सकते। और (ये) जो (प्रत्नात्) प्राचीन (मानात्) आप्त-पुरुषसे (अध्या) आये हुए उपदेशोंको (समस्वरन्) पालन करते हुए (श्लोकयन्त्रासः) सत्पुरुषोंकी संगतिमें रहने वाले हैं तथा (रभसस्य मन्तवः) परमात्माकी आज्ञा मानने वाले हैं, वे इस भवसागरकी लहरको तर जाते हैं ॥

भावार्थ—जो लोग आप्त-पुरुषोंके वाक्यों पर विश्वास करते हैं,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

और सामाजिक-बलको धारण करते हैं, परमात्मा उनकी सदैव रक्षा करता है ॥६॥

सहस्रधारे वितते पवित्र आ वाचं
पुनन्ति कवयो मनीषिणः ।
रुद्रास एषामिषिरासो अद्रुहः
स्पशः स्वञ्चः सुदृशो नृचक्षसः ॥७॥

सहस्रऽधारे । विऽतते । पवित्रे । आ । वाचं । पुनन्ति । कवयः । मनीषिणः । रुद्रासः । एषां । इषिरासः । अद्रुहः । स्पशः । सुऽअञ्चः । सुऽदृशः । नृऽचक्षसः ॥७॥

पदार्थः—(नृचक्षसः) कर्मयोगी तथा (सुदृशः) ज्ञानयोगी (स्वञ्चः) गतिशीलस्तथा (स्पशः) मेधावान् (अद्रुहः) अद्रोग्धा (इषिरासः) गमनशीलः (रुद्रासः) परमात्मनोन्यायपालनाय रुद्ररूपोभवति । (एषां) ज्ञानयोगिकर्मयोगिनां सदैव परमात्मा रक्षकोभवति । अथच ते (सहस्रधारे विततते) अत्यन्तानन्दमये विस्तृते (पवित्रे) पूते परमात्मनि (वाचमापुनन्ति) स्वीयवाचं तस्योपासनया पवित्रयन्ति । पूर्वोक्ता विद्वांस एव (मनीषिणः) मनस्विनस्तथा (कवयः) क्रान्तदर्शिनोभवन्ति ॥

पदार्थ—(नृचक्षसः) कर्मयोगी और (सुदृशः) ज्ञानयोगी (स्वञ्चः) गतीशील और (स्पशः) बुद्धिमान् (अद्रुहः) किसीके साथ द्रोह न करनेवाले हैं । तथा (इषिरासः) गमनशील (रुद्रासः) परमात्माके न्याय पालन करनेके लिये रुद्ररूप होते हैं (एषां) उक्तगुण-सम्पन्न पुरुषोंका-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परमात्मा सदैव रक्षक होता है। और वे लोग (सहस्रधारे वितते) अनन्त आनन्दमय विस्तृत (पवित्रे) पवित्र परमात्मामें (वाचमापुनन्ति) अपनी वाणीको उसकी स्तुति द्वारा पवित्र करते हैं। उक्त प्रकारके विद्वान् ही (मनीषिणः) मनस्वी और (कवयः) क्रान्तदर्शी होते हैं॥

भाथार्व—जो लोग परमात्माके स्वरूपमें चित्तवृत्तिको लगा कर अपने आपको पवित्र करते हैं, वे ही कर्मयोगी और ज्ञानयोगी बन सकते हैं, अन्य नहीं॥७॥

ऋतस्य गोपा न दभाय सुक्रतुस्त्री
ष पवित्रा हृद्यन्तरा दधे।
विद्वान्त्स विश्वा भुवनाभि पश्यत्य-
वाजुष्टान्विध्यति कर्ते अव्रतान्॥८॥

ऋतस्य। गोपाः। न। दभाय। सुऽक्रतुः। त्री। सः। पवित्रा। हृदि। अन्तः। आ। दधे। विद्वान्। सः। विश्वा। भुवना। अभि। पश्यति। अव। अजुष्टान्। विध्यति। कर्ते। अव्रतान्॥८॥

पदार्थः—(ऋतस्य गोपाः) सत्यस्य रक्षकः (सुक्रतुः) शोभनकर्मा (न दभाय) यः परैरदम्भनीयः (सः) असौ कर्मयोगी (पवित्रा) पवित्रे स्वकीये (हृद्यन्तः) अन्तःकरणे (त्री) परमात्मनः उत्पत्तिस्थितिप्रलयरूपास्तिस्रः शक्तीः (आदधे) आदधाति। (स विद्वान्) असौ पण्डितः कर्मयोगी (विश्वा भुवना) सम्पूर्णानि लोकलोकान्तराणि (अभिपश्यति) अवलो-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कयति । अथच (कर्ते) कर्तव्ये (अव्रतान्) अव्रतिनः (अजुष्टान्) परमात्मनोवियुक्तान् (अवविध्यति) हिनस्ति ॥

पदार्थ—(ऋतस्य गोपाः) सचाईकी रक्षा करने वाला (सुक्रतुः) शोभन कर्मों वाला कर्मयोगी (न दभाय) जो किसीसे दबाया नहीं जाता (सः) वह (पवित्रा) अपने पवित्र (हृद्यन्ते) अन्तःकरणमें (त्री) परमात्माकी उत्पत्ति, स्थिति, प्रलयरूप तीनों शक्तियोंको (आदधे) धारण करता है । (विद्वान् सः) वह विद्वान् पुरुष (विश्वा भुवना) सम्पूर्ण लोक-लोकान्तरोंको (अभिपश्यति) देखता है । और (कर्ते) कर्तव्यमें (अव्रतान्) जो अव्रती (अजुष्टान्) और परमात्मासे वियुक्त हैं, उनको (अवविध्यति) मारता है ॥

भावार्थ—जो लोग परमात्मा पर अटल विश्वास रखने वाले हैं, वे किसीसे दबाये नहीं जा सकते ॥८॥

ऋतस्य तन्तुर्विततः पवित्र आ जिह्वाया
अग्रे वरुणस्य मायया ।
धीराश्चित्तत्समिनक्षन्त आशतात्रा
कर्तमव पदात्यप्रभुः ॥९॥३०॥

ऋतस्य । तन्तुः । विऽततः । पवित्रे । आ । जिह्वायाः । अग्रे । वरुणस्य । मायया । धीराः । चित् । तत् । सम्ऽइनक्षन्तः । आशत । अत्र । कर्तं । अव । पदाति । अप्रऽभुः ॥९॥

पदार्थः—(अप्रभुः) योजनः कर्मयोगी नास्ति सः (कर्तमवपदाति) कर्ममार्गात्पतति (अत्र) कर्मण्यस्मिन् (धीराश्चित) कर्मयोगिन एव (तत्) तत्समक्षं (समिनक्षन्तः)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संगच्छन्तः (आशत) स्थिरतां यान्ति । (ऋतस्य) सत्यस्य (तन्तुः) विस्तारकः (विततः) विस्तृतः परमेश्वरः (वरुणस्य मायया) सम्पूर्णजनवशकारिण्या स्वशक्त्या सह (पवित्रे) तस्य पवित्रेऽन्तःकरणे तथा (जिह्वाया अग्रे) जिह्वाग्रभागे (आ) आवसति । उपसर्गश्रुतेर्योग्यक्रियाध्याहारः ।

पदार्थ—(अप्रभुः) जो पुरुष कर्मयोगी नहीं है, वह (कर्तमव-पदाति) कर्मरूप मार्गसे गिर जाता है । (अत्र) इस कर्ममें (धीरा-श्चित्) कर्मयोगी पुरुष ही (तत्) उसके समक्ष (समिनक्षन्तः) गति-शील होकर (आशत) स्थिर होते हैं । (ऋतस्य) सचाईका (तन्तुः) विस्तार करने वाला (विततः) जो विस्तृत है, वह परमात्मा (वरुणस्य मायया) सबको वशीभूत रखने वाली अपनी शक्तिके साथ (पवित्रे) उसके पवित्र अन्तःकरणमें और (जिह्वाया अग्रे) जिह्वाके अग्रभागमें (आ) निवास करता है ॥

भावार्थ—जो कर्मयोगी और उद्योगी पुरुष हैं, उन्हींके अन्तः-करणमें परमात्मा निवास करता है ॥९॥

इति त्रिसप्ततितमं सूक्तं त्रिंशोवर्गश्च समाप्तः ।

यह ७३ वां सूक्त और ३० वां वर्ग समाप्त हुआ ।

अथ नवर्चस्य चतुस्सप्ततितमस्य सूक्तस्य—

१—९ कक्षीवानृषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥

छन्दः—१, ३ पादनिचृज्जगती । २ ६ विराड्जगती । ४ ७ जगती । ५ ९ निचृज्जगती । ८ निचृत्त्रिष्टुप् ।

स्वरः—१-७, ९ निषादः । ८ धैवतः ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथाभ्युदयपात्रतामाह ।

अब अभ्युदयके अधिकारियोंका निरूपण करते हैं।

शिशुर्न जातोऽव चक्रदद्वने स्वर्१यद्वाज्यरुषः सिषासति ।
दिवो रेतसा सचते पयोवृधा तमीमहे सुमती शर्म सप्रथः ॥१॥
शिशुः । न । जातः । अव । चक्रदत् । वने । स्वः । यत् ।
वाजी । अरुषः । सिसासति । दिवः । रेतसा । सचते ।
पयःऽवृधा । तं । ईमहे । सुऽमती । शर्म । सुऽप्रथः ॥१॥

पदार्थः—(वने) भक्तिविषये (यत्) यदा (जातः) सद्य उत्पन्नः (शिशुर्न) बालक इव (चक्रदत्) अयं जिज्ञासुर्जनः स्वभावत एव रोदिति तदा (स्वः) सुखस्वरूपः (वाजी) बलस्वरूपः (अरुषः) प्रकाशस्वरूपः परमेश्वरः (सिषासति) तस्योद्धारं कर्तुमिच्छति । (दिवोरेतसा) यः परमात्मा द्युलोकत आरभ्य सम्पूर्णलोकलोकान्तरैः सह (सचते) स्वीयशक्त्या संगतोभवति । तथा (पयोवृधा) यः स्वकीयैश्वर्येणाभ्युन्नतः (तं) तस्मात्परमात्मनः (सप्रथः) विततमभ्युदयमथच (शर्म) कल्याणं (ईमहे) वयं प्रार्थयामः ॥

पदार्थ—(वने) भक्तिके विषयमें (यत्) जब (जातः) तत्काल उत्पन्न (शिशुः) बालकके (न) समान यह जिज्ञासु-पुरुष स्वाभाविक-रीतिसे (चक्रदत्) रोता है, तब (स्वः) सुख स्वरूप (वाजी) बल-स्वरूप (अरुषः) प्रकाशस्वरूप परमात्मा (सिषासति) उसके उद्धार-की इच्छा करता है । (दिवोरेतसा) जो परमात्मा द्युलोकसे लेकर लोक-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लोकान्तरोंके साथ अपनी शक्तिसे (सचते) संगत है । और (पयोवृधा) जो अपने ऐश्वर्यसे वृद्धिको प्राप्त है, (तं) उस परमात्मासे (सप्रथः) विस्तृत अभ्युदय और (शर्म) निश्रेयस सुख इन दोनोंकी हम लोग (ईमहे) प्रार्थना करते हैं ॥

भावार्थ—जब पुरुष दूध पीने वाले बच्चेके समान मुक्तकण्ठसे परमात्माके आगे रोता है, तब परमात्मा उसे अवश्यमेव ऐश्वर्य देता है ॥१॥

दिवो यः स्कम्भो धरुणः स्वातत
आपूर्णो अंशुः पर्येति विश्वतः ।
सेमे मही रोदसी यक्षदावृता
समीचीने दाधार समिषः कविः ॥२॥

दिवः । यः । स्कम्भः । धरुणः । सुऽआततः । आऽपूर्णः । अंशुः । परिऽएति । विश्वतः । सः । इमे इति । मही इति । रोदसी इति । यक्षत् । आऽवृता । समीचीने इति संऽईचीने । दाधार । सं । इषः । कविः ॥२॥

पदार्थः—(दिवोयः स्कम्भः) यो द्युलोकस्य सहायः अथच (धरुणः) पृथिव्या धारकोस्ति तथा (स्वाततः) विततः (आपूर्णः) सर्वत्र परिपूर्णः (अंशुः) व्यापकः परमात्मा (विश्वतः) सर्वतः (पर्येति) प्राप्तोस्ति (सः) असौ परमात्मा (इमे मही रोदसी) इमं भूलोकं द्युलोकं च (आवृता) आश्चर्यकर्मणा (यक्षत्) संगतं करोति । अथच (समीचीने) संगते द्यावाभूमी स परमात्मैव (दाधार) धारयति । सः (कविः) सर्वज्ञो-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जगदीश्वरः (इषः) ऐश्वर्यान् (सं) संप्रयच्छति। उपसर्ग-श्रुतेर्योग्यक्रियाध्याहारः॥

पदार्थ—(दिवोयः स्कम्भः) जो द्युलोकका सहारा है, और (धरुणः) पृथिवीका धारण करने वाला है। तथा (स्वाततः) विस्तृत (आपूर्णः) सर्वत्र परिपूर्ण (अंशुः) व्यापक परमात्मा (विश्वतः) सब ओरसे (पर्येति) प्राप्त है (सः) वह परमात्मा (इमे मही रोदसी) इस भूलोक और अन्तरिक्ष-लोकको (आहृता) अद्भुतकर्मसे (यक्षत्) संगत करता है, और (समीचीने) संगत द्युलोक और भूलोकको वही परमात्मा (दाधार) धारण करता है। वह (कविः) सर्वज्ञ परमेश्वर (इषः) ऐश्वर्योंको (सं) देता है॥

भावार्थ—जिस परमात्माने द्युलोक और पृथिवी-लोकादिकोंको लीलामात्रसे धारण किया है, वही सब ऐश्वर्योंका दाता है। अन्य नहीं॥२॥

महि स्सरः सुकृतं सोम्यं मधूर्वी
गव्यूतिरदितेर्ऋतं यते।
ईशे यो वृष्टेरित उस्रियो वृषापां
नेता य इतऊतिर्ऋग्मियः॥३॥

महिं। स्सरः। सुऽकृतं। सोम्यं। मधु। उर्वी। गव्यूतिः। अदितेः। ऋतं। यते। ईशे। यः। वृष्टेः। इतः। उस्रियः। वृषा। अपां। नेता। यः। इतःऽऊतिः। ऋग्मियः॥३॥

पदार्थः—(ऋग्मियः) स्तुत्यः (इत ऊतिः) सर्वविध-रक्षकः (यः) यः (नेता) नियन्तास्ति अथच (अपां वृषा)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सम्पूर्णकर्मणां फलदः (उस्रियः) प्रकाशस्वरूपोस्ति स परमेश्वरः (इतः) द्युलोकात् उत्पन्नस्य (वृष्टेः) वृष्ट्यादिकस्य (ईशे) ईश्वरोस्ति। (महि) महीयान् (प्सरः) सर्वस्यादनकर्तास्ति। तथा (सुकृतं) शोभनकर्म्मास्ति। (सोम्यं) सौम्यस्वभाववान् अस्ति। (अदितेः) तस्मात् ज्ञानस्वरूपात्परमात्मनः (गव्यूतिः) अस्य जीवात्मनोमार्गः (मधु) मधुरः अथच (उर्वी) विस्तृतोभवति। अथच (ऋतं यते) सत्ययज्ञं प्राप्तवते पुरुषाय स परमात्मा शुभं विदधाति॥

पदार्थ—(ऋञ्जियः) स्तुतियोग्य (इत ऊतिः) सब प्रकारका रक्षक (यः) जो (नेता) नियन्ता है, और (अपां वृषा) सब प्रकारके कर्मोंका फल देने वाला (उस्रियः) प्रकाशस्वरूप है (इतः) द्युलोकसे उत्पन्न (वृष्टेः) वृष्ट्यादिका (ईशे) ईश्वर है। (महि) सबसे बड़ा है (प्सरः) सबका अत्ता है (सुकृतं) शोभनकर्मा है। (सोम्यं) सौम्य स्वभाव वाला है। (अदितेः) उस ज्ञानस्वरूप परमात्मासे (गव्यूतिः) इस जीवात्माका मार्ग (मधु) मीठा और (उर्वी) विस्तृत होता है। और (ऋतं यते) सत्यरूप यज्ञको प्राप्त होने वाले पुरुषके लिये वह परमात्मा शुभ करता है॥

भावार्थ—सन्मार्ग चाहने वाले पुरुषोंको उचित है, कि वे सचाईका यज्ञ करनेके लिये परमात्माकी शरण लें॥३॥

आत्मन्वन्नौ दुह्यते घृतं पयं
ऋतस्य नाभिरमृतं वि जायते।
समीचीनाः सुदानवः प्रीणन्ति तं
नरो हित्वा मेहन्ति पेरवः॥४॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आत्मन्ऽवत्। नभः। दुह्यते। घृतं। पयः। ऋतस्य। नाभिः। अमृतं। वि। जायते। सम्ऽईचीनाः। सुऽदानवः। प्रीणन्ति। तं। नरः। हितं। अव। मेहन्ति। पेरवः ॥४॥

पदार्थः—येन परमात्मना (नभः) आकाशमण्डलात् (आत्मन्वत्) सारभूतं (घृतं) जलादिकं (दुह्यते) प्रपूर्यते अथच (ऋतस्य नाभिः) सत्यस्य नाभिस्थानीयोस्ति तथा (अमृतं) अमृतस्वरूपोस्ति सः (पयः) तृप्तिरूपः परमात्मा (विजायते) विराजमानोवर्तते। (नरः) यः पुरुषः तस्योपासनां करोति (तं) तं पुरुषं (पेरवः) सर्वरक्षिकाः शक्तयः (प्रीणन्ति) तर्पयन्ति। अथच (समीचीनाः) सुन्दराः (सुदानवः) दानशीलाश्शक्तयः तदर्थं (हितं) हितस्य (अवमेहन्ति) वृष्टिं कुर्वन्ति ॥

पदार्थ—जिस परमात्मासे (नभः) द्युमण्डलसे (आत्मन्वत्) सारभूत (घृतं) जलादिक (दुह्यते) दुहे जाते हैं, और (ऋतस्य) जो सचाईकी (नाभिः) नाभि है और (अमृतं) अमृतस्वरूप है वह (पयः) तृप्तिरूप परमात्मा (विजायते) सर्वत्र विराजमान है। (नरः) जो पुरुष उसकी उपासना करता है (तं) उसको (पेरवः) सर्वरक्षक शक्तियें (प्रीणन्ति) तृप्त करतीं हैं। और (समीचीनाः) सुन्दर (सुदानवः) दानशील शक्तियें उसके लिये (हितं) हितकी (अवमेहन्ति) वृष्टि करती हैं ॥

भावार्थ—जो पुरुष परमात्माकी आज्ञाओंका पालन करते हैं, परमात्मा उनके लिये अपनी दानशील शक्तियोंसे अनन्त प्रकारके ऐश्वर्यों की वृष्टि करता है ॥४॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अरावीदंशुः सचमान ऊर्मिणा
देवाव्यं मनुषे पिन्वति त्वचम् ।
दधाति गर्भमदितेरुपस्थ आ
येन तोकं च तनयं च धामहे ॥५॥३१॥

अरावीत् । अंशुः । सचमानः । ऊर्मिणा । देवऽअव्यं । मनुषे । पिन्वति । त्वचं । दधाति । गर्भं । अदितेः । उपऽस्थे । आ । येन । तोकं । च । तनयं । च । धामहे ॥५॥

पदार्थः—(ऊर्मिणा) स्वीयानन्दतरङ्गैः (सचमानः) संगतः (अंशुः) व्यापकः परमात्मा (अरावीत्) सदुपदेशं करोति । अथच (मनुषे) मनुष्याय (देवाव्यं त्वचं) देवभावोत्पादकं शरीरं (पिन्वति) पुष्णाति । तथा (अदितेरुपस्थे) अस्याः पृथिव्याः (गर्भं) नानाविधौषधेरुत्पत्तिरूपं गर्भं (आदधाति) धारयति । (येन) यतः (तोकं) दुःखनाशकं (तनयं) पुत्रपौत्रादिकं (धामहे) वयं धारयेम ॥

पदार्थ—(ऊर्मिणा) अपने आनन्दकी लहरोंसे (सचमानः) संगत (अंशुः) सर्वव्यापक परमात्मा (अरावीत्) सदुपदेश करता है । और (मनुषे) मनुष्यके लिये (देवाव्यं त्वचं) देवभावको पैदा करनेवाले शरीरको (पिन्वति) पुष्ट करता है । तथा (अदितेरुपस्थे) इस पृथिवी पर (गर्भं) नाना प्रकारके औषधियोंके उत्पत्तिरूप गर्भको (आदधाति) धारण कराता है । (येन) जिससे (तोकं) दुःखके नाश करने वाले (तनयं) पुत्र-पौत्रको (धामहे) हम लोग धारण करें ॥

भावार्थ—परमात्माकी कृपासे ही सुकर्मा-पुरुषको नीरोग और

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दिव्य शरीर मिलता है। जिससे वह सत्सन्ततिको प्राप्त होकर इस संसार-में अभ्युदयशाली बनता है ॥५॥

सहस्रधारेऽव ता असश्चतस्तृतीये
सन्तु रजसि प्रजावतीः ।
चतस्रो नाभो निहिता अवो-
दिवो हविर्भरन्त्यमृतं घृतश्चुतः ॥६॥

सहस्रऽधारे । अव । ताः । असश्चतः । तृतीये । सन्तु । रजसि । प्रजाऽवतीः । चतस्रः । नाभः । निऽहिताः । अवः । दिवः । हविः । भरन्ति । अमृतं । घृतऽश्चुतः ॥६॥

पदार्थः—(सहस्रधारे) नानाविधैश्वर्यवति (तृतीये) तृतीयेऽन्तरिक्षलोके (रजसि) योलोकोरजोगुणविशिष्टोस्ति तस्मिन् (प्रजावतीः) नानाविधप्रजावन्त्यैश्वर्याणि (सन्तु) अस्मान्मिलन्तु । (असश्चतः) यान्यैश्वर्याणि जीवात्मनोऽशक्तकारीणि न भवन्ति (ताः) ताश्शक्तयः (घृतश्चुतः) या नानाविधस्निग्धपदार्थदात्र्यः (हविः) हवीरूपं (अमृतं भरन्ति) अमृतं ददति । अथच याः (दिवोऽवोनिहिताः) द्युलोकस्याधः स्थितास्तथा यासु (चतस्रोनाभः) चतुर्विधा दीप्तयस्सन्ति, धर्मार्थकाममोक्षफलयुताः इति यावत् ताश्शक्तीः परमात्मास्मभ्यं ददातु ॥

पदार्थ—(सहस्रधारे) अनन्त प्रकारके ऐश्वर्य वाले (तृतीये) तीसरे अन्तरिक्षलोकमें (रजसि) जो रजोगुणविशिष्ट है,उसमें (प्रजावतीः) नाना प्रकारकी प्रजा वाले ऐश्वर्य (सन्तु) हमको प्राप्त हों। (असश्चतः)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जो ऐश्वर्य जीवको अशक्त करने वाले न हों (ताः) वे शक्तियें (घृतश्चुतः) जो नाना प्रकारके स्निग्धपदार्थोंकी देने वालीं हैं (हविरमृतं भरन्ति) और हवीरूप अमृतको देने वालीं हैं। और जो (दिवोऽवोनिहिताः) द्युलोकके नीचे रक्खी हुई हैं, जिनमें (चतस्रोनाभयः) चार प्रकारकी दीप्ति हैं, अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारो प्रकारके फल संयुक्त हैं, वे शक्तियें परमात्मा हमें प्रदान करे॥

भावार्थ—परमात्मा जिन पर प्रसन्न होता है, उनको चारो प्रकारके फलोंका प्रदान करता है॥६॥

श्वेतं रूपं कृणुते यत्सिषासति
सोमो मीढ्वाँ असुरो वेद भूमनः।
धिया शमी सचते सेमभि
प्रवद्दिवस्कवन्धमव दर्षदुद्रिणम्॥७॥

श्वेतं। रूपं। कृणुते। यत्। सिसासति। सोमः। मीढ्वान्। असुरः। वेद। भूमनः। धिया। शमी। सचते। सः। ईं। अभि। प्रऽवत्। दिवः। कवन्धं। अव। दर्षत्। उद्रिणम्॥७॥

पदार्थः—(यत्) यदा (सिषासति) मनुष्यः सुखप्रदान्यैश्वर्याण्याभिवाञ्छति तदा परमेश्वरस्तदर्थं (श्वेतं रूपं कृणुते) ऐश्वर्ययुतं रूपं करोति। (मीढ्वान्) सर्वविधैश्वर्यदः (सोमः) परमात्मा (भूमनः) अखिलस्य लोकस्य (वेद) ज्ञातास्ति। (स ईं) स परमात्मा एनं (धिया) ब्रह्मविषयिण्या बुद्ध्या (सचते) सङ्गतोभवति। अथ स परमेश्वरः (दिवः) द्युलोकाद्-(उद्रिणं) समधिकजलवतीं (कवन्धं) वृष्टिं (अवदर्षत्)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उत्पादयति। तथा (प्रवत् शमी) रुद्रकर्मवतः (असुरः) राक्षसान् दण्डं (अभि) अभिददाति। उपसर्गश्रुतेर्योग्यक्रियाध्याहारः॥

पदार्थ—(यत्) जब (सिक्षासति) मनुष्य सुखप्रद ऐश्वर्य को चाहता है, तब परमात्मा उसके लिये (श्वेतं रूपं कृणुते) ऐश्वर्ययुत रूप करता है। (मीढ्वान्) सब प्रकारके ऐश्वर्योंका देने वाला (सोमः) परमात्मा (भूमनः) सब लोक-लोकान्तरोंका (वेद) ज्ञाता है। (स ईं) वह परमात्मा इस उपासकको (धिया) ब्रह्मविषयिणी बुद्धि द्वारा (सचते) संगत होता है। और वह (दिवः) इस द्युलोकमें (उद्रिणं) बहुत जल वाले (कवन्धं) वृष्टिको (अवदर्षत्) उत्पन्न करता है। और (प्रवत्) रुद्र (शमी) कर्म वाले (असुरः) राक्षसोंको दण्ड (अभि) देता है॥

भावार्थ—जो लोग अनन्य-भक्ति-द्वारा परमात्म-परायण होते हैं, परमात्मा उनको अवश्यमेव तेजस्वी बनाता है। और जो दुष्कर्मी बनकर अन्याय करते हैं, परमात्मा उनको अवश्यमेव दण्ड देता है॥७॥

अध श्वेतं कलशं गोभिरक्तं
कार्ष्मन्ना वाज्यक्रमीत्ससवान्।
आ हिन्विरे मनसा देवयन्तः
कक्षीवते शतहिमाय गोनाम्॥८॥

अध। श्वेतं। कलशं। गोभिः। अक्तं। कार्ष्मन्। आ। वाजी। अक्रमीत्। ससवान्। आ। हिन्विरे। मनसा। देवयन्तः। कक्षीवते। शतऽहिमाय। गोनाम्॥८॥

पदार्थः—(अध) यदा (श्वेतं कलशं) सत्त्वगुणविशिष्टमन्तःकरणं (गोभिः) इन्द्रियवृत्तिभिः (अक्तं) रञ्जितं तथा

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(कार्ष्मन्) अतिशुद्धं तस्मिन् (वाजी) बलवान् परमेश्वरः (आक्रमीत्) स्वदीप्त्या प्रविशति । तं परमात्मानं (ससवान्) संभजन् (मनसा देवयन्तः) मनसा प्रकाशयन् (गोनां) पृथिव्यादिलोकलोकान्तराणां (शतहिमाय) शतहिमर्तुपर्यन्तं नानाविधमैश्वर्यं (कक्षीवते) विदुषे (हिन्विरे) प्रेरयति ॥

पदार्थ—(अधं) जब (श्वेतं कलशं) सत्व-गुण-विशिष्ट अन्तःकरणको (गोभिः) जो इन्द्रियवृत्तियोंसे (अक्तं) रञ्जित है (कार्ष्मन्) जो अत्यन्त शुद्ध हो गया है, उसमें (वाजी) बलवान् परमात्मा (आक्रमीत्) अपनी दीप्ति द्वारा प्रविष्ट होता है । उस परमात्माका (ससवान्) भजन करता हुआ (मनसा देवयन्तः) मनसे प्रकाश करते हुए, (गोनां) पृथिव्यादि लोकलोकान्तरोंके (शतहिमाय) सौ हेमन्तऋतु पर्यन्त अनन्त प्रकारके ऐश्वर्यको (कक्षीवते) विद्वान्के लिये (हिन्विरे) प्रेरणा करता है ॥

भावार्थ—जो पुरुष शुद्धिकी परा काष्ठाको पहुँच जाता है परमात्मा उस पर अवश्यमेव दया करता है ॥८॥

अद्भिः सोम पपृचानस्य ते
रसोऽव्यो वारं वि पवमान धावति ।
स मृज्यमानः कविभिर्मदिन्तम
स्वदस्वेन्द्राय पवमान पीतये ॥९॥३२॥

अत्ऽअभिः । सोम । पपृचानस्य । ते । रसः । अव्यः । वारे । वि । पवमान । धावति । सः । मृज्यमानः । कविऽभिः । मदिन्ऽतम । स्वदस्व । इन्द्राय । पवमान । पीतये ॥९॥३२॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थः—(आङ्गिः) साङ्गिः कर्मभिः (पपृचानस्य) अभिव्यक्तस्य (ते) तव (रसः) आनन्दः यः (अव्ययः) सर्वरक्षकोस्ति सः (वारं) वरणीयं पुरुषं प्रति (विधावति) विशेषरूपेण प्राप्तोभवति । (पवमान) सर्वपवित्रयितः परमात्मन् ! भवान् (कविभिः) विद्वद्भिः (मृज्यमानः) साक्षात्कृतोस्ति । तथा (पवमान) पवितास्ति । (मदिन्तम) सर्वानन्ददस्त्वम् (इन्द्राय) कर्मयोगिनः (पीतये) तृप्तये (स्वदस्व) प्रियकारकोभव ॥

पदार्थ—(आङ्गिः) सत्कर्मोंसे (पपृचानस्य) अभिव्यक्त (ते) आपका (रसः) आनन्द (अव्ययः) जो सर्वरक्षक है, वह (वारं) वरणीय-पुरुषके प्रति (विधावति) विशेषरूपसे प्राप्त होता है । (पवमान) सबको पवित्र करने वाले (सोम) परमात्मन् ! आप (कविभिः) विद्वानोंसे (मृज्यमानः) साक्षात्कृत हैं । और (पवमान) पवित्र करने वाले हैं । और (मदिन्तम) सबको आह्लादकारक आप (इन्द्राय) कर्मयोगीकी (पीतये) तृप्तिके लिये (स्वदस्व) प्रियकारक हों ॥

भावार्थ—जो लोग कर्मयोगसे अपनेको पवित्र बनाते हैं, उनके लिये परमात्मा अवश्यमेव अपने ब्रह्मामृतका प्रदान करते हैं ॥९॥

इति चतुस्सप्ततितमं सूक्तं द्वात्रिंशोवर्गश्च समाप्तः ॥

यह ७४ वां सूक्त और ३२ वां वर्ग समाप्त हुआ ॥

अथ पञ्चर्चस्य पञ्चसप्ततितमस्य सूक्तस्य—

१–५ कविर्ऋषिः ॥ पवमानः सोमो देवता ॥ छन्दः—१, ३, ४ निचृज्जगती । २ पादनिचृज्जगती । ५ विराड्जगती ॥ निषादः स्वरः ॥

CC-0. Haridwar Gurukul Kangri Vishwavidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अथेश्वरः सूर्यादीनां प्रकाशकत्वेन वर्ण्यते ।

अब ईश्वरको सूर्यादिकोंके प्रकाशकत्वरूपसे वर्णन करते हैं ॥

अभि प्रियाणि पवते चनोहितो
नामानि यह्वो अधि येषु वर्धते ।
आ सूर्यस्य बृहतो बृहन्नधि रथं
विष्वञ्चमरुहद्विचक्षणः ॥ १ ॥

अभि । प्रियाणि । पवते । चनःऽहितः । नामानि । यह्वः ।
अधि । येषु । वर्धते । आ । सूर्यस्य । बृहतः । बृहन् ।
अधि । रथं । विष्वञ्चं । अरुहत् । विऽचक्षणः ॥१॥

पदार्थः—(विचक्षणः) स सर्वज्ञः परमात्मा (विष्वञ्चं) विविधविधमिमंसंसारं (रथं) रम्यं कृत्वा (अध्यरुहत्) सर्वोपरि विराजते । स परमात्मा (बृहन्) महानस्ति । तथा (बृहतः सूर्यस्य) अस्य महतः सूर्यस्याभितः (आ) व्याप्नोति । अथच (चनोहितः) सर्वहितकारकः (अभिप्रियाणि) सर्वेषां कल्याणं-कुर्वन् (पवते) पवित्रयति । तथा (यह्वः) महतोमहान् (येषु नामानि) येष्वनन्तानि नामानि सन्ति स जगदीश्वरः (अधिवर्धते) अधिकतया वृद्धिं प्राप्नोति ॥

पदार्थ—(विचक्षणः) वह सर्वज्ञ परमात्मा (विष्वञ्चं) विविध-प्रकार वाले इस संसारको (रथं) रम्य बनाकर (अध्यरुहत्) तथा सर्वोपरि होकर विराजमान हो रहा है । वह परमात्मा (बृहन्) बड़ा है । और (बृहतः सूर्यस्य) इस बड़े सूर्यके चारो ओर (आ) व्याप्त होता है । और-

CC-0. Vasishtha Tripathi Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(चनोहितः) सबका हितकारी परमात्मा (आभिप्रियाणि) सबका कल्याण करता हुआ, (पवते) पवित्र करता है । तथा (यह्वः) सबसे बड़ा है । (येषु नामानि) जिसमें अनन्त नाम हैं, वह परमात्मा (अधिवर्धते) अधिकतासे बृद्धिको प्राप्त है ॥

भावार्थ—इस निखिल ब्रह्माण्डका निर्माता परमात्मा सूर्यादि-सबलोक-लोकान्तरोंका प्रकाशक है । इसी अभिप्रायसे कहा है, कि "न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः" अर्थात् परमेश्वरका प्रकाशक कोई नहीं । वही सबका प्रकाशक है ॥१॥

ऋतस्य जिह्वा पवते मधु प्रियं वक्ता
पतिर्धियो अस्या अदाभ्यः ।
दधाति पुत्रः पित्रोरपीच्यं
नाम तृतीयमधि रोचने दिवः ॥ २ ॥

ऋतस्य । जिह्वा । पवते । मधु । प्रियं । वक्ता । पतिः । धियः । अस्याः । अदाभ्यः । दधाति । पुत्रः । पित्रोः । अपीच्यं । नाम । तृतीयं । अधि । रोचने । दिवः ॥२॥

पदार्थः—(दिवः) द्युलोकस्य (रोचने) प्रकाशनाय (तृतीयं नाम) तृतीयं नामधेयं । (अधिदधाति) धरति । तथा (पुत्रः पित्रोः) सन्तानभावस्य सन्तानीभावस्य च (अपीच्यं) अधिकरणरूपोस्ति । अथच (ऋतस्य जिह्वा) सत्यस्य जिह्वास्ति खम् । तथा (पवते) सर्वान्पवित्रयति । (मधु) मधुरस्य (प्रियं) प्रियवचनस्य (वक्ता) कथनकर्तास्ति । तथा (अदाभ्यः) अदम्भनीयः स परमेश्वरः (अस्याः धियः) अमीषां कर्मणामधिपतिरस्ति ॥

Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पदार्थ—(दिवः) द्युलोकके (रोचने) प्रकाशके लिये (तृतीयं) तीसरा (नाम) नाम (अधिदधाति) धारण करता है। तथा (पुत्रः पित्रोः) सन्तान, सन्तानीभावका (अपीच्यं) अधिकरण है। और (ऋतस्य-जिह्वा) सचाईकी जिह्वा है। तथा (पवते) सबको पवित्र करता है। (मधु) मधुर (प्रियं) प्रिय-वचनोंका (वक्ता) कथन करने वाला है। और (अदाभ्यः) अदम्भनीय वह परमात्मा (अस्या धियः) इन कर्मोंका अधिपति है ॥

भावार्थ—जीवके शुभाशुभ सब कर्मोंका अधिपति परमात्मा है। उसी प्रकाशस्वरूप परमात्मासे सब द्यु भुवादि लोक-लोकान्तरोंका प्रकाश होता है ॥२॥

अव द्युतानः कलशाँ अचिक्रदन्नृ-
भिर्येमानः कोश आ हिरण्यये ।
अभीमृतस्य दोहना अनूषताधि
त्रिपृष्ठ उषसो वि राजति ॥ ३ ॥

अव । द्युतानः । कलशान् । अचिक्रदत् । नृऽभिः । येमानः । कोशे । आ । हिरण्यये । अभि । ईं । ऋतस्य । दोहनाः । अनूषत । अधि । त्रिऽपृष्ठः । उषसः । वि । राजति ॥३॥

पदार्थः— त्रिपृष्ठः) भूः भुवः, स्वः, इमे त्रयोलोकाः पृष्ठ-स्थानीया यस्य स परमात्मा (उषसः) उषाकालस्य प्रकाशको-भूत्वा- (अधिविराजति) विराजमानोऽस्ति। (ऋतस्य) सत्यस्य (दोहनाः) दोहनकर्तारः (ईं) अमुं परमात्मानं (अभ्यनूषत) उपासनया विभूषयन्ति। स परमात्मा (हिरण्यये कोशे)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रकाशरूपेऽन्तःकरणे (यमानः) अखिलनियमनियामकः परमेश्वरः (अचिक्रदत्) शब्दायमानः सन् (नृभिः) उपासकैः स्तुतोनिवसति । अथच (कलशान्) तेषामन्तःकरणानि (अवद्युतानः) प्रकाशयन् (आ) विराजितोस्ति ।

पदार्थ—(त्रिपृष्ठः) भूः, भुवः, स्वः, यह तीन लोक हैं पृष्ठस्थानी जिसके वह परमात्मा (उषसः) उषाकालका प्रकाशक होकर (अधिविराजति) विराजमान है । (ऋतस्य) सचाईके (दोहनाः) दोहन करने वाले (ईं) इस परमात्माको (अभ्यनूषत) उपासक-गण उपासना द्वारा विभूषित करते हैं । (हिरण्यये कोशे) प्रकाशरूप अन्तःकरणमें (यमानः) सम्पूर्ण नियमोंका कर्ता वह परमात्मा (अचिक्रदत्) शब्दायमान होता हुआ (नृभिः) उपासक लोगोंसे स्तुति किया गया निवास करता है । (कलशान्) उनके अन्तःकरणोंको (अवद्युतानः) निरन्तर प्रकाश करता हुआ (आ) विराजमान है ॥

भावार्थ—परमात्मा उषाके प्रकाशित सूर्यादिकोंका भी प्रकाशक है। और वह पुण्यात्माओंके स्वच्छ अन्तःकरणको हिरण्मय पात्रके समान प्रदीप्त करता है। अर्थात् जो पुरुष परमात्मपरायण होना चाहे, वह पहिले अपने अन्तःकरणको स्वच्छ बनाये ॥३॥

अद्रिभिः सुतो मतिभिश्चनोहितः
प्ररोचयन्रोदसी मातरा शुचिः ।
रोमण्यव्या समया वि धावति
मधोर्धारा पिन्वमाना दिवेदिवे ॥४॥

अद्रिऽभिः । सुतः । मतिऽभिः । चनःऽहितः । प्रऽरोचयन् ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रोदसी इति । मातरा । शुचिः । रोमाणि । अव्या । समया ।
वि । धावति । मधोः । धारा । पिन्वमाना । दिवेऽदिवे ॥४॥

पदार्थः—(रोदसी मातरा) अस्य संसारस्य मातृवत् पितृवत् वर्तमानौ द्युलोक-भूलोकौ तौ (प्ररोचयन्) प्रकाशयन् (च) अथच (मतिभिरद्रिभिः) ज्ञानरूपचित्तवृत्तिभिः (सुतः) संस्कृतस्तथा (चनोहितः) सर्वहितकारी (शुचिः) शुद्धस्वरूपः परमेश्वरः (समया) सर्वतः (रोमाण्यव्या) निखिलपदार्थान् रक्षयन् (विधावति) विशेषरूपेण गच्छति । (दिवेदिवे) अहरहः (मधोर्धारा) अमृतवर्षणेन (पिन्वमाना) पुष्णाति ॥

पदार्थ—(रोदसी मातरा) इस संसारके मातापितावत् वर्तमान जो द्युलोक, और पृथिवीलोक हैं, उनको (प्ररोचयन्) प्रकाश करता हुआ (च) और (मतिभिरद्रिभिः) ज्ञानरूपी-चित्तवृत्तियोंसे (सुतः) संस्कृत और (चनोहितः) सबका हितकारी (शुचिः) शुद्धस्वरूप परमात्मा (समया) सब ओरसे (रोमाण्यव्या) सब पदार्थोंकी रक्षा करता हुआ (विधावति) विशेषरूपसे गति करता है। (दिवेदिवे) प्रतिदिन (मधोर्धारा) अमृतवृष्टिसे (पिन्वमाना) पुष्ट करता है ॥

भावार्थ—द्युलोक और पृथिव्यादि लोक-लोकान्तरोंका प्रकाशक परमात्मा अपनी सुधामयी-वृष्टिसे सदैव पवित्र करता है ॥४॥

परि सोम प्र धन्वा स्वस्तये नृभिः
पुनानो अभि वासयाशिरम् ।
ये ते मदा आहनसो विहायसस्ते-
भिरिन्द्रं चोदय दातवे मघम् ॥५॥३३॥२॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परि । सोम । प्र । धन्व । स्वस्तये । नृऽभिः । पुनानः । अभि । वासय । आऽशिरं । ये । ते । मदाः । आहनसः । विऽहायसः । तेभिः । इन्द्रं । चोदय । दातवे । मघम् ॥५॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (ये ते मदा आहनसः) ये तव स्वभावा वाणीवोपदिशन्ति (तेभिः) तैः (विहायसाः) अस्मान्नाच्छादय । अथच (इन्द्रं) कर्मयोगिनं (मघं दातवे) ऐश्वर्यदानाय (चोदय) प्रेरय । (सोम) हे जगदीश ! (नृभिः) उपदेशकैः (परिपुनानः) अस्मान्पवित्रयन् (स्वस्तये) मत्कल्याणाय (प्रधन्व) प्राप्तोभव । तथा (आशिरं) अस्मदाश्रयं (अभिवासय) अभितोरक्षय ॥

पदार्थ—हे परमात्मन् ! (ये ते मदा आहनसः) जो आपके स्वभाव वाणीके समान उपदेश करते हैं (तेभिः) उनसे (विहायसाः) हमारा आप आच्छादन करें । और (इन्द्रं) कर्मयोगीको (मघं दातवे) ऐश्वर्य देनेके लिये (चोदय) प्रेरणा कीजिये । (सोम) हे परमात्मन् ! (नृभिः) उपदेशकों द्वारा (परिपुनानः) हमको पवित्र करते हुए (स्वस्तये) हमारे कल्याणके लिये (प्रधन्व) प्राप्त होइये । और (आशिरं) हमारे आश्रयका (अभिवासय) सब ओरसे रक्षा कीजिये ॥४॥

भावार्थ—जो लोग एकमात्र परमात्माका आश्रयण करते हैं, परमात्मा उनकी सर्वथा रक्षा करते हैं । क्योंकि सर्वनियन्ता और सबका अधिष्ठाता एकमात्र वही है । जैसा कि हम पूर्व भी अनेक स्थलोंमें लिख आये हैं, कि "यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति तद्विजिज्ञासस्व तद्ब्रह्म" तै० ३।१॥ "सर्वाणि वा इमानि भूतान्याकाशादेव समुत्पद्यन्ते आकाशं प्रत्यस्तं यन्त्या-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शोह्यभ्योऽयायानाकाशः परायणम्" छा० १।९।१॥ "ब्रह्मैवद वि-
म्" मु० २।२।११॥ "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" छा० ३।१४।१॥ "आ-
त्मैवेदं सर्वम्" छा० ७।२५।२॥ "पुरुष एवेदं सर्वम्" ऋ० ८।४।१७।१॥
"स एवजातः स जनिष्यमाणः" यजु० ३२।४॥ "नित्योनित्यानाम्"
कठ० ५।१३॥ "नित्यं विभुं सर्वगतं सुसूक्ष्मम्" मु० १।१।६॥ "सत्यं
ज्ञान-ब्रह्म" बृ० ५।४।१॥ "ब्रह्मवादिनोहि प्रवदन्ति नित्यम्" श्वे०
६।२१॥ "यो विश्वस्य जगतः प्राणतस्पतिः" ऋ० १।७।१२।५॥ "यः
प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतोबभूव" ऋ० ८।७।२।३॥
"यो भूतं च भव्यं च सर्वं यश्चाधितिष्ठति" अथ० १०।८।४।१॥
"ब्रह्मगामश्वं जनयन्त ओषधी र्वनस्पतीन्पृथिवीं पर्वताँ अपः।
सूर्यं दिवि रोहयन्तः सुदानव आर्या व्रता विसृजन्तो अधि क्षमि"॥
इत्यादि वेदोपनिषदोंके वचनोंमें प्रसिद्ध है, कि परमात्मा ही सबका अधि-
ष्ठान है। अधिष्ठान, आश्रय, ये एकही वस्तुके नाम हैं। उसी
परमात्माने इस चराचरात्मक संसारको उत्पन्न किया है। जिसको कोई
आश्चर्य रूपसे देख रहा है, कोई आश्चर्य-रूपसे सुन रहा है, और कोई
इस गूढ़तत्त्वको न समझकर आज्ञानावस्थामें पड़ा हुआ है। पर इसमें
कोई सन्देह नहीं, कि इसके कर्तृत्वका कोई तिरस्कार नहीं कर सकता।
अर्थात् नास्तिकसे नास्तिक भी जब इस बातका विचार करता है, कि
इस विविध-रचना-संयुक्त-विश्वको किसने उत्पन्न किया, तो उसकी दृष्टि
भी किसी अद्भुत शक्ति पर ही ठहरती है। अस्तु—

ये विचार तो उन लोगोंके हैं, जो ब्रह्मको तर्कगम्य मानते हैं।
और जिन आस्तिक-लोगोंके विचारमें ब्रह्म शब्द-गम्य है, उनके लिये
प्रमाणान्तरकी आवश्यकता नहीं। इसी लिये हमने, ऋ. मं. १०। सू. ६९।
मं.११ में यह स्पष्ट कर दिया कि, ब्रह्मने जब इस संसारको पहिले सूक्ष्मा-
वस्थामें बनाया, और फिर स्थूलावस्थामें मेघाकार, फिर पृथिवी, वनस्पति,
ओषधि, और फिर गवाश्वादि-रूपसे इस संसारकी सृष्टि की।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कई एक लोग उक्त मन्त्रके, ये अर्थ करते हैं, कि "दिवि रोहयन्त" द्युलोकमें आरोहण करते, हुए, और "सूर्यं" सूर्य लोकको आरोहण करते हुए "सुदानवः" दानशील लोग ब्रह्म=अन्न, गौ, अश्वादि सृष्टिको (जनयन्तः) पैदा करते भये। इस अर्थको न केवल सायणाचार्यने किया है किन्तु विलसन, ग्रीफथ, इत्यादि यूरोपियन-विद्वानोंने भी यही अर्थ किये हैं। और वे लोग हेतु यह देते हैं, कि "जनयन्तः" यह बहुवचन उक्त देवोंमें घट सकता है, ब्रह्ममें नहीं। यदि उनसे यह पूछा जाय, कि "आर्या व्रता विसृजन्त" इस वाक्यमें "व्रता" का "व्रतानि" कैसे बना लिया और "आर्या" का "श्रेष्ठानि" कैसे बना लिया? तो उत्तर यही मिलेगा, कि वेदमें इस लौकिकव्याकरणका बल नहीं चलता। यदी इसी प्रकार लौकिक-व्याकरणका त्याग करना है, तो "ब्रह्म" को कर्ता रखकर यह अर्थ क्यों न किये जायँ, कि ब्रह्मने अन्नपूर्ण पृथिवी-पर्वतादि-पदार्थोंको उत्पन्न किया, इस उदाहरणसे हमारा तात्पर्य व्याकरणकी लघुता करनेका नहीं। किन्तु जो लोग व्याकरणका अज्ञान तथा उपयोग करके वेदार्थको बिगाड़ते हैं, उनकी भूल दूर करने का है। इसी प्रकार मं.१ सू०२४ मं.८। में "पन्थानं" के स्थानमें वेदमें "पन्थां" है। और "सूर्यस्य" के स्थानमें "सूर्याय" है। इसी प्रकार अनेक स्थलोंमें "त्रिप्रेभिः" "प्राचैः" "रथीः" इत्यादि अनेक प्रयोग ऐसे पाये जाते हैं, जो अज्ञोंके गर्वको भञ्जन करके वैदिक-साहित्यके गर्वको स्थिर करते हैं। अस्तु—

मुख्य प्रसङ्ग यह है, कि "आशिरम्" हमारे आध्यात्मिक लक्ष्यकी पूर्ति करने वाला परमात्मा, हममें कर्मयोगियोंको उत्पन्न करके, हमको कर्मयोगी तथा उद्योगी बनाये ॥५॥

इति श्रीमदार्यमुनिनोपनिबद्धे ऋक्संहिताभाष्ये सप्तमाष्टके
द्वितीयोऽध्यायः
समाप्तः ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.